श्री सुखसागर ज्ञानप्रचार ज्ञानबिन्दु नं ३

श्री रत्नप्रभसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ वां

लेखक—

श्रीमदुपकेश (कमला) गच्छीय

मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज

द्रव्य सहायक और प्रकाशक

श्री सुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा

मु० लोहावट-जाटावास (मारवाड)

नम्बर १०००

वीर संवत् २४५० विक्रम सं १९८०

किमत रू. १॥)

द्रव्य सहायक—

श्रीसुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा

श्री भगवतीजी सूत्रकि पूजा

तथा सुपनोंकि आमदनीसे

भावनगर—धी आनंद प्रीन्टींग प्रेसमें शाह गुलाबचंद

लल्लुभाइए छाप्युं

इन पुस्तकोंकी आमदनीसे और भी

ज्ञानप्रचार बडाया जावेगा ।

श्री रत्नप्रभसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नम

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ३ जा

द्रव्य सहायक रू २५०)

शाह हजारीमलजी कुनरलालजी पारख

मु० लोहावट—जाटावास (मारवाड)

नकल १०००

वीर स २४५०　　　　वि स १९८०

द्रव्य सहायक—

श्रीसुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा

श्री भगवतीजी सूत्रकि पूजा

तथा सुपनोंकि आमदनीसे

भावनगर—धी आनंद प्रीन्टींग प्रेसमें शाह गुलाबचंद

लल्लुभाइए छाप्युं

इन पुस्तकोंकी आमदनीसे और भी

ज्ञानप्रचार बडाया जावेगा ।

श्री रत्नप्रभसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नम

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ३ जा

द्रव्य सहायक रू २५०)

शाह हजारीमलजी कुवरलालजी पारख

मु० लोहावट—जाटावास (मारवाड)

नकल १०००

वीर स २४५०

वि स १९८०

धन्यवाद

श्रीमान् रेखचंदजी साहिब,

चीफ सेक्रेटरी–

श्री जैन नवयुवक मित्रमण्डल—मु० लोहावट

आप ज्ञानके अच्छे प्रेमी और उत्साही हो। इस किताब के तीसरे भाग के लिये रु २५०) ज्ञान दान कर पुस्तके श्रीसुखसागर ज्ञान प्रचारक सभा में सार्पण कर लाभ उठाया है इस वास्ते मैं आप को सहर्ष धन्यवाद देता हु और सज्जनों को भी अपनी चल लक्ष्मी का ज्ञानदान कर लाभ लेना चाहिये। कारण शास्त्रकारोंने सर्व दानमें ज्ञानदान को ही सर्वोत्तम माना है–किमधिकम्।

भवदीय,

पृथ्वीराज चोपड़ा।

मम्बर–श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल,

लोहावट–(मारवाड़)

श्रीयक्षदेवसूरीश्वराय नम

श्रीकल्पसूत्रजीके पानोंकी भक्ति के लिये रु २८०)

शाह कालुरामजी अमरचंदजी गोथरा राजमवाला कि तर्फ से आया वह इस कितावमें लगाया गया है इस ज्ञान दानसे कीतना लाभ होगा वह अन्य सज्जनोंको विचार के अपनी चल लक्ष्मीको ज्ञानदान कर अचल बनाना चाहिये किमधिकम् ।

आपका,

जोरावरमल वैद

मेनेजर

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला ओफीस,

फलोधी

श्रीमद् भगवतीजी सूत्र कि वाचना।

पूज्यपाद मात स्मरणिय मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महार
म्रसाहिब कि अनुग्रह कृपासे हमारे लोहावट जैसे ग्राममे
श्रीमद् भगवतीजीसूत्र कि वाचना संवत् १९७९ का चैत्र व
६ से प्रारभ हुइथी जिस्के दरम्यान हमे बहुत लाभ हुवा
जैसे श्री भगवतीजीसूत्रका आद्योपान्त श्रवण कर ज्ञानपूजा
करना जिस्के द्रव्यसे।

५००० श्री द्रव्यानुयोग द्वितीय प्रवेशिका।

५००० श्री शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ वां हजार हजार प्र
एकही जिल्दमें बन्धाइ गइ हैं जिस्मे तीसरा भा
शा हजारीमलजी कुवरलालजी पारख कि तर्फसे।

१००० श्री भावप्रकरण शा जमनालालजी इन्द्रचन्द
पारख कि तर्फसे।

१००० श्री स्तवन संग्रह भाग ४ था शा आइदानजी अग
चन्दजी पारख कि तर्फसे।

इनके सिवाय ज्ञानध्यान कठस्थ करना तथा श्री सुख
सागर ज्ञानप्रचारक सभा और श्री जैन नवयुवक मित्रमंड
कि स्थापना होनेसे अच्छा उपकार हुवा है।

अधिक हर्ष इस बातका है कि जीस उत्साहा से श्र
भगवतीजी सूत्र प्रारभ हुवाथा उनसे ही चढते उत्साहासे
ज्ञानपदमिकी पूजा प्रभावना वरघोडाके साथ निविघ्नता
समाप्त हुवा है हम इस सुअवसर कि वारवार अनुमोद
करते है अन्य सज्जनोंको भी अनुमोदन कर अपना जन्म
पवित्र करना चाहिये किमधिकम्। भवदीय।

जमनालाल बोथरा राजमवाला,
मेम्बर श्री जैन नवयुवक मित्रमडल
मु० लोहावट-मारवाड

स्वर्गवास १९७७

मुनि महाराज श्री रत्नविजयजी महाराज

रत्न परिचय.

परम योगिराज प्रात स्मरणीय अनेक सद्गुणालंकृत श्री श्री १००८ श्री श्री रत्नविजयजी महाराज साहिब।

आपश्रीका पवित्र जन्म कच्छ देश ओसवाल ज्ञाति मे हुवा था आप बालपणासे ही विद्यादेवीके परमोपासक थे दश वर्षकि बाल्यावस्थामें ही आपने पिताश्रीके साथ ससार त्याग किया था. अठारा वर्ष स्थानकवासीमत मे दीक्षा पाल सत्य मार्ग सशोधन कर–शास्त्रविशारद जैनाचार्य श्रीमद्विजयधर्मसूरीश्वरजी महाराजके पास जैन दीक्षा धारण कर सस्कृत प्राकृतका अभ्यास कर जैनागमोका अवलोकन कर आपश्रीने एक अच्छे गीतार्थोकि पक्तिको प्राप्त करी थी आपश्रीने कच्छ, काठीयावाड, गुजरात, मालवा, मेवाड और मारवाडादि देशोमें विहार कर अपनि अमृतमय देशनाका जनताको पान करवाते हुए अनेक भव्य जीवोंका उद्धार कीया था इतना ही नही किन्तु आबु गिरनारादि निवृत्तिके स्थानो मे योगाभ्यास कर अनेक गड हुइ चमत्कारी विद्यावों हासल कर कइ आत्मावो पर उपकार कीया था।

आपका निस्पृह सरल शान्त स्वभाव होने से जगत के गच्छगच्छान्तर–मतमतान्तरके झगड़े तो आपसे हजार हाथ दूर ही रहते थे जैसे आप ज्ञानमें उच्चकोटीके विद्वान थे वैसे ही कविता करनेमें भी उच्चकोटीके कवि भी थे आपने अनेक स्तवनो, सज्झाया, चैत्यवन्दनों, स्तुतियो, कल्प रत्नाकरी टीका और विनति शतकादि रचके जैन समाजपर परमोपकार कीया था

आपको निवृत्तिस्थान अधिक प्रसन्न था जो श्रीमदुपकेश गच्छाधिपति श्री रत्नप्रभसूरीश्वरजी महाराजने उपकेशपट्टन (ओशीयों) मे ३८४००० राजपुतोंको प्रतिबोध दे जैन बनाया प्रथम ही ओसवंस स्थापन कीया था उन ओशीयों तीर्थपर आपश्रीने चतुर्मास कर अलभ्य लाभ प्राप्त कीया जैसे मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजीको ढुढकफास से बचाके संवेगी दीक्षा दे उपकेश गच्छका उद्धार करवाया था फीर दोनो मुनिवरोंने इस प्राचीन तीर्थके जीर्णोद्धारमे मदद कर वहापर जैन पाठशाला, बोर्डींग, श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान भंडार, जैन लायब्रेरी स्थापन करी थी और भी आपको ज्ञानका बडा ही प्रेम था आपश्रीके उपदेश द्वारा फलोधी मे श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला नामकि संस्था स्थापित हुइ थी आपश्रीने अपने पवित्र जीवनमें शासन सेवा बहुत ही करी थी कइ जगह जीर्णोद्धार पाठशालावोंके लिये उपदेशदीया था जिनोकि

उज्वल कीर्त्ति आज दुनियों मे उच्च पदको भोगव रही है आपश्रीका जन्म सं १६३० में हुवा स १६४० में स्थानकवासीयों में दीक्षा स १६६० में जैन दीक्षा और स १६७७ में आपका स्वर्गवास गुजरातके वापी ग्राममें हुवा है जहापर आज भी जनताने स्मरणार्थ स्मारक मोजुद है एसे नि स्पृही महात्मावोकि समाजमें बहुत आवश्यक्ता है

यह एक परम योगिराज महात्माका किंचित् आपको परिचय कराके हम हमारी आत्माको अहोभाग्य समजते है समय पा कर आपश्रीका जीवन लिख आपलोगोंकि सेवा में भेजनेकि मेरी भावना है शासनदेव उसे शीघ्र पूर्ण करे

I have the honour to be Sir,
Your most obedient slave
M Rakhchand Parekh S Collieries
Member Jain nava yuvak mitra mandal
LOHAWAT

—✵◎◎◎✵—

ज्ञान परिचय।

पूज्यपाद प्रात स्मरणिय शान्त्यादि अनेक गुणालकृत श्री मान्मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहिब।

आपश्रीका जन्म मारवाड ओसवस वैश मुत्ता ज्ञातीमे स १९३७ विजय दशमिको हुवा था बचपन मे ही आपका ज्ञानपर बहुत प्रेम था स्वल्पावस्थामे ही आप ससार व्यवहार वाणिज्य व्येपारमे अच्छे कुशल थे स १९५४ मागशर वद १० को आपका विवाह हुवा था दशाटन भी आपका बहुत हुवा था विशाल कुटुम्ब मातापिता भाइ काका स्त्रि आदि कों त्याग कर २६ वर्ष कि युवान वयमे स १९६३ चेत वद ६ कों आपने स्थानकवासीयो मे दीक्षा ली थी दशागम और २०० थोकडा कठस्थ कर ३० सूत्रो की वाचना करी थी तपश्चर्या एकान्तर छठ छठ, मास क्षमण आदि करनम भी आप सूरवीर थ आपका व्याख्यान भी बडाही मधुर रोचक और असरकारी था शास्त्र अवलोकन करने से ज्ञात हुवा कि यह मूर्त्ति उत्थापकों का पन्थ स्वकपोल कल्पीत समुत्सम पदा हुवा है तत्पश्चात सर्प कचवे कि माफीक दुढको का त्याग कर आप श्रीमान् रत्नविजयजी महाराज साहिब क पास ओशीया तीर्थ पर दीक्षा ले गुरु आदशसे उपकश गच्छ स्वीकार कर प्राचीन गच्छका उद्धार

श्रीमदुपकेशगच्छीय-
मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी
जन्म सं० १९३७ विजयदशमी
स्थान० दीक्षा सं० १९६३
जैन दीक्षा सं० १९७२

ज्ञान परिचय।

पूज्यपाद प्रात स्मरणिय शान्त्यादि अनेक गुणालकृत श्री मान्मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहिब।

आपश्रीका जन्म मारवाड ओसवस वैद मुत्ता ज्ञातीमे स १९३७ विजय दशमिको हुवा था बचपन मे ही आपका ज्ञानपर बहुत प्रेम था स्वल्पावस्थामे ही आप ससार व्यवहार वाणिज्य व्यैपारमे अच्छे कुशल थे स १९५४ मागशर वद १० को आपका विवाह हुवा था दशादन भी आपका बहुत हुवा था विशाल कुटुम्ब मातापिता भाइ काका स्त्रि आदि को त्याग कर २६ वर्ष कि युवान वयमें स १९६३ चत वद ६ कों आपने स्थानकवासीयो मे दीक्षा ली थी दशागम और ३०० थोकडा कठस्थ कर ३० सूत्रो की वाचना करी थी तपश्चया एकान्तर छठ छठ, मास खमण आदि करनेमे भी आप सूरवीर थे आपका व्याख्यान भी बडाही मधुर रोचक और असरकारी था शास्त्र अवलोकन करने से ज्ञात हुवा कि यह मूर्त्ति उत्थापकों का पन्थ स्वकपोल कल्पीत समुत्सम पदा हुवा है तत्पश्चात् सर्प कचवे कि माफीक ढुढको का त्याग कर आप श्रीमान् रत्नविजयजी महाराज साहिब के पास ओशीयां तीर्थ पर दीक्षा ले गुरु आदशसे उपकश गच्छ स्वीकार कर प्राचीन गच्छका उद्धार

कीया स्वल्प समय में ही आपने दीव्य पुरुषार्थ द्वारा जैन समाजपर वडा भारी उपकार कीया आपश्रीका ज्ञानका तो आल दुनिका प्रेम है जहा पधारते है वहा ही ज्ञानका उद्योत करते है

ओशीयों तीर्थ पर पाठशाला बोर्डींग वध मन्दिर लायब्रेरी, श्री रत्न प्रभाकर ज्ञान भंडार आदि में आप श्रीने मदद करी है फलोधी मे श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला संस्था—इस्की दुसरी शाखा ओशीयाम स्थापन करी जिन संस्थानो द्वारा जैन आगमो का तत्त्व-ज्ञानमय आज ७५ पुष्प नीकल चुके है जिस्की कीताबे ८५३००० करीबन हिन्दुस्तान के सब विभागमे जनता कि सेवा बजा रही है इनके सिवाय जैनपाठशाला जैन लायब्रेरी आदि भी स्थापन करवाइ गइ थी हम शासन देवतावोसे यह प्रार्थना करते है कि एसे पुरुषार्थी महात्मा चीरकाल शासन कि सेवा करते हमारे मरूस्थल देशमें विहार कर हम लोगोंपर सदैव उपकार करे। शम्

आपश्रीके चरणोपासक
इन्द्रचंद पारख
जोइन्ट सेक्रेटरी,
श्री जैन नवयुवक मित्र मण्डल
ऑफीस—लोहावट (मारवाड)

——✻◎✻——

प्रस्तावना

प्यारे सज्जन गण !

यह बात तो आपलोग बखुबी जानते है कि हरेक धर्मका महत्व धर्म साहित्य के ही अन्तर्गत रहा हुया है जिस धर्मका धर्मसाहित्य विशाल क्षेत्रमें विकाशित होता है उसी धर्मका धर्म महत्व भी विशाल भूमिपर प्रकाश किया करता है अर्थात् ज्यों ज्यों धर्मसाहित्य प्रकाशित होता है त्यों त्यों धर्मका प्रचार बढा ह। करता है ।

आज सुधरे हुवे जमाने के हरेक विद्वान प्रत्येक धर्म साहित्य अपक्षपात दृष्टिसे अवलोकन कर जिस जिस साहित्यके अन्दर तत्त्व वस्तु होती है उसे गुणग्राही सज्जन नेक दृष्टिसे ग्रहन कीया करते है अतेव धर्म साहित्य प्रकाश करने कि अत्यावश्यक्ता को सब संसार एक दृष्टिसे स्वीकार करते है ।

धर्म साहित्य प्रकाशित करने में प्रथम उत्साही महाशयजी और साथमें लिखे पढे सहनशील नि:स्पृही पुरुषार्थी तथा तन मन धनसे मदद करनेवालों कि आवश्यक्ता है ।

प्रत्येक धर्मके नेता लोग अपने अपने धर्म साहित्य प्रकाशित करने में तन धन मनसे उत्साही बन अपने अपने धर्म साहित्यको जगतमय बनाने कि कोशीस कर रहे है ।

दुसरे साहित्य प्रेमियों कि अपेक्षा हमारे जैनधर्मके उच्च कोटीका पवित्र और विशाल साहित्य भण्डारों कि ही सेवा कर रहा है पुराणे विचारके लोग अपने साहित्य का महत्व ज्ञान भण्डारोंमें रखने में ही समझ रहे थे । इस सकुचित विचारोंसे हमारे धर्म साहित्य कि क्या दशा हुइ यह हमारे भण्डारों के

नेताओं को अब मालुम होने लगी है कि साहित्य प्रकाश मे हम लोग कितने पाछाडी रहे है।

हमारे धर्म साहित्य लिखनेवाले और प्रकाशित करनेवाले पूर्वाचार्य हमारे पर बडा भारी उपकार कर गये है परन्तु इस वख्त पूज्यपाद प्रात स्मरणीय न्यायाभोनिधि जैनाचार्य श्रीमद्विजयानन्दसूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराज का हम परमोपकार मानते है कि आपश्रीने ज्ञानभण्डारोंके नेताओं को बडे ही जोर सोरसे उपदेश देकर जैसलमेर पाटण खंभात अमदाबाद आदिके ज्ञानभण्डरों में सडते हुये धर्म साहित्यका उद्धार कराया था आपश्री को साहित्य प्रकाशित करवानेका इतना तो प्रेमथा कि स्थान स्थान पर ज्ञानभण्डारों, लायब्रेरीयों, पुस्तक प्रचार मडलों, संस्थायों आदि स्थापीत करवाके ज्ञानप्रचार बढाने में प्रेरणा करी थी। आपके उपदेशसे स्कूलों पाठशालायों गुरूकुल बालादि स्थापित होनेसे समाज में ज्ञान कि वृद्धि हुइ है। इतना ही नही बल्के यूरोप तक भी जैनधर्म साहित्यका प्रचार करने में आपश्रीने अच्छी सफलता प्राप्त करी थी उन धर्म साहित्य प्रचार कि बदोलत आज हमारी स्वल्प सख्या होने परभी सर्व धर्मों में उच्च स्थानको प्राप्त कीया है अच्छे अच्छे विद्वान लोगोंका मत्त है कि जैनधर्म एक उच्च कोटीका धर्म है।

साहित्य प्रचारके लिये श्रावक भीमसी माणेक बबाइ जैन धम प्रसारक सभा-जैन आत्मानद सभा भावनगर श्रीयशोविजयजी ग्रन्थमाळा भावनगर, श्री जैन श्रेयस्कर मडल मेसाणा मेघजी हीरजी बबाइ अध्यात्म ज्ञान प्रकाश-बुद्धिसागर ग्रन्थमाला श्री हेमचन्द्र ग्रन्थमाला जैन तत्व प्रकाश मडल जैन ग्रन्थमाला— रायचन्द्र ग्रन्थमाला—राजेन्द्रकोश कार्यालय—श्री रत्न प्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला, फलोधी श्री जैन आत्मानन्द पुस्तक प्रचार मडल आग्रा—दिल्ही व्याख्यान साहित्य आफीस जैन साहित्य सभा

धन—पुना श्री आगमोदय समिति अन्यभी छोटी बडी सभावोने साहित्य प्रकाशित करने में अच्छी सफलता प्राप्त करी है—मनुष्य मात्रका फर्ज है कि अपनि २ यथाशक्ति तन मन धनसे धर्म साहित्य प्रचारमें अवश्य मदद देना चाहिये।

साहित्यप्रेमी परम् योगिराज मुनि श्री रत्नविजयजी महाराज साहिब के सदुपदेशसे सवत् १९७३ का आसाड शुद ६ के रोज मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज द्वारा फलोधी नगरके उत्साही श्रावक वर्ग कि प्रेरणासे श्रीरत्नप्रभाकार ज्ञान पुष्पमाला नामकि सस्था स्थापित की गइ थी सस्थाका खास उद्देश छोटे छोटे ट्रेक्टद्वारा जनता मे जैनधर्म साहित्य प्रसिद्ध करनेका रखा गया था

हरेक स्थानपर लम्बी चौडी बातों बनानेवाले या पर उपदेश देनेवाले बहुत मीलते है किन्तु जीस जगह रूपैये का नाम आता है तब कितनेक लोग धनाढ्य होनेपर भी मायाके मजुर उन्नतिके मेदान से पीच्छे हठ जाते है परन्तु मुनिश्रीके एक ही दिनके उपदेशसे फलोधी श्री सघने ज्ञानवृद्धिके लिये करीबन् २०००) का चन्दाकर श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला में पुस्तके छपानेके लिये जमा करवाके इस सस्थाकि नीवकों मजबुत बनादि थी मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहबका १९७३ का चतुर्मासा फलोधी में हुवा आपश्रीने एकही चतुर्मासा में ११ पुष्प प्रकाशित करवा दीया। चतुर्मासके बाद आपश्रीका पधारणा ओसीयातीर्थ जो कि श्री रत्नप्रभसूरीजी महाराजने उत्पलदे राजा आदि। ३८४००० राजपुतोंको प्रथमही ओशवाल बनाके श्रीवीरप्रभुके मिंदरकी प्रतिष्टा करवाइथी उन महापुरुषोंके स्मरणार्थ दुसरी शाखा रूप एक संस्था ओशीयां तीथपर श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाल स्थापित करी जिस्का काम मुनिम चुन्निलालभाइके सुप्रत किया गया था चुन्निलालभाइने ओशीयों तीर्थ तथा इन संस्थाकि अच्छी सेवा करी थी

सूत्र, समवायागजी सूत्र, अनुयोगद्वार सूत्र, नन्दीजी सूत्र स्थानायागजी सूत्र, जम्बुद्विपपन्नति सूत्र, आचाराग सूत्र, सूत्र कृतागजी सूत्र, उपासकदशाग सूत्र, अन्तगढदशाग सूत्र, अनुत्तरोधवाइजी सूत्र, निरियावलकाजी सूत्र, कप्पवडसियाजी सूत्र, पुप्फीयाजी सूत्र पुप्फचूलीयाजी सूत्र, विन्ही दशागजी सूत्र, वृहत्कल्प सूत्र, दशाश्रुतस्कध सूत्र, व्यवहार सूत्र, निशिथ सूत्र और कर्मग्रन्थादि प्रकारणों से खास द्रव्यानुयोगका सूक्ष्म ज्ञानकों सुगमतारूप हिन्दी भाषामें जो कि मामान्य बुद्धिवाला भी सुखपूर्वक समज के लाभ सके और इन भागोंमें बारहा सूत्रोंका हि ही भाषान्तर भी करवाया गया है शीघ्रबोधके प्रथम भाग से पचवीसवा भाग तकके लिये यहा विशेष विवेचन करनेकि आवश्यका नहीं है उन भागोंकि महत्वता आद्योपा त पढने से ही हो सकी है इतना तो लोगोपयोगी हुवा है कि स्वल्प ही समय में उन भागोंकि नकलो खलासे हो गइ थी और ज्यादा मागणी होने से द्वितीयावृत्ति छपाइ गइ थी वह भी थोडा ही दीनों में खलास हो जानेसे भी मागणी उपर कि उपर आ रही है। अतेव उन भागोंको और भी छपानेकि आवश्यका होनेसे पुष्प २६-२७-२८-२९-३० को इस संस्था द्वारा प्रगट कीया जाता है उन शीघ्रबोधके भागोंकि जैसी जैन समाजमें आदर सत्कारके साथ आवश्यका है उतनी ही स्थान कवासी और तेरहाप-थी लोगोंमें आवश्यका दिखाइ दे रही है।

इस सस्था में जीतना ज्ञानकि सुगमता है इतनी ही उदारता है शरू से पुस्तकोंकि लागी किंमत से भी बहुत कम किंमत रखी गइ थी जिस्मे भी साधु साध्वीयों, ज्ञानभडार, लायब्रेरी आदि सस्थाओंको तो भेट ही भेजी जाती थी जब ८५ पुष्प छप चुके थे वहातक भेट से ही भेजे जाते थे बादमें कार्यकर्त्तायोंने सोचा कि पुस्तकोंका अनादर होता है, आशातना बढती है इस वास्ते लागी किंमत रख देना ठीक है कारण गृहस्थोंके घर से रूपैया

आठ आना महज ही में निकल आवेगे और यहा रूपैये जमा होंग उनों से और भी ज्ञान वृद्धि हागी सिफ यारहा सूत्रोंक भाषान्तरकि किंमत कुच्छ अधिक रखी गइ है इसका कारण यह है कि इसमें च्यार छेदसूत्रोंका भाषान्तर भी साथ में है जो कि जिनोंको खास आवश्यक्ता होगा वह ही मगावेगा। तथापि महेनत देखतों किंमत ज्यादा नहीं है शेष किताबोंकी किंमत हमारे उद्देश माफीक ही रखी गइ है पाठकगण किंमत तर्फ ध्यान न दे किन्तु ज्ञान तर्फ दे कि जिन सूत्रोंका दर्शन होना भी दुर्लभ थे वह आज आपके करकमलो मे मौजुद है इसका ही अनुमोदन करे। अस्तु।

कि संवत् १९७९ का फागण वद २ के रोज श्रीमान्मुनि महाराजश्री श्रीहरिसागरजी तथा श्रीमान् ज्ञानसुन्दरजी महाराज ठाणे ४ का शुभागमन लोहावट ग्राम में हुवा श्रोतागणकी दीर्घ काल से अभिलाषा थी कि मुनि श्रीज्ञानसुन्दरजी महाराज पधारे तों आपश्रीके मुखारविंद से श्री भगवतीजी सूत्र सुने तीन वर्षो से विनंती करते करते आप श्रीमानोंका पधारना होनेपर यहाके श्रावकोने आग्रे से अर्ज करनपर परम दयाल मुनि श्रीने हमारी अर्ज स्वीकार कर मीती चैत वद ६ क रोज श्री भगवतीजी सूत्र सुध्रे व्याख्यानमे फरमाना प्रारभ किया जिस्का म हात्सव वरघोडा रात्रीजागरणादि शा रत्नचदजी छागमलजी पारख कि तफसे हुवा था इस शुभ अवसर पर फलोधीसे श्रोजैन नवयुवक प्रेम मडल तथा अन्यभी श्रावकगण पधारे थे वरघोडा का दर्श-अंग्रेजीबाजा ग्यानमंडलीयों और सरकारी कर्मचरियों पोलीस आदिसे बडा ही प्रभावशाली दीखाइ देते थे श्री भगवतीजी सूत्रकि पूजामें अठारा मानामोहरों मीलाक करीबन् रू १०००) का आवादानी हुवयी जिस्का श्री संघसे यह ठेराव हुवा कि इन आवादानोंसे ताव ज्ञानमय पुस्तकें छपा देना चाहिये।

इस सुअवसरपर श्री सुखसागर ज्ञान प्रचारक नामकि सस्थाकि भी स्थापना हुइ थी सस्थाका खास उदेश यह रखा गया था कि जैनशासनके सुख समुद्रमें ज्ञानरूपी अगम्य जल भरा हुवा है उन ज्ञानामृतका आस्वादन जनताको एकेक बिंदु द्वारा करवा देना चाहिये इस उदेशका प्रारभमें श्री द्रव्यानुयोग द्वितीय प्रवेशिका प्रथम बिन्दु तथा श्री भाव प्रकरण दूसरा बिन्दु आप लोगोंकी सेवामें पहुचा दिया था ।

यह तीसरा बिन्दु जो शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ जो प्रथम और दुसरी आवृति श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला—फलोधीसे छप चुकीथी परन्तु वह सब नक्ले खलास हो जानेपरभी मागणी अधिक और अति लाभ जानके नइ आवृति जोंकि पहले कि निष्पत् इसमे बहुत सुधारा करवाया गया है शीघ्र बोध भाग पहले में धर्मके सन्मुख होनेवालेके गुण मार्गानुसारीके ३५ बोल व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ बोल, पैंतीस बोल लघुदडक महादडक विरहद्वार रूपी अरूपी उपयोग चौदाबोल वीसबोल तेवीस बोल चालीस बोल १०८ बोल और छे आरों का इतिहासका वर्णन है दूसरा भागमें विस्तार पूर्वक नौतत्व पचवीस क्रियाका विवरण है । तीसरा भागमें नय निक्षेपा स्याद्वाद षट्द्रव्य सप्तभगी अष्ट पक्ष द्रव्यगुणपर्याय आदि जो जैनागमकि खास कुंजीयों कहलाती है भाषा आहार सज्ञायोनि और अल्पा बहुत्व आदि है । चोथा भागमें मुनिमहाराजोंके मार्ग जेसे अष्ट प्रवचन, गौचरीके दोष, मुनिके उपकरण, साधु समाचारी आदि है ॥ पाचवें भागमें कर्मादि दुर्गम्य विषयभी बहुत सुगमतासे लिखी गइ हैं इन पाचो भागकि विषयानुक्रमणिका देखनेसे आपको रोशन हो जायगा कि कितने महत्ववाले विषय इन भागोंमे प्रकाशित करवाये गये है ।

अब हम हमारे पाठकोंका ध्यान इस तर्फ आकर्षित करना चाहते है कि जितने छद्मस्थ जीव है उन सबकि एकरूची नही

होती है यान अलग अलग रूची होती है इतनाही नही बल्क एक मनुष्यकि भी हर समय एक रूची नही होती है जिम जिस स मय जो जो रूची होती है तदानुसार यह कार्य किया करता है। अगर वह काय परमार्थक लिये कीसी रूपमे कीसी व्यक्तिके लीये उपकारी होतो उनका अनुमोदन करना और उनमे लाभ उठाना सज्जन पुरुषोंका कर्तव्य है।

यद्यपि मुनिश्री कि रूची जैनागमोंपर अधिक है और जन ताको सुगमता पूर्वक जैनागमोंका अवलोकन करवा देनेके इरा दामे आपने यह प्रवृति स्वीकार कर जनसमाज पर बडा भारी उपकार कीया है इस वास्ते आपका ज्ञानदानकि उदार वृत्तिको हम सहर्ष वधावे स्वीकार करते है और साथमें अनुरोध करते है कि आप चीरकाल तक इस वीर शासनकी सेवा करते हुवे हमारे ४८ आगमोंको ही इसी हिन्दी भाषाद्वारा प्रगट करे ताक हमारे जेसे लोगोंको मालुम होकिहमारे घरके अन्दर यह अमूल्य रत्न भरे हुवे है।

अन्तमें हमारे वाचक वृन्दसे हम नम्रता पूर्वक यह निवेदन करते है कि आप एक दफे शीघ्रबोध भाग १ से २५ तक मग वाके क्रमश पढीये कारण इन भागोंकी शैली एसी रखी गइ है कि क्रमश पढनेसे हरेक विषय ठीक तौरपर समजमे आसकेगें। ग्रन्थकी सार्थकता तब ही हो सक्ती है कि ग्रन्थ आद्योपान्त पढे और ग्रन्थकर्ताका अभिप्रायको ठीक तोरपर समजे। बस हम इतना ही कहक इस प्रस्तावनाको यहा ही समाप्त कर देते है। सुज्ञेषु किं बहुना।

१९८० का मीती
कार्तिक शुद ५
ज्ञानपचमि

भवदीय
छोगमल कोचर
प्रेसिडन्ट श्री जैन नवयुवक मित्रमन्डल
मु० लोहावट—मारवाड

खुश खबर लिजिये

सूत्र श्री भगवतीजी, प्रज्ञापनाजी, जीवाभिगमजी, सम
गजी, अनुयोगद्वारजी दशवैकालिकजी आदि से उध्दरीत
हुवे बालावबोध हिन्दी भाषा में यह द्वितीयावृत्ति अच्छा ह
और खुलासाके साथ बढीये कागद, अच्छा टैप, सुन्दर क
पक हो

जल्द मे यह ग्रन्थ एक द्रव्यानुयोगका खजाना रूप
करवाया गया है किमत मात्र रु. १॥।

जलदी किजिये खलास हो जानेपर मीलना असंभव है

शीघ्रबोध भाग १–२–३–४–५ वा

जिस्की संक्षिप्त

विषयानुक्रमणिका

शीघ्रबोध भाग तीजो

शीघ्रबोध भाग ४-थो.

शीघ्रबोध भाग ५ वा.

श्रीशीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ वा के
थोकडोंकि नामावली.

किंमत मात्र रु. १॥

१८९	२	पर्याय	गुण
२३९	१४	जास	जिम
२४०	२	रय	रक्षा
२४४	२०	समिमि	समिति
२६५	१०	„ स्नातकमें एक केयली समु॰ पाय	
२८५	७	इच्छार	इच्छाकार
२८५	१०	इच्छार	इन्छाकार
२८६	१७	३–८	२–८
२८३	१७	२–८	३–८
३०६	६	लोन	लोग
३०९	४	५८	५७
३१७	१	१३२	१२२

॥ श्री रत्नप्रभसूरिसद्गुरुभ्यो नमः ॥

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग पहेला.

—❀(◎)❀—

धर्मके सन्मुख होनेवालोमें १५ गुण होना चाहिये ।

—oo◎oo—

१ नितीवान हो, कारण निती धर्मकी माता है ।
२ हीम्मत बाहादुर हो, कारण कायरोंसे धर्म नही होता है ।
३ धैर्यवान हो, हरेक कार्योमें आतुरता न करे ।
४ बुद्धिवान् हो, हरेक कार्य स्वमति विचारके करे ।
५ असत्यका धीक्कारनेवाला हो, और सत्य वचन बोले ।
६ निष्कपटी हो, हृदय साफ स्फटिकरत्न माफिक हो ।
७ विनयवान, और मधुर भाषाका बोलनेवाला हो ।
८ गुणग्राही हो, और स्वात्मश्लाघा न करो ।
९ प्रतिज्ञा पालक हो, कीये हुवे नियमोंको बराबर पाले ।
१० दयावान हो, और परोपकार कि बुद्धि हो ।
११ सत्य धर्मका अर्थी हो, सत्यग्राही पक्ष रखना ।
१२ जितेन्द्रिय हो, कषायकी मंदता हो ।
१३ आत्म कल्याण कि द्रढ इच्छा हो ।

१४ तत्त्व विचारमें निपुण हो। तत्त्वमें रमणता करे।
१५ जिन्होंके पास धर्म पाया हो उन्होंका उपकार कभी
भूलना नहीं परन्तु समयपाके प्रति उपकार करे।

थोकडा नम्बर १

(मार्गानुसारीके ३५ बोल)

(१) न्यायसंपन्न विभव-न्यायसे द्रव्य उपार्जन करना
परन्तु विश्वासघात स्वामिद्रोही, मित्रद्रोही, चोरी, कूड तोल
कूड माप आदि न करे। किसीकी थापण न रखे खोटा लेख न
बनावे महान् आरंभवाले कर्मादानादि न करे। अर्थात् लोक
विरुद्ध कार्य न करे।

(२) शिष्टाचार-धार्मिक नैतिक और अपने कुलकि म
र्यादा माफिक आचार व्यवहार रखना। अच्छे आचारवालोंका
संग और तारीफ करना।

(३) सरिखे धर्म और आचार व्यवहारवाले अन्य गो
त्रीके साथ अपने बच्चोंका विवाह (लग्न) करना, दम्पतिके
आयुष्यादिका अवश्य विचार करना अर्थात् बालग्न वृद्धलग्न
से बचना और दम्पतिका धर्म-जीवन सामान्य धर्मसे ही सुख
पूर्वक होता है। वास्ते सामान्यधर्म अवश्य देखना।

(४) पापके कार्य न करना अर्थात् जिसमें मिथ्यात्वादिसे
चिकने कर्मबन्ध होता है या अनर्थ दंड-पाप न करना और उप
देश भी नहीं देना।

(५) प्रसिद्ध देशाचार माफिक वर्ताव रखना उद्भ

चेष या खरचा न करना ताके भविष्यमें समाधि रहै। आया-दानी माफीक खरचा रखना।

(६) कीसीका भी अवगुनवाद न बोलना जो अवगुन-वाला हो तो उन्हीकि सगत न करना तारीफ भी न करना प-रन्तु अवगुण बोलके अपनि आत्माको मलीन न करे।

(७) जिस मकानके आसपासमे अच्छे लोगोंका मकान हो और दरवाजे अपने कब्जेमेंहा, मन्दिर, उपासरा या साधर्मी भाइयों नजीक हो एसे मकानमें निवास करना चाहिये। ताके सुखसे धर्मसाधन करनसे।

(८) धम, निति आचारवन्त और अच्छी सलाहके देने वालोंकी सगत करना चाहिये ताके चित्तमे हमेशा समाधी और बनी रहै।

(९) मातापिता तथा वृद्ध सज्जनोंकि सेवाभक्ति विनय करना तथा कोइ आपसे छोटा भी होतो उनका भी आदर करना सबसे मधुर वचनोंसे बोलना।

(१०) उपद्रववाले देश, ग्राम या मकान हो उनका परित्याग करना चाहिये। रोग, मरकी, दुष्काल आदिसे तक-लीफ हो एसे देशमें नही रहेना।

(११) लोक निंदने योग्य काय न करना और अपने स्त्री पुत्र और नोकरोंको पहलेसे ही अपने कब्जेमे रखना अच्छा आचार व्यवहार सीखाना।

(१२) जैसी अपनी स्थिति हो या पेदास हो इसी माफिक खरचा रखना शिरपर करजा करके ससार या धर्मकार्य मे ना मून हासल करनेके इरादेसे बेभान होके खरचा न कर देना, खरचा करनेके पहिले अपनी हासयत देखना।

(१३) अपने पूवर्जोका चलाइ हूइ अच्छी मर्यादाको या वेषको ठीक तरहसे पालन करना कोमीके देखादेख प्रवृत्ति या वेष नही बदलना।

(१४) आठ प्रकारके गुणोंकों प्रतिदिन सेवन करते रहना यथा (१) धर्मशास्त्र श्रवण करनेकि इच्छा रखना (२) योग मीलनेपर शास्त्र श्रवणमे प्रमाद न करना (३) सुने हुवे शास्त्रके अर्थको समझना (४) समझे हूवे अर्थको याद करना (५) उसमें भी तर्क करना (६) तर्कका समाधान करना (७)अनुपेक्षा उपयोगमे लेना या उपयोग लगाना (८) तत्त्वज्ञानमें तल्लीन होजाना शुद्ध श्रद्धा रखना दुसरेको भी तत्त्वज्ञानमें प्रवेश करा देना।

(१५) प्रतिदिन करने योग्य धर्मकार्यको सभालते रहेना अर्थात् टाइमसर धर्म क्रिया करते रहना। धर्महीको सार समझना।

) १६) पहिले कियेहुवे भोजनके पचजानेसे फिर भोजन करना इसीसे शरीर आरोग्य रहता है और चित्तमे समाधी रहेती है।

(१७) अपचा अजिर्ण आदि रोग होनेपर तुरत आहारको त्याग करना, अर्थात् खरी भूख लगनेपर ही आहार करना परन्तु लोलुपता होके भोजन करलेनेके बाद मीठानादि न खाना और प्रकृतिसे प्रतिकुल भोजन भी नही करना, रोग आनेपर औषधीके लिये प्रमाद न करना।

(१८) संसारमे धर्म, अर्थ, कामको साधते हुवे भी मोक्ष वर्गको भूलना न चाहिये। सारवस्तु धर्म ही समझना। और समय पाकर धर्मकार्योमे पुरुषार्थ भी करना।

(१९) अतिथी-अभ्यागत गरीब रांक आदिको दु खी

देखके करुणाभाव लाना यथाशक्ति उन्होंकी समाधीका उपाय करना।

(२०) कीसीका पराजय करनेके इरादेसे अनितिका कार्य आरभ नही करना, विना अपराध किसीको तकलीफ न पहुचाना।

(२१) गुणीजनोंका पक्षपात करना उन्होंका बहुमान करना सेवाभक्ति करना।

(२२) अपने फायदेकारी भी क्यों न हो परन्तु लोग तथा राजा निषेद्ध कीये हुवे कार्यमे प्रवृत्ति न करना।

(२३) अपनी शक्ति देखके कार्यका प्रारभ करना प्रारभ किये हुवे कार्यको पार पहूचा देना।

(२४) अपने आश्रितमे रहे हुये मातापिता, स्त्रि, पुत्र, नोकरादिका पोषण ठीक तरहसे करना। कीसीको भी तकलीफ न हो एसा वर्त्ताव रखना।

(२५) जो पुरुष व्रत तथा ज्ञानमे अपनेसे बडा हो उन्होंको पूज्य तरीके बहुमान देना, और विनय करना। तथा गुणलेनेकि कोशीस करना।

(२६) दीर्घदर्शी-जो काय करना हो उन्होंमे पहिले दीर्घ द्रष्टीसे भविष्यके लाभालाभका विचार करना चाहिये।

(२७) विशेषज्ञ कोइ भी वस्तु पदार्थ या कार्य हो तो उन्हीक अन्दर कोनसा तत्व है कि जो मेरी आत्माको हितकर्ता है या अहितकर्ता है उन्हीका विचार पहले करना चाहिये।

(२८) कृतज्ञ-अपने उपर जिसका उपकार है उन्हीको कभी भूलना नही, जहांतक बने वहातक प्रतिउपकार करना चाहिये।

(२९) लोकप्रीय-सदाचारसे ऐसी प्रवृत्ति अपनी रखनी चाहिये कि वह सब लोगोंको प्रीय हो अर्थात परोपकारके लिये अपना कार्य छोडके दुसरेके कायका पहले करदेना चाहिये।

(३०) लज्जावन्त-लौकीक और लोकोत्तर दोनों प्रकारकी लज्जा रखना चाहिये कारण लज्जा है सो निनिकि माता है लज्जावन्तका लोक तारीफ करते है बहुतसी वखत अकार्यसे बच जाते है।

(३१) दयालुहो-सब जीवोंपर दयाभाव रखना अपने प्राणके माफीक सब आत्मावोंको समझके कीसीको भी नुकशान न पहुचाना।

(३२) सुन्दर आकृतिवाला अर्थात् आप हमेशा हस्तवदन आनन्दमे रहना अर्थात् क्रुर प्रकृति या क्षीण क्षीण प्रत्ये क्रोधमानादिकि वृत्ति न रखना। शान्त प्रकृति रखनेसे अनेक गुणोंकि प्राप्ती होती है।

(३३) उन्मार्ग जाते हुवे जीवोंको हितबोध देके अच्छे रहस्तेका बोध करना उन्मार्गका फल कहते हुवे मधुर वचनोंसे समझाना।

(३४) अन्तरग वैरी क्रोध, मान, माया, लोभ, हर्ष, शोक इन्होंके पराजय करनेका उपाय या साधनों तैयार करतेहुवे वैरीयोंको अपने कब्जे करना।

(३५) जीवकों अधिक भ्रमण करानेवाले विषय (पचेन्द्रिय) और कषाय है उनका दमन करना, अच्छे महात्मावोंकी सत्सग करते रहना, अर्थात मोक्षमार्ग बतलानेवाले महात्मा हो होते है सन्मार्गका प्रथम उपाय सत्संग है।

यह पैंतीस बोल संक्षेपसे ही लिखा है कारण कठस्थ करनेका

लोकों अधिक विस्तार करनेसे बखत बोजारूप हो जाता है वास्ते यह ३५ बोल कंठस्थ करके फीर विद्वानोंसे विस्तारपूर्वक समझके अपनी आत्माका कल्याण अवश्य करना चाहिये। शम्।

थोकडा नं० २

(व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ बोल)

इन सडसठ बोलोंको बारह द्वार करके कहेंगे-(१) सद्दहणा ४ (२) लिंग ३ (३) विनय १० प्रकार (४) शुद्धता ३ (५) लक्षण ५ (६) भूषण ५ (७) दोषण ५ (८) प्रभावना ८ (९) आगार ६ (१०) जयणा ६ (११) स्थानक ६ (१२) भावना ६ इति।

(१) सद्दहणा चार प्रकारकी-(१) पर तीर्थीका अधिक परिचय न करे (२) अधर्म प्ररूपक पाखंडीयोंकी प्रशंसा न करे (३) स्वमतका पासत्था, उसन्ना और कुलिंगादिकी संगत न करे इन तीनोंका परिचय करनेसे शुद्ध तत्त्वकी प्राप्ति नहीं हो सकती (४) परमार्थको जाणनेवाले संविग्न गीतार्थकी उपासना करके शुद्ध श्रद्धाको धारण करें।

(२) लिंगका तीन भेद-(१) जैसे तरुण पुरुष राग रागउपर राचे वैसे ही अध्यात्ममें श्री जिन शासनपर राचे (२) जैसे क्षुधातुर पुरुष खीर खांडयुक्त भोजनका प्रेम सहित आदर करे वैसे ही वीतरागकी वाणीका आदर करे (३) जैसे व्यवहारीक ज्ञान पढनेकी तिव्र इच्छा हो और पढानेवाला मिलनेसे पढ कर इस लोकमें सुखी होवे वैसे ही वीतरागके आगमोंका सुक्ष्मार्थ नित नया ज्ञान सीखके इह लोक और परलोकके मनोवाञ्छत सुखको प्राप्त करें।

(२९) लोकप्रीय-सदाचारसे एसी प्रवृत्ति अपनी रखनी चाहिये कि वह सब लोगोंका प्रीय हो अर्थात् परोपकारके लिये अपना कार्य छोडके दुसरेके कार्यको पहले करदेना चाहिये।

(३०) लज्जावन्त-लौकीक और लोकोत्तर दोनों प्रकारकी लज्जा रखना चाहिये कारण लज्जा है सो नितिकि माता है लज्जावन्तकी लोक तारीफ करते हैं बहुतसी वखत अकार्यसे बच जाते है।

(३१) दयालुजी-सब जीवोंपर दयाभाव रखना अपने प्राण के माफीक सब आत्माओंको समझके कीसीको भी नुकशान न पहुचाना।

(३२) सुन्दर आकृतिवाला अर्थात् आप हमेशा हस्तवदन आनन्दमें रहना अर्थात् क्रूर प्रकृति या क्षीण क्षीण क्रन्ये क्रोधमानादिकि वृत्ति न रखना। शान्त प्रकृति रखनेमें अनेक गुणोंकि प्राप्ती होती है।

(३३) उन्माग जाते हुवे जीवोंको हितबोध देवे अच्छे रहस्तेका बोध करना उन्मार्गका फल कहते हुये मधुर वचनोंसे समझाना।

(३४) अन्तरंग वैरी क्रोध, मान माया, लोभ, दर्प, शोक इ होंके पराजय करनेका उपाय या साधनों तैयार करतेहुवे वैरीयोंका अपने कब्जे करना।

(३५) जीवको अधिक भ्रमण करानेवाले विषय (पचेन्द्रिय) और कषाय है उनका दमन करना, अच्छे महात्माओंकी सत्संग करते रहना, अर्थात मोक्षमार्ग बतलानेवाले महात्मा ही होते हैं सन्मार्गका प्रथम उपाय सत्संग है।

यह पैंतीस बोल संक्षेपसे ही लिखा है कारण कठस्थ करनेका

लोंको अधिक विस्तार कीतभी बखत बोजारुप हो जाता है वास्ते यह ३५ बोल कंठस्थ करके फीर विद्वानोंसे विस्तारपूर्वक समझके अपनी आत्माका कल्याण अवश्य करना चाहिये। शम।

थोकडा नं० २

(व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ बोल)

इन सडसठ बोलोंको बारह द्वार करके कहेंग-(१) सद्दहणा ४ (२) लिंग ३ (३) विनय १० प्रकार (४) शुद्धता ३ (५) लक्षण ५ (६) भूषण ५ (७) दोषण ५ (८) प्रभावना ८ (९) आगार ६ (१०) जयणा ६ (११) स्थानक ६ (१२) भावना ६ इति।

(१) सद्दहणा चार प्रकारकी-(१) पर तीर्थीका अधिक प रिचय न करे (२) अधर्म प्ररुपक पाखंडीयोंकी प्रशंसा न करे (३) स्वमतका पासत्था, उसन्ना और कुलिंगादिकी संगत न करे इन तीनोंका परिचय करनेसे शुद्ध तत्वकी प्राप्ति नहीं हो सकती (४) परमार्थको जाननेवाले संविग्न गीतार्थकी उपासना करके शुद्ध श्रद्धाको धारण करें।

(२) लिंगका तीन भेद-(१) जैसे तरुण पुरुष रंग राग उपर राचे वैसे ही भव्यात्मा श्री जिन शासनपर राचे (२) जैसे क्षुधा तुर पुरुष खीर खांडयुक्त भोजनका प्रेम सहित आदर करे वैसे ही वीतरागकी वाणीका आदर करे (३) जैसे व्यवहारीक ज्ञान पढने को तिव्र इच्छा हो और पढानेवाला मिलनेसे पढ कर इस लोकमें सुखी होवे वैसे ही वीतरागके आगमोंका सुक्ष्मार्थ नित नया ज्ञान सीखके इह लोक और परलोकके मनोवांच्छत सुखको प्राप्त करें।

(२९) लोकप्रीय-सदाचारसे एसी प्रवृत्ति अपनी रखनी चाहिये कि यह सब लोगोंको प्रीय हो अर्थात् परोपकारके लिये अपना कार्य छोडके दुसरेके कार्यको पहले करदेना चाहिये।

(३०) लज्जावन्त-लौकीक और लोकोत्तर दोनो प्रकारकी लज्जा रखना चाहिये कारण लज्जा है सो नितिकि माता है लज्जावन्तकी लोक तारीफ करते हैं बहुतसो वखत अकार्यसे बच जाते है।

(३१) दयालुहो-सब जीवोंपर दयाभाव रखना अपने प्राण के माफीक सब आत्मावोंको समझके कीसीको भी नुकशान न पहुचाना।

(३२) सुन्दर आकृतिवाला अर्थात् आप हमशा हस्तवदन आनन्दमे रहना अर्थात् क्रुर प्रकृति या भीण क्षीण मन्ये क्रोधमा नादिकि वृत्ति न रखना। शान्त प्रकृति रखनेसे अनेक गुणोंकि प्राप्ती होती है।

(३३) उन्मार्ग जाते हुवे जीवोंको हितबोध देके अच्छे रहस्तेका बोध करना उन्मार्गका फल कहते हुवे मधुर वचनोंसे समझाना।

(३४) अन्तरंग वैरी क्रोध, मान माया, लोभ, दर्प, शोक इन्होंके पराजय करनेका उपाय या साधनों तैयार करतेहुवे वैरीयोंको अपने कब्जे करना।

(३५) जीवको अधिक भ्रमण करानेवाले विषय (पचेन्द्रिय) और कषाय है उनका दमन करना, अच्छे महात्मावोंकी सत्संग करते रहना, अर्थात मोक्षमार्ग बतलानेवाले महात्मा ही होते है सम्मार्गका प्रथम उपाय सत्संग है।

यह पैंतीस बोल संक्षेपसे ही लिखा है कारण कंठस्थ करनेका

लोंको अधिक विस्तार कीतनी वखत बोजारूप हो जाता है वास्ते यह ३५ बोल कंठस्थ करके फीर विद्वानोंसे विस्तारपूर्वक समझके अपनी आत्माका कल्याण अवश्य करना चाहिये। शम्।

थोकडा नं० २

(व्यवहार सम्यक्त्वके ६७ बोल)

इन सडसठ बोलोंको बारह द्वार करके कहँग-(१) सद्दहणा ४ (२) लिंग ३ (३) विनय १० प्रकार (४) शुद्धता ३ (५) लक्षण ५ (६) भूषण ५ (७) दोषण ५ (८) प्रभावना ८ (९) आगार ६ (१०) जयणा ६ (११) स्थानक ६ (१२) भावना ६ इति।

(१) सद्दहणा चार प्रकारकी-(१) पर तीर्थीका अधिक परिचय न करे (२) अधर्म प्ररुपक पाखंडीयोंकी प्रशंसा न करे (३) स्वमतका पासत्था, उसन्ना और कुलिंगादिकी संगत न करे इन तीनोंका परिचय करनेसे शुद्ध तत्त्वकी प्राप्ति नहीं हो सकती (४) परमार्थका जाणनेवाले संविग्न गीतार्थकी उपासना करके शुद्ध श्रद्धाको धारण करें।

(२) लिंगका तीन भेद-(१) जैसे तरुण पुरुष रग राग उपर राचे वैसे ही भव्यात्मा श्री जिन शासनपर राचे (२) जैसे क्षुधातुर पुरुष खीर खांडयुक्त भोजनका प्रेम सहित आदर करे वैसे ही वीतरागकी वाणीका आदर करे (३) जैसे व्यवहारीक ज्ञान पढने की तिव्र इच्छा हो और पढानेवाला मिलनेसे पढ कर इस लोकमें सुखी होवे वैसे ही वीतरागके आगमोंका सुक्ष्मार्थ नित नया ज्ञान सीखके इस लोक और परलोकके मनोवाञ्छित सुखको प्राप्त करें।

(३) विनयका दश भेद- १) अरिहन्तोंका विनय करे (२) सिद्धोंका विनय (३) आचार्यका वि० (४ उपाध्यायका वि० (५) स्थवीरका वि० ६) गण बहुत आचार्योंका समुह)का वि० (७)कुल (बहुत आचार्योंके शिष्यसमुह)का वि० (८)स्वाधर्मीका वि० (९) संघका वि० (१०) संभोगीका विनय करे इन दशोंका बहुमानपूर्वक विनय करे। जैन शासनमें ' विनय मूल धर्म है '। विनय करनेसे अनेक सद्गुणोंकी प्राप्ति हो सक्ती है।

(४) शुद्धताके तीन भेद-(१) मनशुद्धता-मन करके अरिहन्तदेव ३४ अतिशय, ३५ वाणी, ८ महाप्रातिहार्य सहित १८ दूषण रहित×१२ गुण सहित हमारे देव है। इनके सिवाय हजारों कष्ट पडने पर भी सरागी देवोंका स्मरण न करे (२) वचन शुद्धता वचनसे गुण कीर्तन अरिहन्तोंके सिवाय दूसरे सरागी देवोंका न करे (३) काय शुद्धता-कायसे नमस्कार भी अरिहन्तोंके सिवाय अन्य सरागी देवोंको न करे।

(५) लक्षणके पांच भेद- १) सम-शत्रु मित्र पर सम परिणाम रखना (२) संवेग-वैराग भाव रखना याने संसार असार है विषय और कषायसे अनन्ताकाल भव भ्रमण करते हुये इस भव अच्छी सामग्री मिली है इत्यादि विचार करना। (३) निवग-शरीर और संसारका अनित्यपणा चिन्तवन करना। बने जहां तक इस मोहमय जगत्‌से अलग रहना और जगतारक जिनराज की दीक्षा ले कर्म शत्रुओंको जीतके सिद्धपदको प्राप्त करनेकी हमेशा अभिलाषा रखना (४) अनुकम्पा-स्वात्मा, परात्माकी

× दानान्तराय, लाभांतराय भोगांतराय, उपभोगांतराय वीर्यांतराय हास्य भय शोक जुगप्सा रति, अरति मिथ्यात्व अज्ञान अव्रत, राग, द्वेष निद्रा, मोह यह १८ दुषण न होना चाहिये।

अनुकम्पा करनी अर्थात् दुःखी जीवको सुखी करना (५) आस्ता-त्रैलोक्य पूजनीय श्री वीतरागके वचनोंपर दृढ श्रद्धा रखनी, हिताहितका विचार, अर्थात् अस्तित्व भावमें रमण करना। यह व्यवहार सम्यक्त्वका लक्षण है। जिस बातकी न्युनता हो उसे पूरी करना।

(६) भूषणके पाच भेद- १) जिन शासनमें धैर्यवत हो। शासनका हर एक कार्य धैर्यतासे करे। (२) शासनमें भक्तिवान हो (३) शासनमें क्रियावान हो (४) शासनमें चातुर्य हो। हर एक कार्य ऐसी चतुरताके साथ करे ताके निर्विघ्नतासे हो (५) शासनमे चतुर्विध संघकी भक्ति और बहुमान करनेवाला हो। इन पाच भूषणोंसे शासनकी शोभा होती है।

(७) दूषण पाच प्रकारका-(१) जिन वचनमें शका करनी (२) कक्षा-दूसरे मतोंका आडम्बर देखके उनकी वाच्छा करनी (३) वितिगिच्छा-धर्म करणीके फलमें सदेह करना कि इसका फल कुछ होगा या नहीं। अभीतक तो कुछ नहीं हुवा इत्यादि (४) पर पाखंडीसे हमेशा परिचय रखना (५) पर पाखडोकी प्रशसा करना ये पाच सम्यक्त्वके दूषण है। इसे टालने चाहिये।

(८) प्रभावना आठ प्रकारकी-(१) जिस कालमें जितने सूत्रादि हो उनको गुरुगमसे जाणे वह शासनका प्रभाविक होता है (२) बडे आडम्बरके साथ धर्म कथाका व्याख्यान करके शासनकी प्रभावना करें (३) विकट तपस्या करके शासनकी प्रभावना करे (४) तीन काल और तीन मतका जाणकार हो (५) तर्क, वितर्क, हेतु, वाद, युक्ति, न्याय और विद्यादि बलसे वादियोंको शास्त्रार्थमे पराजय करके शासनकी प्रभावना करे (६) पुरुषार्थी पुरुष दिक्षा लेके शासनकी प्रभावना करे (७) कविता करनेकी

आदि हो तो यथाविधि करके शासनकी प्रभावना करे (८) ब्रह्मच यादि कोइ बडा व्रत लेना हो तो प्रगट बहुतसे आदमियोंके बीच में ले। इसीसे लोगोंकी शासन पर श्रद्धा और व्रत लेनेकी रुची बढती है अथवा दुबळ स्वधर्मी भाइयोंकी सहायता करनी यह भी प्रभावना है परन्तु आजकल चौमासेमें अभक्ष वस्तुओंकी प्र भावना या लड्डू आदि बाटते है दीर्घदृष्टिसे विचारीये इस बाटने से शासनकी क्या प्रभावना होती है ? और कितना लाभ है इस को बुद्धिमान स्वय विचार कर सके है अगर प्रभावनामें आपका सच्चा प्रेम हो तो छोटे छोटे तत्वज्ञानमय ट्रेक्टकि प्रभाव ना करिये ताके आपके भाइयोंको आत्मज्ञानकि प्राप्ती हो।

(९) आगार छ हैं-सम्यक्त्वके अंदर छे आगार है (१) राजाका आगार (२) देवताका० (३) न्यातका० (४) माता पिता गुरुजनोंका० (५) बलवतका० (६) दुष्कालमें सुखसे आजीविका न चलती हो, इन छ आगारोंसे सम्यक्त्वमें अनुचित कार्य भी करना पडे तो सम्यक्त्व दुषित नहीं होता है।

(१०) जयणा छे प्रकारकी–१) आलाप-स्वधर्मी भाईयोंसे एक वार बोलना (२) संलाप-स्वाधर्मी भाइयोंसे वार २ बोलना (३) मुनियोंको दान देना और स्वधर्मी वात्सल्य करना (४) प्रति दिन वार २ करना (५) गुणीजनोंका गुण प्रगट करना (६) और वन्दन नमस्कार बहुमान करना।

(११) स्थान छे हैं– १) धर्मरुपी नगर और सम्यक्त्व रुपी दरवाजा (२) धर्मरुप वृक्ष और सम्यक्त्वरुपी जड (३) धर्मरुपी प्रासाद और सम्यक्त्वरुपी नीव (४) धर्मरुपी भोजन और सम्य-क्त्वरुपी थाल (५) धर्मरुपी माल और सम्यक्त्वरुपी दुकान (६) धर्मरुपी रत्न और सम्यक्त्वरुपी तिजूरी०

(१२) भावना ६ हैं-(१) जीव चैतन्य लक्षणयुक्त असंख्यात प्रदेशी निष्कलंक अमूर्ति है, (२) अनादि कालसे जीव और कर्मोंका संयोग है। जैसे दूधमें घृत, तिलमें तेल, धूलमें धातु, पुष्पमें सुगंध, चन्द्रका तीमें अमृत इसी माफिक अनादि संयोग है (३) जीव सुख दु:खका कर्ता है और भोक्ता है। निश्चय नयसे कर्मका कर्ता कर्म है और व्यवहार नयसे जीव है (४) जीव, द्रव्य, गुण पर्याय, प्राण और गुण स्थानक सहित है (५) भव्य जीवको मोक्ष है (६) ज्ञान, दर्शन और चारित्र मोक्षका उपाय हैं ॥ इति ॥ इस थोकडेको कंठस्थ करके विचार करो कि यह ८७ बोल व्यवहार सम्यक्त्वके है इनमेंसे मेरेमें कितने है और फिर आगेके लिये बढनेकी कोशीस करो और पुरुषार्थ द्वारा उनको प्राप्त करो। कल्याणमस्तु ॥

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नम्बर ३

(पैंतीस बोल)

(१) पहेले बोले गति च्यार-नरकगति, तीर्यंचगति, मनुष्यगति और देवगति

(२) जाति पांच-एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय, चोरिंद्रिय और पंचेन्द्रिय

(३) काया छे-पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय वायुकाय, वनस्पतिकाय, और त्रसकाय।

(४) इन्द्रिय पाच-श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय और स्पर्शन्द्रिय।

(५) पर्याप्ति छे-आहार पर्याप्ति, शरीर पर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति श्वासोश्वास पर्याप्ति, भाषा पर्याप्ति, और मन पर्याप्ति-

(६) प्राणदश-श्रोत्रेन्द्रिय बलप्राण चक्षुइन्द्रिय बलप्राण घ्राणेन्द्रिय बलप्राण, रसेन्द्रिय बलप्राण, स्पर्शेन्द्रिय बलप्राण, मनबलप्राण, वचन बलप्राण, काय बलप्राण, श्वासोश्वास बलप्राण आयुष्य बलप्राण

(७) शरीर पाच-औदारिक शरीर वैक्रिय शरीर, आहारीक शरीर, तेजस शरीर, कारमाण शरीर।

(८) योग पदरा-च्यार मनके, च्यार वचनके, सात कायके, यथा-सत्यमनयोग, असत्यमनयोग, मिश्रमनयोग, व्यवहार मनयोग सत्यभाषा, असत्यभाषा, मिश्रभाषा व्यवहार भाषा, औदारीक काययोग, औदारीक मिश्र काययोग वैक्रियकाययोग वैक्रिय मिश्रकाययोग आहारक काययोग, आहारक मिश्र काययोग और कार्मण काययोग।

(९) उपयोग बारहा-पाच ज्ञान तीन अज्ञान, च्यार दर्शन, यथा-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान अवधिज्ञान, मन पर्यवज्ञान, केवलज्ञान, मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान विभगज्ञान चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन

(१०) कर्म आठ-ज्ञानावर्णीय (जैसे घाणीका बेल) दर्शनावर्णीय (जैसे राजाका पोलीया) वेदनीय कर्म (जैसे मधु लिप्त छुरी) मोहनीय कर्म (मदिरा पान कीये हुवे मनुष्य)

आयुष्यकर्म (जैसे कारागृह) नामकर्म (जैसे चीतारो) गोत्र-कर्म (कुभार) अतरायकर्म (जैसे राजाका खजाची) ।

(११) गुणस्थानक- चौदा- मिथ्यात्वगुणस्थानक, सास्वादन गु० मिश्र गु० अव्रतसम्यग्दृष्टि गु० देशव्रती श्रावकका गु० प्रमत्त साधुका गु० अप्रमत्त सा धु गु० निवृतिबादर गु० अनिवृतिबादर गु० सुक्ष्म सपराय गु० उपशान्त मोह गु० क्षीण मोह गु० सयोगि गु० अयोगि गु० ।

(१२) पाच इन्द्रियोंका-२३ विषय श्रोत्रेन्द्रियकि तीन विषय-जीवशब्द अजीवशब्द मिश्रशब्द, चक्षुरिन्द्रियकी पाच विषय कालारग, निलारग, रातो (लाल), पीलोरग, सफेदरग, घ्राणेन्द्रियकी दोय विषय सुगन्ध, दुर्गन्ध, रसेन्द्रियकी पाच विषय तीक्त कटुक, कषाय आम्बिल, मधुर, स्पर्शेन्द्रियकी आठ विषय कक्‍श, मृदुल, गुरु लघु, सीत उष्ण, स्निग्ध, रुक्ष

(१३) मिथ्यात्वदश-जीवको अजीव श्रद्धे वह मिथ्यात्व, अजवको जीव श्रद्धे वह मिथ्यात्व, धर्मको अधर्म श्रद्धे, अधर्मको धर्म श्रद्धे० साधुको असाधु श्रद्धे असाधुको साधु श्रद्धे० अष्ट कर्मोंसे मुक्तको अमुक्त श्रद्धे० अष्टकर्मोंसे अमुक्तको मुक्त श्रद्धे० ससारके मार्गको मोक्षका मार्ग श्रद्धे० मोक्षके मार्गको ससारका मार्ग श्रद्धे वह मिथ्यात्व है विशेष मिथ्यात्व २५ प्रकारका देखो गुणस्थानद्वार।

(१४) छोटी नवतत्त्वके ११५ बोल-विस्तार देखो व डो नवतत्वसे। नवतत्वके नाम जीवतत्व, अजीवतत्व, पुन्य तत्व, पापतत्व, आश्रवतत्व, संवरतत्व, निर्ज्जरातत्व बन्धतत्व, मोक्षतत्व। जिसमे।

(क) जीवतत्व के चौदा भेद है। सूक्ष्म एकेन्द्रिय बादर एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञीपंचेन्द्रिय एवं सातोंके पर्याप्ता सातोंके अपर्याप्ता मीलानेसे १४ भेद जीवका है।

(ख) अजीवतत्वके चौदे भेद है यथा-धर्मास्तिकायके तीन भेद है धर्मास्तिकायके स्कन्ध देश, प्रदेश, एवं अधर्मास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश एवं आकाशास्तिकायके स्कन्ध देश, प्रदेश एवं नौ और दशवा काल तथा पुद्गलास्तिकायके च्यार भेद स्कन्ध, स्कन्धदेश स्कन्धप्रदेश परमाणु पुद्गल एवं चौदा भेद अजीवका है।

(ग) पुन्यतत्वके नौ भेद है। अन्न देना पुन्य पाणी देना पुन्य, मकान देणा पुन्य पाटपाटला शय्या देना पुन्य-वस्त्र देना पुन्य मनपुन्य, वचनपुन्य, कायपुन्य, नमस्कारपुन्य

(घ) पापतत्वके अठारा भेद। प्राणातिपात (जीवहिंसा करना) मृषावाद (जुठ बोलना) अदत्तादान (चोरी करना) मैथुन परिग्रह क्रोध, मान, माया, लोभ, राग द्वेष कलह, अभ्याख्यान, पैशुन, परपरीवाद, रति अरति, माया-मृषावाद, मिथ्या दर्शन्य एवं १८ पाप

(च) आश्रवतत्वके २० भेद है यथा-मिथ्यात्वाश्रव अव्रताश्रव, प्रमादाश्रव, कषायाश्रव अशुभयोगाश्रव, प्राणातिपाताश्रव, मृषावादाश्रव, अदत्तादानाश्रव, मैथुनाश्रव, परिग्रहाश्रव, श्रोत्रेन्द्रियको अपने कब्जेमें न रखनाश्रव एवं चक्षु इन्द्रिय घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शन्द्रिय एवं मन० वचन० काय० अपने वसमे न रखे, भंडोपकरण अयत्नासे लेना, अय-

त्नासे रखना सूचीकुश अर्थात तृणमात्र अयत्नासे लेना-रखना से आश्रय होता है।

(छ) संवरतत्त्व—के २० भेद हैं यथा समकित संवर, व्रतप्रत्याख्यान संवर अप्रमादसंवर, अकषायसंवर, शुभयोगसंवर, जीवहिंस्या न करे, झुट न बोले, चोरी न करे, मैथुन न सेवे, परिग्रह न रखे श्रोत्रेन्द्रिय अपने कब्जेमे रखे, चक्षु इन्द्रिय० घ्राणेन्द्रिय० रसेन्द्रिय० स्पर्शेन्द्रिय, मन, वचन, काया अपने कब्जेमे रखे, भंडोपकरण यत्नासे ग्रहन करे, यत्नासे रखे, एव सूचीकुश अर्थात तृणमात्र यत्नासे उठाये यत्नासे रखे एव २० भेद संवरका हैं।

(ज) निर्जरातत्त्व के १२ भेद हैं यथा अनसन, उणोदरी, वृत्तिसंक्षेप, रस (विगइ) का त्याग, कायाक्लेस, प्रतिसंलेपना, प्रायश्चित्त, विनय, वैयावच्च, स्वध्याय ध्यान, कायोत्सर्ग एव १२ भेद

(झ) बन्धतत्त्व के च्यार भेद हैं प्रकृतिबन्ध, स्थिति बन्ध, अनुभागबन्ध, और प्रदेशबन्ध

(ट) मोक्षतत्व के च्यार भेद है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वीर्य

(१५) आत्मा आठ—द्रव्यात्मा, कषायात्मा योगात्मा उपयोगात्मा, ज्ञानात्मा, दर्शनात्मा, चारित्रात्मा, वीर्यात्मा

(१६) दंडक २४—यथा सात नरकका एक दंड, सात नरकके नाम-घम्मा, वंशा, शीला, अञ्जना, रिष्ठा, मघा, माघवती इन सात नरकके गौत्र-रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तम प्रभा, तमस्तम प्रभा एव पहला दंडक। दश भुवनपतियोंके दश दंडक यथा-असुरकुमार, नागकुमार, सुवर्ण-

कुमार विद्युत्कुमार, अग्निकुमार, द्विपकुमार, दिशाकुमार उदधिकुमार, वायुकुमार, स्तनीतकुमार एवं ११ दडक हुवा पृथ्वी कायका दडक अपकायका, तेउकायका, वायुकायका, वनस्पति कायका, बेइन्द्रिकादडक तेइन्द्रिका, चौरिंद्रिका, तिर्यचपचेन्द्रि यका मनुष्यका, व्यतरदेवताका, ज्योतीषीदेवोंका और चौवीसवा वैमानिकदेवतोंका दडक है।

(१७) लेश्या छे–कृष्णलेश्या निललेश्या, कापोतलेश्या, तेजसलेश्या पद्मलेश्या, शुक्कलेश्या

(१८) दृष्टि तीन–सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि।

(१९) ध्यान चार–आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान शुक्कध्यान।

(२०) षट् द्रव्य व ज्ञान पनेके ३० भेद यथा षट् द्रव्यके नाम धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय और काल

(१) धर्मास्तिकाय- पाच बोलोंस जानी जाती है जेसे द्रव्यसे धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है क्षेत्रसे संपूण लोक परिमाण है कालसे अनादिअन्त है भावसे अरूपी है जिसमें वर्ण, गन्ध, रस स्पर्श कुच्छ भी नही है और गुणसे धर्मास्तिकायका चलन गुण है जेसे जलके सहायतासे मच्छी चलती है इसी माफिक धर्मास्तिकायकि सहायतासे जीव और पुद्गल चलन क्रिया करते है

(२) अधर्मास्तिकाय पाच बोलासे जानी जाती है द्रव्यसे अधर्मा० एक द्रव्य है क्षेत्रसे सम्पूर्ण लोक परिमाण है कालसे आदि अन्त रहीत है भावसे अरूपी है वर्ण गन्ध रस

स्पर्श कुच्छभी नही है गुणसे स्थिर गुण है जैसे थाका हुया मुसाफरकों वृक्षकी छायाका दृष्टान्त।

(३) आकाशास्तिकाय-पाच बोलोंसे जानी जाति है द्रव्यमे आकाशास्तिकाय एक द्रव्य है क्षेत्रसे लोकालोक परिमाण है कालसे आदि अत रहीत है भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है गुणसे आकाशमें विकाशका गुण है जेसे भींतिमें खुटी तथा पाणीमे पत्तासाका दृष्टान्त है।

(४) जीवास्तिकाय-पाच बोलोंसे जानी जाती है द्रव्यसे जीव अनते द्रव्य है क्षेत्रसे लोक परिमाण है कालसे आदिअंत रहीत है भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है गुणसे जीवका उपयोग गुण है जैसे चन्द्रके कलाका दृष्टात

(५) पुद्गलास्तिकाय-पाच बोलोंसे जानी जाती है द्रव्यसे पुद्गलद्रव्य अनत है क्षत्रसे सपूर्ण लोक परिमाण है कालसे आदि अन्त रहीत है भावमे रूपी है वर्ण है गन्ध है रस है स्पर्श है गुणसे सडन पडन विध्वस गुण है। जेसे बादलोंका दृष्टान्त।

(६) कालद्रव्य-पाच बोलोंसे जाने जाते है द्रव्यसे अनते द्रव्य-कारण अनते जीव पुद्गलोंकि स्थितिकों पुर्ण कर रहा है। क्षेत्रसें कालद्रव्य अढाइ द्वीप मे है (कारण बाहारके चन्द्र सूर्य स्थिर है) कालसे आदि अत रहीत है भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है गुणसे नइ वस्तुकों पुराणी करे पुराणी वस्तुको क्षय करे कपडा कतरणीका दृष्टात।

(२१) राशीदोय-यथा जीवराशी जिस्के ५६३ भेद। अजीवराशी जिस्के ५६० भेद है देखो दुसरे भाग नवतत्वके अन्दर

(२२) श्रावकजी के बारहाव्रत (१) त्रस जीव हालता चालताकों विगर अपराधे मारे नही। स्थावरजीवोंकि मर्यादा

करे। (२) राजदंडे लोक भंडे एसा बडा जूठ बोले नही (
राज दंडे लोक भंडे एसी बडी चोरी करे नही (४) परस्त्री
मनका त्याग करे स्वस्त्रिकि मर्यादा करे (५) परिग्रहका प
माण करे (६) दिशाका परिमाण करे (७) द्रव्यादिका प
करे पन्नरे कर्मादान व्यापारका त्याग करे (८) अनर्थदंड पापे
त्याग करे (९) सामायिक करे (१०) देशावगासी
करे (११) पौषध व्रत करे (१२) अतीथीसंविभाग अ
मुनि महाराजोंको फासुक एपणीक अशनादि आहार देने

(२३) मुनिमहाराजोंके पांच महाव्रत—(१) स
प्रकारे जीवहिंसा करे नहीं, करावे नहीं, करते हुवेको अ
समजे नहीं मनसे, वचनसे कायासे (२) सर्वथा प्रकारे
बोले नहीं, बोलावे नहीं, बोलताको अच्छा समजे नहीं म
वचनसे, कायासे (३) सर्वथा प्रकारे चोरी करे नहीं, क
नहीं करतेको अच्छा समजे नहीं मनसे वचनसे, कायासे (
सर्वथा प्रकारे मैथुन सेवे नहीं, सेवावे नहीं सेवतेको अ
समजे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे (५) सर्वथा प्रकारे परि
रखे नहीं रखावे नहीं, रखते हुवेको अच्छा समजे नहीं म
वचनसे, कायासे। एवं रात्रीभोजन स्वयं करे नहीं करावे न
करते हुवेको अच्छा समजे नहीं मनसे, वचनसे, कायासे।

(२४) प्रत्याख्यानके ४९ भागा—अंक ११ भाग
एक करण-एक योगसे।

करु नहीं मनसे
करु नहीं वचनसे
करु नहीं कायासे
कराउ नहीं मनसे
कराउ नहीं वचनसे

करावु नहीं कायासे
अनुमोदु नहीं मनसे
" " वचनसे
" " कायासे

अङ्क १२ भाग ९

एक करण दो योगसे

करूं नहीं मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे
करावुं नहीं मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे
अनुमोदुं नहीं मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे

अङ्क १३ भाग ३

एक करण तीन योगसे

करूं नहीं मनसे वचनसे कायासे
करावुं नहीं ,, ,, ,,
अनु० नहीं ,, ,, ,,

अङ्क २१ भाग ९

दो करण एक योगसे

करूं नहीं करावुं नहीं मनसे
,, ,, वचनसे
,, ,, कायासे
करूं नहीं अनुमोदुं नहीं मनसे
,, ,, वचनसे
,, ,, कायासे
करावुं नहीं अनु० नहीं मनसे
,, ,, वचनसे
,, ,, कायासे

अङ्क २२ भाग ९

दो करण दो योगसे

करूं न करावुं न मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे
करूं न अनुमोदुं न मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे
करावुं न अनु न मनसे वचनसे
,, ,, मनसे कायासे
,, ,, वचनसे कायासे

अङ्क २३ भाग ३

दो करण तीनयोगसे

करूं न करावुं न मन वच काया.
,, अनु० न ,, ,, ,,
करावुं न अ० न ,, ,, ,,

अङ्क ३१ भाग ३

तीन करण तीन योगसे

करूं न करा न अनु न मनसे
,, ,, ,, वचनसे
,, ,, ,, कायासे

अङ्क ३२ भाग ३

तीन करण दो योगसे

करूं न करावुं न अनु न मनवचनसे
,, ,, ,, मनसे कायासे
,, ,, ,, वचन काया.

अङ्क ३३ भाग १

तीन करण तीन योगसे

करूं नहीं करावुं न अनु० नहीं
मनसे वचनसे कायासे

(२५) चारित्र पांच—सामायिक चारित्र, छदोपस्थापनीय चारित्र, परिहारविशुद्धि चारित्र सूक्ष्मसंपराय चारित्र यथाख्यात चारित्र ।

(२६) नय सात—नैगमनय संग्रहनय व्यवहार नय ऋजुसूत्रनय शब्दनय समभिरूढनय एवंभूतनय ।

(२७) निक्षेपाच्यार—नामनिक्षेप स्थापनानिक्षेप-द्रव्यनिक्षेप भावनिक्षेप

(२८) समकित पाच—औपशमिक समकित क्षयोपशम स० क्षायिकस० वेदक स० सास्वादन समकित ।

(२९) रस नौ—श्रृंगाररस वीररस करुणारस हास्य रस रौद्ररस भयानकरस अदभुतरस विभत्सरस शांतिरस

(३०) अभक्ष २२ यथा—वडकेपीपु पीपलकेपीपु पीपलीके फल उम्बरवृक्षकेफल कटुम्बरकेफल मांस मदिरा-मधु मक्खण हेम विष सोमल कचेगडे कचीमटी रात्रीभोजन-बहुबीजाफल जमी कन्दवनस्पति बोरोंका अथाणा कचे गोरसमें डाले हुवे बडे रींगणा अनजाना हुवाफल तुच्छफल चली तरस याने बीगडी हुइ वस्तु ।

(३१) अनुयोग च्यार—द्रव्यानुयोग गीणीतानुयोग चरणकरणानुयोग धर्मकथानुयोग ।

(३२) तत्त्वतीन—देवतत्व देव (अरिहंत) गुरु तत्व (निग्र थगुरु) धर्मतत्व (वीतरागकि आज्ञा)

(३३) पाच समवाय—काल स्वभाव नियत, पूर्वकृत कर्म, पुरुषाथ

(३४)पाखण्डमतके ३६३ भेद यथा—क्रियावादीके १८० मत, अक्रियावादी के ८४ मत, अज्ञानवादी के ६७ मत विनयवादीके ३२ मत

(३५) श्रावकोंके २१ गुण—(१) क्षुद्र मतिवाला न हो याने गंभीर चितवाला हो (२) रूपवंत सर्वांग सुन्दरऽकार याने श्रावकव्रतको सर्वांग पालनेमें सुन्दर हो (३) सौम्य (शान्त) प्रकृतिवाला हो (४) लोक प्रियहो याने हरेककार्य प्रशमनियकरे (५) क्रूर न हो (६) इहलोक परलोकके अपयशसे डरे [७] शाठ्यता न करे धोखाबाजीकर दुसरोंको ठगे नही (८) दुसरोंकि प्रार्थनाका भंग न करे (९) लौकीक लोकोत्तर लज्जा गुणसंयुक्त हो (१०) दयालु हो याने सर्वजीवोंका अच्छा वान्छे (११) सम्यग्दृष्टि हो याने तत्वविचारमें निपुण हो राग द्वेषका संग न करता हुवा मध्यस्थ भावमें रहै (१२) गुण गृहीपनारखे (१३) सत्य वातनि शंकपणे कहै (१४) अपनेपरिवारको सुशील बनावे अपने अनुकुल रखे (१५) दीर्घदर्शी अच्छा कार्यभी खुब विचारके करे (१६) पक्षपात रहीत गुण अवगुणोंको जानने वाला हो (१७) तत्वज्ञ वृद्ध सज्जनोंकि उपासना करे (१८) विनयवान हो याने चतुर्विध संघका विनयकरे (१९) कृतज्ञ अपने उपर कीसीने भी उपकार कीया हो उनोंका उपकार भूले नही समयपाके प्रत्युपकारकरे (२०) संसारको असार समझे ममत्व भाव कम करे निर्लभिता रखे (२१) लब्धिलक्ष धर्मानुष्ठान धर्म व्यवहार करनेमें दक्ष हो याने संसारमें एक धर्म ही सारपदार्थ है

सेवं भंते सेवं भंते तमेवसत्यम्

—>⊙<—

थोकडा नम्बर ४

' सूत्रश्री जीवाभिगम ' से लघुदंडक बालबोध

॥ गाथा ॥

सरीरोगाहणा संघयण संठाण सन्ना कसायाय
लेसिंदिय समुग्घाओ सन्नी वेदय पज्जति ॥ १ ॥
दिठि दसण नाण अनाणे जोगुवोगअ तह किमाहारे
उववाय ठि समोहय चवण गइआगइ चेव ॥ २ ॥

इन दो गाथायोंका अर्थ शास्त्रकारोंने खुब विस्तारसे कीया है परन्तु कण्ठस्थ करनेवाले विद्यार्थी भाइयोंके लिये हम यहा पर संक्षिप्तही लिखते है।

(१) शरीर प्रतिदिन नाश होता जाय-नयासे पुराणा होनेका जीसमें स्वभाव है जिन शरीरके पाच भेद है (१) औदारीक शरीर, हाड मास रौद्र चरबी कर संयुक्त सडन पडन विध्वंसन, धर्मवाला होनेपरभी एकापेक्षासे इन शरीरको प्रधान माना गया है कारण मोक्ष होनेमें यहही शरीर मौख्य साधन कारण है (२) वैक्रय शरीर हाड मस रहीत नाना प्रकारके नये नये रूप बनावे (३) आहारक शरीर चौदा पूर्वधारी लब्धि संपन्न, मुनियोंके होते है (४) तेजस शरीर आहारादिकी पाचनक्रिया करनेवाला (५) कार्मण शरीर अष्ट कर्मोंका खजाना तथा पचा हुआ आहारको स्थान स्थानपर पहुचानेवाला।

(२) अवगाहना-शरीरकी लम्बाइ जिसके दो भेद है एक

भवधारणी अवगाहना दुसरी उत्तर वैक्रिय, जो असली शरीरसे न्युनाधिक बनाना ।

(३) सहनन-हाडकि मजबुतीसे ताकत-शक्तिको संहनन कहते है जिस्के छे भेद है वज्रऋषभनाराच, ऋषभनाराच, नाराच, अर्द्धनाराच, किलका, और छेवटा संहनन ।

(४) संस्थान-शरीरकि आकृति, जिस्के छे भेद-समचतुरस्र, न्यग्रोध परिमडल, सादीया, वावना, कुब्ज, हुंडकसस्थान

(५) सज्ञा-जीवोंकि इच्छा-जिस्के च्यार भेद आहारसज्ञा भयसज्ञा मैथुनसज्ञा परिग्रहसज्ञा

(६) कषाय-जिनसे ससारकि वृद्धि होती है जिस्के च्यार भेद है क्रोध, मान, माया, लोभ

(७) लेश्या-जीवोंके अध्यवसायसे शुभाशुभ पुद्गलोंको ग्रहन करना जिस्के छे भेद है कृष्ण० निल० कापोत० तेजस० पद्म० शुक्ललेश्या ।

(८) इन्द्रिय-जिनसे प्रत्यक्षज्ञान होता है जिस्के पाच भेद श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय ।

(९) समुद्घात-समप्रदेशोंकि घातकर विषम बनाना जिस्का सात भेद है वेदनि० कषाय० मरणातिक० वैक्रिय० तेजस० आहारक० केवली समुद्घात०

(१०) संज्ञी-जिस्के मनहो वह सज्ञी मन न हो वह असज्ञी

(११) वेद-वीर्यका विकार हो मैथुनकि अभिलाषा करना उसे वेद कहते है जिस्के तीन भेद है स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुसकवेद ।

(१२) पर्याप्ती-जीव योनिमे उत्पन्न हो पुद्गलोंको ग्रहनकर भविष्यके लिये अलग अलग स्थान बनाते है जिस्के भेद छे- आहार० शरीर० इन्द्रिय० श्वासोश्वास० भाषा० मनपर्याप्ती ।

(१३) दृष्टि-तत्व पदार्थकी श्रद्धा, जिस्के तीन भेद सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि,

(१४) दर्शन-वस्तुका अवलोकन करना-जिस्के च्यार भेद चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन

(१५) ज्ञान-तत्ववस्तु को यथार्थ जानना जिस्के पांच भेद है मतिज्ञान श्रुतिज्ञान, अवधिज्ञान, मन पर्ययज्ञान, केवलज्ञान।

(१६) अज्ञान-वस्तु तत्वको विप्रीत जानना जिस्के तीन भेद है मतिअज्ञान श्रुतिअज्ञान, विभग अज्ञान।

(१७) योग-शुभाशुभ योगोंका व्यापार जिस्का भेद १५ देखो बोल ८ वा। (पैंतीस बोलोंमें)

(१८) उपयोग-साकारोपयोग (विशेष) अनाकारोपयोग (सामान्य)

(१९) आहार-रोमाहार, कवलाहार लेने है उन्होंका दो भेद है व्याघात जो लोकके चरम प्रदेशपर जीव आहार लेते हैं उनोंको कीसी दीशामे अलोककि व्याघात होती है तथा अवर्म प्रदेशपर जीव आहार लेता है वह निर्व्याघात लेता है।

(२०) उत्पात-एक समयमे कोनसे स्थानमें कितने जीव उत्पन्न होते हैं।

(२१) स्थिति-एकयोनिके अन्दर एक भवमे कितने काल रह सके।

(२२) मरण-समुद्घात कर ताणवेजाकि माफीक मरे-विगर समुद्गात गोलीके धडाकाकी माफीक मरे।

(२३) चवन-एक समयमें कोनसी योनिसे कीतने जीव चवे

(२४) गति आगति-कोनसी गतिसे जाके कौस योनिमें जीव उत्पन्न होता है और कोनसी योनिसे चवके जीव कोनसी गतिमें जाता है। इति।

लघुदंडक पढनेवालोंको पहले पैंतीसबोल कंठस्थ कर लेना चाहिये। अब यह चौवीसद्वार चौवीसदंडकपर उतारा जाते हैं।

(१) शरीर—नारकी देवतावों मे तीन शरीर-वैक्रीय शरीर० तेजस० कारमण०। पृथ्वीकाय, अप० तेउ० वनास्पति वेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय, असन्नी तीर्यंच पचेन्द्रिय, असन्नी मनुष्य और युगल मनुष्य इन नोंमें शरीर तीन पावे औदारीक शरीर तेजस० कारमण०। वायुकाय और सन्नी तीर्यच में शरीर च्यार पावे औदारीक वैक्रीय तेजस कारमण। सन्नीमनुष्यमें शरीर पांचोंपाय सिद्धोंमें शरीर नहीं

(२) अवगाहना—जघन्य-भवधारणी अंगुलके असंख्यात में भाग है और उत्तर वैक्रिय करते है उनोंके जघन्य अंगुलके संख्यातमें भागहोती है अब भवधारणि तथा उत्तर वैक्रय कि उत्कृष्ट अवगाहाना कहते है

नाम.	उत्कृष्ट भवधारिणि		उत्कृष्टि उत्तर वैक्रिय	
	धनुष्य	आंगुल	धनुष्य	आंगुल
पहली नारकी	७॥।	६	१५॥	१२
दुसरी ,,	१५॥	१२	३१।	०
तीसरी ,,	३१।	०	६२॥	०
चोथी ,,	६२॥	०	१२५	०
पांचमी ,,	१२५	०	२५०	०
छट्ठी ,,	२५०	०	५००	०
सातमी ,,	५००	०	१०००	०

१० भुवनपति वाणव्यन्तर जोतीषी पहला दुसरा देवलोक	७ हाथकी	लाख जोजन
३-४ था देवलोक	६ हाथ	,,
५-६ ठा ,,	५ हाथ	,,
७-८ वा ,,	४ हाथ	,,
९-१०-११-१२-दे	३ हाथ	,
नौग्रैवेयक	२ हाथ	उत्तर वैक्रिय नहींकरे
चार अनुत्तर विमान	१ हाथ	,
सर्वार्थसिद्ध वि०	१ हाथ उणो	,
पृथ्वी, अप्, तेउ,	आगुलके अस ख्यातमो भाग	
वायुकाय	,,	आगु० सख्या० भाग
वनस्पतिकाय	१००० जोजन सा धिक (कमल)	उत्तर वैक्रिय नहीं
बे इन्द्रिय	१२ जोजन	,
ते इन्द्रिय	३ गाउ	,
चौ इन्द्रिय	४ गाउ	,,
तिर्यच पंचेंद्रिय ×	१००० जोजन	९०० जोजन
जलचर सन्नी	१००० जोजन	,,

+ नोट-उत्कृष्ट अवगाहनावाला उत्तर वैक्रिय कर नहि

थलचर सन्नी	६ गाउ	९०० जोजन
खेचर ,	प्रत्येक धनुष्य	,,
उरपरिसर्प ,,	१००० जोजन	,,
भुजपरिसर्प ,,	प्रत्येक गाउ	
जलचर असन्नी	१००० जोजन	वैक्रिय नहीं करे
थलचर ,,	प्रत्येक गाउ	,,
खेचर ,,	प्र० धनुष्य	,,
उरपरिसर्प ,,	प्र० जोजन	,
भुजपरिसर्प ,,	प्र० धनुष्य	,,
मनुष्य	३ गाउ	लाख जोजन झाझेरी
असन्नी मनुष्य	आगु० अस० भाग	उत्तर वैक्रिय करे नहि
देवकुरु, उत्तरकुरु	३ गाउ	,,
हरिवास, रम्यकवास	२ गाउ	,,
हेमवय, परण्यवय	१ गाउ	,,
५६ अंतरद्वीप	८०० धनुष्य	,,
महाविदेहक्षेत्र	५०० धनुष्य	लाख जोजन साधिक
*सुसमा सुसमारो	लागते आरे ३ गाउ	उतरते २ गाउ
सुसम दुजो आरो	,, २ गाउ	,, १ गाउ
सुसमा दुसमा तीजो	,, १ गाउ	,, ५०० धनुष्य
दुसमा सुसमा चोथो	,, ५०० धनुष्य	,, ७ हाथ
दुसम पाचमो आरो	, ७ हाथ	, १ हाथ
दुसमा दुसमो छट्ठो	, १ हाथ	,, १ हाथ उणी

यह अवसर्पिणी कालकी अवगाहना है इसमें उलटी उत्सर्पिणीकी समझना। सिद्धोंके शरीरकी अवगादना नहीं है परतु आत्म प्रदेशने आकाश प्रदेशको अवगाहया (रोका है) इस अपेक्षा जघन्य १ हाथ ८ आगुल मध्यम ४ हाथ १६ आगुल उत्कृष्ट ३३३ धनुष्य ३२ आगुल इति

(३) सघयण—नारकी और देवताम सघयण नहीं है किंतु नारकीमें अशुभ पुद्गल और देवतामें शुभ पुद्गल सघयणपण प्रण मते है पाच स्थावर, तीन विकलेंद्रिय असन्नी तिर्यंच असन्नी मनुष्यमें सघयण एक छेवट्ठ पाय सन्नी मनुष्य और सन्नी तिर्यंचमें छ सघयण पावे युगलीआमे एक वज्रऋषभनाराचसघयण और सिद्धोमे सघयण नहीं है इति

(४) सठाण—[६] नारकी, पाच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नी तिर्यच और असन्नी मनुष्यमे सठाण एक हुडक पावे तथा देवता और युगलीआमे समचौरस सठाण पावे सन्नी तिर्यंच और सन्नी मनुष्यमें छ संस्थान पावे सिद्धोमें सस्थान नहीं है

(५) कषाय—[४]-चोवीसों दडकमें कषाय च्यारों पावे और सिद्ध अकषाइ है।

(६) सज्ञा [४]-चोवीसों दडकमे सज्ञा च्यारों पावे सिद्धोंमें सज्ञा नहीं है

(७) लेश्या—पहली दुजी नारकीमें कापोत लेश्या। तीजीमे कापोत और नील ले० चोथीमें नील ले० पाचमीमें नील और कृष्ण ले० छट्ठीमें कृष्ण ले० सातमीमें महाकृष्ण ले० १० भुवनपति व्यंतर पृथ्वी पाणी, वनस्पति, युगलीआमें लेश्या चार पावे कृष्ण नील कापोत, तेजो ले० तेउकाय वायुकाय,

तीन विकलेंद्रिय असन्नी तीर्यंच, असन्नी मनुष्यमे लेश्या पावे तीन कृष्ण, नील कापोत ले० सन्नी तिर्यच सन्नी मनुष्यमे लेश्या ६ पावे जोतीषी और १-२ देवलोकमें तेजोलेश्या ३-४-५ देवलोकमे पदमलेश्या ६ से १२ देवलोकमें शुक्ललेश्या नौवागैवेयक पाच अनुत्तर विमानमे परम शुक्ल लेश्या सिद्ध भगवान अलेशी है।

(८) इंद्रिय—[५] पाच स्थावरमें एक इंद्रिय, बे इंद्रियमें दो इंद्रिय, तेइंद्रियमें तीन इंद्रिय, चौरेंद्रिय चार इंद्रिय बाकी १६ दंडकमे पाच इंद्रिया है सिद्ध अनिंद्रिआ है।

(९) समुद्घात [७] नारकी और वायु कायमे समुद्घात पावे चार, वेदनी, कषाय, मरणत्ति, वैक्रिय। देवतामे और सन्नीतिर्यंचमें समुद्घात पावे पाच वेदनी, कषाय, मरणति वैक्रिय, तेजस। चार स्थावर तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तिर्यंच, असन्नी मनुष्य और युगलीआमें समुद्घात पावे तीन वेदनी, कषाय, मरणति। सन्नी मनुष्यमें समुद्घात पावे सात नवग्रैवेयक, पाच अनुत्तर विमानमे स० पावे तीन और वैक्रिय तेजसकी शक्ति है परन्तु करे नहीं सिद्धोमे समुद्घात नहीं है।

(१०) सन्नी—नारकी देवता, सन्नी तिर्यंच, सन्नी मनुष्य और युगलीआ ये सन्नी है पाच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नी मनुष्य, असन्नी तिर्यंच ये असन्नी है। सिद्ध नो सन्नी नो असन्नी है।

(११) वेद—नारकी पाच स्थावर तीन विकलेंद्रिय असन्नीतिर्यंच और असन्नी मनुष्यमें नपुसक वेद है। दश भुवन पति, व्यंतर, जोतीषी १-२ देवलोक और युगलीआमें वेद पावे

२ पुरुषवेद और स्त्रीवेद। तीजा देवलोकसे सर्वार्थसिद्ध विमानतक पुरुषवेद है सन्नी मनुष्य औ सन्नीतियचमे वद पावे तीन, सिद्ध अवेदी हैं।

(१२) पर्याप्ती—नारकी देवतामे पर्याप्ती पाच (मन और भाषा सामेल बांधे) पाच स्थावरमें पर्याप्ती पावे चार क्रमसे, तीन विकलेंद्रिय और असन्नी तिर्यचमे पर्याप्ती पावे पाच क्रमसे, असन्नी मनुष्यमें चारसे कुच्छ उणी क्रमसे, सन्नी मनुष्य सन्नी तियच और युगलीआमें पर्याप्ती पावे छ सिद्धोमें पर्याप्ती नहीं हैं।

(१३) दिट्ठी—नारकी, भुवनपति, व्यंतर ज्योतिषी बारहा देवलोक, सन्नीतिर्यच और सन्नी मनुष्यमे दृष्टि पावे तीनों नवग्रैवेयकमें दो (सम्यक० मिथ्या०) अथवा तीन पावे पाच अनुत्तर विमानमें एक सम्यक्दृष्टि, पाच स्थावर, असन्नी मनुष्य और ५६ अंतरद्वीपके युगलीआमें एक मिथ्या दृष्टि तीन विकलेंद्रिय असन्नी तियच और ३० अकर्मभूमि युगलीआमे दृष्टि पावे दो (१) सम्यक्दृष्टि (२) मिथ्यादृष्टि सिद्धोंमें सम्यक्दृष्टि है

(१४) दर्शन—नारकी देवता और सन्नीतिर्यचमें दर्शन पावे तीन क्रमसे पाच स्थावर बेइंद्रिय तेइंद्रियमें दर्शन पावे एक अचक्षु चौरेन्द्रिय असन्नीतिर्यच असन्नी मनुष्य और युगलीआमें दर्शन पावे दो क्रमसे। सन्नी मनुष्यमे दर्शन पावे चार, सिद्धोंमें केवल दर्शन है

(१५) नाण—नारकी देवता और सन्नीतिर्यचमे ज्ञान पावे तीन क्रमसे। पाच स्थावर, असन्नी मनुष्य और ५६ अतर द्वीपका युगलीआमें नाण नहीं है तीन विकलेंद्रिय असन्नी तिर्य-

च और ३० अकर्मभूमी युगलीयामें नाण पायेदो क्रमसे तथा सन्नी मनुष्यमें ज्ञान पावे पाच सिद्धोंमें केवल ज्ञान है

(१६) अनाण—नारकी, देवतामें नवग्रैवयक तक तियच पचेंद्री और सन्नी मनुष्यमे अनाण पावे तीन, पाच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय असन्नी तिर्यच असन्नी मनुष्य और युगलीआमे अनाण पावे दो क्रमसे पाच अनुत्तर विमान और सिद्धोंमें अनाण नहीं है।

(१७) जोग—नारकी और देवतामें जोग पावे ११ (४) मनके (४) वचनके, वैक्रिय १, वैक्रियका मिश्र १, कार्मणकाय योग, पृथ्वि, अप तेउ, वनस्पति असन्नी मनुष्यमें याग पावे तीन (औदारिक १ औदारिकका मिश्र १ १ कार्मण काययोग १) वायुकायमें पाच पावे (पूर्ववत् ३ और वैक्रिय, वैक्रियका मिश्र ज्यादा) तीन विकलेंद्रिय, असन्नी तिर्यचमें योग पावे चार औदारिक १, औदारिकका मिश्र १, कार्मणकाय योग १, (और व्यवहार भाषा १) सन्नी तिर्यचमे योग पावे १३ (आहारिक और आहारिकका मिश्र वर्जके) सन्नी मनुष्यमे योग पावे पदरा। युगलीआमे योग पावे अगीआरा (४ मनका ४ वचनका, औदारिक १, औदारिक मिश्र १, कार्मण काय योग १) सिद्धोंमे योग नहीं है

(१८) उपयोग—सर्व ठेकाणे दो दो पावे और जो उपयोग बारह गीणना हो तो उपर लिखा पाच ज्ञान, तीन अज्ञान और चार दर्शनसे समझ लेना।

(१९) आहार—आहार व्याघात (अलोक) आश्रयी पाच स्थावर स्यात् तीन दिशि, स्यात् चार दिशि, स्यात् पाच

दिशि निर्व्याघाताश्रयी चोवीस दंडकका-जीयनियमा छ दि-शिका आहार लेवे। सिद्ध अनाहारिक

(२०) उत्पात-(१) नारकी, १० भुवनपतियोंसे ८ वा देवलोक तक तथा चार स्थावर (वनस्पति वर्जके) तीन वि कलेंद्रिय, सन्नी या असन्नी तिर्यच, और असन्नी मनुष्य एक समयमें १-२-३ जाव सख्याता असंख्याता उपजे, वनस्पति एक समयमें १-२-३ जाव अनंता उपजे नवमा देवलोकसे स र्वार्थसिद्ध तक तथा सन्नी मनुष्य और युगलीआ एक समयमें १-२-३ जाव सख्याता उपजे, सिद्ध एक समयमें १-२-३ जाव १०८ उपजे

(२१) ठीइ-स्थिति यत्रसे जाणना.

नारकी	जघन्य	उत्कृष्ट
१ ली नारकी	१०००० वर्ष	१ सागरोपम
२ जी ,	१ सागरोपम	३ सागरोपम
३ जी	३ ,,	७
४ थी ,	७ ,	१० ,,
५ मी ,	१० ,,	१७ ,,
६ ठी ,	१७ ,,	२२ ,
७ मी ,	२२	३३ ,
देवता		
× चमरेंद्र दक्षिण तर्फ	१०००० वर्ष	१ सागरोपम

× दश भुवनपतिमें प्रथम असुरकुमारका दो इंद्र (१) चमरेंद्र (२) बलेंद्र चम रेंद्रकी राजधानी मेरुसे दक्षिण तरफ है और बलेंद्रकी राजधानी मेरुसे उत्तर तरफ है ऐसे ही नागादि नवोंका दो दो इंद्र और राजधानी दक्षिण उत्तर समझ लेना

तस्सदेवी	१०००० वर्ष	३॥ सागरोपम
नागादि नौ इन्द्र दक्षिण तर्फके	,,	१॥ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	०॥। ,,
बलीन्द्र उत्तर तर्फके देव ,,	,,	१ सागरोपम झाझेरा
तस्सदेवी	,	४॥ पल्योपम
नागादि नव उत्तर तर्फ	,,	देशउणी २ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	१ ,,
व्यंतर देवता	,,	१ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	०॥ ,,
चन्द्र विमानवासी देव	०। पल्योपम	१ पल्योपम+लाख वर्षाधिक
तस्सदेवी	,,	०॥ प०+५०००० वर्ष
सूर्य विमानवासी देव	,,	१ प०+ हजार वर्ष
तस्सदेवी	,,	०॥ प०+५०० ,,
ग्रह विमानवासी देव	,,	१ पल्योपम
तस्सदेवी	,,	०॥ ,,
नक्षत्र विमा० देव	,,	०॥ ,,
तस्सदेवी	०। पल्योपम	०। ,, झाझेरी
तारा विमा० देव	⅛ ,,	०। ,,
तस्सदेवी	,, ,,	⅛ ,, साधिक
पहला देवलोकके देव	१ पल्योपम	२ सागरोपम
तस्स परिग्रहिता देवी	,	७ पल्योपम
तस्स अपरिग्रहिता देवी	,,	५० ,
दुसरे देवलोकके देव	१ पल्योपम झाझेरा	२ सा० झाझेरा
तस्स परिग्रहिता देवी	,	९ पल्योपम
तस्स अपरिग्रहता देवी	,,	५५ ,,
तीजा देवलोकके देव	२ सागरोपम	७ सागरोपम

चोथा देवलोकके देव	२ सा० झाझेरा	७ , झाझेरा
पाचमा ,	७ सागरोपम	१० सागरोपम
छट्ठा ,, ,	१० ,	१४
सातमा ,,	१४ ,	१७ ,
आठमा ,, ,,	१७ ,	१८ ,
नवमा ,, ,,	१८ ,,	१९ ,,
दशमा ,, ,,	१९ ,,	२० ,,
अगीआरमा , ,	२० ,	२१ ,
बारहमा ,, ,,	२१ ,	२२ ,,
नीचली त्रिक ,,	२२ ,,	२५ ,,
विचली ,, ,,	२५ ,,	२८ ,,
उपली ,, ,,	२८ ,,	३१ ,,
चार अनुत्तर विमान	३१ ,,	३३ ,
सर्वार्थसिद्ध ,,	३३ ,,	३३ ,
पृथ्वीकाय	अतर्मुहुर्त	२२००० वर्ष
अप्काय	,,	७००० ,,
तउकाय	,	३ अहोरात्रि
वायुकाय	,,	३००० वर्ष
वनस्पतिकाय	,	१०००० ,,
बेइन्द्रिय	,	१२ ,
तेइन्द्रिय	,,	४९ दिन
चौरिंद्रिय	,	६ मास
जलचर असन्नी	,	क्रोड पूर्व
थलचर ,,	,	८४००० वर्ष
खेचर ,		७२००० ,
उरपरिसर्प ,,	,,	५३००० ,
भुजपरिसर्प	,	४२००० ,,

जलचर संज्ञी	अंतर्मुहुर्त	क्रोड पूर्व
थलचर „	„	३ पल्योपम
खेचर „	„	पल्यो० असं० भाग
उरपरिसर्प „	„	क्रोड पूर्व
भुजपरिसर्प „	„	„
असंज्ञि मनुष्य	„	अंतर्मुहुर्त
संज्ञि „	चेढते आरे	उतरते आरे
*पहलो आरा	३ पल्योपम	२ पल्योपम
दुजो „	२ „	१ „
तीजो „	१	१ क्रोड पूर्व
चोथो „	क्रोड पूर्व	१२० वर्ष
पांचमो „	१२० वर्ष	२० „
छट्ठो „	२० „	१६ „

युगलीया	जघन्य	उत्कृष्ट.
देवकुरु-उत्तरकुरु	देशऊणा ३ पल्यो०	३ पल्योपम
हरिवास-रम्यकवास	„ २ „	२ „
हेमवय-एरणवय	„ १ „	१ „
५६ अंतरद्वीप	पल्यो० असं० भाग	पल्यो० असं० भाग
महाविदेह क्षेत्र	अंतर्मुहूर्त	क्रोड पूर्व

सिद्ध-सादि अनंत। अनादि अनंत।

२२ मरण —चौवीसों दंडकमें समोहीय, असमोहीय दोनों मरण मरे।

२३ चवण.—उत्पन्न दोनेकी माफक समझ लेना।

२४ गति आगति —प्रथमसे छट्ठी नारकी तथा तीर्जाले

* अवसर्पिणीकालके मनुष्यकी स्थिति बतलाई गई है, और उत्सर्पिणी-कालके मनुष्यकी स्थिति इससे उल्टी समझनी।

८ मा देवलोक तक दो गतिसे आवे, दो गतिमें जाय। दंडका-श्रयी दो दंडक (मनुष्य और तिर्यंच) के आवे और दो दंडकमें जावे। सातमी नारकी दो गतिसे (मनुष्य तियच) आवे, एक गतिमें जाय (तिर्यंचमें) दंडकाश्रयी २ दंडकका (मनुष्य, तिर्यंच) आवे, एक दंडक तियचमें जावे। दश भुवनपति व्यंतर, जोतिषी १-२ देवलोक दो गति (मनुष्य तिर्यंच) से आवे और दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) मे जावे, और दंडकाश्रयी २ दंडक (मनुष्य तिर्यंच) को आवे, और पाच दंडकमें जावे (मनुष्य, तिर्यंच, पृथ्वि, पाणी वनस्पति) ९ वा देवलोकसे सर्वार्थसिद्ध विमानके देव, एक गति (मनुष्य) मेंसे आवे एक गतिमें जावे दंडकाश्रयी एक दंडक (मनुष्य) का आवे और एक दंडकमे जावे (मनुष्यमें)।

पृथ्वि, पाणी, वनस्पति, तीन गति (मनुष्य, तियच, देवता) से आवे, और २ गतिमे जावे (मनुष्य तियच) दंडकाश्रयी २३ दंडक (नारकी वर्जी) का आवे और १० दंडकमें जावे (५ स्थावर ३ विकलेंद्रिय, मनुष्य, तिर्यंच) तेउ वायु दो गति (मनुष्य, तियच) मेंसे आवे और एक गति (तिर्यंच) में जावे, दंडकाश्रयी दश दंडक (पूर्ववत्) का आवे और ९ दंडक (मनुष्य वर्जके) मे जावे। तीन विकलेंद्रिय दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) मेंसे आवे, और दो गति (मनुष्य, तिर्यंच) मे जाय, दंडकाश्रयी दश दंडक (पूर्ववत्) को आवे और दश दंडकमें जावे। असंज्ञि तिर्यंच दो गति (मनुष्य, तियच) मेंसे आवे और चार गतिमे जावे दंडकाश्रयी दश (पूर्ववत्) आवे और २२ (जोतिषी वैमानिक वर्जी) दंडकमें जावे। संज्ञि तियच चार गतिमेसे आवे और चार गतिमें जावे दंडकाश्रयी २४ को आवे और २४ मे जावे। असंज्ञि मनुष्य दो गति (मनुष्य, तियच) को आवे दो गतिमे जावे। दंडकाश्रयी ८ दंडक (पृथ्वि, पाणी, वनस्पति ३

विकलेंद्रिय, मनुष्य तिर्यंच) का आवे और दशमें जावे (दश पूर्ववत्)

सन्नि मनुष्य— चार गतिमेसे आवे और चार गतिमें जावे अथवा सिद्ध गतिमें जावे, दंडकाश्रयी २२ (तेउ, वायु, वर्जी)में से आवे और २४ मे जाय तथा सिद्धमे जावे । ३० अकर्मभूमि युगलिया दोगति (मनुष्य तियच)मेसे आवे एक गति (देवता) मे जावे दंडकाश्रयी दो दंडकमे आवे और १३ दंडक (देवतामे) जावे । ५६ अंतर द्वीप दो गतिमेसे आवे एक गतिमें जावे दंडकाश्रयी दो दंडकको आवे और ११ दंडक (१० भुवनपति, व्यंतर)में जावे.

सिद्धीमे आगत एक मनुष्यकी गति नहीं दंडकाश्रयी मनुष्य दंडकसे आवे इति

२५ प्राण—(अन्य स्थानसे लीखते है)प्राण दश है (१) श्रोतेंद्रिय बलप्राण (२) चक्षु इंद्रियबलप्राण (३) घ्राणेंद्रिय० (४) रसेन्द्रिय० (५) स्पर्शेन्द्रिय० (६) मन० (७) वचन० (८) काय० (९) श्वासोश्वास० (१०) आयु०

नारकी देवता सन्नि मनुष्य, सन्नि तिर्यंच और युगलीआमे प्राण पावे दस पाच स्थावरमें प्राण पावे चार-(१) स्पर्श० (२) काय० (३) श्वासोश्वास० (४) आयु० बेइंद्रियमें प्राण पावे ६ (५) पूर्ववत् १ रसे० २ वचन० तेइंद्रियमे प्राण पावे ७ (६) पुर्ववत् १ घाणे० चौरेन्द्रियमें प्राण ८ (७) पूर्ववत् १ चक्षु०

असन्नि तिर्यच पंचेन्द्रियमें प्राण पावे ९-८ पुर्ववत्, १ श्रोते० असन्नि मनुष्यमें प्राण पावे ८ मे वइकउणा-५ इन्द्रिय० १ काय० १ आयु० १ श्वास० अथवा उश्वास० सिद्धोंमे प्राण नही है । इति

सेव भंते सेव भंते तमेव सच्च

थोकडा नम्बर ५

चोवीस दडकमेंसे कितने दडक किस स्थानपर मिलते हैं.

दडक स्थान

(प्रश्न){ एक दडक / किस जगह पावे } नारकीमें पाय

(प्र) दो दडक , (उ) श्रावकमें पाव-२०+२१ मो

(प्र) तीन दडक (उ) तिनविकलेंद्रियमें पावे-१७+१८+१९ मा

(प्र) चार दडक (उ) साधमें पावे १२+१३+१४+१५मा

(प्र) पाच दडक , (उ) एकेंद्रियमें , १२+१३+१४+१५+१६

(प्र) छ दडक (उ) तेजोलेश्याका अलद्धिआमें यानि जीस दडकमे तेजोलेश्या न मले-१-१४-१५--१७-१८-१९ वा

(प्र) सात दडक (उ) वैक्रियका अलद्धिआमें ४ स्थावर ३ वि०

(प्र) आठ दडक , (उ) असन्नीमे ५ स्थावर ३ वि०

(प्र) नव दडक (उ) तिर्यचमे ५ स्थावर ४ त्रस

(प्र) दश दडक (उ) भुवनपतिमे

(प्र) अगीआर दडक ,, (उ) नपुसकमे १० औदारीक १ नारकी

(प्र) बारहा , (उ) तीर्च्छालोकमे १० भु० व्यतर ज्योतिष

(प्र) तेरहा , (उ) देवतामें

(प्र) चौद ,, , (उ) एकत वैक्रिय शरीरमे १३ वैक्रिय १ नारक

(प्र) पदर ,, ,, (उ) स्त्री वेदमें

(प्र) मोल्ह , ,, (उ) सन्नि तथा मनयोगमे

(प्र) सत्तरा ,, , (उ) समुचय वैक्रिय शरीरमे

(प्र) अठारा ,, , (उ) तेजोलेश्यामें ६ वजके

(प्र) ओगणीस ,, (उ) त्रसकायमे ५ स्थावर वर्जके

(प्र) वीस , (उ) जघन्य उत्कृष्ट अवगाहनावाला जीवामें

(प्र) एकवीस , (उ) नीचा लोकमे ३ देवता वर्जके

(प्र) बावीस ,, ,, (उ) कृष्णलेश्यामें ज्योतीषी वि० वर्जके

(प्र) तेवीस ,, ,, (उ) भगवानका समोसरणमे १ नारकी वर्जके
(प्र) चौवीस ,, ,, (उ) समुचय जीवमे

सेव भंते सेव भंते तमेव सचम्

थोकडा नम्बर ६

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद तीजा (महादडक)

सख्या	मार्गणाका ९८ बोल	जीवका भेद १४	गुणस्थान १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या ६
१	सघस्तोक गर्भज मनुष्य	२	१४	१५	१२	६
२	मनुष्यणी संख्यात गुणी	२	१४	१३	१२	६
३	बादर तेउकायके पर्याप्ता अस० गुण०	१	१	१	३	३
४	पाच अणुत्तर वैमानके देव , ,	२	१	११	६	१
५	ग्रैवेयक उपरकी त्रिकके देव सख्या० गु०	२	२।३	११	९	१
६	,, मध्यमकी , ,, ,	२	२।३	११	९	१
७	,, नीचेकी ,, , ,,	२	२।३	११	९	१
८	बारहवे देवलोकके देव सख्या० गु०	२	४	११	९	१
९	ग्यारवे ,, ,, ,,	२	४	११	९	१
१०	दशवे ,, , ,,	२	४	११	९	१
११	नौवा , ,, ,,	२	४	११	९	१
१२	सातवी नरकके नैरिया अस० गु०	२	४	११	९	१
१३	छट्ठी ,, ,, ,	२	४	११	९	१
१४	आठवे देवलोकके देव ,	२	४	११	९	१

१५	सातवा देवलोकके देव अस० गु०	२	४	११	९	१
१६	पाचवी नरकके नैरिया	२	४	११	९	२
१७	छठे देवलोकके देव	२	४	११	९	१
१८	चोथी नरकके नैरिया	२	४	११	९	१
१९	पाचवें देवलोकके देव	२	४	११	९	१
२०	तीजी नरकके नैरिया	२	४	११	९	२
२१	चोथे देवलोकके देव	२	४	११	९	१
२२	दुजी नरकके नैरिया	२	४	११	९	१
२३	तीजा देवलोकके देव	२	४	११	९	१
२४	समुत्सम मनुष्य	१	१	३	४	३
२५	दुजा देवलोकके देव	२	४	११	९	१
२६	स्त्री देवी सख्या० गु०	२	४	११	९	१
२७	पहले देवलोकके देव अस गु०	२	४	११	९	१
२८	स्त्री देवी स० गु०	२	४	११	९	१
२९	भुवनपति देव अस० गु०	३	४	११	९	८
३०	देवी सख्या० गु	२	४	११	९	४
३१	पहली नरकके नैरिया अस० गु०	३	४	११	९	१
३२	खेचर पुरुष अस० गु०	२	५	१३	९	६
३३	स्त्री सख्या० गु०	२	५	१३	९	६
३४	थलचर पुरुष	२	५	१३	९	६
३५	स्त्री	२	५	१३	९	६
३६	जलचर पुरुष ,	२	५	१३	९	६
३७	स्त्री	२	५	१३	९	६
८३	व्यतरदेव	३	४	११	९	४

३९	व्यंतर देवी सख्या० गु०	२	४	११	९	८
४०	जातीषी देव ,,	२	४	११	९	१
४१	,, देवी ,	२	४	११	९	१
४२	खेचर नपुंसक ,,	२१४	५	१३	९	६
४३	थलचर , ,,	२१४	५	१३	९	६
४४	जलचर ,, ,,	२१८	५	१३	९	६
४५	चौरिंद्रियका पर्याप्ता म० गु०	१	१	२	४	३
४६	पचेंद्रियका ,, विशेषा	२	१२	१४	१०	६
४७	वेइन्द्रियका ,,	१	१	२	३	३
४८	तेइन्द्रियका ,, ,	१	१	२	३	३
४९	पचेंद्रियका अपर्याप्ता असं० गु०	२	३	५	८।९	६
५०	चौरिन्द्रियका , विशेषा	१	२	३	५	३
५१	तेइन्द्रिय ,, ,,	१	२	३	५	३
५२	वेइन्द्रिय , ,	१	२	३	६	३
५३	प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पतिकायका पर्याप्ता असं० गु०	१	१	१	३	३
५४	बादर निगोदका , ,,	१	१	१	३	३
५५	बादर पृथ्वी० , ,	१	१	१	३	३
५६	, अप० ,, ,,	१	१	१	३	३
५७	,, वायु० , ,	१	१	२	३	३
५८	,, तेउ० अपर्याप्ता ,	१	१	३	३	३
५९	प्र० बादर वना० ,	१	१	३	३	८
६०	बादर निगोदका ,, ,	१	१	३	३	३
६१	,, पृथ्वीकायका अप० ,,	१	१	३	३	४
६२	, अप्कायका ,, ,	१	१	३	३	८

६३	बादर वाउकायका अप० असं० गु	१	१	३	३	३
६४	सुक्ष्म तेउकायका अप० ,, ,	१	१	३	३	३
६५	सुक्ष्म पृथ्विकायका अप० विशेषा	१	१	३	३	३
६६	सुक्ष्म अप्कायका अप० वि०	१	१	३	३	३
६७	सुक्ष्म वायुकायका अप० वि०	१	१	३	३	३
६८	सुक्ष्म तेउकायका पर्याप्ता सं० गु	१	१	१	३	३
६९	सुक्ष्म पृथ्विकायका पर्याप्ता वि०	१	१	१	३	३
७०	सुक्ष्म अप्कायका पर्याप्ता वि	१	१	१	३	३
७१	सुक्ष्म वायुकायका पर्याप्ता वि०	१	१	१	३	३
७२	सुक्ष्म निगोदका अपर्याप्ता असं० गु०	१	१	३	३	३
७३	सुक्ष्म निगोदका पर्याप्ता सं० गु०	१	१	१	३	३
७४	अभव्य जीव अनत गु०	१४	१	१३	६	६
७५	पडवाइ सम्मदिट्ठीअनत गु०	१४	१४	१५	१२	६
७६	सिद्ध भगवान अनत गु०	०	०	०	२	०
७७	बादर वनस्पति० पर्याप्ता अनत गु०	१	१	१	३	३
७८	बादर पर्याप्ता वि	६	१४	१४	१२	६
७९	बादर वनस्पति अपर्याप्ता असं० गु०	[illegible]	१	३	३	४
८०	बादर अपर्याप्ता वि०	६	३	-	८।	६
८१	समुच्चय बादर० वि०	१२	१४	१५	१२	६
८२	सुक्ष्म वनस्पति अपर्याप्ता असं० गु०	१	१	३	३	३
८३	सुक्ष्म अपर्याप्ता वि०	१	१	३	३	३
८४	सुक्ष्म वनस्पति पर्याप्ता सं० गु०	१	१	१	३	३
८५	सुक्ष्म पर्याप्ता० वि०	१	१	१	३	३
८६	समुच्चय सुक्ष्म० वि०	२	१	३	३	३

८७	भवसिद्धि जीव वि०	१५	१४	१५	१२	६
८८	निगोदका जीव वि०	४	१	३	३	३
८९	वनस्पति जीव वि०	४	१	३	३	४
९०	एकेंद्रिय जीव वि०	४	१	५	३	४
९१	तिर्यंच जीव वि०	१४	८	१३	९	६
९२	मिथ्यात्वि जीव वि०	१४	१	१३	९	६
९३	अव्रती जीव वि०	१४	४	१३	९	६
९४	सकषायी जीव वि०	१४	१०	१५	१०	६
९५	छद्मस्थ जीव वि०	१४	१२	१६	१०	६
९६	सयोगी जीव वि०	१४	१३	१५	१०	६
९७	संसारी जीव वि०	१४	१४	१६	१२	६
९८	समुच्चय जीव वि०	१४	१४	१६	१२	६

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

—→◎←—

थोकड़ा नम्बर ७

सूत्रश्री पन्नवणाजी पद ६.

(विरहद्वार)

जीस योनीमें जीव था वह वहा से चव जानेके बाद उस योनीमें दुसरा जीव कीतने काल से उत्पन्न होते है उनको विरह कहते है। जघन्य तो सर्व स्थानपर एक समयका विरह है उत्कृष्ट अलग अलग है जैसे—

(१) समुच्चय च्यार गति सज्ञीमनुष्य और सज्ञी तीर्यचमें उत्कृष्ट विरह १२ मुहूर्तका है

(२) पहली नरक दश भुवनपति, व्यंतर जोतीषी सौधर्मेशान देव और असंज्ञी मनुष्यमें २४ मुहूर्त दुजी नरकमें सात दिन तीजी नरकमें पंदरा दिन, चोथी नरकमें एक मास पाचवी नरकमें दो मास छठी नरकमें च्यार मास, सातवी नरक सिद्धगति और चौसठ इन्द्रोंमें विरह छे मासका है

(३) तीजा देवलोकमे नौदिन वीस महुर्त चोथा देवलोक में बारहा दिन दश मुहुर्त पाचवा देवलोकमें साढावावीस दिन छठा देवलोकमे पैतालीस दिन, सातवा देवलोकमें एमी दिन आठवा देवलोकमे सौ दिन नौवा दशवा देवलोकमें सकडो मास, इग्यारवा बारहा देवलोकमें सेकडो वर्षोका नौग्रैवेयक पहले त्रीकमे सख्यात सेकडों वर्ष दुसरी त्रीकमें सख्याते हजारों वर्ष तीसरी त्रीकमे सख्याते लाखों वर्ष, च्यारानुत्तर वैमानमें पल्या पमके असख्यातमे भाग सर्वार्थसिद्ध वैमानमें पल्योपमके सख्या तमे भाग।

(४) पाच स्थावरोंमे विरह नही है तीन विकलेन्द्रिय असज्ञी तीर्यचमे अंतरमुहुर्त

(५) चन्द्र सूर्यके ग्रहणाश्रयी विरह पडे तो जघन्य छे मास उत्कृष्ट चन्द्रके बैयालीस मास सूर्यके अडतालीस वर्ष।

(६) भरतैरवतक्षेत्रापेक्षा साधु साध्वी श्रावक श्राविका आश्रयी जघन्यतो ६३००० वर्ष और अरिहंत, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव आश्रयी जघन्य ८४००० वर्ष उत्कृष्ट सबका देशोन अठा रा कोडाकोड सागरोपमका। इति।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

—⁂—

थोकडा नम्बर ८

सूत्रश्री भगवतीजी शतक १२ वा उद्देशा ५ वा.

(रूपी अरूपीके १०६ बोल.)

रूपी पदार्थ दो प्रकारके होते हैं एक अष्ट स्पर्शवाले जीनसे कीतनेक पदार्थोंको चरम चक्षुवाले देख सके, दुसरे च्यार स्पर्श वाले रूपी जीनोंको चरम चक्षुवाले देख नही सके अतिशय ज्ञानी ही जाने। अरूपी-जीनोंको केवलज्ञानी अपने केवलज्ञान द्वारा ही जाने-देखे

(१) आठ स्पर्शवाले रूपीके संक्षिप्तसे १९ बोल है यथा-छे द्रव्यलेश्या (कृष्ण, निल, कापोत, तेजस, पद्म, शुक्ल) औदारीक शरीर, वैक्रियशरीर आहारकशरीर, तेजसशरीर एवं १० तथा समुचय घणोदधि, घणवायु, तणवायु, बादर पुद्गलोंका स्कन्ध और कायाका योग एवं १९ बोलमें वर्णादि २० बोल पावे। ३००

(२) च्यार स्पर्शवाले रूपीके ३० बोल है अठारा पाप, आठ कर्म मन योग, वचन योग, सूक्ष्मपुद्गलोंका स्कन्ध, और कारमणशरीर एवं ३० बोलमें वर्णादि १६ बोल पावे। ४८० बोल.

(३) अरूपीके ६१ बोल है अठारा पापका त्याग करना बारहा उपयोग, कृष्णादि छे भावलेश्या, च्यार संज्ञा (आहार० भय० मैथुन० परिग्रह०) च्यार मतिज्ञानके भागा (उग्गह ईहा आ-पाय० धारणा) च्यार बुद्धि (उत्पातिकी, विनयकी, कर्मकी, पारि णामिकी) तीन दृष्टि (सम्यक्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि) पाच द्रव्य " धर्मास्ति अधर्मास्ति, आकाशास्ति, जीवास्ति, और कालद्रव्य " पाच प्रकारसे जीवकी शक्ति " उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषार्थ " एवं ६१ बोल अरूपीके है। इति

॥ सेव भंते सेव भंते तमेव सचम्॥

थोकडा न ६

श्री पन्नवणा सूत्र पद ३ जो.

(दिशाणुवइ)

दिशाणुवइ-२४ दंडकके जीव किस दिशामें ज्यादा है और किस दिशामें कम है यो इस थाकडे द्वारे बतलायेंगे ।

जहा पाणी हाता है वहा सात बोल होते हैं जिसका नाम समुचय जीव, अपकाय, वनस्पतिकाय बेइंद्रिय, तेइंद्रिय चौरेंद्रिय पचेंद्रिय इन सात बोलोंकी शास्त्रमें अलग अलग व्याख्या करी है यद्यपि एक सरिखा होनेसे यहा एकठा लीखते है सबसे स्तोक ७ बोलोंका जीव पश्चिम दिशामें-कारण जंबुद्वीपकी जगतिसे पश्चिम दिशा लवण समुद्रमे १२००० जोजन जावे तब १२००० जोजनका लंबा चोडा गौतम द्वीप आवे वह पृथ्वीकाय में है। इस लीये पाणीका जीव कमती है पाणीका जीव कम होनेसे सात बोलोंका जीवभी कम है उनसे पूर्व दिशा विशेषा कारण गौतम द्वीपा नहीं है उनसे दक्षिण दिशा विशेषा कारण सूर्य चन्द्रका द्वीपा नहीं है उनसे उतर दिशा विशेषा मान सरोवर तलावकी अपेक्षा (देखो जोतिषीका बोलमें)

पृथ्विकायका जीव सबसे स्तोक दक्षिण दिशामें कारण भुवनपतिओंका चार क्रोड छ लाख भुवनकी पोलार है इस लिये पृथ्विकायका जीव कम है उनसे उतर दिशा विशेषा कारण भुवनपतिओंका तीन क्रोड छासठ लाख भुवन है पोलार कम है

उनसे पूर्वमें विशेषा कारण सूर्य चन्द्रका द्वीप पृथ्वीमय है उनसे पश्चिममें विशेषा कारण गौतम द्वीप पृथ्वीमय है

तेउकाय, मनुष्य, और सिद्ध सबसे स्तोक दक्षिण उत्तरमें कारण भरतादि क्षेत्र छोटा है उनसे पूर्व दिशा संख्यातगुणा कारण महाविदेह क्षेत्र बडा है उनसे पश्चिम दिशा विशेषा कारण सलीलावती विजया १००० जोजनकी ऊंडी है जिसमे मनुष्य घणा, तेउकाय घणी और सिद्ध भी बहोत होते है

वायुकाय, और व्यंतरदेव सबसे स्तोक पूर्व दिशामें कारण धरतीका कठणपणा है उनसे पश्चिम दिशा विशेषा कारण सली लावती विजया है उनसे उत्तर दिशा विशेषा' कारण भुवनपतियोंका ३ क्रोड और ६६ लाख भुवन है उनसे दक्षिण दिशा विशेषा कारण भुवनपतिका ४ क्रोड और ६ लाख भुवन हैं (पोलारकी अपेक्षा)

भुवनपति सबसे स्तोक पूर्व पश्चिममें कारण भुवन नहीं है आना जानासे लाधे उनसे उत्तरमे असंख्यात गुणा कारण ३ क्रोड और ६६ लाख भुवन हैं उनसे दक्षिणमें असंख्यात गुणा कारण ४ क्रोड और ६६ लाख भुवन है भुवनोंमे देव ज्यादा है

जोतीषीदेव सबसे थोडा पूर्व पश्चिममें कारण उत्पन्न होनेका स्थान नहीं है उनसे दक्षिणमे विशेषा उत्पन्न होनेका स्थान है उनसे उत्तरमे विशेषा कारण मानसरोवर तलाव=जम्बुद्वीप की जगतिसे उत्तरकी तरफ असंख्याता द्वीप समुद्र जावे तब अरुणोवर नामका द्वीप आवे जिसके उत्तरमें ४२००० जोजन जावे तब मानसरोवर तलाव आता है, यह तलाव बडा शोभनीक और वर्णन करने योग्य है, और उनके अदर बहोतसे मच्छ कच्छ जलचर जोतीषीकों देखके निआणा कर मरके जोतीषी होते हैं इसलिये उत्तरदिशामें जोतीषीदेव ज्यादा है।

पहला, दुजा, तीजा और चौथा देवलोकका देवता सबसे स्तोक पूर्व पश्चिममें कारण पुष्पावकरणीय विमान ज्यादा है और पंक्तिबंध कम है। उनसे उत्तरमें असंख्यातगुणा कारण पंक्ति बंध विशेष है उनसे। दक्षिणमें विशेषा कारण देवता विशेष उपजे

पाचमा, छट्ठा, सातमा, आठमा देवलोकका देवता सबसे स्तोक पूर्व पश्चिम, उत्तरमें उनसे दक्षिणमें असं० गु

नवमासे सर्वार्थसिद्ध विमान तक चारे दिशामें समतुल्य है पहेली नारकीका नेरइया सबसे स्तोक पूर्व पश्चिम उत्तरमें उनसे दक्षिणमें असंख्यातगुणा कारण कृष्णपक्षी जीव घणा उपजे इसी माफक साताही नारकीमें समझ लेना

अल्पाबहुत्व—सबस्तोक सातवी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नेरिया उनोसे दक्षिणके नैरिये असंख्यातगुणे सातवी नरकके दक्षिणके नैरियेसे छटी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये अस० गु० उनोसे दक्षिणके नैरिये अस० गु०। छटी नरकके दक्षिणके नैरियोंसे पाचवी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये अस० गु० उनोसे दक्षिणके नैरिये अस० गु० उनोसे चोथी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये अस० गु० उनोसे दक्षिणके नै० अस० गु० उनोसे तीजी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये अस० गु० उनोसे दक्षिणसे अस० गु० उनोसे दुजी नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये अस० गु० उनोसे दक्षिणके अस० गु० दुजी नरकके दक्षिणके नैरियोंसे पहली नरकके पुर्व पश्चिम उत्तरके नैरिये अस० गु० उनोसे दक्षिणके नैरिये अस० गुण० इति।

सेव भंते सेव भंते तमेव सचम्

छे काया

थोकडा नं० १०

—※◎※—

छ कायको थोकडा

नामद्वार १	गोत्रद्वार २	वर्णद्वार ३	सठाणद्वार ४	एक महुर्तमें भव ५	अल्पाबहुत्व ६
इन्द्रीस्थावरकाय	पृथ्वीकाय	पीलो	चन्द्र मसुरकीदाल	१२८२४	३ विशेषा
ब्रभीस्थावरकाय	अपकाय	सपेद	पाणीका परपोटा	१२८२४	४ विशेषा
सपीस्थावरकाय	तेउकाय	लाल	सुइकलाइ(भारो)	१२८२४	२ असंख्यातगुणा
सुमति स्थावर काय	वायुकाय	नीलो	पताका	१२८२४	५ विशेषा
पीयवच्छ स्थावर काय	वनस्पति काय २	नाना प्रकारको	नाना प्रकारका	३२० ० प्रत्येक ६५५३६ साधारण	६ अनंतगुणा
जगमकाय	१ प्र २ सा त्रसकाय	नाना प्रकारको	नाना प्रकारका	८०×६०×४० ×२४×१	१ सबसे थोडा

त्रसकायना थोकमें ८० भव बेइन्द्रिय ६० तेइ०, ४० चौर०, २४ असन्नी पं० १ सन्नी पांचेन्द्रिय

सेव भंते सेव भंते-तमेव सच्चम

थोकडा नम्बर ११

सूत्रश्री भगवतीजी शतक १३ उद्देशो १-२.

(उपयोगाधिकार.)

उपयोग बारह है जिस्मे कोस गतिमें जाता हुवा जीव की-तने उपयोग साथमे ले जाते है और कौन गति से आता हुवा जीव साथमे कीतने उपयोग ले आते है यह सब इन थोकडे द्वारा बतलाया जाता है।

(१) पहली दुसरी तीसरी नरकमें जाते समय आठ उ-पयोग लेके जाते है यथा-तीनज्ञान (मतिज्ञान, श्रुतिज्ञान अव-धिज्ञान) तीन अज्ञान (मति श्रुति, विभगज्ञान) दोय दर्शन (अचक्षु, अवधिदर्शन) और सात उपयोग लेके पीच्छा निकले एक विभगज्ञान वर्जके। चोथी पाचमी, छठी नरकमे पूर्ववत् आठ उपयोग लेके जाव और पाच उपयोग लेके निकले अर्थात् इन तीनों नरकमे निकलनेवाला अवधिज्ञान अवधिदर्शन नही लाता है सातवी नरकमे पाचज्ञान (तीन अज्ञान-दो दर्शन) लेके जावे और तीन उपयोग लेके निकले (दो अज्ञान-एक दर्शन)

(२) भुवनपति व्यंतर ज्योतीपी देव आठ उपयोग लेके जावे पूर्ववत् और पाच उपयोग लेके निकले (दो ज्ञान, दो अ-ज्ञान एक दर्शन) बारहा देवलोक नौग्रैवेयकमें आठ उपयोग (पूर्ववत् लेके जावें और सात उपयोग लेके निकले) (तीनज्ञान दो अज्ञान, दो दर्शन) अनुत्तर वैमानमे पाच उपयोग लेके जावे (तीन ज्ञान, दो दर्शन एवं पाच उपयोग लेके निकले।

(३) पांच स्थावरमें तीन उपयोग लेके जावे और तीन उपयोग ही लेके निकले (दो अज्ञान एक दर्शन)। तीन विकलेन्द्रिय पांच उपयोग लेके जाय (दो ज्ञान दो अज्ञान, एक दर्शन) और तीन उपयोग लेके निकले (दो अज्ञान, एक दर्शन और तिर्यच पांचेन्द्रिय पांच उपयोग लेके जाय (दो ज्ञान दो अज्ञान एक दर्शन) और आठ उपयोग लेके निकले (तीन ज्ञान, तीन अज्ञान दो दर्शन)॥ मनुष्यमें सात उपयोग (तीन ज्ञान, दो अज्ञान, दो दर्शन) लेके आवे और आठ उपयोग (तीन ज्ञान, तीन अज्ञान, दो दर्शन) लेके निकले॥ सिद्धोंमें केवलज्ञान, केवल दर्शन लेके जीव जाता है यह सादि अंत भांगे सदैव साश्वते आनन्दघनमें विराजमान होते हैं। इति

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सचम्

थोकडा नम्बर १२

सूत्रश्री भगवती शतक १ उ० २.

(देवोत्पातके १४ बोल.)

निम्नलिखित चौदा बोलोंके जीव अगर देवतोंमें जावे तो यहांतक जा सके

संख्या	मार्गणा	जघन्य	उत्कृष्ट
१	असंयतिभवी द्रव्य देव	भुवनपतिमें	नौग्रैवेयक
२	अविराधि मुनि	सौधर्मकल्प	अनुत्तर वैमान
३	विराधि मुनि	भुवनपतिमें	सौधर्मकल्प

४	अविराधि श्रावक	सौधर्मकल्प	अच्युत
५	विराधि श्रावक	भुवनपति	ज्योती
६	असज्ञी तीर्यंच	"	व्यंतर
७	कन्दमूल खानेवाले तापस	"	ज्योती
८	हासी ठठा करनेवाले मुनि (कदर्पीया)	"	सौधर्म
९	परिव्राजक सन्यासी तापस	"	ब्रह्मदेव
१०	आचार्यादिका अवगुण बोलनेवाले किल्बिषीया मुनि	"	लांतक
११	सज्ञी तीर्यच	"	आठवा
१२	आजीवियासाधु गोशालाय मतका	"	अच्युत
१३	यंत्र मंत्र करनेवाले अभागी साधु	"	"
१४	स्वलींगी दर्शन व्यापन्नगा	"	नौ ग्रैवे

चौदवा बोलमें भव्य जीव है पहले बोलमें भव्याभव्य है। इति

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

—✻◎✻—

थोकडा नम्बर १३

सूत्र श्री ज्ञाताजी अध्ययन ८ वा

(तीर्थंकर नाम बन्धके २० कारण)

(१) श्री अरिहंत भगवानके गुण स्तवनादि करनेसे।
(२) श्री सिद्ध भगवानके गुण स्तवनादि करनेसे।

(३) श्री पाच समति तीन गुप्ति यह अष्ट प्रवचनकी माता है इनोंको सम्यकप्रकारसे आराधन करनेसे ।
(४) श्री गुणवन्त गुरुजी महाराजका गुण करनेसे ।
(५) श्री स्थिवरजी महाराजके गुणस्तवनादि करनेसे ।
(६) श्री बहुश्रुती-गीतार्थोंका गुणस्तवनादि करनेसे ।
(७) श्री तपस्वीजी महाराजके गुणस्तवनादि करनेसे ।
(८) लीया पढा ज्ञानको वारवार चिंतवन करनेसे ।
(९) दर्शन (समकित) निर्मल आराधन करनेसे ।
(१०) सात तथा १३४ प्रकारके विनय करनेसे ।
(११) कालोकाल प्रतिक्रमण करनेसे ।
(१२) लिये हुवे व्रत-प्रत्याख्यान निर्मल पालनेसे ।
(१३) धर्मध्यान-शुक्लध्यान ध्याते रहनेसे ।
(१४) बारह प्रकारकी तपश्चर्या करनेसे ।
(१५) अभयदान-सुपात्रदान देनेसे ।
(१६) दश प्रकारकी वैयावच्च करनेसे ।
(१७) चतुर्विध संघको समाधि देनेसे ।
(१८) नये नये अपूर्व ज्ञान पढनेसे ।
(१९) सूत्र सिद्धान्तकी भक्ति-सेवा करनेसे ।
(२०) मिथ्यात्वका नाश और समकितका उद्योत करनेसे ।

उपर लिखे बीस बोलोंका सेवन करनेसे जीव कर्मोंकी क्रोडाक्रोडी क्षय करदेते है और उत्कृष्टी रसायण (भावना) आनेसे जीव तीर्थंकर नामकर्म उपार्जन करलेते है जीतने जीव तीर्थंकर हुवे हैं या होंगे यह सब इन बीस बोलोंका सेवन कीया है और करेगा इति ।

॥ सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर १४

(जलदी मोक्ष जानेके २३ बोल)

(१) मोक्षकी अभिलाषा रखनेवाला जल्दी २ मोक्ष जाय।
(२) तीव्र-उग्र तपश्चर्या करनेसे ,
(३) गुरुगम्यतापूर्वक सूत्र-सिद्धान्त सुने तो जल्दी २ ,
(४) आगम सुनक उनोंमें प्रवृत्ति करनेसे ,, ,,
(५) पाचों इन्द्रियोंका दमन करनेसे
(६) छे कायाको जानके उन जीवोंकी रक्षा करे तो ज० ,
(७) भोजन समय साधु-साध्वीयोंकी भावना भावे तो जल्दी २ मोक्ष जाये।
(८) आप सद्ज्ञान पढे और दुसरोंको पढाव तो ज० मोक्ष जाय
(९) नव निदान न करे तथा नौकोटी प्रत्याख्यान करनेसे ,
(१०) दश प्रकारकी वैयावच्च करनेसे जल्दी २ मोक्ष जावे।
(११) कषायका निमुल करे पतली पाडे तो , ,,
(१२) छती शक्ति क्षमा करे तो , ,
(१३) लगा हुवा पापकी शीघ्र आलोचना करनेसे ज०
(१४) ग्रहन किये हुवे नियम अभिग्रहको निर्मल पाले तो जल्दी २ मोक्ष जावे।
(१५) अभयदान-सुपात्रदान देनेसे जल्दी २ मोक्ष जाय।
(१६) सच्चे मनसे शील-ब्रह्मचर्य व्रत पालनेसे ज० ,
(१७) निवद्य (पापरहित) मधुरवचन बोलनेसे , ,
(१८) लिया हुवा संयमभारको स्थितोस्थित पहुचानेसे जल्दी २ मोक्ष जावे।

(१९) धर्मध्यान-शुक्लध्यान ध्यानेसे जलदी २ मोक्ष जावे।
(२०) एक मासमे छे छे पौषध करनेसे ,, ,,
(२१) उभयकाल प्रतिक्रमण करनेसे ,, ,,
(२२) रात्रीके अन्तमे धर्मजागना (तीन मनोरथ) करे तो जलदी २ मोक्ष जावे।
(२३) आराधि हो आलोचना कर समाधि मरन मरे तो जल्दी २ मोक्ष जाय।

इन तेवीस बोलोंको पहले सम्यक्प्रकारसे जानकर सेवन करनेसे जीव जल्दी २ मोक्ष जाते है इति।

॥ सेव भंते सेव भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर १५

(परम कल्याणके ४० बोल)

जीवों के परम कल्याण के लिये आगमोसे अति उपयोगी बोलोंका संग्रह किया जाता है

(१) समकित निर्मल पालनेसे जीवोंका परमकल्याण' होता है। राजा श्रेणिक कि माफीक (श्री स्थानायाग सूत्र)

(२) तपश्चर्या कर निदान न करनेसे जीवोंका " परम कल्याण होता है" तामली तापसकि माफीक (सूत्र श्री भगवतीजी)

(३) मन वचन कायाके योगोंको निश्चल करनेसे जीवोंका " परम० " गजसुकमाल मुनिकि माफीक (श्री अंतगढ सूत्र)

(४) समासथ्य क्षमा धर्मको धारण कर नेसे जीवोंके " परम० " अर्जुनमालीकि माफीक (श्री अंतगढ सूत्र)

(५) पांचमहाव्रत निर्मल पालनेसे जीवोंका " परम० " श्री गौतमस्वामिजीकि माफीक (श्री भगवतीजी सूत्र)

(६) प्रमाद त्याग अप्रमादि होनेसे जीवोंका " परम० " श्री शैलगराजऋषिकी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(७) पांचो इन्द्रियोंका दमन करनेसे जीवोंका ' परम० " श्री हरकेशी मुनिराजकि माफीक (श्री उत्तराध्ययनजी सूत्र)

(८) अपने मित्रोंके साथ मायावृति न करनसे जीवोंके 'परम०' महिनाथजीके पुर्वभवके छ मित्रोंकि माफीक (ज्ञातासूत्र)

(९) धर्म चर्चा करनेसे जीवोंका ' परम० जैसे केशी स्वामी गौतमस्वामीकी माफीक (श्री उत्तराध्ययनजी सूत्र)

(१०) सच्चा धर्मपर श्रद्धा रखनेसे जीवोंका " परम० " मगनागनतूवाके बालमित्रकी माफीक (श्री भगवती सूत्र)

(११) जगतके जीवोंपर करूणाभाव रखनेसे जीवोंके परम०" मेघकुमारके पुर्वे हाथीके भवकी माफाक (श्री ज्ञातासूत्र)

(१२) सत्य बात नि शंकपणे करनेसे जीवोंका परम० ' आनन्द श्रावक और गौतमस्वामीके माफीक (उपासक दशांग सूत्र०)

(१३) आपत्त समय नियम-व्रतमें मजबुति रखनेसे परम०' अम्बडपरिव्राजकके सातसे शिष्योंकि माफीक (श्री उववाइजी सूत्र०)

(१४) सचे मन शील पालनेसे जीवोंका परम० ' सुदर्शन शेठकी माफीक (सुदर्शन चरित्र)

(१५) परिग्रहकी ममत्वका त्याग करनेसे जीवोंका 'परम०' कपील ब्राह्मणकि माफीक (श्री उत्तराध्ययनजी सूत्र)

(१६) उदार भावसे सुपात्र दान देनेसे जीवोंका ' परम० " शौमक गाथापतिकि माफक (श्री वीपाक सूत्र)

(१७) अपने व्रतामें गीरते हुवे जीवोंके स्थिर करनेसे ' परम० ' राजमति और रहनेमिका माफीक (श्री उत्तराध्ययन सूत्र०)

(१८) उग्र तपश्चर्या करते हुवे जीवोंका ' परम० ' धन्नामुनिकि माफीक (श्री अनुत्तर उववाइ सूत्र)

(१९) अग्लानपणे गुर्वादिकिवैयावच्च करनेसे ' परम० ' पन्थकमुनिकी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२०) सदैव अनित्य भावना भावनेसे जीवोंका ' परम० ' भरतचक्रवर्तिकि माफीक (श्री जम्बुद्विपप्रज्ञप्ति सूत्र)

(२१) प्रणामोंकि लहरोंको रोकनेसे जीवोंके ' परम० ' प्रसन्नचन्द्रमुनिकी माफीक (श्रेणिकचरित्रमे)

(२२) सत्यज्ञानपर श्रद्धा रखनेसे जीवोंके ' परम० ' अर्हन्नक श्रावककी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२३) चतुर्विधसंघकि वैयावच्च करनेसे जीवोंके ' परम० ' सनत्कुमार चक्रवर्तिके पुवरे भवकि माफीक (श्री भगवती सूत्र)

(२४) चढते भावोंसे मुनियोंकि वैयावच्च करनेसे 'परम०' बाहुबलजीके पुर्वभवकी माफीक (श्री ऋषभचरित्र)

(२५) शुद्ध अभिग्रह करनेसे जीवोंके ' परम० ' पाच पाडवोंकि माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२६) धर्म दलाली करनेसे जीवोंके " परम० " श्रीकृष्ण नरेशकि माफीक (श्री अंतगडदशांग सूत्र)

(२७) सूत्रज्ञानकि भक्ति करनेसे जीवोंके ' परम० " उदाइराजाकि माफिक (श्री भगवतीसूत्र)

(२८) जीवदया पाले तो जीवोंके " परम० " श्री धर्मरूची अणगारकी माफीक (श्री ज्ञातासूत्र)

(२९) व्रतोंसे गीरजानेपरभी चेतजानेसे " परम० " अरणिकमुनिकी माफीक। (श्री आवश्यक सूत्र)

(३०) आपत्त आनेपरभी धैर्यता रखनेसे ' परम० ' खंधक मुनिकी माफीक। (श्री आवश्यक सूत्र)

(३१) जिनराज देवोंकि भक्ति ओर नाटक करनेसे जीवोंके परम० ' प्रभावती राणीकी माफीक (श्री उत्तराध्ययन सूत्र)

(३२) परमेश्वरकी त्रिकाल पुजा करनेसे जीवोंके परम० शान्तिनाथजीके पुवभव मघरथ राजाकी माफीक (शान्तिनाथ चरित्र)

(३३) छती शक्ति क्षमा करनेसे जीवोंके ' परम० ' प्रदेशी राजाकी माफीक (श्री रायपसेनी सूत्र)

(३४) परमेश्वरके आगे भक्ति सहित नाटक करनेसे परम० रावण राजाकी माफीक (त्रिषष्ठीशलाका पुरुष चरित्र)

(३५) देवादिके उपसर्ग सहन करनेसे ' परम० कामदेव श्रावककी माफीक (श्री उपासक दशाग सूत्र)

(३६) निभाक्तासे भगवानको वन्दन करनेको जानेसे'परम०' श्री सुदर्शन शेठकी माफीक (श्री अन्तगड दशाग सूत्र)

(३७) चर्चा कर वादीयोंका पराजय करनेसे ' परम० ' मद्दुक श्रावककी माफीक (श्री भगवती सूत्र)

(३८) शुद्ध भावोंसे चैत्यवन्दन करनेसे जीवोंके परम० ' जगवल्लभाचार्यकी माफीक (पुजा प्रकरण)

(३९) शुद्ध भावोंसे प्रभुपुजा करनेसे जीवोंके परम० ' नागकेतुकी माफीक (श्री कल्पसूत्र)

(४०) जिनप्रतिमाके दर्शन कर शुभ भावना भावनेसे परम० ' आद्रकुमारकी माफीक (श्री सूत्र कृताग)

इन बोलोंको कण्ठस्थ कर सदैवके लिये स्मरण करना और यथाशक्ति गुणोंको प्राप्त कर परम कल्याण करना चाहिये।

॥ सेव भंते सेव भंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर १६

(श्री सिद्धोंकी अल्पाबहुत्वके १०८ बोल)

ज्ञान दर्शन चारित्रकी आराधना करनेवाले भाइयोंको इन अल्पाबहुत्वको कण्ठस्थ कर सदैव स्मरण करना चाहिये।

(१) सब स्तोक एक समयमें १०८ सिद्ध हुवे।
(२) उनांसे एक समयमें १०७ ,, अनंतगुणे।
(३) उनांसे एक समयमें १०६ ,, ,
एव ५८ वा बोलमें एक समयमें ५१ ,, ,
(५९) उनांसे एक समयमें ५० असंख्यातगुणे।
(६०) उनांसे एक समयमें ४९ ,, ,
(६१) उनांसे एक समयमें ४८ , ,,
एव क्रमसर ८४ वा बोलमें एक समयमें २५ सिद्ध हुवे अस० गु०
(८५) उनांसे एक समय २४ सिद्ध हुवे संख्यातगुणे०
(८६) उनांसे एक समय २३ ,, , ,,
एव क्रमसर १०८ वा बोले एक समयमें एक ,, ,,

यह १०८ बोलोंकी 'माला' सदैव गुणनेसे कर्मोंकी महा निर्जरा होती है वास्ते सुज्ञजनोंको प्रमाद छोड प्रात कालमें इस मालाको गुणनेसे सर्व कार्य सिद्ध होते हैं इति।

॥ सेवभंते सेवभंते तमेव सच्चम् ॥

थोकडा नम्बर १७

(सत्र श्री जम्बुद्विप प्रज्ञप्ति -छे आरा)

भगवान वीरप्रभु अपने शिष्य इन्द्रभूति अनगार प्रति कहते है कि हे गौतम इस आगपार ममास्र अन्दर कम प्ररित अनत जीव अनत काल से परिभ्रमन कर रहे है कालकि आदि नही है और अत भी नही है

भरत-ऐरवत क्षेत्रकि अपेक्षा अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कही जाती है यह दश कोडाकोड सागरोपमकि अवसर्पिणी और दश कोडाकोड सागरोपमकी उत्सर्पिणी एव दोनो मीलके वीस कोडा कोडी सागरोपमका कालचक्र होता है एव अनत कालचक्रका एक पुद्गल परावर्तन होता है एसे अनत पुद्गल परावर्तन भूतकालमें हो गये है और भविष्यमें अनन्ते पुद्गल परावर्तन हो जायगा

हे गौतम में आज इन भरतक्षेत्रमें अवसर्पिणी कालका ही व्याख्यान करता हु तु एकाग्रचित कर श्रवण कर।

एक अवसर्पिणी काल दश कोडाकोड सागरोपमका होता है जिस्के ६ विभाग रूपी ६ आरा होते है यथा—(१) सुखमा सुखमा (२) सुखमा (३) सुखमा दु खमा (४) दु खमा सुखमा (५) दु खमा (६) दु खमा दु खमा इति छे आरा।

(१) प्रथम सुखमा सुखम आरा च्यार कोडाकोड सागरोपमका है इस आराके आदिमे यह भारतभूमि बडा ही रम्य रमणिय सुन्दराकार और सौभाग्यको धारण करनेवाली थी पाहाड पर्वत खाड खाडा याने विषमपणाकर रहित इन भूमिका विभाग पाच प्रकारके रत्न से अच्छा मंडित था चातर्फसे वन

गर्जा पत्र पुष्प फलादिकि लक्ष्मी से अपनी छटा दीखा रही थी दश प्रकारके कल्पवृक्ष अनेक विभागोंमें अपनि उदारता मशहूर कर रहे थे भूमिका वर्ण बडा ही सुन्दर मनोहर था स्थान स्थान वापी कुवे पुष्करणी वापी अच्छा पत्र पाणी से भरी हुइ लेहरो कर रही थी भूमिका रस मानो कालपी मीसरी माफीक मधुर और स्वादिष्ट था भूमिकी गन्ध चोतर्फ से सुगन्ध ही सुगन्ध दे रही थी भूमिका स्पर्श बडा ही सुकुमाल मक्खनकि माफीक था एक जारीस होनेपर दश हजार वर्ष तक उनकी सरसाइ बनी रहती थी

हे गौतम उन समयके मनुष्य युगल कहलाते थे कारण उन समय उन मनुष्योंके जीवनमें एक ही युगल पैदा होते थे उनोंके मातापिता ४९ दिन उनोंका सरक्षण करते थे फीर वह ही युगल गृहवास कर लेते थे वास्त उन मनुष्योंको 'युगलीये' मनुष्य कहा जाते थे वह बडे ही भद्रीक प्रकृतिवाले सरल स्वभावी विनयमय तों उनका जीवन ही थे उन मनुष्योंके प्रेमबन्धन या ममत्वभाव तों बील्कुल ही नही था उन जमानेमें उन मनुष्योंके लिये राजनीती और कानुन कायदावोंकि तो आवश्यक्ता ही नहीं थी कारण जहा ममत्व भाव होते है वहा राजसत्ताकि जरूरत होती है यह उन मनुष्योंके थी नही। वह मनुष्य पुन्यवान ता इतने थे कि जब कीसी पदार्थ भोग उपभोगके लिये जरूरत होती तों उनोंके पुन्योदय वह दशजातिके कल्पवृक्ष उसी वखत मनो कामना पूरण कर देते थे। उन कल्पवृक्षोंके नाम और गुण इस माफीक था।

(१) मत्तागा=उच पदार्थोंके मदिराके दातार
(२) भूयांगा=थाल कटोर गीलासादि बरतनोंके दातार

(३) तुडागा-२९ जातिय बाजित्रांके दातार
(४) जायागा=सुर्य चन्द्रसे भी अधिक ज्योतीके दातार
(५) दीपागा=दीपक चराग मणि आदिका प्रकाश
(६) चित्तगागा=पांचवर्णके सुग धी पुष्पादि मालायों क
(७) चित्तरसा=अनेक प्रकारके पाक पकवानके भाजन सुन्दर स्वादिष्ट पौष्टीक मनगमते भोजनके दातार
(८) मणियागा=अनेक प्रकारके मणि रत्न मुक्ताफल सुवर्ण मंडित कमवजन अधिक मूल्य ऐसे भूषणोंके दातार।
(९) गेहगारा=उंचे उच शीखरवाले मनोहर प्रासाद भुवन महल शय्या सयुक्त मकानके दातार।
(१०) अणिअणा=उम्मदा सुकमाल वस्त्रोंके दातार।

यह दश जातिके कल्पवृक्ष युगल मनुष्योंके मनोर्थ पुरण करते थे

हे गौतम! उन मनुष्योंके उन समय तीन पल्योपमका× आयुष्य तीन गाउका शरीर और शरीरके २५६ पासलीयों थी वज्र ऋषभ नाराच सहनन समचतुरस्र सस्थान, उन स्त्री पुरुषोंका रूप जोबन लावण्य चातुय सौभाग्य सुन्दरता बहुत ही अच्छी थी, क्रमश काल बीतने लगा तब उतरते आरे उन मनुष्योंका दो पल्योपम का आयुष्य दो गाउकी अवगाहना शरीरकि पासलीयों १२८ रही वर्ण, गन्ध, रस स्पर्शमें अनंतीहानी होने लगी। भूमिका रस खडा जैसा रह गया। आराके आदिमें उन युगल मनुष्योंको तीन

× दश जातिके कल्पवृक्षोंको जीवाभिगम सूत्रमें 'विससपरणिया' कहा है जीस्को कइ आचार्य कहते है कि उन वृक्षोंके अधिष्टत देवता है कइ युगल मनुष्योंकि इच्छा पुरण करते है कइ कहते है कि युगलीयोंके स्वभावी पुन्य होनेसे स्वभावो उनी पदार्थ द्वारा प्रणम जाते है। तत्व केवलिगम्य।

दिनोंसे आहारकि इच्छा होती थीं जब शरीर प्रमाणे आहार करते थे फीर आराके अन्तमें दा दीनोंमें आहारकि इच्छा होने लगी

युगल मनुष्योंके शेष छमास आयुष्य रहता है तब उनोंके परभवको आयुष्य बन्ध जाता है युगल मनुष्योंका आयुष्य नोप-क्रमीं होता है। युगलनीके एक युगल (बचाबची) पैदा होते है उनोंकी ८९ दिन 'प्रतिपालना करके युगल मनुष्यको छींक आति है और युगलनीको उभासी आती है बस इतनेमें यह दोनों सा-थहीमें कालधर्मको प्राप्त हो देवगतिमें चले जाते है।

उन समय सिंह व्याघ्र चित्ता रीच्छ सर्प बीच्छु गौ भेंस हस्ति अश्वादि जानवर भी होते है परन्तु यह भी बडे भद्रीक प्रकृतिवाले कीसी जीवोंके साथ न वैरभाव रखते है न कीसीको तकलीफ देते है उनोंकीभी गति देवताओंकी ही होती है। युगल मनुष्य उन्हे कासी काममें नहीं लेते है।

उन समय न कमी मसी असी वीणज्य वैपार है न राजा प्रजा होती है वहांपे मनुष्य तथा पशु स्वइच्छानुसार घूमा करते है। जेसा यह प्रथम आरा है जीसकि आदिमें जो वर्णन किया है वसाही देवकुरु उत्तरकुरु युगलक्षेत्रका वर्णन समज लेना चाहिये।

पुर्वभवमें कीये हुवे सुकृत कर्मका उदय अनुभाग रसको यहां पर भोगवते है। इति प्रथम आरा।

पहले आरेके अन्तमें दुसरा आरा प्रारम्भ होते है तब अनंते वर्णगन्धरस स्पर्श संस्थान संहनन गुरुलघु अगुरुलघु पर्यायकी हानी होती है।। दुसरा सुखम, नामका आरा तीन क्रोडाक्रोड सागरोपमका होता है जीस्का वर्णन प्रथम आरावत् मापीक सम जना इतना विशेष है कि उन मनुष्योंकि मानके आरेके दो

गाउकी अवगाहना, दो पल्योपमकी स्थिति, शरीरके पासलीयों १२८ सहनन सस्थान ख्रि पुरुषोंके शरीरके वर्णन प्रथमारावे माफीक समजना आराव आदिमें खाड जसी भूमिका सरसाई है उत्तरते आरे एक गाउकी अवगाहाना एक पल्योपमकी स्थिति शरीरके ६४ पासलीयों भूमिका मरसाइ गुड जसी रहेगी उन मनुष्योंको दो दिनोंसे आहारकि इच्छा होगी तब वहही शरीर प्रमाणे आहारकि कल्पवृक्ष पुरती करेंग दुसरे आराके युगलनी युगलको जन्म देगी वह ६४ दिन संरक्षण कर वहही छींक उभासी हातेही स्वर्गगमन करेंग । इसी माफीक हरीवास रम्यकवासके युगलोंकाधिकार भी समजना।

दूसरे आरेके अन्तमें तीसरा आरा प्रारम्भ होते हैं तब दुसरे आरेकि निस्पत् अनते वर्णग धरम स्पर्श सहनन सस्थानादि पर्याय हीन होगा।

तीसरा सुखमादुखम आरा दो कोटाकोड सागरोपमका है उसमेंभी युगल मनुष्यही होते है उनोंका आयुष्य एक पल्योपमका, अवगाहना एक गाउकी, शरीरके पासलीये ६४ होती है शेष शरीरके सहनन सस्थानरूप जोवनादि पुर्ववत् समजना उत्तरते आरे क्रोडपुर्वका आयुष्य पाचसो धनुष्यकि अवगाहना ३२ पासलीयाँ होती है एक दिनके अंतरसे आहारकि इच्छा होती है वह कल्पवृक्षपुर्ण करते है भूमिकी मरसाइ गुल जेसी होती है। छे मास पहलेपरभवका आयुष्य बधते है वह युगल मनुष्य ७९ दिन अपने बचायबोंकी प्रतिपालना कर स्वर्गका गमन करते हैं। इन आरामें सुख ज्यादा है और दुःख स्वल्प है इसी माफीक हेमवय परण्यवययुगल क्षेत्र भी समजना।

इन तीसरे आरे के दो विभाग तो युगलपनमे ही व्यतित हुवे जीसका वर्णन उपर कर चुके है । अब जोतीसरा विभाग रहा है उनोंका वर्णन इस माफीक है। जसे जेंसे कालके प्रभाव

से हानि होने लगी इसी माफीक कल्पवृक्ष भी निरस होने लगे फल देनेमें भी संकुचितपना होनेसे युगल मनुष्योंके चित्तमें चचलता व्याप्त होने लगी इस समय रागद्वेषने भी अपना पग पसारा करना सरु कर दीया इन कारणों से युगल मनुष्यो में अधिपति की आवश्यकता होने लगी तब कुलकरों कि स्थापन हुइ पहले के पाचकुलकरो के 'हकार' नामका नीति दंड हुवा अगर कोइ भी युगल अनुचित कार्य करे तों उसे वह कुलकर दंड देता है कि 'हे बस इतनेमे वह मनुष्य लज्जीत होके फीर जन्म भरमे कोइभी अनुचित कार्य नही करता इस नितीमे येइ काल व्यतित हुवा जब उन रागद्वेष का जोर बढने लगा तब दुसरे पाच कुलकरोंने 'मकार' नामका दंड नीकाला, अगर कोइ युगल मनुष्य अनुचित कार्य करे तों वह अधिपति कहते कि म ' याने यह कार्य मत्त करों इतने मे वह मनुष्य लज्जीत हो जाता था बाद रागद्वेषका भाइ क्लेशने भी अपना राज जमाना सरुकीया जब तीसरे पाच कुलकरोंने 'धीक्कार' नामका दंड देना सरू कीया इन पद्रह कुलकरोंद्वारा तीन प्रकार के दंड से नीति चलती रही जब तीसरे आराके ८४ चोरासी लक्ष पूर्व और तीन वर्ष साढे आठ मास शेष बाकी रहा उन समय सर्वार्थ सिद्ध महा वैमान से चवके भगवान ऋषभदेवने, नाभीराजा के मरूदेवी भार्या कि रत्नकूक्षीमें अवतार लीया माताको वृषभादि चौदा सुपना आये उनोंका अर्थ खुद नाभीराजने ही कहा क्रमश भगवानका जन्म हुवा चौसठ इन्द्रोंने महोत्सव कीया युवक वयमे सुनन्दा सुमगला के साथ भगवानका व्याह (लग्न कीया जीसके रीत रस्म सब इन्द्र इन्द्राणीयों ने करीथी फीर भगवान् ऋषभदेवने पुरुषोंकी ७२ कला और स्त्रियोंकी ६४ कला बतलाइ

कारण प्रभु अवधिज्ञान संयुक्त थे वह जानते थे कि अब कल्पवृक्ष
नों फल देंगे नही और नीति न होगी तो भविष्य में बडा भारी
नुकशान होगा दुराचार बढ जायगें इस वास्ते भगवान ने उन
मनुष्यों कों असी मसी कसी आदि कर्म करना बतलावे
नीतिके अन्दर स्थापन कीया। बस यहा से युगल्धर्म का
बिल्कुल लोप होगया अब निति के साथ लग्न करना अन्नादि
खाद्य पदार्थ पेदा करना और भगवान् आदीश्वर के आदेश
माफीक बरताव करना वह लोग अपना कर्तव्य समझने लग गये
भगवान् वसे बीस लक्ष पुर्व कुमार पद मे रहै इन्द्र महाराज
मीलके भगवान् का राज्याभिषेक कीया भगवान इक्ष्वाकुवंस
उग्रादिकुल स्थापन कर उनोंके साथ ६३ लक्षपूर्व राजपद कों
चलाये अर्थात् ८३ लक्षपुर्व गृहवास सेवन किया जीसमे भरत
बाहुबल आदि १०० पुत्र तथा ब्राह्मी, सुन्दरी आदि दो पुत्रीये हुइ
थी अयोध्या नगरी कि स्थापना पहलेसे इन्द्र महाराजने करी थी
और भी ग्राम नगर पुर पाटण आदिसे भूमंडल बडाही शोभने लग
रहाथा भगवानके दीक्षाके समय लोकान्तिक देव आके भगवान
से अर्ज करी कि हे प्रभो! जिसे आप निती धर्म बतलाके क्लेश पाते
युगलीयोंका उद्धार किया है इसी माफीक अब आप दीक्षा
धारण कर भव्य जीवोंका ससार से उद्धार कर मोक्षमार्ग कों
प्रचलीत करों उनसमय भगवान् संवत्सर दान दे के भरतको
अयोध्याका राज बाहुबलकों तक्षशीला का राज और ९८ भाइ-
योंकों अन्यदेशोंका राज दे ४००० राजपुत्रोंके साथ दीक्षा ग्रहन
करी। भगवान् के एक वर्ष तक का अन्तराय कर्म था और युगल
मनुष्य अज्ञात होनेसे एक वर्ष तक आहार पाणी न मीलने से
वह ४००० शिष्य जंगलमें जाके फलफूल भक्षण करने लग गयें-
जब भगवान् ने वरसीतपका पारणा श्रेयांसकुमार के वहा

किया तबसे मनुष्य आहार पाणी देना सीखे भगवान् १००० वर्ष छद्मस्थ रह के केवल ज्ञानकी प्राप्ति के लिये पुरीमताल नगरके उद्यानमे आये भगवान को केवल ज्ञानोत्पन्न हुवा यह वधाइ भरत महाराज को पहुची उस समय भरत राजाके आयुधशालामें चक्ररत्न उत्पन्न हुवा एक तरफ पुत्र होनेकी वधाइ आइ, एवं तीनों कार्य बडा महोत्सवका था, परन्तु भरत राजाने विचार कीया कि चक्ररत्न और पुत्र होना तो ससारवृद्धिका कार्य है परन्तु मेरे पिताजीको केवलज्ञान हुवा वास्ते प्रथम यह महोत्सव करना चाहिये क्रमश: महोत्सव कीया माता मरुदेवी को हस्ती पर बेठा के लाये माताजी अपने पुत्र (ऋषभदेव) को देख पहले बहुत मोहनी करो फीर आत्म भावना करते हस्तीपर बैठी हुई माताको केवलज्ञान उत्पन्न हुवा और हस्तीके स्कंधपरसे ही मोक्ष पधार गये भगवान के ४००० शिष्य वापिस आगये औरभी ८४ गणधर ८४००० साधु हुवे और अनेक भव्य जीवोंका उद्धार करते हुवे भगवान आदीश्वरजी एक लक्ष पुत्र दीक्षा पाल मोक्षमार्ग चालु कर अन्तमे १०००० मुनिवरोंके साथ अष्टापदजीपर मोक्ष पधार गये इन्द्रोंका यह फर्ज है कि भगवान के जन्म, दीक्षाग्रहन केवल ज्ञानोत्पन्न और निर्वाण महोत्सवके समय भक्ति करे इस फर्ज क्यानुसार सभी महोत्सव कीये अन्तमें इन्द्र महाराजने अष्टापद पर्वत् पर रत्नमय तीनबडे ही विशाल स्तुप कराये और भरत महाराज उन अष्टापद पर २४ भगवान् के २४ मन्दिर बनवा के अपना जन्म सफल कीया था इस वखत तीजा आरा के तीन वर्ष साढा आठ मास बाकी रहा है जोकि युगलीये मरके एक देव गति मेंही जाते थे अब यह मनुष्य कर्मभूमि हो जाने से नरक तीर्यच मनुष्य देव और केइ केइ सिद्ध गतिमें भी जाने लगगये हैं। तीसरे आरे के अन्तमें क्रोड पूर्वका आयुष्य, पाचसो धनुष्य का

शरीर, माम ३२ पासलीयों यावत् वर्ण गन्ध रस स्पर्श संहनन संस्थानादिके पयव अनंते अनंते हानि होने लग भरती की मरमा गुल जसी रही

तीसरा आरा उतर के चोथा आरा लगा यह ४२००० वर्ष कम एक कोडाकोड सागरोपमका है जिस्मे कर्मभूमि मनुष्य जघन्य अन्तर महुर्त, उत्कृष्ट क्रोड पूर्वका आयुष्य जघन्य अगुल के असख्य भाग उत्कृष्ट पाचसो धनुष्य कि अवगाहना थी शरीर क पासलीयों ३२थी सहनन ६, सस्थान छे था जमीनकी सरसाइर्थी स्निग्ध सयुक्त मनुष्यों क प्रतिदिन आहार करने कि इच्छा उत्पन्न हाती थी भगवान ऋषभदेव और भरतचक्रवर्त्ति यह दो शालाक पुरुष तो तीसरे आरा के अन्तमे हुए और शष २३ तीर्थकर, ११ चक्रवर्त्ति ९ बलदेव ९ वासुदेव, ९ प्रतिवासुदेव यह सब चौथा आरामें हुए थे।

भगवान ऋषभदेव क पाटोनपाट असख्यात जीव मोक्ष गये तत्पश्चात् अजितनाथ भगवान् का शासन प्रवृत्तमान हुवा क्रमश नौवो सुविधिनाथ भगवान् तक अविच्छिन्न शासन चला फीर हुन्डा सर्पिणी क प्रयागम शाशन उच्छेद हुवा फीर शीतलनाथ भगवान् से शासन चला पर श्री धर्मनाथजी के शासन तक अतरे अतर धर्म विच्छेद हुवा बाद में श्री शान्तिनाथ प्रभु अवतार लीया वहासे श्री पार्श्वनाथ प्रभु तक अवच्छिन्न शासन चला बाद मे चौथा आराके ७५ वर्ष आढा आठ मास बाकी रहा । पाठ वों दशवा स्वर्ग से चवके क्षत्रीकुंड नगर के सिद्धार्थ राजा कि त्रिसलादे राणी के रत्नकुक्षमे श्री वीर भगवान् अवतार धारण कीया माता को १४ स्वप्ना यावत् भगवान् का जन्म हुवा ६४ इन्द्र मील के भगवान् का जन्म महोत्सव कीया बाद में राजा

सिद्धार्थ जन्म महोत्सव कीया था उनसमय जिन मन्दिरोंमें सेकडो पुजाओं कर अनुक्रमसे ३० वर्ष भगवान् गृहवास में रहके बाद दिक्षा ग्रहन कर साढे बारह वर्ष घोर तपश्चर्या कर के वयलज्ञान कि प्राप्ती कर तीस वर्ष तग भव्य जीवोंका उद्धार कर सर्व ७२ वर्षो का आयुष्य पाल आप मोक्ष मे पधार गये उससमय भगवान् गौतम स्वामि को केवलज्ञान उत्पन्न हुवा जिनका महा महोत्सव इन्द्रादिकने कीया।

चौथा आरामें दुःख ज्यादा और सुख स्वल्प है आरा के अन्तमें मनुष्यों का आयुष्य उत्कृष्ट १२० वर्षका शरीरकी उंचाइ सात हाथकी पासलीयों १६ धरतीकी सरसाइ मटी जेसी थी एक दिनमें अनेकवार आहारकी इच्छा उत्पन्न होती थी

जब चौथा आरा समाप्त हो पांचवा आरा लगा तब वर्ण-गन्ध रस स्पर्श संहनन संस्थान के पर्यव अनते हीन हुये धरतीकी सरसाइ मटी जेसी रही।

पांचवा आरा २१००० वर्षोका होगा आरा के आदिमें १२० वर्षोका मनुष्योंका आयुष्य ७ हाथका शरीर-शरीर के छे संहनन छे संस्थान १६ पासलीया होगें चोसठ वर्ष केवलज्ञान (८ वर्ष गौतमस्वामि १२ सौधर्मस्वामि ४४ जम्बुस्वामि) पांचवे आरे के मनुष्यों को आहारकी इच्छा अनियमित होग।

जम्बु स्वामि मोक्ष जाने पर १० बोलोंका उच्छेद होगा यथा-परमावधिज्ञान, मन पर्यव ज्ञान केवलज्ञान, परिहार विशुद्धि चारित्र, सूक्ष्मसंपराय चारित्र, यथाख्यात चारित्र, पुलाक लब्धि, आहारक शरीर, क्षायकश्रेणी, जिन कल्पीपना,,

प्रसंगोपात पाचवे आरे के युग प्रधान आचार्योंके नाम.

(१) श्री मयप्रभसूरि जैनपोरवाल श्रीमालके कर्त्ता
(२) श्री रत्नप्रभसूरि उपलदे राजादि को जैन ओसवाल कीये
(३) श्री यक्षदेवसूरि सवालक्ष जैन बनानेवाला
(४) श्री प्रभवस्वामि सज्जंभवभट्टके प्रतिबोधक
(५) श्री सज्जंभवाचार्य दशवैकालिक के कर्त्ता
(६) श्रीभद्रबाहुस्वामि निर्युक्ति के कर्त्ता
(७) श्री सुहस्ती आचार्य राजा सम्प्रती प्रतिबोधक
(८) श्री उमास्वाति आचार्य पांचसो ग्रन्थ के कर्त्ता
(९) श्री श्यामाचार्य श्री प्रज्ञापना सूत्र के कर्त्ता
(१०) श्री सिद्धसेन दीवाकर विक्रमराजा प्रतिबोधक
(११) श्री वज्रस्वामि जिनमन्दिरोंकी आशातना मीटानेवाले
(१२) कालकाचार्य शालीवाहन राजा प्रतिबोधक
(१३) श्री गन्धहस्ती आचार्य प्रथम टीकाकार
(१४) श्री जिनभद्रगणी आचार्य भाष्यकर्त्ता
(१५) श्री देवऋद्धि खमासमण आगम पुस्तकारूढ कर्त्ता
(१६) श्री हरिभद्रसूरि १४४४ ग्रन्थ के कर्त्ता
(१७) श्री देवगुप्तसूरी निवृत्यादि च्यार साखोंके कर्त्ता
(१८) श्री शीलगुणाचार्य श्री मलधारि श्री वृद्धवादी
(१९) श्री जिनेश्वरसूरी श्री जिन वल्लभसूरी संघपट्टक कर्त्ता
(२०) श्री जिनदत्तसूरी जैन ओसवाल कर्त्ता
(२१) श्री कक्कसूरी आचार्य अनेक ग्रन्थकर्त्ता
(२२) श्री कलीकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य, राजा कुमारपाल प्रतिबोधक

(२३) श्री हिरविजयसूरी पादशाह अकबर प्रतिबोधक।

इत्यादि हजारों आचार्य जो जैनधर्मके स्थमभुत हो गये हैं उनोंके प्रभावशाली धर्मोपदेशसे विमलशा, वस्तुपाल, कर्माशा जावडशा भेमाशा धन्नाशा भामाशा सोमासादि अनेक वीरपुरुषोंने जैनधर्मकि प्रभावना करी थी इति

पाचवा आरा मे कालके प्रभावसे कीतनेक लोग ऐसेभी होंग और इस आर्यभूमिका वर्णन जो पुर्व महा ऋषियोंने इस माफीक कीया है।

(१) बडे बडे नगर उजडमा या गामडे जेसे हो जायेंगे
(२) ग्राम होगा वह श्मशान जेसे हो जायगे
(३) उंच कुलके मनुष्य दास दासीपना करने लग जायग
(४) जनता जिन्होंपर आधार रखे वह प्रधान लाचडीये होगें मुदाइ मुदायले दोनोंका भक्षण करेंगे
(५) प्रजाके पालन करनेवाले राजा यम जैसे होगें
(६) उंच कुलकि ओरतें निर्लज्ज हो अत्याचार करेंगी
(७) अच्छे खानदानकि ओरतों वैश्या जेसे वेश या नाच करेंगी निर्लज्ज हो अत्याचार करेंगे
(८) पुत्र कुपुत्र हों आपत्त कालमें पिताको छोडके भाग जायेंगे मारपीट दावा फीरयादि करेंग
(९) शिष्य अविनीत हो गुरु देवोंका अवगुनवाद बोलेंगे
(१०) उंचे लपट दुर्जन लोग कुच्छ समय सुखी होंगे
(११) दुर्भिक्ष दुष्काल बहुत पडेंगे
(१२) सदाचारी सज्जन लोग दु खी होंगे
(१३) ऊदर सर्प टीडी आदि क्षुद्र जीवोंक उपद्रव होंगे
(१४) ब्राह्मण योगी साधु अर्थ (धन) के लालची होंगे

(१५) हिंसा धर्म (यज्ञहोम) के प्ररूपक पाखंडी बहुत होंगे
(१६) एकेक धर्मके अन्दर अनेक अनेक भेद होंगे
(१७) जीस धर्मसे अन्दरसे निकलेग उसी धर्मकी निंदा करेंग उपकारके बदले अपकार करेंग
(१८) मिथ्यात्वीदेव देवीयां बहुत पूजा पावेंग । उनोंके उपासकभी बहुत होंगे ।
(१९) सम्यग्दृष्टि देवोंके दर्शन मनुष्योंको दुर्लभ होंगे ।
(२०) विद्याधरोंकि विद्यायोंका प्रभाव कम हो जायगें
(२१) गौरस दुध दही घत) तैल गुड शक्करमें रस कम होंगें
(२२) वृषभ गज अश्वादि पशु पक्षीयोंका आयुष्य कम होगा
(२३) साधु साध्वीयोंके मासकल्प जेसे क्षेत्र स्वल्प मीलेंगे
(२४) साधुकि १२ श्रावककी ११ प्रतिमायोंका लोप होंगे
(२५) गुरु अपने शिष्योंको पढानेमे सकुचीतता रखेंगे ।
(२६) शिष्यशिष्यणीयों कलह कदाग्रही होगी ।
(२७) संघमें क्लेश टटा फीसाद करनेवाले बहुत होंगे ।

(२८) आचार्योंकि समाचारी अलग २ होगे अपनि अपनि बधाइ बतलानेके लिये उत्सूत्र बोलेंगे एक दुसरेको झूठा बतलावेंगे ममत्वभावसे वेशविडम्बिक कुलिंगी सन्मार्गसे पतित बनानेवाला बहुत होंगे ।

(२९) भद्रीक सरल स्वभावी अदल इन्साफी स्वल्प होंगे वहभी पाखंडीयोंसे सदैव डरते रहेंगे ।

(३०) म्लेच्छराजायोंका राज होग सत्यकी हानि होगी ।
(३१) हिन्दु या उच्च कुलिन राजा, न्यायीराज स्वल्प होंगे।
(३२) अच्छे कूलीन राजा निचलोगोंकि सेवा करेंगे निच कार्य करेंग ।

इत्यादि अनेक बोलोंसे यह पांचवा आरा कलंकित होगें। इन आरामे रत्न सुवर्ण चान्दी आदि धातु दिन प्रतिदिन कम होती जावेगी अन्तमे जीस्के घरमें मणभर लोहा मीलेंगे वह धनाढ्य कहलावेगें इन आरामें चमडेके कागजोंके चलन होगें इन आरामें सहनन बहुत मंद होगें अगर शुद्ध भावोंसे एक उपासभी करेंगे वह पुर्वके अपेक्षा मासखमण जेसा तपस्वी कहलायेंगे, उन समय श्रुतज्ञानकि क्रमशः हानि होगी अन्तमे श्री दशवैकालीक सूत्रके च्यार अध्ययन रहेंगे उनसे ही भव्य जीव आराधि होगें पांचवे आरेके अन्तमें सघमें च्यार जीव मुख्य रहेंगे (१) दुप्पसासूरी साधु (२) फाल्गुनी साध्वी (३) नागल श्रावक (४) नागला श्राविका यह च्यार उत्तम पुरुष सद्गतिगामी होगें।

पांचवे आरेके अन्तमें आसाढ पुर्णीमाको प्रथम देवलोकमें शक्रेन्द्रका आसन कम्पायमान होगें जब इन्द्र उपयोग लगावे जानेंगें कि भरतक्षेत्रमें कल छठा आरा लगेगा तब इन्द्र मृत्युलोकमे आवेगें और कहेंगेंकि हे भव्यों! आज पांचवा आरा है कल छठा आरा लगेगें वास्ते अगर तुमको आत्मकल्याण करना हो तो आलोचन प्रतिक्रमण कर अनसन करो इत्यादि इनपरसे वह ही च्यारों उत्तम पुरुष आलोचना प्रतिक्रमण कर अनसनकर देवगतिमें जायेंगें शेष जीव बाल मरणसे मृत्युपाके परभव गमन करेंगें? पाठकों वहही पांचमकाल अपने उपर वरत रहा है वास्ते सावचेत रहना उचित है।

पांचवे आरेके अन्तमें मनुष्योंका उत्कृष्ट वीस वर्षका आयुष्य एक हाथका शरीर चरम सहनन सस्थान रहेगा भूमिका रस कुम्भभूमि जेसा रहेगा वर्ण गन्ध रस स्पर्शादि सब अनंत भाग न्युन होगें पांचवा आरा उत्तरके छठा आरा लगेगा उनका वर्णन बडा ही भयंकर है।

श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन संवतक नामका वायु चलनेसे पहलपहर जैनधम दुसरे पहर ३६३ पाखाडीयेका धम, तीजे पहर राजनीती चोथे पहर बादर अग्निकाय विच्छद होगें उस समय गंगा सिंधु नदी वैताढ्यगिरि पर्वत (सास्वतगिरी) और लवण समुद्र कि खाडि इनके सिवाय सब पर्वत पाहाड जंगल झाडी वृक्षादि वनस्पति घर हाट नदी नालादि सब वस्तु नष्ट हो जायगी उसपर सात सात दिन सात प्रकारके मेघ वर्षेंगे, वह अग्नि सोमल विष धूल खार आदि के पडने से सब भूमि एक दम दग्ध हो जायगी-हाहाकार मच जायेंगे उस समय कुच्छ मनुष्य तीर्यंच बचेंगे उनों को देवता उठाके गंगा सिन्धु नदीके किनारेपर ७२ बील रहेंगे जिस्में ६३ बीलमे मनुष्य ६ बीलोंमे गजाश्व गौभैंसादि भूमिचर पशु आदि ३ बीलमे खेचर पक्षीयों, रखदेंगे उनोंका शरीर बडाही भयंकर काला कायरा माजरा लूला-लगडा अनेक रोगग्राम कुरूपे मनुष्य होगे जिनोंके मै थुनकमकी अधिकाधिक इच्छा रहेंगे उनोंके लडके लडकीये बहुत होगी छे वर्षोंकी ओरते गर्भ धारण करेगी वहभी कुती कोंकि माफीक एक वखतमे ही बहुत बचा बचीयोंको पैदा करेंगी महान दुःखमय अपना जीवन पूर्ण करेंगे।

गंगा सिन्धु नदी मूलमें ६२॥ जोजनकी है परन्तु कालके प्रभावसे क्रमसः पाणी सुकता सुकता उस समय गाडीके चीले जीतनी चोडी और गाडाका आंक डुबे इतनी उंडी रहेगी उस पाणीमें बहुतसे मच्छ कच्छ जलचर जानवर रहेंगे।

उस समय सूर्यके आताप बहुत होगी चन्द्रकि शीतलता बहुत होगी जिसके मारे वह मनुष्य उस बीलोंसे नीकल नहीं सकेंगे उन मनुष्योंके उदर पुरणाके लिये उन नदीयोंमे कच्छ मच्छ होगा उनोंको स्याम सुबह बीलोंसे निकलके जलचर जीवों

कों पकड उन नदीके कानारेकी रेतीम गाड देंगे वह दिनका सूर्यकि आतापनासे गर्मीमे चन्द्रकी शीतलतासे पक जावेंगे फीर सुबे गाडे हुयेका स्यामको भक्षण करेंग स्यामकों गाडे हुयेका सुबे भक्षण करेंग इसी माफीक वह पापीष्ट जीव छठे आरेके २१००० वर्ष व्यतिन करेंग। उन मनुष्योंका आयुष्य लागते छठे आरे उत्कृष्ट २० वर्षका होंगा शरीर एक हाथका हुन्डक सस्थान छेवठु सहनन आठ पासलीयों और उत्तरते आरे १६ वर्षोंका आयुष्य, मुडत हाथका शरीर, च्यार पासलीया होगी उन दु खमा दु खम आरामे वह मनुष्य नियम व्रत प्रत्याख्यान रहीत मृत्यु पाके विशेष नरक और तीर्यच गतिमें जावेंग। पाठकों! अपना जीव भी एसे छट्ठे आरेमें अनती अनती वार उत्पन्न होके मरा है वास्ते इस वग्वत अच्छी सामग्री मीली है जिस्मे सावचेत रहनेकी आवश्यक्ता है। फीर पश्चाताव करनेसे कुच्छ भी न होग।

अब उत्सर्पिणी कालका सक्षेपमे वणन करते है।

(१) पहला आरा छठा आरेके माफीक २१००० वर्षका होगा।

(२) दुसरा आरा पाचवा आरे जैसा २१००० वर्षोंका होगा, परन्तु साधु साध्वी नही रहेंगे प्रथम तीर्थंकर पद्मनाभका जन्म होंगा याने श्रेणिकराजाका जीव प्रथम पृथ्वीसे आके अवतार धारण करेंग। अच्छी अच्छी वर्षात होनेसे भूमिमे रस अच्छा होगा

(३) तीसरा आरा-चोथा आरेके माफीक बीयालीसहजार वर्ष कम एक कोडाकोड सागरोपमका होगा जिस्मे २३ तीर्थंकर आदि शलाके पुरुष होगे मोक्षमार्ग चलु होगा शेष अधिकार चोथा आरा कि माफीक समज लेना।

(४) चोथा आरा तीसरे आरेक माफीक होगा जीसे प्र थम तीजा भागम कर्मभूमि रहेग एक तीर्थंकर एक चक्रवर्त्ति मोक्ष जावेंग फीर दो-तीन भागमे युगल मनुष्य हो जावेंग वहही कल्पवृक्ष उनोकि आशा पुरण करेंग सम्पूरण आरा दो कोडा-कोडी सागरोपमका होगा।

(५) पाचवा आरा दुसरे आरेक माफीक तीन कोडा कोडी सागरोपमका होगा उसमे युगल मनुष्यही होगा।

(६) छठा आरा पहेले आरेक माफीक च्यार कोडाकोडी सागरोपमका होगा उसमें युगल मनुष्यही होग।

इन उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणीकाल मीलानेसे एक का लचक्र होता है एसा अनते कालचक्र हो गये कि यह जीव अज्ञानसे मारे भवभ्रमन कर रहा है। पाठकगण! इसपर खुब गहरी दृष्टिसे विचार करे कि इस जीवकि क्या क्या दशा हुइ हैं और भविष्यमे क्या दशा होगी। वास्ते श्री परमेश्वर वीतराग के वचनोंको सम्यक् प्रकारसे आराधन कर इस कालके मुहसे छुट कलीय सास्वते स्थानमें इति।

सेव भंते सेव भंते-तमेव सच्चम्

श्री रत्नसूरी सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग २ जा.

थोकडा नम्बर १८

(नवतत्त्व)

गाथा—जीवाजीवा पुण्ण पावासव संवरो य निज्झरणा ॥
बंधो मुक्खो य तहा, नवतत्ता हुति नायव्वा ॥ १ ॥
(श्री उत्तराध्ययन अ० २८ वचनात्)

(१) जीवतत्त्व-जीवके चैतन्यता लक्षण है
(२) अजीवतत्त्व-अजीवके जडता लक्षण है
(३) पुन्यतत्त्व-पुन्यका शुभफल लक्षण है
(४) पापतत्त्व-पापका अशुभफल लक्षण है
(५) आश्रवतत्त्व-पुन्य पाप आनेका दरवाजा लक्षण है
(६) संवरतत्त्व-आते हुवे कर्मोंको रोक रखना
(७) निर्ज्जरातत्त्व-उदय आये कर्मोंको भोगवके दूर करना
(८) बन्धतत्त्व-रागद्वषके परिणामोंसे कर्मका बन्धना
(९) मोक्षतत्त्व-सर्व कर्म क्षयकर सिद्धपद प्राप्त करना

इन नवतत्त्वमें जीव अजीवतत्त्व जानने योग्य है पाप आश्रव और बंधतत्त्व जानके परित्याग करने योग्य है संवर नि

ज्जरा और मोक्षतत्व जानके अंगीकार करने योग्य है पुन्यत
नैगमनयके मतसे स्वीकार करने योग्य है कारण मनुष्य
उत्तम कुल, शरीर निरोग्य, पूर्ण इन्द्रिय, दीर्घ आयुष्य, धर्म
सामग्री आदि सब पुन्योदयसे ही मीलती है व्यवहार नयके म
पुन्य जानने योग्य है और एवंभुत नयके मतसे पुन्य जा
परित्याग करने योग्य है कारण मोक्ष जानेवालोंको पुन्य ब
कारी है पुन्य पापका क्षय होनेसे जीवोंका मोक्ष होता है

नवतत्वमें च्यार तत्व जीव है=जीव, संवर निज्जरा,
मोक्ष तथा पांच तत्व अजीव है–अजीव पुन्य पाप आश्रव
बन्धतत्व।

नवतत्वका च्यार तत्व रूपी है पुन्य–पाप–आश्रव और
च्यार तत्व अरूपी है जीव संवर निर्जरा और मोक्ष तथा
जीवतत्व रूपी अरूपी दोनों है

निश्चयनयसे जीवतत्व है सो जीव है और अजीवत
सो अजीव है शेष सात तत्व जीव अजीवकि पर्याय है
संवर निज्जरा मोक्ष यह तीन तत्व जीवकि पर्याय है, पाप
आश्रव बन्ध यह च्यार तत्व अजीवकी पर्याय है।

अजीव पाप पुन्य आश्रव और बन्ध यह पांचतत्व जी
शत्रु है संवर तत्व जीवका मित्र है निर्जरातत्व जीवका
पहुचानेवाला भोमीया है मोक्ष तत्व जीवका घर है

नवतत्वपर च्यार निक्षेपा–नामनिक्षेपा जीवाजीवका
नवतत्व रखाहे, अक्षर लिखना तथा चित्रादिकि स्थापना क
यह नवतत्वका स्थापना निक्षेपा है उपयोग रहीत नवतत्वका
यन करना यह द्रव्यनिक्षेपा है सम्यक्प्रकारे यथार्थ नवत
स्वरूप समजना यह भावनिक्षेपा है

नैवतत्वपर सात नय नैगमनय नवतत्व शब्दको तत्व माने संग्रहनय तत्वकि सत्ताको तत्व माने व्यवहार नय जीव अजीव यह दोय तत्व माने ऋजु सूत्रनय ऽे तत्व माने जीव अजीव पुन्य पाप आश्रव बन्ध, शब्दनय सात तत्व माने छे पुर्वघत् एक संवर समभिरूढनय आठ तत्व माने निर्ज्जराधिक एवंभूत नय नव तत्व मानें ।

नव तत्वपर द्रव्य क्षेत्र काल भाव—द्रव्यसे नवतत्व जीव अजीव द्रव्य है क्षेत्रसे जीव अजीव पुन्य पाप आश्रव बन्ध सर्व लोकमें है संवर निर्ज्जरा और मोक्ष त्रस नालीमें है का लसे नवतत्व अनादि अनत है कारण नवतत्व लोकमे सास्वता है भावसे अपने अपने गुणोंमे प्रवृत रहे है ।

नवतत्त्वका विशेष विवेचन इस माफीक है ।

(१) जीवतत्व–जीवका सम्यक् प्रकारे ज्ञान होना जैसे जीवके चैतन्य लक्षण है व्यवहारनयसे जीव पुन्य पापका कर्ता है सुख दु खके भोगा है पयाय प्राण गुणस्थानादिकर सयुक्त द्रव्येजीव सास्वता है पर्याय (गतिअपेक्षा) असास्वताभी है भूतकालमें जीवथा वर्तमानकालमे जीव है भविष्यमें जीव रहेंगे । तीनकालमे जीवका अजीव होवे नही उसे जीव कहते है निश्चयनयसे जीव अमर है कर्मोंका अकर्ता है और व्यवहार नयसे जीव मरे है कर्मोंका कर्ता है अनादि कालसे जीवके साथ कर्मोंका सयोग है जेसे दुधमें घृत तीलामें तेल धूलमे धातु इक्षुमें रस पुष्पोंमें सुगन्ध चन्द्रकान्ता मणिमें अमृत इसी माफीक जीव और कर्मोंका अनादि कालसे सबन्ध है दृष्टान्त सोना निर्मल है परन्तु अग्निके सयोगसे अपना स्वरूपको छोड अग्नि के स्वरूप को धारण कर लेता है इसी माफीक अनादि काल से अज्ञान के वस क्रोधादि संयोगसे जीव अज्ञानी कर्मवाला कह-

त्यादि सख्याते असख्याते अनंते समयके सिद्धोंको परस्पर सिद्ध कहते है इति

(२) अथ ससारी जीवोंके अनेक भेद बतलाते है जसे ससारी जीवोंके एक भेद याने ससारीजीव दो भेद त्रस-स्थावर। तीन भेद स्त्रीवेद पुरुषवेद नपुसकवेद। च्यार भेद नारकी तीर्यच मनुष्य देवता। पाच भेद एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय पाचेन्द्रिय। छे भेद पृथ्वीकाय अपकाय तेउकाय वायुकाय वनस्पतिकाय त्रसकाय। सात भेद नारकी तीर्यच तीर्यचणी मनुष्य मनुष्यणी देवता देवी। आठ भेद च्यार गतिके पर्याप्ता अपर्याप्ता। नौभेद पाच स्थावर च्यार त्रस। दश भेद पाच इन्द्रियोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता। इग्यारे भेद पाचेन्द्रियके पर्याप्ता अपर्याप्ता एव १० और अनेन्द्रिय। बारहा भेद छे कायाके पर्याप्ता अपर्याप्ता। तेरहा भेद छे कायाके पर्याप्ता अपर्याप्ता ते रहवा अकाया जीवोंके चौदा भेद सूक्ष्मएकेन्द्रिय बादरएकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेन्द्रिय चोरिन्द्रिय असज्ञीपाचेन्द्रिय सज्ञीपाचेन्द्रिय एव सातोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलाके चौदा भेद जीवोंके समजना।

विशेष ज्ञान होनेके लिये ससारी जीवोंके ५६३ भेद बतलाते है जिसमे ससारी जीवोंके मूल भेद पाच है यथा-(१) एकेन्द्रिय (२) बेइन्द्रिय ३) तेइन्द्रिय (४) चोरिन्द्रिय (५) पाचेन्द्रिय। एकेन्द्रियके दो भेद है (१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय (२) बादर एकेन्द्रिय। सूक्ष्म एकेन्द्रिय पाच प्रकारकी है पृथ्वीकाय अपकाय तेउकाय वायुकाय वनस्पतिकाय यह पाचों सूक्ष्म स्थावर जीव, संपूर्ण लोकमें काजलकी कुपलीके माफीक भरे हुवे है उन जीवोंका शरीर इतना तो सूक्ष्म है कि छद्मस्थोंकी दृष्टिगोचर नहीं होते है उनोंको केवली भगवान् अपने केवलज्ञान केवलदर्शनसे

जानते देखते हैं उनोंने ही फरमाया है कि सूक्ष्म नामकर्मके उदयसे उन जीवोंको सूक्ष्म शरीर मीला है वह जीव मारे हुवा नहीं मरते है, बाले हुवा नहीं बलते है, काटे हुवा नहीं कटते है अर्थात् अपने आयुष्यसे ही जन्म-मरण करते है उनोंका आयुष्य मात्र अंतरमुहूर्तका ही है जिस्मे सूक्ष्म, पृथ्वी, अप, तेउ, वायुके अन्दर तो असख्याते २ जीव है और सूक्ष्म वनस्पतिमें अनंते जीव हैं इन पांचोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलानेसे दश भेद होते है।

दुसरे बादर एकेन्द्रियके पांच भेद है यथा—पृथ्वीकाय अपकाय, तेउकाय वायुकाय, वनस्पतिकाय जिस्में पृथ्वीकायके दो भेद है (१) मृदुल (कोमल) (२) कठन जिस्में कोमल पृथ्वीकायके सात भेद है काली मट्टी, नीली मट्टी, लाल मट्टी, पीली मट्टी, सुपेद मट्टी, पाणीके नीचे तलो जमी हुइ मट्टी उसे 'पणग' कहते है पाडु गोपीचन्दनादि।

(२) खरपृथ्वीके अनेक भेद है यथा—मट्टी खानकी, चीकणी मट्टी छोट काकरा, वालुका रेती,* पाषाण, शीला, लुण (अनेक जातीका होते है) धूलसे मीले हुये धातु–लोहा, ताम्बा, तरुवा, सिसा, रुपा, सुवर्ण, वज्र, हरताल, हिंगलु मणशील परवाल, पारो घनक, पयल, भोडल अभ्रक, वज्ररत्न, मणिगोमेदरत्न,

* श्री सूत्रकृतांगमें कहा है कि अजापरी हुइ धूल च्यार अंगुल निचे सचित्त है राजमार्गमें पांच अंगुल निचे सचित्त है सरी (गला) में सात अंगुल निचे गृहभूमिमें दश अंगुल निच मलमूत्रभूमिकाम पंदरा अंगुल निच चौपद जानवरों रहनकी भूमिमें ३१ अंगुल निचे चूल्हाका स्थान ३२ अंगुल निच कुम्भकारके निम्बाडकि ३६ अंगुल निच इंट केलुका पचानेका स्थान निचे १२० अंगुल निचे भूमिका सचित्त रहती है।

रत्नकरत्न, अंकरत्न, स्फटिकरत्न लोहीताक्ष, मरकतरत्न मशा रगल्लरत्न भुजमोचकरत्न इन्द्रनिलरत्न, चन्द्रारत्न, गौरीक- रत्न, हंसगर्भरत्न, पुलाकरत्न सौगन्धीरत्न, अरष्टरत्न लीलम, पीरोजीया लसणीयारत्न, वैडूर्यरत्न चन्द्रप्रभामणि, कृष्णमणि, सूर्यप्रभामणि जलकांतमणि इत्यादि जिनका स्वभाव कठन है जिनकी सात लक्ष योनि है इनोंके दो भेद हैं पर्याप्ता अपर्याप्ता जो अपर्याप्ता है वह असमर्थ है जो पर्याप्ता है वह समर्थ है वर्ण गन्ध रस स्पर्श कर सयुक्त है (जहा एक पर्याप्ता है वहा निश्चय असंख्या अपर्याप्ता होते है एक चिरमी जीतनी पृथ्वीका यमें असंख्य जीव होते हैं वह अगर एक महुर्तमें भव करे तो उत्कृष्ट १२८२४ भव करते है ।

बादर अपकायके अनेक भेद है आसका पाणी धुमसका पाणी कचेगढाकापाणी आकाशकापाणी समुद्रांकापाणी खारा पाणी खट्टापाणी घृतसमुद्रकापाणी खीरसमुद्रकापाणी इक्षुसमुद्र- का पाणी लवणसमुद्रकापाणी कुँव तलाव द्रह वावी आदि अनेक प्रकारका पाणी तथा मदेय तमस्काय वगेरे है इत्यादि इनोंके दो भेद है पर्याप्ता अपर्याप्ता जो अपर्याप्ता है वहअसमर्थ है जो पर्याप्ता है वह वर्णगन्धरस स्पर्श कर सयुक्त है एक पर्याप्ताकि नेश्राय निश्चय असंख्याते अपर्याप्ता जीव उत्पन्न होते है एक बुंदमे असं- ख्याते है वह एक महुर्तमे उत्कृष्ट १२८२४ भव करते है सात लक्ष योनि है ।

बादर तेउकायके अनेक भेद है इगाला मुमरा ज्वाला अ गारा भोभर उल्कापात विद्युत्पात वडवानलाग्नि काष्टाग्नि पाषा णाग्नि इत्यादि अनेक भेद है जीनोंके दो भेद है पर्याप्ता अपर्याप्ता जो अपर्याप्ता है वह असमर्थ जो पर्याप्ता है वह वर्णगन्ध रस-

स्पर्श कर सयुक्त है एक पर्याप्ताकि नेश्राय असख्याते अपर्याप्ता उत्पन्न होते हैं एक तृणगीयामे असख्य जीव हैं मातलम्भ योनि है एक महूर्तमें उत्कृष्ट १२८२४ भव करते हैं।

बादर वायुकायके अनेक भेद हैं। पूर्ववायु पश्चिमवायु दक्षिणवायु उत्तरवायु उर्ध्ववायु अधोवायु विदिशावायु उत्कलिक वायु मडलीयावायु मदवायु उदडवायु छिपवायु समुद्रवायु इत्यादि जिनोंका दो भेद है पर्याप्ता अपर्याप्ता जो अपर्याप्ता है वह असमर्थ है जो पर्याप्ता है वह वर्णगन्धरस स्पर्श कर सयुक्त पर्याप्ताकि निश्राय निश्चय असख्याते अपर्याप्ता जीव उत्पन्न होते हैं एक झबुकडेमे असख्य जीव होते है वह एक महूर्तमें उत्कृष्टभव करे तो १२८२४ भव करते हैं। सात लक्ष जाति है।

बादर वनस्पतिकायके दो भेद हैं (१) प्रत्येक शरीरी (२) साधारण शरीरी जिस्मे प्रत्येक शरीरी (जिस शरीरमें एकही जीव हो) के बारहा भेद हैं वृक्ष गुच्छा गुम्मा, लता वेल्ली इक्षु तृण वलय हरिय औषधि, जलरुख, कुहणा-जिस्में वृक्षके दो भेद है।

(१) जिस वृक्षके फलमे एक गुठली हो उसे एगठीये कहते हैं और जिस वृक्षके फलमे बहुतसे गुठलीयो (बीज) होते हो उसे बहुबीजा कहते है। जेसे एक गुठलीवालोंके नामयथा-निबव जाबुवृक्ष काशबवृक्ष शालवृक्ष आम्रवृक्ष निंबवृक्ष नलयेरवृक्ष केलवृक्ष पैलुवृक्ष शेलुवृक्ष इत्यादि और भी जिस वृक्षके फलमें एक बीज हो वह सब इसके अन्दर समजना जिस्के मूलमे असख्य जीव कन्दमें स्कन्धमें साखामें, परवालमें असख्य जीव है पत्रोंमे प्रत्येक जीव हैं पुष्पोंमे अनेक जीव और फलमे एक जीव होते है।

बहु बीज वृक्षके नाम-तंदुकवृक्ष आस्तिकावृक्ष कविटवृक्ष

अबाडग वृक्ष, दाडिम, उम्बर वडनदी वृक्ष, पीपरी अगाली मिथावृक्ष दालीवृक्ष कादालीवृक्ष इत्यादि औरभी जिस वृक्षके फलमें अनेक बीज हो वह सब इनमे सामिल समझना चाहिये जिस्के मूल कन्द स्कन्ध साख परवालमें असंख्यात जीव है पत्रोमि प्रत्येक जीव पुष्पोंमि अनेक जीव फलमें बहुत जीव है।

(२) गुच्छा=अनेक प्रकारके होते है वेगण सलाइ थुडसी जिमुणीके लच्छाइके मलामीके मादाइके इत्यादि—

(३) गुम्मा–अनेक प्रकारके होते है जाइ जुइ मोगरा मालता नौमालती वसन्ती माथुली काथुली नगराइ पोहिना इत्यादि।

(४) लता–अनेक प्रकारकी होती है पद्मलता वसन्तलता नागलता अशोकलता चम्पकलता चुमनलता वेणलता आइमुक्तलता कुन्दलत्तर श्यामलता इत्यादि।

(५) वेल्लीके अनेक भेद है तुर्याकीवेली तीसडी, तिउसी पुसफली, कालगी पञ धाल्की, नागरवेली घोसाडाइ (तोरू) इत्यादि।

(६) इक्षुके अनेक भेद है इक्षु इक्षुवाडी वारूणी काल इक्षु पुडइक्षु वरडइक्षु पयडइक्षु इत्यादि ।

(७) तृणके अनेक भेद है साडीयातृण मोतीयातृण होतीयातृण धोय कुशतृण अर्जुनतृण आसादतृण इक्कडतृण इत्यादि

(८) वलहके अनेक भेद ताल तमाल तेकली तम्र तेतली शाली परड कुरूबन्ध जगाम लोण इत्यादि।

(९) हरियाके अनेक भेद है अज्ञरूया कृष्णहरिय तुलसी तदुल दगपीपली सीभेटका सराली इत्यादि।

(१०) औषधिक अनेक भेद-शाली व्याली व्रही गोधम नव जवाजव ज्वारचल मशुर तिल मुग उड्द नफा कुलत्थ चागथु आलिस दुम तीणपली मथा आयसी कसुब कोद्रव कगू राल्ग मास कोद्सासण सरिसव मूल बीज इत्यादि अनेक प्रकारके धान्य होते है वह सब इन औषधिके अन्दर गीने जाते है।

(११) जलरूहा-उत्पलकमल पद्मकमल कौमुदिकमल निल निकमल शुभकमल सौगन्धीकमल पुंडरिककमल महापुंडरिक कमल अरविन्दकमल शतपत्रकमल सहस्रपत्र कमल इत्यादि।

(१२) कुहुणका अनेक प्रकारके है आत कात पात सिघोटीक वथ वनड इत्यादि यह वनस्पति भी जलके अन्दर होती है।

इन बारह प्रकारकि प्रत्येक वनस्पतिकायपर दृष्टान्त जेसे सरसवका समुह एकत्र होनेसे एक लड्डु बनता है परन्तु उन सरसवके दाने सब अलग अलग अपने अपने स्वरूपमें है इसी माफीक प्रत्येक वनस्पतिकायभी असंख्य जीवोंका समुह एकत्र होते है परन्तु एकेका जीवके अलग अलग शरीर अपना अपना भिन्न है जेसे अनेक तीलोंके समुह एकत्र हो तीलपापडी बनती है इसी माफीक एक फल पुष्पमे असंख्यजीव रहते है यह सब अपने अपने अलग अलग शरीरमें रहते है जहातक प्रत्येक वनास्पति हरि रहेती है वहातक असंख्याते जीवोंके समूह एकत्र रहते है जब वह फल पुष्प पक जाते है तब उनोंके अन्दर एक जीव रह जाते है तथा उनोंके अन्दर बीज हो तों जीतने बीज उतनेही जीव ओर एक जीव फलका मूलगा रहता है इति।

---

१ ईन धानोंके सिवाय भी कई अडक धान्य होते है जैसे बाजरी मकाइ माठ इत्यादि।

(२) दुसरा साधारण वनास्पतिकाय है उनोंके अनेक भेद है मूला कान्दा लसण आदो अडथी रताउ पींडालु आलु मवरकन्द गाजर सुवर्णकन्द वज्रकन्द कृष्णकन्द मासफली मुग फली हल्दी कचूंक नागरमोथ उगते अङ्कुरे पाच वर्णके निल्ण फूलण कचे कोमल फल पुष्प बिगडे हुवे वासी अन्नमें पेदा हुइ दुगन्धमें अनन्तकाय है औरभी जमीनके अन्दर उत्पन्न होनेवाले वनास्पति सब अनंतकायमें मानी जाती है दृष्टान्त जेसा लोहाका गोला अग्निमें पचानेसे उन लोहाके सब प्रदेशोंमें अग्नि प्रदीप्त हो जाती है इसी माफीक साधारण वनास्पतिके सब अगमें अनते जीव होते है वह अनते जीव सायहीमें पेदा होते है सायही में आहार ग्रहन करते है साथही मे मरते है अर्थात् उन अनंते जीवोंका एक ही शरीर होते है उने साधारण वनास्पतिकाय या बादर निगादभी कहते है।

वनास्पतिकायके च्यार भाग बतलाये जाते है।

(१) प्रत्येक वनास्पतिकायके निश्रायमे प्रत्येक वनास्पति उत्पन्न होती है जेसे वृक्षके सावायों।

(२) प्रत्येक वनास्पतिके निश्रायमे साधारण वनास्पतिकाय उत्पन्न होती है कचे फल पुष्पोंके अन्दर कोमलतामें अनते जीव पेदा होना।

(३) साधारण वनास्पतिके निश्राय प्रत्येक वनास्पति उत्पन्न होना जेसे मूलोंके पत्ते, कान्दोंके पत्ते इत्यादि उन पत्तोंमें प्रत्येक वनस्पति रहती है

(४) साधारणके निश्राय साधारण वनस्पति उत्पन्न होती है जेसे कान्दा मूळा।

इन साधारण और प्रत्येक वनस्पतिको छद्मस्थ मनुष्य केसे पेन्छान सके इस वास्ते दृष्टान्त वतलाते है

जीस मूल कन्द स्कन्ध साखा प्रतिसाखा त्वचा प्रवाल पत्र पुष्पफल और बीजको तोडनेंसे वखत अन्दरसे चिकणास निकले तुटतो सम तुटे उपरकि त्वचा गीरदार हो वह वनस्पति सा धारण अनतकाय समजना और तुटतो विषम तुटे त्वचा पातली हो अन्दरसे चिकणास न हो उन वनस्पतिकायको प्रत्यक समझना

सीधोडे वचे होते है उनोंमें सख्याते असंख्याते और अनन्ते जीव रहते है इन प्रत्येक और साधारण वनस्पति कायके दो दो भेद है (१) पर्याप्ता (२) अपर्याप्ता एव वादर एकेन्द्रि यका १२ भेद समजना । इति एकेन्द्रियके २२ भेद है

(२) बेइन्द्रियके अनेक भेद है । लट गीडोले कीड कृमिये कृमीकृमिये पुरा । जलोख लेर्यो खापरीयो इली रसचलीत अन्न पाणीमें रसइये जीव वा शंख शीप, कोडी चन्दणा वसीमुखा सूचीमुखा वाला अलसीया भूनाग अक्ष लालीये जीव टडीरोटी विगेरेमें उत्पन्न होते है इनके सिवाय जीभ और त्वचावाले जीतने जीव होते है वह सब बेइन्द्रियकि गीनतीमें है ।

(३) तेइन्द्रियके अनेक भेद है-उपपातिका रोहणीया चाचड माकड थीडी मकोडे डंस मस उदाइ उकाली कष्टहारा पत्राहारा पुष्पाहारा फलाहारा तृणबिंटीत पुष्प० फल० पत्रबिंटित जू लिख कानखीजुर इली घतेलीया जो घतमे पेदा होती है चर्म जु गौकीटक जो पशुवोंके कानोंमे पेदा होते है । गर्दभ गौशालामें पेदा होते है गौकीडे गोवरमे पेदा होते है । धान्य कीडे कुयु इलीका इन्द्रगोप चतुर्मासामें पेदा होते है इत्यादि जीसके तीन इन्द्रिय शरीर जीभ नाक हो । यह तेइन्द्रिय है ।

(४) चौरिन्द्रिय के अनेक भेद है अधिका पत्तिका मक्खी मत्सर कीडे तीड पतगीये विच्छु जलविच्छु कृष्णविच्छु श्याम पत्तिका यावत् श्वेत पत्तिका भ्रमर चित्रपक्खा विचित्रपक्खा जल्चारा गोमयकीडा भमरी मधु मक्षिका–टाटीया डंस भमगा कींमारी मेल्क दमक इत्यादि जीस जीवोंके शरीर जीभ नाक नेत्र होते है वह सब चौरिन्द्रियकी गीणतीमें समजना इन तीन वैकलेन्द्रियके पर्याप्ता अपर्याप्ता मिलानेसे ६ भेद होते है।

(५) पाचेन्द्रिय जीवोंके च्यार भेद है नारकी, तीर्यच मनुष्य, देवता, जिस्मे नारकीके सात भेद है यथा=गम्मा वसा शीला अञ्जना रिटा मघा माघवती–सात नरकके गौत्र रत्नप्रभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तम - प्रभा तमस्तम प्रभा इन सातों नरकके पर्याप्ता अपर्याप्ता मील्ला नेसे चौदे भेद होते है।

(२) तीयच पाचेन्द्रियके पाच भेद है यथा–जल्चर, स्थलचर खेचर, उरपुरिसर्प भुजपुरिसर्प जिस्मे जल्चरके पाच भेद है मच्छ कच्छ मगरा गाहा और सुसमारा।

(१) मच्छके अनेक भेद है यथा–सन्हमच्छा सुगमच्छा विद्युत्मच्छा हलीमच्छा नागरमच्छा रोहणीयामच्छा तंदुलमच्छा कनकमच्छा शालीमच्छा पत्तगमच्छा इत्यादि (२) कच्छके दो भेद है (१) अस्थि हाडवाले कच्छ (२) मासवाले कच्छ (३) गोहके अनेक भेद दीलीगोह वेढीगोह मुद्दीगोह तुला गोह सामागोह मयलागोह कोमागोह दुमोहीगोह इत्यादि (४) मगरा–मगरा सोढमगरा दन्तीत मगरा पाल्पमगरा नायकमगरा हलीपमगरा इत्यादि (५) सुसमारा एकही प्रकारका होते है वह आढाइ द्विपके बाहार होते है यह पाच प्रकारके जलचर जीव सन्नी भी होते है और समुत्सम भी होते है जो संज्ञी होते

है यह गर्भजकि पुरुष नपुसक तीनों प्रकारके होते है और जो समुत्सम होते है वह एक नपुसकही होते है।

(२) स्थलचरके च्यार भेद है यथा-एकखुरा दोखुरा गडीपदा सन्हपदा जिसमे एक खुरोंका अनेक भेद है अश्व खर खचर इत्यादि दो खुरोंके अनेक भेद है गौ भेंस ऊंट बकरी रोज इत्यादि-गडीपदाके भेद गज हस्ति गेंडा गील्ड इत्यादि सन्हपदके भेद सिंह-व्याघ्र नाहार केशरीसिंह बन्दर मञ्जार इत्यादि इनोंके दो भेद है गर्भज और समुत्सम।

(३) खेचरके च्यार भेद है यथा रोमपक्षी चर्मपक्षी समुगपक्षी वीततपक्षी-जिस्मे रोमपक्षी-हंसपक्षी एक पक्षी, वयासपक्षी हंसपक्षी, राजहंस० कालहंस, क्रौंच पक्षी, सारसपक्षी, कोयल० रात्रीराजा, मयुर पारेवा तोता मैना चीडी कमेडी इत्यादि चमपक्षी चमचेड विगुल भारड समुद्रपयम इत्यादि समुगपक्षी जोस्की पांखों हमेशा जुडी हुइ रहती है वितित पक्षी जीस्की पांखों हमेशा खुली हुइ रहती है इनोंकेभी दो भेद है गर्भज समुत्सम पूर्ववत।

(४) उरपरीसर्पके च्यार भेद है अहिसर्प अजगरसर्प मोहरगसर्प, अल्सीयो जिस्मे अहिसर्पके दो भेद है एक फण करे दुसरा फण नही करे फण करे जिस्के अनेक भेद है आसी विष सर्प दृष्टिविषसर्प त्वचाविषसर्प उग्रविषसर्प भोगविषसर्प लालविषसर्प उश्वासविषसर्प निश्वासविषसर्प कृष्णासर्प सु-पेदसर्प इत्यादि जो फण न करे उनोंका अनेक भेद है-दोधीगा गोणसा चीतल पेणा लेणा हीणसर्प पेलगसर्प इत्यादि। अजगर एकही प्रकारका होते है। मोहरग नामका सर्प अढाइद्विपके बाहार होते है उनोंकी अवगाहना उत्कृष्ट १००० योजनकी होती है।

अलसीया आन्ताद्वपिक पदरा क्षेत्रमें ग्राम नगर सेड कबिट आदिके अन्दर तथा चक्रवत वासुदेवकी शैन्याके निचे जघन्य अगुलके असख्यात भाग उत्कृष्ट बारहा योजनका शरीर होता है जिनके शरीरमे रक्त पाणी पसा तो जोरदार होते है कि उन पाणीसे वह बारहा योजनकी भूमिका थोथी बना देते है।

(५) भुजपरकेभी अनेक भेद है जसे नाकुल काल मूषा आदि यह जलचर थलचर खेचर उरपुरसर्प भुजपुर सर्प पाच प्रकारके सज्ञी गर्भेज मनवाले होते है और यहही पाचों प्रकारके तीयच असज्ञी मन रहात समुत्सम होते है जो गभज है वह स्त्रि पुरुष नपुसक होते है और जो समुत्सम होते है यह मात्र नपुसक होते है पव १० भेद हुवे इन दशोंके पर्याप्ता और द शोंके अपर्याप्ता मिलाकर तीर्यच पाचेन्द्रियके २० भेद होते है एकेन्द्रियके २२ विकलेन्द्रियके ६ और पाचन्द्रियके २० सब मी लाके तीर्यचके ४८ भेद होते है।

(३) मनुष्यके दो भेद है (१) गर्भेज मनुष्य (२) समु त्सम मनुष्य-जिस्मे समुत्सम मनुष्य जो आढाइ द्वीप पदरा क्षेत्र के कर्मभूमि १५ अकर्मभूमि ३० अन्तरद्विपा ५६ एवं १०१ जाति के मनुष्योंके निम्नलिखित चौदा स्थानमें आगुलके असंख्याते भागकि अवगाहाना अन्तरमहुर्तका आयुष्यवाले अज्ञानी मिथ्या दृष्टि जीव उत्पन्न होते है चौदा स्थानोंके नाम यथा टटी, पैशाव श्लेष्म, नाकके मेलमे, वमन (उल्टी) पीत्त रौद्र रसी (बीगडा रक्त) वीय, शुक्र हुवे वीय फीरसे भीना-आला होनेसे स्त्रि पुरुषके सयोगमें, मृत्यु मनुष्यके शरीरमे नगरके किचमें सर्व असूची-लाळ मैल थुक विगेरे तथा असूची स्थान इन चौदे स्था नोंमे अन्तरमहुर्तके बाद जीवोत्पत्ति होती है और गर्भेज मनुष्योंके तीन भेद है कममूमि अकमभूमि, अन्तरद्विप-जिस्मे पहला

अन्तरद्विप बतलाते है यथा यह जम्बुद्विप एक लक्ष योजनके विस्तारवाला है इनोंकी परिधि ३१६२२७।३।१२८।१३॥-१-१-६।- इतनी है इनोंके बाहार दो लक्ष योजनके विस्तारवाला लवण समुद्र है। जम्बुद्विपके अन्दर जो चूल हेमवन्त नामका पर्वत है उनोंके दोनों तर्फ लवणसमुद्रमें पुर्व पश्चिम दोनों तर्फ दाढक आकार लापुर्वोकी लेन आ गई है यह जम्बुद्विपकि जगतीसे लव णसमुद्रमें ३०० योजन जानेपर पहला द्विपा आता है यह तीनसो योजनके विस्तारवाला है उन द्विपसे लवणसमुद्रमें ४०० योजन जानेपर दुसरा द्विपा आता है यह ४०० योजनके विस्तारवाला है यहभी ध्यानमें रखना चाहिये कि यह दुसरा द्विपा जम्बुद्वि पकी जगतीसेभी ४०० योजनका है। दुसरा द्विपासे लवणसमु द्रमें पाचसो योजन तथा जगतीसेभी पाचसो योजन जावे तब तीसरा द्विपा आता है यह पाचसो योजनके विस्तारवाला है उन तीसरा द्विपासे छेसा ६०० योजन लवणसमुद्रमें जावे तथा जगतीसेभी ६०० योजन जाय तब चोथा द्विपा आवे यह ६०० योजनके विस्तारवाला है उन चोथा द्विपासे ७०० योजन लवण समुद्रमें जाय तथा जगतोसेभी ७०० योजन जावे तब पाचवा द्विपा सातसो योजनके विस्तारवाला आता है उन पाचवा द्विपासे ८०० योजन तथा जगतीसे ८०० योजन लवणसमुद्रमें जावे तब छठा द्विपा आठसो योजनके विस्तारवाला आता है उन छठा द्विपासे ९०० योजन तथा जगतीसे ९०० योजन लवण समुद्रमें जाय तब नौसो योजनके विस्तारवाला सातवा द्विपा आता है इसी माफीक सात लापुपर सात द्विपोंकी लेन दुसरी तर्फभी समजना एक दो लेनमें चौदा द्विपा हुए इसी माफीक पश्चिमके लवणसमुद्रमेंभी १४ द्विपा है दोनों मिलाके २८ द्विप हुये उन अठाविस द्विपोंके नाम इसी माफीक है। एकरूयद्विप

आहासिय वमाणिय, नागल हयकन्न गयकन्न, गोकाम व्याकुल कन्न, अयममुहा मघमुहा असमुहा, गोमुहा आममुहा हत्यिमुहा सिंहमुहा, पागमुहा आसकन्ना, हरिकन्ना, अकन्ना, कन्नपाउरणा, उक्कामुह, मेहमुहा विज्जुमुहा विजुदान्ता, घणदान्ता लठ्ठ दान्ता, गुढदान्ता, शुद्धदान्ता एव २८ द्विपचुल हैमवन्त पर्वतकि निश्राय है इसी माफीक २८ द्विप इसी नामके सीखरी पर्वतकी निश्राय समझना एवं ५६ द्विपा है उन प्रत्येक द्विपमें युगल मनुष्य निवास करते ह उनोंका शरीर आठसो धनुष्यका है पल्योपमके असंख्यातमे भागकी स्थिति है दश प्रकारके कल्पवृक्ष उनोंकी मनोकामना पुरण करते हैं जहापर असी मसी कसी राजा राणी चाकर ठाकुर कुच्छ भी नहीं ह देखो छे आरोंके थोकडेसे विस्तार इति।

अकर्मभूमियोंके ३० भेद है पाच देवकुर पाच उत्तरकुरु पाच हरिवास, पाच रम्यकवास, पाच हेमवय, पाच एरणवय एवं ३० जिस्में एक देवकुर एक उत्तरकुरु, एक रम्यकवास एक हरीवास एक हमवय, एक एरणवय एवं ६ क्षेत्र जम्बुद्विपमें छेसे दुगुणा बारहा क्षेत्र धातकीखंडमें बारहा क्षेत्र पुष्कराद्ध द्विप में एवं ३० भेद यह अकर्मभूमिमें मनुष्ययुगल है यहा भी असी मसी कसी आदि कर्म नहीं है उनोंके भी दश प्रकारके कल्पवृक्ष मनोकामना पुरण करते है (छे आराधिकारसे देखो)

कर्मभूमि मनुष्योंके पदरा भेद है पाच भरतक्षेत्रके मनुष्य, पाच एरवत पाच महाविदेह जिस्में एक भरत एक एरवत, एक महाविदेह एवं तीन क्षेत्र जम्बुद्विपमें तीनसे दुगुणा छे क्षेत्र धातकीखंड द्विपमे है छे क्षेत्र पुष्करार्द्ध द्विपमें है कर्मभूमि जहा-पर राजा राणी चाकर ठाकुर साधु साध्वी तथा असी मसी कसी आदिसे वैणज वैपार कर आजीविका करते हो, उसे कर्मभूमि

कहते है यहापर भरतक्षेत्रके मनुष्योंका विशेष वर्णन करते है मनुष्य दो प्रकारके है (१) आर्य मनुष्य, (२) अनार्य मनुष्य जिस्मे अनार्य मनुष्योंके अनेक भेद है, जेसे शकदेशके मनुष्य यवनदेशके, पवनदेशके, सबरदेशके, चिलतदेशके, पीरदेशके, पायालदेशके, गीरददेशके, पुलाकदेशके पारसदेशके इत्यादि जिन मनुष्योंकी भाषा अनार्य व्यवहार अनार्य, आचार अनार्य खानपान अनार्य, धर्म अनार्य है इस वास्ते उनोंको अनार्य कहा जाते है उनोंके ३१९७४॥ देश है।

आर्य मनुष्योंके दो भेद है (१) ऋद्धिमन्ता (२) अन ऋद्धिमन्ता जिस्में ऋद्धिमन्ते आर्य मनुष्योंके छे भेद है तीर्थंकर चक्रवर्त्ति, बलदेव, वासुदेव, विद्याधर और चारणमुनि।

अनऋद्धिमन्ता मनुष्योंके नो भेद है क्षेत्रार्य, जातिआर्य कुलआर्य, कर्मार्य, शिल्पार्य, भाषार्य ज्ञानार्य, दर्शनार्य चारित्रार्य जिस्मे क्षेत्रआर्यके साढापचवीस क्षेत्रआर्य माने जाते है उनोंके नाम इस माफिक है मागधदेश राजगृहनगर, अंगदेश चम्पानगरी, वंगदेश तामलीपुरी कलिंगदेश कंचनपुर, काशी देश बनारसी, कोशलदेश सकेतपुर, कुरुदेश गजपुर, कुशावर्त सोरीपुर, पचालदेश कपिलपुर, जंगलदेश (मारवाड) अहि छता, सोरठदेश द्वारामति, विदेहदेश मिथिला, वच्छदेश कोसुबी, सडिलदेश नंदिपुर मलीयादेश भदलपुर, वत्सदेश वैराटपुर वरणदेश अच्छापुर, दशाणदेश मृतकावती, चेदीदेश शक्तावती, सिन्धुदेश वीतवयपट्टण, सुरसेनदेश मथुरा, भंगदेश पावापुरी, पुरिवर्तदेश सुसमापुर, कुनाला सावत्थी, लाढदेश कोटीवर्ष केकइ नामका अर्द्धदेशमें श्वेताम्बिकानगरी इति। इन आर्यदेशोंका लक्षण जहापर तीर्थंकर, चक्रवर्त्ति, वासुदेव, बलदेव, प्रतिवासुदेव आदिके जन्म होते है तीर्थंकरोंके पचकल्याणक होते है

जहांपर भाषा, आचार व्यवहार वैपारादि आर्यकर्म होते है उन्ही समफल देश उनीको आर्यदश कहते है।

आर्यजातिके छ भेद है यथा—अम्बष्टजाति कलिन्दजाति विदेहजाति वेदगजाति, हरितजाति, चुंचणरुपाजाति उन जमानेमे यह जातियों उत्तम मानी जाती थी।

कुलार्यके छे भेद है उग्रकुल भोगकुल, राजनकुल, इक्षाक-कुल ज्ञातकुल, कोरवकुल इन छे कुलोंमे यह कुल निकले है इन कुलोंको उत्तम कुल माने गये थे।

कर्मआर्य—वैपार करना जैसे कपडाका वैपार, रुईका वैपार सुतर वैपार सोनाचान्दीके दागीनेका वैपार, कासी पीतलके बरतनोंके वैपार, उत्तम जातिके क्रियाणाके वैपार अर्थात् जिस्मे पदरा कर्मादान न हो, पांचेन्द्रियादि जीवोंका वध न हो उस कर्मआर्य कहते है।

शिल्पार्य—जैसे तुनारकी कला तंतुवय याने कपडे बना नेकी कला काष्ट कोरनेकी, चित्र करनेकी, सोनाचान्दी घडनेकी मुंजकला, दांतकला मसकला, पत्थर चित्रकला, पत्थर कोरणी कला, रागनकला कोष्टागार निपजानकी कला पुस्तककला-ग्रन्थगलबन्धन कला, पाक पकावनेकी कला इत्यादि यह आर्यभूमिकी आर्य कलायों है।

भाषार्य—जो अर्ध मागधी भाषा है वह आर्य भाषा है-इनके सिवाय भाषाके लिये अठारा जातिकी लीपी है वह भी आर्य है।

ज्ञानार्यके पांच भेद है मतिज्ञान श्रुतिज्ञान, अवधिज्ञान, मन पर्यवज्ञान, केवलज्ञान इन पांचों ज्ञानोंको आर्य ज्ञान कहते है।

दर्शनार्यके दो भेद हैं (१) सराग दर्शनार्य, (२) वीतराग दर्शनार्य जिस्में सराग दर्शनार्यके दश भेद है।

(१) निसर्गरुची-जातिस्मरणादि ज्ञानसे दर्शनरुची।
(२) उपदेशरुची-गुरवादिक उपदेशसे ,,
(३) आज्ञारुची-वीतरागदेवकी आज्ञासे ,,
(४) सूत्ररुची-सूत्रसिद्धान्त श्रवण करनेसे ,
(५) बीजरुची-बीजका माफिक एकसे अनेक ज्ञान, दर्शनरुची
(६) अभिगमरुची-द्वादशांगी जाननेसे विशेष ,,
(७) विस्ताररुची-धर्मास्ति आदि पदार्थसे ,,
(८) क्रियारुची-वीतरागके बताइ हुइ क्रिया करनेसे ,,
(९) धर्मरुची-वस्तुस्वभावके ओलखनेसे ,
(१०) संक्षेपरुची-अन्य मत ग्रहन न किये हुवे भद्रिकजीवोंको,

दुसरा वीतराग दर्शनार्यके दो भेद है (१) उपशान्त कषाय (२) क्षीण कषाय इत्यादि संयोगी अयोगी केवली तक कहना।

(३) चारित्रार्यके पांच भेद है सामायिक चारित्र, छेदो पस्थापनीय चारित्र, परिहारविशुद्ध चारित्र, सूक्ष्मसंपराय चारित्र, यथाख्यात चारित्र इति आर्य मनुष्य इति मनुष्य।

(४) देव पांचेंद्रियके च्यार भेद यथा-भुवनपति, वाण-व्यंतर ज्योतिषी वैमानिक। जिस्म भुवनपतियोंके दश भेद है। असुरकुमार, नागकुमार, सुवर्णकुमार, विद्युत्कुमार अग्निकुमार द्विपकुमार दिशाकुमार, उदधिकुमार पवनकुमार, स्तनितकु-मार। पंदरा परमाधामियों (असुरकुमारकी जातिमें) के नाम अम्बे आम्ररसे शामे सबले रूद्रे विरुद्धे काले महाकाले असीपत्ते धणु कुम्भे वालु वैतरणि खरस्वरे महाघोषे।

शोलहा वाणव्यंतरोंके नाम पिशाच भूत यक्ष राक्षस किन्नर किंपुरुष मोहरग गन्धर्व आणपु ये पाणपु ये ऋषिभाइ भूतिभाइ

खण्डे महाखण्डे कोहंड पयंगदेवा, याणव्यंतरोंमें दश जातिके जम्भकदेवोंके नाम आणजंभक पाणजंभक लेणजंभक शेनजंभक वत्थजंभक पुप्फजंभक फलजंभक पुप्फफलजंभक विद्युतजंभक अग्निजंभक।

ज्योतिषीदेव पाच प्रकारके है चन्द्र सूर्य, ग्रह नक्षत्र, तारा पाच स्थिर अढाइ द्विपके बाहार है जिनोंकि प्रान्ति अन्दरके ज्योतिषीयोंसे आदि है सूर्य सूयके लक्ष योजन और सूर्य चन्द्रके पचासहजार योजनका अन्तर है अढाइ द्विपके बाहार जहा दिन है वहा दिनही है और जहा रात्री है वहा रात्रीही है और पांचों प्रकारके ज्योतिषी अढाइ द्विपके अन्दर है वह सदैव गमनागमन करते रहते है। चन्द्र सूर्य ग्रह नक्षत्र तारा।

वैमानिक देवोके दो भेद है (१) कल्प, (२) कल्पअतित जो कल्प वैमानवासी देव है उनोंमें इन्द्र सामानिक आदि देवों का छोटा बडापणा है जिनोंके बारहा भेद है सौधर्मकल्प इशान कल्प सनत्कुमार महेन्द्र ब्रह्मदेवलोक लंतकदेवलोक महाशुक्र देवलोक सहस्रादेवलोक अणतदेवलोक पणतदेवलोक अरणदेव लोक अच्युतदेवलोक॥ जो तीन कल्पिषीदेव है वह मनुष्यभवमें आचार्यापाध्यायके अवगुण वाद बोलके कल्पिषीदेव होते है वहा पर अच्छे देव उनोंसे अछुत रखते है अपने विमानमें आने नहीं देते है अर्थात् बडा भारी तिरस्कार करते है जिनोंके तीन भेद है (१) तीन पल्योपमकि स्थितिवाले पहले दुसरे देवलोकके बाहार रहते है (२ तीन सागरोपमकी स्थितिवाले तीजा चोथा देवलोकके बाहार रहते है (३) तेरह सागरोपमकी स्थितिवाले छटा देवलोकके बाहार रहते है और पांचमा देवलोकके तीसरा रिष्ट नामके परतरमें जो लोकांतिकदेव रहते है उनोंका नाम

मारस्वत ,आदित्य ,वनय वारुण गर्दतोये तुसीये अव्याबाद अगिचा और रिष्ट ॥

कल्पातित-जहा छोटे बडेका कायदा नही है अर्थात् जहा सबदेव अहमिद्रा है उनोंके दो भेद है ग्रीवग और अनुत्तर वैमान जिस्मे ग्रीवेगके नौ भेद है यथा—भद्दे सुभद्दे सुजाये सुमानसे सुदर्शने प्रीयदर्शने आमोय सुपडिबुद्धे और यशोधरे। अनुत्तर वैमानमे पाच भेद है विजय विजययन्त जयन्त अपराजित और सर्वार्थ सिद्ध वैमान इति १०-१५-१६-१०-१२-९-३ ९-५ एव ९९ प्रकारके देवतोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता करनेसे १९८ भेद देवतोंके होते है देवतोंके स्थान=भुवनपतिदेवता अधोलोकमे रहते है वाणमित्र (व्यतर) ज्योतिषीदेव तीछालोकमे और वैमानिकदेव उर्ध्वलोकमें निवास करते है इति ।

उपर बतलाये हुवे ५६३ भेद जीवोंका संक्षेपमे निर्णय—

१४ नरक सातोंका पर्याप्ता अपर्याप्ता ।

४८ तीर्यचके सूक्ष्म पृथ्वीकायके पर्याप्ता अपर्याप्ता बादर पृथ्वीकायके पर्याप्ता अपर्याप्ता एव ४ भेद अपकायके चार भेद तेउकायके च्यार भेद वायुकायके च्यार भेद और वनास्पति जो सूक्ष्म साधारण प्रत्येक इन तीनोंमें पर्याप्ता अपर्याप्ता से छे भेद मीलाके २२ भेद वे इन्द्रिय तेइन्द्रिय चौरिन्द्रिय इन तीनोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलाके ६ भेद तीर्यच पांचेन्द्रिय जलचर स्थलचर खेचर उरपुर भुजपुर यह पांच सज्ञी और पांच असज्ञी मील दश भेद इनोंके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलके २० भेद होते है २२-६-२० सर्व ४८ भेद।

३०३ मनुष्य-कर्मभूमि १५ अकर्मभूमि ३० अन्तर द्विपा ५६

मीलाके १०१ भेद इनाके पर्याप्ता अपर्याप्ता करनेसे २०२ एकसो-एक मनुष्योंके चौदा स्थानमे समुत्सम जीव उत्पन्न होते है वह अपर्याप्ता होनेसे १०१ मीलाकेसब ३०३ देवताके दशभुवन पति १५ परमाधामी १६ वाणमित्र १० जृम्भक दश ज्योतीषी बारहा देवलोक तीन कल्पिषी नौ लोकान्तिक नौ ग्रीवग पांच अनुतर वमान एव ९९ इनाके पर्याप्ता अपर्याप्ता मीलाके १९८ भेद हुवे १४-४८-३०३-१९८ एव जीव तत्वके ५६३ भेद होते है इनके सिवाय अगर अलग अलग किया जाये तो अनते जीवोंके अनंते भेदभी हो सक्ते है। इति जीव तत्व।

(२) अजीवतत्वके लक्षण-चैतन्यता रहित पुन्यपापका अकर्ता सुख दु:खके अभक्ता पर्याय प्राण गुणस्थान रहित द्रव्यमे अजीव शाश्वता है भूत कालमें अजीव था वर्तमान कालमे अजीव है भविष्यमे अजीव रहेगा तीनों कालमे अजीवका जीव होय नही द्रव्यसे अजीवद्रव्य अनते है क्षेत्रसे अजीवद्रव्य लोकालोक व्यापक है कालसे अजीवद्रव्य अनादि अनत है भावसे अगुरु लघुपर्याय संयुक्त है नाम निक्षेपासे अजीव नाम है स्थापना निक्षेपा अजीव एसे अक्षर तथा अजीवकि स्थापना करना द्रव्य से अजीव अपना गुणोंको काममे नही ले भावसे अजीव अपना गुणोंको अन्यके काममे आये जैसे कीसीके पास एक लकडी है जबतक उन मनुष्यके वह लकडी काममे न आती हो तबतक उन मनुष्यकि अपेक्षा वह लकडी द्रव्य है और वह ही लकडी उन मनुष्यके काममे आति है तब वह लकडी भाव गीनी जाती है -

अजीवतत्वके दो भेद है (१) रूपी (२) अरूपी जिसमे अरूपी अजीवके ३० भेद है यथा-धर्मास्तिकायके तीन भेद है धर्मास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश अधर्मास्तिकायके स्कन्ध,

देश, प्रदेश आकाशास्तिकायके स्कन्ध, देश, प्रदेश एवं ९ भेद और एक कालका समय गीननेसे दश भेद हुवे धर्मास्तिकाय पाच बोलोंसे जानी जाती है द्रव्यसे एक द्रव्य क्षेत्रसे लोकव्यापक कालसे आदि अन्त रहित भावसे अरूपी जिस्मे वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श नही है गुणसे चलन गुण जैसे पाणीके आधारसे मच्छी चलती है इसी माफीक धर्मास्तिकायके आधारसे जीवाजीव गमनागमन करते है। अधर्मास्तिकाय पाच बोलोंसे जानी जाती है द्रव्यसे एक द्रव्य क्षेत्रसे लोकव्यापक कालसे आदि अन्त रहित भावसे अरूपी वर्ण, गन्ध रस, स्पर्श रहित, गुणसे-स्थिरगुण जैसे श्रम पाये हुए पुरुषोंकों वृक्षकी छायाका दृष्टान्त। आकाशास्तिकाय पाच बोलोंसे जानी जाती है। द्रव्यसे एक द्रव्य, क्षेत्रसे लोकालोक व्यापक कालसे आदि अन्त रहित भावसे अरूपी वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहित गुणसे आकाशमें विकासका गुण भींतमें खुटी तथा पाणीमें पतासाका दृष्टान्त। कालद्रव्य पाच बोलोंसे जाने जाते है द्रव्यसे अनंत द्रव्य कारण काल अनंते जीव पुद्गलोंकि स्थितिकों पुरण करता है इस वास्ते अनंत द्रव्य माना गया है क्षेत्रसे आढाइ द्विप परिमाणे कारण चन्द्र, सूर्यका गमनागमन आढाइद्विपमे ही है समयावलिक आदि कालका मान ही आढाइद्विपसे ही गीना जाते हैं कालसे आदि अन्त रहित है भावसे अरूपी वर्ण, गन्ध रस, स्पर्श रहित है गुणसे नयी वस्तुकों पुराणी करे और पुराणी वस्तुकों क्षय करे जैसे कपडा कतरणीका दृष्टान्त एवं ३-३-३-१--५-५-५ सर्व मील अरूपी अजीवके ३० भेद हुवे

रूपी अजीवतत्त्वके ५३० भेद है निश्चयनयसे तों सर्व पुद्गल परमाणु है व्यवहारनयसे पुद्गलोंके अनेक भेद है जैसे दो प्रदेशी

स्कन्ध तीन प्रदेशी स्कन्ध एव च्यार पाच यावत् दश प्रदेशी स्कन्ध सख्यात प्रदेशी स्कन्ध, असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध अनंत प्रदेशी स्कन्ध कहे जाते है निश्चयनयमे परमाणु जीस वर्णका होते है वह उसी वर्णपणे रहते है कारण वस्तुधर्मका नाश कीसी प्रकारसे नही होता है व्यवहारनयसे परमाणुवोका परावर्तन भी होते है व्यवहारनयसे एक पदार्थ एक वर्णका कहा जाता है जेसे कोयल श्याम तोताहरा, मामलीया लाल हल्दी पीली, हस सुपेद परन्तु निश्चयनयमे इन सब पदार्थोमें वर्णादि वीसो बोल पाते है कारण पदार्थकि व्याख्या करनेमे गौणता और मुख्यता अवश्य रहेती है जेसे कोयलको श्यामवर्णी कही जाती है वह मुख्यता पेक्षासे कहा जाता है परन्तु गौणतापेक्षासे उनोंके अन्दर पाच वर्ण, दो गन्ध पाच रस आठ स्पर्श भी मीलते है इसी अपेक्षा नुसार पुद्गलोंके ५३० भेद कहते है यथा पुद्गल पाच प्रकारसे प्रणमते है (१) वर्णपणे (२) गन्धपणे (३) रसपणे (४) स्पर्शपणे (५) संस्थानपणे इनोंके उत्तर भेद २५ है जेसे वर्ण श्याम हरा, रक्त (लाल पीला सुपेद गन्ध दो प्रकार सुभिगन्ध दुभिगन्ध रस-तिक्त कटुक कषायत अम्बील मधुर, स्पर्श कर्कश मृदुल गुरु लघु शीत, उष्ण, स्निग्ध, रुक्ष संस्थान-परिमंडल (चुडीके आकार) वट (गोल लडुके आकार) तंस (तीखुणासीघोडेके आकार) चोरस-चोकीके आकार, आयत स्न (लंबा वांसके आकार) एवं ५-२-५-८-५ मीलाके २५ भेद होते है।

कालावर्णकि पृच्छा शेष च्यार वर्ण प्रतिपक्षी स्वके शेष कालावर्णमें दो गन्ध पाच रस, आठ स्पर्श, पाच संस्थान एवं २० बोल मीलते है इसी माफीक हरावर्णकि पृच्छा शेष च्यार वर्ण

प्रतिपक्षी है उन हरावणमें दो गन्ध, पाच रस आठ स्पर्श पाच सस्थान एव बीस बोल पावे इसी माफीक लालवर्णमें २० बोल पीला वर्णमें २० बोल श्वेतवर्णमें २० बोल कुल पाचो वर्णोंके १०० बोल होते है।सुभि गन्धकि पृच्छा दुभिगन्ध रहा प्रतिपक्षी जिस्मे बोल पाच वर्ण पाच रस, आठ स्पर्श, पाच सस्थान एव २३ बोल पावे इसीमाफीक दुर्भिगन्धमे भी २३ बोल पावे एव गन्धका ४६ बोल रस तिक्त रसकि पृच्छा च्यार रस प्रतिपक्षी जीस्मे बोल पाच वर्ण, दो ग ध, आठ स्पर्श,पाच सस्थान एव २० एव कटुकमें २० कषायलेमे२० आम्बिलमें २० म धुरमें २० सब मीलानेसे रसके १०० बोल होते है।

कर्कशस्पर्श कि पृच्छा मृदुलस्पर्श प्रतिपक्षी शेष बोल पाच-वर्ण दोगन्ध पाच रस छे स्पर्श पाच सस्थान एव बोल २३ पावे एव मृदुल स्पर्शमें भी २३ बोल पावे एव गुरु स्पर्श कि पृच्छा लघु प्रतिपक्ष बोल २३ पावे एव लघुमे २३ शीतकि पृच्छा उष्ण प्रतिपक्ष बोल २३ एव उष्णमें २३ बोल स्निग्ध कि पृच्छा रूक्ष प्रतिपक्ष बोल पावे २३ इसी माफीक रूक्ष स्पर्शमें भी २३ बोल पावे परिमण्डल सस्थान की पृच्छा च्यार सस्थान प्रति पक्ष बोल पावे पाच वर्ण दोगन्ध पाच रस आठ स्पर्श एव २० बोल इसी माफीक वट सस्थानमे २० तस सस्थानमें २० चौरस स स्थानमें २० आयतान सस्थानमे २०। कुल बोल वर्णके १०० गन्धके ४६ रसके १०० स्पर्शके १८४ सस्थानके १०० सर्व मीलके ५३० बोल और पहले अरूपीके ३० बोल एवं अजीव तत्त्वके ५६० भेद होते है इनके सिवाय अजीव द्रव्य अनते है उनोंके अनंते भेद भी होते है इति अजीवतत्त्व।

(३) पुन्य तत्त्वके शुभ लक्षण है पुन्य दु ख पूर्वक ब धे जाते

है और सुखपूर्वक भोगवीये जाते है अब जीवके पुन्य उदय रस विपाकमें आते है तब अनेक प्रकारसे इष्टपदार्थ सामग्री प्राप्त होती है उनके जरिये देवादिके पोद्गलिक सुखोको अनुभव करते है परन्तु मोक्षार्थी पुरुषोंके लिये यह पुन्य भी सुवर्ण कि बेडी तुल्य है यद्यपि जीवको उच्च स्थान प्राप्त होनेमें पुन्य अवश्य सहायताभूत है जैसे कोसी पुरुषको समुद्र पार जाना है तो नौका कि आवश्यक्ता जरुर होती है इसी माफीक मोक्ष जानेवालोंको पुन्यरूपी नौकाकी आवश्यक्ता है मानों पुन्य एक मकानकी उपरी उपरगनेके लिये सोपानाकी माफीक सहायक. तरीके है यह पुन्य नौ कारणोंसे बन्धाता है यथा—

(१) अन्न पुन्य-भुखोंको अशानादि भोजन करानेसे।
(२) पाणी-जल प्यासोंको जल पालानेसे पुन्य होते है।
(३) लण पुन्य-मकान आदि स्थानका आश्रय देनासे।
(४) सेणपुन्य-शय्या पाट पाटला आदि देनेसे पुन्य।
(५) वस्त्रपुन्य-वस्त्र कम्बल आदि के देनेसे पुन्य।
(६) मनपुन्य-दुसरोंके लिये अच्छा मन रखनेसे।
(७) वचन पुन्य-दुसरोंके लिये अच्छा मधुर वचन बोलनेसे।
(८) काय पुन्य-दुसरोंकी व्यावञ्च या बन्दगी बजानेसे।
(९) नमस्कार पुन्य-शुद्ध भावोंसे नमस्कार करनेसे।

इन नौ कारणोंसे पुन्य बन्धत है वह जीव भविष्यमें उन पुन्यका फल ४२ प्रकारसे भोगवते है यथा—

सातावेदनी(शरीर आरोग्यतादि), क्षत्रीयादि उच्चगौत्र, मनुष्यगति मनुष्यानुपूर्वी, देवगति, देवानुपूर्वी, पांचेन्द्रियजाति औदारीक शरीर वैक्रय शरीर, आहारीक शरीर, तेजस शरीर, कार्मण शरीर औदारीक शरीर अंगोपांग वैक्रयशरीर अंगोपांग, आहारीक

शरीर अंगोपांग, वज्र ऋषभनाराचसहनन, समचतुस्रसंस्थान, शुभ वर्ण, शुभगंध शुभरस शुभस्पर्श, अगुरु लघु नाम (ज्यादा भारीभी नही ज्यादा हलका भी नही) पराघात नाम, (बलवानको भी पराजय करसके) उश्वास नाम (श्वासोश्वास सुखपूर्वक ले सके) आताप नाम, (आप शीतल होनेपर भी दुसरोंपर अपना पुरा असर पाडे) उद्योत नाम, (सूर्य कि माफीक उद्योत करने वाला हो) शुभगति (गजकी माफीक गति हो) निर्माण नाम, (अंगोपांग स्वस्वस्थानपर हो) त्रस नाम, बादर नाम, पर्याप्ता नाम प्रत्येक नाम, स्थिर नाम (दांत हाड मजबुत हो) शुभ नाम (नाभीके उपरका अंग सुशोभीत हो तथा हरेक कार्यमें दुनिया तारीफ करे) सौभाग्य नाम (सब जीवोंकों प्यारा लगे और सौभाग्यको भोगवे) सुस्वर नाम जिस्का (पंचम स्वर जैसा मधुर स्वर हो) आदेय नाम (जीनोंका वचन सब लोग माने) यशो कीर्ति नाम-यश एक देशमें कीर्ति बहुत देशमें, देवतोंका आयुष्य, मनुष्यका आयुष्य, तीर्यचका शुभ आयुष्य, और तीर्थंकर नाम, जिनके उदयमें तीनलोगमें पूजनिक होते हैं एव ४२ प्रकृति उदय रस विपाक आनेसे जीवको अनेक प्रकारसे आहलाद सुख देती हैं जिस्के जरिये जीव धन धान्य शरीर कुटम्बानुकुल आदि सर्व सुख भोगवता हुवा धर्मकार्य साधन कर सके इसी वास्ते पुन्यको शास्त्रकारोंने बोलाया समान मददगार माना हुवा है इति पुन्यतत्व।

(४) पापतत्वके अशुभ फल सुखपूर्वक बान्धते हैं दुःखपूर्वक भोगवते है जब जीवोंके पाप उदय होते है तब अनेक प्रकारे अनिष्ट दशा हो नरकादि गतिमें अनेक प्रकारके दुःख रस विपाकको भोगवने पडते है कारण नरकादि गतिमें मूख्य

कारणभूत पाप ही है पाप दुनियामें लोहाकी बेडी समान
अठारा प्रकारसे जीव पाप कर्म बन्धन करते है-यथा प्राणाति
पात मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह क्रोध, मान, माया
लोभ राग, द्वेष, कलह अभ्याख्यान, पैशुन्य परपरीवाद मायामृषावाद और मिथ्या दर्शन शल्य इन अठारा कारणोंसे जीव
पाप कर्म बन्ध करते है उनोंको ८२ प्रकारसे भोगवते है यथा—

ज्ञानावर्णियकर्म जीवको अज्ञानमय बना देते हैं जैसे
घाणीका बैलके नेत्रोंपर पाटा बान्ध देनेसे कीसी प्रकारका
ज्ञान नही रहता है इसी माफीक जीवोंके ज्ञानावर्णियका पड
ल छा जानेसे कीसी प्रकारका ज्ञान नही रहता है जिस ज्ञाना
वर्णिय कर्मको पाच प्रकृति है—मतिज्ञानावर्णिय श्रुतज्ञानाव
र्णिय, अवधिज्ञानावर्णिय मन पर्यवज्ञानावर्णिय, केवलज्ञानाव
र्णिय यह पांचो प्रकृति पांचों ज्ञानको रोक रखती है। दर्शना
वर्णियकर्म जेसे राजाके पोलीयाकि माफीक धर्मराजासे मिलने
तक न देवे जिस्की नौ प्रकृति है चक्षुदर्शनावर्णिय अचक्षु
दर्शनावर्णिय अवधिदर्शनावर्णिय केवलदर्शनावर्णिय निद्रा
(सुखे सोना सुखे जागना) निद्रानिद्रा (सुखे सोना दु
जागना) प्रचला (बेठे बेठेको निद्रा होना) प्रचलाप्रचला
(चलते फीरतेको निद्रा होना) स्त्यानर्द्धि निद्रा (दिनको वि
चारा हुवा सब काय निद्रामे करे वासुदेव जितने बलवाले
हो) असातावेदनीय मिथ्यात्वमोहनिय (विप्रीतश्रद्धा अतत्व
पर रुची) अनतानुबन्धी क्रोध (पत्थरकि रेखा) मान (वज्रका
स्थभ) माया वांसकी जड) लोभ करमजी रेसमका रंग) घात
करे तो समकितकी स्थिति जावजीवकी गतिनरककी। अप्रत्या
ख्यानी क्रोध (तलावकी तड) मान-दांतका स्थभ, माया मैं
ढाका श्रृंग लोभ नगरका कीच। घात करे तो श्रावकके व्रतोंक

स्थिति बारहमास गति तिर्यचकी। प्रत्याख्यानी क्रोध-गाडाकी लीक मान-काष्ठका स्थभ माया-चालते बैलका मात्रा लोभ-का जलका रंग (घात करेतो मध्यमकी स्थिति च्यार मासकी गति मनुष्यकी) सज्वलनके क्रोध (पाणीकी लीक) मान (तृणके स्थभ) मायायामकी छाल लोभ (हल्द पतगका रग) घात वीतराग तार्को स्थिति क्रोधकी दो मास मानकी एक मास, मायाकी पन्द्रादीन,लोभकी अतरमूर्त गति देवतोंकी करे और हासी (ठठा मष्करी) भय, शोक जुगप्सा रति अरति स्त्रिवेद, पुरुषवेद नपुसकवेद नरकायुष्य नरकगति नरकानुपुर्वि, तीर्यचगति ती र्यचानुपुर्वि एकेन्द्रियजाति बेइन्द्रियजाति चोरिंद्रियजाति ऋषभ नाराचसहनन नाराच० अर्द्धनाराच० किलको० छेवटो सहनन निग्रोदपरिमडल सस्थान, सादीयो० वामन० कुब्जस० हुडकस० स्थावरनाम सूक्ष्मनाम अपर्याप्तानाम साधारणनाम, अशुभनाम अस्थिरनाम दुर्भाग्यनाम दु:स्वरनाम अनादेयनाम अयशनाम अशुभागतिनाम, अपघातनाम निचगोत्र अशुभवर्ण गन्ध रस स्पर्श—दानान्तराय लाभान्तराय भोगान्तराय उपभोगान्तराय वीर्यान्तराय एव पापकर्म ८२ प्रकारसे भोगवीया जाते है इति पापतत्त्व।

(५) आश्रवतत्त्व-जीवोंके शुभाशुभ प्रवृतिसे पुन्य पाप रूपी कर्म आनेका रहस्ता जसे जीवरूपी तलाव कर्मरूपी नाला पुन्य पापरूपी पाणीके आनेसे जीव गुरु हो ससारमे परिभ्रमन करते है उसे आश्रवतत्त्व कहते है जिस्के सामान्य प्रकारसे २० भेद है मिथ्यात्वाश्रव यावत् सूची कुशमात्र अयत्नासे लेना रखना आश्रव (देखो पैंतीस बोल्से चौदवा बोल) विशेष ४२ प्रकार प्राणातिपात (जीवहिंसा

वरना) मृषावाद (झूट बोलना) अदत्तादान चौरीका करना मैथुन, परिग्रह (ममत्व वढाना) श्रोतेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय मन वचन काय इन आठोंको खुला रखना अर्थात् अपने कब्जामें न रखना आश्रव है और मान माया लोभ यह १७ बोल हुये। अब क्रिया कहते है

काइयाक्रिया अयत्नासे हलना चलना तथा अव्रतसे
अधिगरणियाक्रिया-नये शस्त्र बनाना तथा पुराने तैयार कराना
पावसीयाक्रिया-जीवाजीवपर द्वषभाव रखनेसे
परतापनियाक्रिया-जीवोंको परिताप देनेसे
पाणाइवाइक्रिया-जीवोंको प्राणसे मारदेनेसे
आरंभीयाक्रिया-जीवाजीवका आरंभ करनेसे
परिग्रहकिक्रिया-परिग्रहपर ममत्व मुर्च्छा रखनेसे
मायवतीयाक्रिया-कपटाइसे दशवा गुणस्थानक तक
मिथ्यादर्शनक्रिया-तत्त्वकि अश्रद्धना रखनेसे
अप्रत्याख्यानकिक्रिया-प्रत्याख्यान न करनेसे
दिट्ठीयाक्रिया-जीवाजीवको सरागसे देखना
पुट्ठीयाक्रिया-जीवाजीवको सरागसे स्पर्श करनेसे
पाडुचीयाक्रिया-दुसरेकि वस्तु देख इर्षा करना
सामंतवणिय-अपनि वस्तुका दुसरा तारीफ करनेपर
　　आप हर्ष लानेसे
सहत्थियाक्रिया-नोकरोंके करने योग्य कार्य अपने हाथोंसे
　　करनेसे कारण इसमें शासनकी लघुता होती है

नसिहत्थिया-अपने हाथोंसे करने योगकाय नोकरादिसे करानेसे कारण वह लोग बेदरकारी अयत्नासे करनेसे अधिक पापका भागी होना पडता है।

आणवणियाक्रिया-राजादिके आदेशसे कार्य करनेसे -
वेदारणीयाक्रिया-जीवाजीवके टुकडे कर देनेसे ।
अणाभोगक्रिया-शुन्योपयोगसे कार्य करनेसे
अणवकखयतीया-वीतरागका आज्ञाका अनादर करनेसे
पोग-प्रयोगक्रिया-अशुभ योगोंसे क्रिया लगती है
पेज्ज-रागक्रिया-माया लाभ कर दुसरोंको प्रेमसे ठगना
दोस-द्वेषक्रिया-क्रोध-मानसे लगे द्वेषको बढाना
समुदाणीक्रिया-अधर्मके कार्यमें बहुत लोग एकत्र हो यहा सबके एकसा अध्यवसाय हानेसे सबके समुदाणी कर्म बन्धते है
इरियावाइक्रिया-वीतराग ११-१२-१३ गुणस्थानवालोंके केवलयोगोंसे लग-पच २५ क्रिया

इन ४२ द्वारोंसे जीवक आश्रव आते है इति आश्रवतत्त्व ।

(६) संवरतत्त्व-जीवरूपी तलाव कर्मरूपी नाला पुन्यपाप रूपी पाणी आते हुवेको संवर रूपी पाटीयासे नाला बन्ध कर उन आते हुवे पाणीको रोक देना उसे संवरतत्त्व कहते है अर्थात् स्वसत्ता आत्मरमणता करनेसे आते हुवे कर्म रुकजाते है उसे संवर कहते है जिस्के सामान्य प्रकारसे २० भेद पैतीस बोलोंके अन्दर चौदवा बोलमें कह आये है अब विशेष ५७ प्रकारसे संवर हो सकते है वह यहापर लिखा जाता है ।

इर्यासमिति-देखके चलना भाषासमिति विचारके बोलना एषणासमिति शुद्धाहार पाणी लेना, आदानभंडोपकरण-मर्यादा परमाणे रखना उनोंको यत्नासे वापरणा उचार पासवण जल खेल मैल परिष्टापनिकासमिति पग्टन परठावण यत्नासे माय

करना। मनगुप्ति वचनगुप्ति कायगुप्ति अर्थात् मन वचन काया को अपने कब्जेमें रखना पापारम्भमें न जाने देना एवं ८ बोल क्षुधापरिसह पीपासापरिसह शितपरिसह,उष्णपरिसह दश मशकपरिसह अचेल (वस्त्र) परिसह, अरतिपरिसह इत्थि (स्त्री) परिसह, चरिय (चलनेका) परिसह, निषेध (स्मशानोंमें कायोत्सग करनेमें) शय्या परिसह (मकानादिके अभाव) अक्रोशपरिसह वद्धपरिसह याचनापरिसह, अलाभपरिसह रोगपरिसह तृणपरिसह, मैलपरिसह सत्कारपरिसह प्रज्ञापरिसह, अज्ञानपरिसह दर्शनपरिसह एवं २२ परिसहको सहन करना समभाव रखनासे संवर होते है

क्षमासे क्रोधका नाश करे, मुक निर्लोभतासे ममत्वका नाश करे, अज्जवसे मायाका नाश करे, मार्दवसे मानका नाश करे, लघवसे उपाधिका नाश करे, सच्चे सत्यसे मृषावादका नाश करे, संयम से असंयमका नाश करे तपसे पुराण कर्मोंका नाश करे चेइये वद्ध मुनियोंकी अशनादिसे समाधि उत्पन्न करे, ब्रह्मचर्य व्रत पालके सर्व गुणोंकी प्राप्त करे यह दश प्रकारके मुनिका मौख्य गुण है

अनित्यभावना-भरत चक्रवर्तीने करी थी
अशरणभावना-अनाथी मुनिराजने करी थी
संसारभावना-शालीभद्रजीने करी थी
एकत्वभावना-नमिराज ऋषिने करी थी
असारभावना-मृगापुत्र कुमरने करी थी
असूची भावना-सनत्कुमार चक्रवर्तीने करी थी
आश्रवभावना-पलायची पुत्रने करी थी

संवरभावना–वशी गौतमस्वामिने करी थी

निज्जराभावना–अर्जुन मुनि महाराजने करी थी

लोकसारभावना–शिवराज ऋषिने करी थी

बोधीबीज भावना–आदीश्वरके ९८ पुत्रोंने करी थी

धर्मभावना–धर्मरुची अनगारने करी थी

यह बारह भावना भावनेसे संवर होते है।

सामायिक चारित्र, छद्दोपस्थापनिय चारित्र, परिहारविशुद्ध चारित्र, सुक्ष्मसंपराय चरित्र यथाख्यात चारित्र यह पाच चारित्र संवर होते है एवं ८–२२–१०–१२–५ सर्व मीलके ५७ प्रकारके संवर है इति संवरतत्व।

(७) निर्ज्जरातत्त्व–जीवरूपी कपडो कर्मरूपी मैल लगा हुवा है जिस्को ज्ञानरूपी पाणी तपश्चर्यारूपी साबुसे धो के उज्वल बनाने उसे निर्ज्जरातत्त्व कहते है यह निर्ज्जरा दो प्रकारकी एक देशसे आत्मप्रदेशोंको निर्मल बनावे, दुसरी सर्वसे आत्मप्रदेशों कों निर्मल बनावे जिसमें देश निर्ज्जरा दो प्रकार (१) सकाम निर्ज्जरा (२) अकाम निर्ज्जरा जेसे सम्यक् ज्ञान दर्शन विना अनेक प्रकारके कष्ट क्रिया करनेसे कर्मनिर्ज्जरा होती है यह सब अकाम निर्ज्जरा है और सम्यक् ज्ञान दर्शन संयुक्त कष्ट क्रिया करना यह सकाम निर्ज्जरा है सकामनिर्ज्जरा और अकामनिर्ज्जरामें इतना ही भेद है जो अकामनिर्ज्जरासे कर्म दूर होते है वह कीसी भवोंमें कारण पाके वह कर्म और भी चोप लाते है और सम्यक् सकामनिर्ज्जरा हुइ हो वह फीर कीसी भवमे वह कर्म जीवके नही लगते है यह ही सम्यक् ज्ञानकी बलीहारी है इसवास्ते पहिले सम्यक् ज्ञान दर्शन प्राप्त कर फीर यह निर्ज्जरा करना चाहिये।

अब सामान्य प्रकारसे निर्ज्जराके बारहा भेद इसी माफाक है अनसन, उनोदरी, भिक्षाचरी, रस परित्याग, कायाक्लेश, प्र तिसलेपना प्रायश्चित्त, विनय वेयावच स्वाध्याय, ध्यान, कायो त्सर्ग इनोंके विशेष ३५४ भेद है।

अनसन तपके दो भेद है (१) स्वल्पमर्यादितकाल (२ यावत् जीव जिस्मे स्वल्पकालके तपका छे भेद है श्रेणितप पर तरतप घनतप, वर्गतप वर्गावर्गतप, आकरणीतप

श्रेणितपके चौदा भेद है एक उपवास करे दो उपवास करे तीन उपवास करे, च्यार उपवास करे पांच उपवास करे, छे उपवास करे, सात उपवास करे अर्द्ध मास करे मास करे, दो मास करे, तीन मास करे, च्यार मास करे, पांच मास करे, छे मास करे

परतरतप जिस्के सोलह पारणा करे देखो यन्त्रसे एसी च्यार परिपाटी करे पहले परपाटीमें विगइ सहित आहार करे दुसरी परपाटीमें विगइ रहित आहार करे तीसरी परिपाटीमें लेप रहित आहार करे, चौथी परिपाटीमें पारणके दिन आंबिल

१	२	३	४
२	३	४	१
३	४	१	२
४	१	२	३

करे, एक उपवास कर पारणो करे फीर दो उपवास करे पारणो कर तीन उपवास करे, पारणो कर च्यार उप वास करे यह पहली परिपाटी हुइ इसी माफीक कोष्टकमे अंक माफीक तपस्या करे अन्तरामें पारणो करे. एवं च्यार परिपाटी करे घनतपके चौसठ पारणा करे च्यार परिपाटी पूर्ववत् समजना।

१	२	३	४	५	६	७	८
२	३	४	५	६	७	८	१
३	४	५	६	७	८	१	२
४	५	६	७	८	१	२	३
५	६	७	८	१	२	३	४
६	७	८	१	२	३	४	५
७	८	१	२	३	४	५	६
८	१	२	३	४	५	६	७

एक उपवास पारणो दो उपवास पारणो तीन उपवास पारणो एवं यावत् आठ उपवास कर पारणो करे यह पहली ओलीकी मर्यादा हुई इसी माफिक सम्पुर्ण तप करनेसे एक परिपाटी होती है इसी माफिक च्यार परिपाटी समजना

वर्गतप जिस्मे चोसठ कोटकका यन्त्र करे ४०९६ पारणे होते है

वर्गावर्गतपके १६७७७२१६ पारणेके कोष्टक ४०९६ होते है

अकरणीतपका अनेक भेद है यथा एकावलीतप, रत्नावली तप, मुक्तावलीतप, कनकावलीतप, खुडियाकसिंहनिःक्रीडकतप, महासिंहनिःक्रीड तप, भद्रतप, महाभद्रतप, सर्वतोभद्रतप, यव मध्यतप, वज्रमज्ञतप, कर्मचूरतप, गुणरत्नसंवत्सरतप, आबिल वर्द्धमानतप, तपाधिकार देखो अन्तगडसूत्रके भाषान्तर भाग १७ वा से इति स्वल्पयावत्कातप

यावत् जीवके तपका तीन भेद है (१) भक्त प्रत्याख्यान,

(२) इगीतमरण, (३) पादुगमन, जिस्में भक्तप्रत्यारयान मरण जेसे कारणसे करे अकारण से करे, ग्रामनगरके अन्दर करे, जगल पर्वत आदिके उपर करे, परन्तु यह अनसन सप्रतिक्रमण होते है अर्थात् यह अनसन करनेवाले व्यावच करते भी है और कराते भी है कारण हो तो विहार भी कर सकते है दुसरा इगीतमरणमें इतना विशेष है कि भूमिकाकी मर्यादा करते है उन भूमिसे आगे नही जा सके शेष भक्तप्रत्यारयानकी माफीक तीसरा पादुगमन अनसनमें यह विशेष है कि यह छेदा हुवा वृक्षकी डालके माफीक जीस आसन से अनसन करते है फीर उन आसनको बदलाते नही है अर्थात् काष्टकी माफीक निश्चलपणे रहते है उनोंके अप्रतिक्रमण अनसन होते है यह वज्रऋषभनाराच सहननवाला ही कर सक्ते है इति अनसन

(२) ओंणोदरीतपके दो भेद है (१) द्रव्य ओंणोदरी (२) भाव ओंणोदरी जिस्मे द्रव्य ओंणोदरीके दो भेद है (१) औपधि ओंणोदरी (२) भात पाणी ओंणोदरी औपधि ओंणोदरीके अनेक भेद है जेसे स्वल्पवस्त्र, स्वल्प पात्र, जीर्णवस्त्र, जीर्णपात्र, एकवस्त्र, एकपात्र, दोवस्त्र, दो पात्र इत्यादि दुसरा आहार ओंणोदरीके अनेक भेद है अपनि आहार खुराक हो उनके ३२ विभाग करले उनो से आठ विभागका आहार करे तो तीन भागकी ओंणोदरी होती है और बारहा विभागका आहार करे तो आधासे अधिक० सोलहा विभागका आहार करे तो आदि० चौवीस विभागका आहार करे तो एक हीस्साकी ओंणोदरी होती है अगर ३१ विभागका आहार कर एक विभाग भी कम खाव तो उसे किंचित् ओंणोदरी और एक विभागका ही आहार करे तो उत्कृष्ट ओंणोदरी होती है अर्थात् अपनी खुराकसे किसी प्रकारसे कम खाना उसे ओंणोदरी तप कहा जाता है ।

भाव औणोदरीक अनेक भेद है क्रोध नहीं करे, मान नहीं करे, माया नहीं करे, लोभ नहीं करे, रागद्वेष नहीं करे, द्वेष न करे क्लेश नहीं करे हास्य भयादि नहीं करे अर्थात् जो कर्मबन्ध क कारणहै उनोंकों क्रमश कम करना उसे औणोदरी कहते है।

(३) भिक्षाचारी-मुनि भिक्षा करनेकों जाते हैं उन समय अनेक प्रकारके अभिग्रह करते है यह उत्सर्ग मार्ग है जीतना जीतना ज्ञान सहित कायाको कष्ट देना उतनी उतनी कर्मनिर्जरा अधिक होती है उनी अभिग्रहाने यहापर तीस बोल बतलाये जाते है। यथा—

(१) द्रव्याभिग्रह-अमुक द्रव्य मीले तो लेना
(२) क्षेत्राभिग्रह अमुक क्षेत्रमें मीले तो लेना
(३) कालाभिग्रह-अमुक टाइममें मीले तो लेना
(४) भावाभिग्रह-पुरुष या स्त्री इस रूपमें दे तो लेना
(५) उक्खीताभिग्रह-बरतन से निकालके देवे तो लेना
(६) निक्खीताभिग्रह-बरतनमे डालताहुवा देनेतो लेना
(७) उक्खीतनिक्खीत-ब० निकालते डालते दे तो लेना
(८) निक्खीतउक्खीत-ब० डालते निकालते दे तो लेना
(९) वट्टीज्जाभिग्रह-बॅटते हुवे आहार दे तो लेना
(१०) साहारीज्जाभिग्रह-एक बरतन से दुसरे बरतनमें डालते हुवे देवे तो लेना
(११) उवनित अभिग्रह-दातार गुण कीर्तन करते आहार देवे तो लेना

(१२) अवनित अभिग्रह-दातार अवगुण बोल्के आहार देव तो लेना
(१३) उवनित अवनित-पहले गुण ओर पीच्छे अवगुण करते हुवे आहार देवे तो लेना
(१४) अव० उव० पहले अवगुण और पीछे गुण करता देवे
(१५) ससठ्ठ , पहलेसे हाथ खरडे हुवे हो वह देवे तो लेना
(१६) असंसठ्ठ ,, पहलेसे हाथ साफ हो वह देवे तो लेना
(१७) तज्ञात , जोस द्रव्यसे हाथ खरडे हो वहही द्रव्य लेवे
(१८) अणयण , अज्ञात कुलकि गोचरी करे ।
(१९) मोण , मौनव्रत धारण कर गोचरी करे ।
(२०) दिठ्ठाभिग्रह, अपने नेत्रोंसे देखा हुवा आहार ले
(२१) अदिठ्ठ , भाजनमे पडा हुवा अदेखा हुआ " लेवे
(२२) पुठ्ठाभिग्रह पुच्छक देय क्या मुनि आहार लोगे तो लेना
(२३) अपुठ्ठाभिग्रह-विनों पुच्छे दे तों आहार लेना
(२४) भिक्ख आदर रहीत तिरस्कारसे देवे तो लेना
(२५) अभिक्ख आदार सत्कार कर देवे तो लेना
(२६) अणगीलाये , वहुत क्षुधा लगजाने पर आहार लेव
(२७) ओवणिया , नजीक नजीक घरोंकी गोचरी करे
(२८) परिमत्त आहारके अनुमानसे कम आहार ले
(२९) शुद्धेसना एकही जातका निर्वद्य आहार ले
(३०) संखीदात दातादिकी सख्याका मान करे

इनके सिवाय पेडागोचरी अद्‌पेडागोचरी मगावृतन गो चरी चम्रयाल गोचरी गाउगोचरी पतगीया गोचरी इत्यादि अ नेक प्रकारके अभिग्रह कर सकते है यह सब भिक्षाचरीके ही भेद है।

(४) रस परित्यागतपके अनेक भेदहै सरसाहारका त्याग निधी करे, आंबिल करे ओसामणसे एक सीतले, अरस आहार ले विरस आहार ले लुग आहार ले, तुच्छ आहार ले, अन्ताहार ले, पाताहार ले, रचा हुवा आहार ले, कोइ राक भिक्षु काग कुते भी नही वान्छे एस फासुक आहार ले अपनि सयमयात्राका निर्वाहा करे

(५) कायाक्लेशतप-शक्ति माफीक खडा रहे ओकडू आसन करे पद्मासन करे वीरासन निषेधासन दडासन लगडा सन, आम्रकुज्जासन, गोदुआसन, पीलावासन अधोशिरासन, सिंहासन, कोंचासन, उष्णकालमे आतापना ले शीतकालमे वस्त्रदूर रख ध्यान करे थुक थुवे नही खाज खीणे नही मैल उतारे नही, शरीरकी विभूषा करे नही और मस्तकका लोच करे इत्यादि

(६) पडिसलीणतातपके च्यार भेद (१) कषाय पडिस- लेणता याने नयाकषाय करे नही उदय आयेको उपशान्त करे जिस्के च्यार भेद क्रोध मान माया लोभ।४। (२) इन्द्रिय पडिस लेणता, इन्द्रियोंने विषय विकारमें जातेकों रोके उदय आये विषय विकारकों उपशान्त करे जिस्के पाच भेद है श्रोत्रेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय घाणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय (३) योग- पडिसलिणता । अशुभ भागोके व्यापारको रोके और शुभ योगो के व्यापारमें प्रवृति करे जिस्के तीन भेद है, मनयोग, वचन

(१२) अवनित अभिग्रह-दातार अवगुण बोल्के आहा
देवे तो लेना
(१३) उवनित अवनित-पहले गुण और पीच्छे अवगु
करते हुवे आहार देवे तो लेना
(१४) अव० उव० पहले अवगुण और पीछे गुण करता दे
(१५) ससट्ठ, पहलेसे हाथ खरडे हुवे हो वह देवे तो ले
(१६) असंसट्ठ, पहलेसे हाथ साफ हो वह देवे तो ले
(१७) तज्जत, जोस द्रव्यसे हाथ खरडे हो वहही द्रव्य ले
(१८) अणवण अज्ञात कुल्कि गौचरी करे।
(१९) मोण, मौनव्रत धारण कर गौचरी करे।
(२०) दिट्ठाभिग्रह, अपने नत्रोंसे देखा हुवा आहार ले
(२१) अदिट्ठ, भाजनमे पडा हुवा अदेखा हुआ " लेव
(२२) पुट्ठाभिग्रह पुच्छके देव क्या मुनि आहार लोगे
तो लेना
(२३) अपुट्ठाभिग्रह-विनों पुच्छे दे तो आहार लेना
(२४) भिक्ख आदर रहीत तिरस्कारसे देवे तो लेना
(२५) अभिक्ख, आदार सत्कार कर देवे तो लेना
(२६) अणगीलाये, बहुत क्षुधा लगजाने पर आहार लेवे
(२७) ओयणिया नजीक नजीक घरोंकी गोचरी करे
(२८) परिमत्त आहारके अनुमानसे कम आहार ले
(२९) सुद्देसना एकही जातका निरध आहार ले
(३०) संखीदात, दातादिकी मरयाका मान करे

इनके सिवाय पेडागोचरी अदपेडागोचरी मखावृतन गोचरी चमचाल गोचरी गाउगोचरी पतगीया गोचरी इत्यादि अनेक प्रकारसे अभिग्रह कर सकते है यह सब भिक्षाचरीके ही भेद है।

(४) रस परित्यागतपके अनेक भेद है सरसाहारका त्याग, निवी करे, आंबिल करे ओसामणमें एक सीतले, अरस आहार ले विरस आहार ले, लुख आहार ले, तुच्छ आहार ले, अन्ताहार ले, पाताहार ले, बचा हुवा आहार ले, कोइ राक भिक्षु, काग कुत्ते भी नही चाहे एस फासुक आहार ले अपनि सयमयात्राका निर्वाहा करे

(५) कायाक्लेशतप–शक्ति माफीक खडा रहे ओकडु आसन करे पद्मासन करे वीरासन निषेधासन दडासन लगडासन, आम्रखुज्ञासन, गोदुआसन, पीलाकासन, अधाशिरासन, सिहासन, कोचासन, उष्णकालमें आतापना ले शीतकालमे वस्त्रदूर रख ध्यान करे थुक थुके नही खाज खीणे नही मैल उतारे नही, शरीरकी विभूषा करे नही और मस्तकका लोच करे इत्यादि

(६) पडिसलीणतातपके च्यार भेद (१) कषाय पडिसलेणता याने नयाकषाय करे नही उदय आयेकों उपशान्त करे जिस्के च्यार भेद क्रोध मान माया लोभ।४। (२) इन्द्रिय पडिसलेणता, इन्द्रियोंने विषय विकारमें जातेकों रोके उदय आये विषय विकारकों उपशान्त करे जिस्के पाच भेद है श्रोत्रेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय (३) योग पडिसलिणता। अशुभ भागोंके व्यापारको रोके और शुभ योगों के व्यापारमें प्रवृति करे जिस्के तीन भेद है, मनयोग, वचन

याग, काययोग, (४) विधतसयनासन याने स्त्रि नपुंसक ओर पशु आदि विकारीक निमत्त कारण हो एसे मकानमे न रहे इति।

इन छे प्रकारके तपको बाह्यतप कहते है।

(७) प्रायश्चिततप-मुनि ज्ञान दर्शन चारित्रके अन्दर सम्यक्‌ प्रकारसे प्रवृत्ति करत हुवेको कदाचित्‌ प्रायश्चित लग जावे, तो उन प्रायश्चितकी तत्काल आलोचना कर अपनि आत्माको विशुद्ध बनाना चाहिये यथा—

दश प्रकारसे मुनिको प्रायश्चित लगते है यथा-कंदप पीडित होनेसे, प्रमादवस होनेसे, अज्ञातपणेसे, आतुरतासे आप तियों पडनेसे शका होनेसे सहसात्कारणसे भयोत्पन्न होनेसे द्वेषभाव प्रगट होनेसे शिष्यकि परिक्षा करनेसे।

दश प्रकार मुनि आलोचन करते हुव दोष लगावे कम्पता कम्पता आलोचन करे पहले अन्मान पुच्छे कि अमुक प्रायश्चित सेवन करनेका क्या दड होगा फीर ठीक लागे तो आलोचना करे। लोकोंने देखा हो उन पापकि आलोचना करे दुसरेकी नही अदेखा हुवे दोषकि आलोचना करे। बडे बडे दोषोंकी आलोचना करे छोटे छोटे पापोंकी आलोचना करे मद स्वरसे आलोचना करे जोर जोरके शब्दोंसे० एक पापकी बहुतसे गीतार्थकि पास आलोचना करे, अगीतार्थोके पास आलोचना करे

दशगुणोंका धणी हो वह आलोचना करे जातिवन्त कुलवन्त विनयवन्त उपशान्तकषायवन्त जितेन्द्रियवन्त, ज्ञानवन्त, दर्शनवन्त चारित्रवन्त, अमायवन्त, और प्रायश्चित ले के पश्चाताप न करे।

दशगुणोंके धणी के पास आलोचना लि जाति है स्वय आचारवन्त हो परपरासे धारणवन्त हो पाच व्यवहारक जानकार हो लज्जा छोडाने समर्थ हो शुद्धकरने योग हो आग

लोंके मर्म प्रकाश न करे निर्वाहाकरने योग्य हो अनालोचनाके अनर्थ बतलानेमें चातुर हो प्रीयधर्मी हो. और दृढधर्मी हो।

दश प्रकारके प्रायश्चित आलोचना, प्रतिक्रमण, दोनों सार्थमे कराके विभाग कराना कायोत्सर्ग कराना तप, छेद मूलसे फीर दीक्षा देना अणुठप्पा और पारन्चिय प्रायश्चित इन ५० बोलोंका विशेष खुलासा दे, खो शीघ्रबोध भाग २२ के अन्तमे इति।

(८) विनयतप जिस्का मूल भेद ७ है यथा ज्ञानविनय, दर्शनविनय, चारित्रविनय, मनविनय, वचनविनय, कायविनय, लोकोपचार विनय इन सात प्रकार विनयके उत्तर भेद १३४ है।

ज्ञानविनयके पाच भेद है मतिज्ञानका विनय करे, श्रुतिज्ञानका विनय करे, अवधि ज्ञानका विनय करे, मन पर्यवज्ञानका विनय करे, केवलज्ञानका विनय करे, इन पांचों ज्ञानका गुण करे भक्ति करे, पूजा करे, बहुमान करे तथा इन पांचों ज्ञानके धारण करनेवालोंका बहुमान भक्ति करे तथा ज्ञानपद कि आराधना करे।

दर्शन विनयका मूल भेद दो है (१) शुश्रुपा विनय, (२) अनाशातना विनय, जिस्मे शुश्रुषा विनयका दश भेद है गुरु महाराजकों देख खडा होना आसनकि आमन्त्रण करना, आसन बिच्छादेना, वन्दन करना पाचाग नामाके नमस्कार करना वस्त्रादिदे के सत्कार करना गुण कीर्तनसे सन्मान करना गुरु पधारे तो सामने लेनेको जाना विराजे वहातक सेवा करना पधारे जब मार्गमें पहुचानेको जाना, इत्यादि इनकों शुश्रुपा विनय कहते है।

अनअशातनाविनयके ४५ भेद है अरिहन्तोंकि आशातना

याग, काययोग (४) विवतसयनासन याने स्त्रि नपुंसक ओर पशु आदि विकारीक निमत्त कारण हो एसे मकानमे न रहे इति।

इन छे प्रकारके तपको बाह्यतप कहते है।

(७) प्रायश्चिततप–मुनि ज्ञान दर्शन चारित्रय अन्दर सम्यक् प्रकारसे प्रवृत्ति करते हुवको कदाचित् प्रायश्चित लग जाय, तो उन प्रायश्चितकी तत्काल आलोचना कर अपनि आत्माको विशुद्ध बनाना चाहिये यथा—

दश प्रकारसे मुनिको प्रायश्चित लगते है यथा–कंदर्प पीडित होनेसे, प्रमादवस होनेसे, अज्ञातपणेसे, आतुरतासे, आपतियों पडनेसे शका होनेसे सहसात्कारणसे भयोत्पन्न होनेसे द्वेषभाव प्रगट होनेसे, शिष्योंकि परिक्षा करनेसे।

दश प्रकार मुनि आलोचन करते हुवे दोष लगावे कम्पता कम्पता आलोचन करे पहले उन्मान पुच्छे कि अमुक प्रायश्चित सेवन करनेका क्या दड होगा फीर ठीक लागे तो आलोचना करे। लोकोने देखा हो उन पापकि आलोचना करे दुसरेकी नही अदेखा हुवे दोषकि आलोचना करे। बडे बडे दोषोंकी आलोचना करे छोटे छोटे पापोंकी आलोचना करे मद स्वरमे आलोचना करे जोर जोरके शब्दोंसे० एक पापकों बहुतसे गीतार्थोंके पास आलोचना करे, अगीतार्थोंके पास आलोचना करे

दशगुणोंका धणी हो वह आलोचना करे जातिवन्त कुलवन्त विनयवन्त उपशान्तकषायवन्त जितेन्द्रियवन्त ज्ञानवन्त, दर्शनवन्त, चारित्रवन्त, अमायवन्त, और प्रायश्चित ले के पश्चाताप न करे।

दशगुणोंके धणी के पास आलोचना कि जाति है स्वय आचारवन्त हो परपरासे धारणवन्त हो पाच व्यवहारके जानकार हो लज्जा छोडाने समर्थ हो शुद्धकरने योग हो आग

लोंके मर्म प्रकाश न करे निर्वाहाकरने योग्य हो अनालोचनाये अनर्थ बतलानेमे चातुर हो प्रीय धर्मी हो. और दृढधर्मी हो।

दश प्रकारके प्रायश्चित आलोचना, प्रतिक्रमण, दोनों साथमे कराबे विभाग कराना कायोत्सर्ग कराना तप, छेद मूलसे फीर दीक्षा देना, अणुठप्पा और पारन्चिय प्रायश्चित इन ५० बोलोंका विशेष खुलासा दे,खो शीघ्रबोध भाग २२ वे अन्तमे इति।

(८) विनयतप जिस्का मूल भेद ७ है यथा ज्ञानविनय, दर्शनविनय, चारित्रविनय, मनविनय, वचनविनय, कायविनय, लोकोपचार विनय, इन सात प्रकार विनयके उत्तर भेद १३४ है।

ज्ञानविनयके पाच भेद है मतिज्ञानका विनय करे श्रुतिज्ञानका विनय करे, अवधि ज्ञानका विनय करे, मन पर्यवज्ञानका विनय करे, केवलज्ञानका विनय करे, इन पाचों ज्ञानका गुण करे भक्ति करे, पूजा करे, बहुमान करे तथा इन पाचों ज्ञानके धारण करनेवालोंका बहुमान भक्ति करे तथा ज्ञानपद कि आराधना करे।

दर्शन विनयका मूल भेद दो है (१) शुश्रुषा विनय (२) अनाशातना विनय, जिस्मे शुश्रुषा विनयका दश भेद है गुरु महाराजको देख खडा होना, आसनकि आमन्त्रण करना, आसन बिच्छादेना, वन्दन करना पाचाग नामाके नमस्कार करना वस्त्रादिदे के सत्कार करना गुण कीर्तनसे सन्मान करना गुरु पधारे तो सामने लेनेको जाना विराजे वहातक सेवा करना पधारे जब साथमे पहुचानेको जाना, इत्यादि इनको शुश्रुषा विनय कहते है।

अनअशातनाविनयके ४५ भेद है अरिहन्तोंकि आशातना

न करे अरिहताके धर्मकि आ० आचार्य० उपाध्याय० स्थविर कुल० गण० संघ० क्रियावत० सभोगी स्वाधर्मि, मतिज्ञान, श्रुति ज्ञान अवधिज्ञान मन पर्यवज्ञान और केवलज्ञान इन १५ महा पुरुषोंकि आशातना न करे इन पदरोंका बहुमान करे इन पदरों कि सेवा भक्ति करे एव ४५ प्रकारका विनय समझना।

नोट—दशवा गोल्में सभोगी कहा है जिस्का समवायागजी सूत्रमें सभोग बारहा प्रकारका कहा है अर्थात् सरीखी समाचारी वाले साधुवोंके साथ अल्पा स्वल्पा करना जेसे एक गच्छके साधुवोंसे दुसरे गच्छके साधुवोंको औपधिका लेन देन रखना, सूत्र वाचनाका लेना देना आहारपाणीका लेना देना, अथ वाचना लेना देना आपसमें हाथ जोडना आमंत्रण करना उठके खडा होना, वन्दना करना व्यायच करना, साथमें रहना एवं आसन पर बेठना, आलाप संलापका करना

चारित्रविनयके पाच भेद सामायिक चारित्रका विनय करे छदोपस्थापनिय चारित्रका विनय करे परिहारविशुद्ध चारित्र का विनय करे, सूक्ष्म सपराय चारित्रका विनय करे यथा ख्यात चारित्रका विनय करे।

मनविनयके भेद २४ मूल भेद दोय (१) प्रशस्त विनय (२) अप्रशस्त विनय, जैसे प्रशस्त विनयके १२ भेद है मनक सावद्य कार्यमें जाते हुवेको रोकना इसी माफीक पापक्रियासे रोकना कर्कश कायसे रोकना कठोर कायसे राकना, फरूस तीक्षण पापसे रोकना, निष्ठुर कार्यसे रोकना, आश्रवसे रोकना छेद करानेसे भेद करानेसे परितापना करानेसे, उद्विग्न करा नेसे और जीवोंकि घात करानेसे रोकना इस्का नाम प्रशस्त मन विनय है और इन बारहा बोलोंकी विपरीत करनेसे बारा

प्रकारका अप्रशस्त विनय होते है अर्थात् विनय तो करे परन्तु मन उक्त अशुद्ध कार्यमें लगा रखे इनोंसे अप्रशस्त विनय होते है एव २४ भेद मन विनयका है।

वचन विनयका भी २४ भेद है, मूल भेद दो (१) प्रशस्त विनय, (२) अप्रशस्त विनय, दोनोंके २४ भेद मन विनयकि माफीक समझना।

काय विनयके १४ भेद है मूल भेद दो (१) प्रशस्तविनय, (२) अप्रशस्त विनय, जिस्मे प्रशस्त विनय के ७ भेद है उप योग सहित यत्नापूर्वक चलना, बेठना उभारहना सुना एक वस्तुकों एक दफे उलंघन करना तथा वारवार उलंघन करना इन्द्रियों तथा कायाकों सर्व कार्यमें यत्ना पूर्वक वरताना इसी माफीक अप्रशस्त विनयके ७ भेद है परन्तु विनय करते समय कायाकों उक्त कार्योंमे अयत्नासे वरताये एव १४

लोकोपचार विनयके ७ भेद है यथा (१) सदैव गुरुकुल-वासाको सेवन करे, (२) सदेव गुरु आज्ञाकों ही परिमाण करे और प्रवृति करे, (३) अन्य मुनियोंका कार्य भि यथाशक्ति करके परकों साता उपजावे (४) दुसरोंका अपने उपर उपकार है तो उनोंके बदलेमें प्रत्युपकार करना, (५) ग्लानि मुनियों कि गवेषना कर उनोंकि व्यावच करना, (६) द्रव्य क्षेत्र काल भावको जानकर उन आचार्यादि सर्व संघका विनय करना, (७) सर्व साधुवोंके सर्व कार्यमे मनकों प्रसन्नता रखना यहही धर्मका लक्षण है इति

(८) व्यावच तपके दश भेद है आचार्य महाराज उपा ध्यायजी स्थिवरजी गण (बहुताचार्य) कुल (बहुताचार्यों के शिष्य समुदाय) संघ, स्वाधर्मि, तपस्वी मुनिकी क्रिया वन्तकि नवदिक्षित शिष्य इन दशों जीवोंकी बहुमान पूर्वक

व्यायच करे याने आहारपाणी लाय देवे और भी यथा उचित कार्यमें सहायता पहुचाना जिनसे कर्मोंकी महा निर्ज्जरा और संसारसमुद्रसे पार होनेका सिधा रहस्ता है।

(१०) स्वाध्याय तपके पाच भेद है वाचना देना या लेना पृच्छना-प्रश्नादिका पुच्छना परावतना-पठनपाठन करना अनु पेक्ष पठनपाठन कीये हुवे ज्ञानमें तत्वरमणता करना धर्मकथा- धर्माभिलाषीयोंको धर्मकथा सुनाना ॥ तीन जनोंको वाचना नहं देना (१) नित्य विगइ याने सरस आहारके करनेवालेको (२) अविनयवंतको (३) दीर्घ कषायवालेको। तीन जनोंक वाचना देना चाहिये विनयवंतको, निरस भोजन करनेवालेक २ जिस्के क्रोध उपशान्त हो गया है तथा अन्यतीर्थी पाखंडी हं धर्मका द्वषी हो उनको भी वाचना न देनी और न उनांसे वाचन लेनी कारण वाचना देनेसे उनांको विपरीत होगा ता धर्मक निंदा करेंगा और वाचना लेना पडे ता भी यह उपहास करें कि जैनोंको हम पढाते हैं, हम जैनोंके गुरु है इस वास्ते धर्म धर्मद्वेषीयोंसे दूर ही रहना अच्छा है अगर भद्रिक प्रणामी हं उसे उपदेश देना और मिथ्यात्वका रहस्ता छोडाना मुनियोंक फर्ज है।

वाचनाकी विधिका छे भेद है संहितापद, पदछेद, अन्वय अर्थ, निर्युक्ति तथा सामान्यार्थ और विशेषार्थ। प्रश्नादि पुच्छ नेका सात भेद है। पहले व्याख्यानादि शान्त चित्तसे श्रव करे गुरवादिका बहुमान करे अर्थात् वाणि झेले हुंकारा देवे तहत्तार करे अर्थात् भगवानका वचन सत्य है जो पदार्थ सम झमें नहीं आवे उनोंके लिये तर्क करे उनका उत्तर सुनि विचा करे विस्तारसे ग्रहन करे ग्रहन कीये ज्ञानको धारण क याद रखे।

प्रश्न करनेके छे भेद हैं, अपनेका शका होनेसे प्रश्न करे दुसरे मिथ्यात्वीयोंको निरुत्तर करनेको प्रश्न करे। अनुयोग ज्ञानकी प्राप्तिके लीये प्रश्न करे दुसरोंको बोलानेके लिये प्रश्न करे जानता हुवा दुसरोंको बोधक लीये प्रश्न करे अनजानता हुवा गुरवादिकी सेवा करनेके लिये प्रश्न करे।

परावर्तन करनेके आठ भेद है काले विनये, बहुमाणे, उवहाणे, अनिह्नवणे व्यञ्जन, अर्थ, तदुभय इन आठ आचारोंसे स्वाध्याय करे तथा इनोंकी ३४ अस्वाध्याय है उनकों टालके स्वाध्याय करे, अस्वाध्याय आगे लिखी है सो देखो।

अनुपेक्षाके अनेक भेद है पढा हुवा ज्ञानका वारवार उप योगमे लेना ध्यान, श्रवण मनन, निदिध्यासन, वर्तन, चैतन्य जडादिके भेद करना।

धर्मकथाके च्यार भेद है अक्षेपणी, विक्षेपणी, संवेगणी निर्वेगणी इनके सिवाय विचित्र प्रकारकी धर्मकथा है

जैन सिद्धान्त पढनेवालोंको पहला इस माफीक—

(१) द्रव्यानुयोगके लिये न्यायशास्त्र पढो

(२) चरणकरणानुयोगके लिये नीतिशास्त्र पढो

(३) गणितानुयोगके लिये गणितशास्त्र पढो

(४) धर्मकथानुयोगके लिये अलकारशास्त्र पढो

यह च्यार लौकीक शास्त्र च्यारों अनुयोगद्वारके लिये मद्-दगार है इनोंके पहला गुरुगम्यताकी खास आवश्यक्ता है इस वास्ते जैनागम पढनेवालोंको पहले गुरुचरणोंकी उपासना करनी चाहिये।

जैनागम पढनेवालोंको निम्नलिखित अस्वाध्याय टाल
चाहिये।

(१) तारों तूट तो एक पेहर सूत्र न वाचे (२) प
दिशा लाल रहे वहांतक सूत्र न पढे (३) आर्द्रा नक्षत्रसे चि
नक्षत्र तक तो गाजविज्ञ कडेयका काल है इनोंके सिव
अकाल कहा जाते है उन अकालमें विद्युत्पात हो तो एक प
गाज हो तो दो पेहर, भूमिकम्प हो तो जघन्य आठ पेहर, मध
बारहा उत्कृष्ट सोल्हा पेहर सूत्र न पढे, (४-५-६) बाल
हरेक मासके शुद १-२-३ रात्री पहल पहरमें सूत्र न पढे, (
आकाशमें अग्निका उपद्रव हो वह न मीटे वहांतक सूत्र न
(८) धूवर (९) सुपेत धुमस, (१०) रजोघात यह तीनों ज
तक न मीटे वहांतक सूत्र न पढे, (११) मनुष्यके हाड f
जगहपर पडा हो उनोंसे १०० हाथ तीर्यचका हाड ६० हा
अन्दर हो तथा उनकी दुर्गन्ध आति हो मनुष्यका १२ वर्ष त
चका ८ वर्ष तकका हाडकी अस्वाध्याय होती है वास्ते सू
पढे। (१२) मनुष्यका मास १०० हाथ तीर्यचका ६० हाथ
से मनुष्यका ८ पेहर तीर्यचके ३ पेहर इनोंकी अस्वाध्
हो तो सूत्र न वाचे। (१३) इसी माफीक मनुष्य तीर्य
रुद्रकी अस्वाध्याय (१४) मनुष्यका मल मूत्र-जहांतक f
मडलमे हो वहांतक सूत्र न पढे तथा जहांपर दुर्गन्ध आति
वहांभी सूत्र न पढना चाहिये। (१५) स्मशानभूमि चौतफ
हाथके अन्दर सूत्र न पढे (१६) राजमृत्यु होनेके बाद
राजापाट न बेठे वहांतक उनोंके राजमें सूत्र न पढे (१७)
युद्ध जहांतक शान्त न हो वहांतक उनोंके राजमें सूत्र न
(१८) चन्द्रग्रहन (१९) सूर्यग्रहन जघन्य ८ पहर मध्यम
पेहर उत्कृष्ट १६ पेहर सूत्र न पढे (२०) पांचेन्द्रियका

कलेवर जीस मकानमें पडा हो वहातक सूत्र न पढे। यह बीस अस्वाध्याय ठाणायागसूत्रके दशवे ठाणामे कही है। प्रभात, श्याम मध्यान्ह आदि रात्री एव च्यार अकाल अकेक मुहुर्त तक सूत्र न पढे।२१। २२। २३।२४। आषाढ शुद १५ श्रावण वद १ भाद्रवा शुद १५ आश्वन वद १ आश्वन शुद १५ कार्तिक वद १ कार्तिक शुद १५ मागशर वद १ चैत शुद १५ वैशाख वद १ एव दश दिन सूत्र न पढ यह १२ अस्वाध्याय निशियसूत्रके उन्नीसवे उदेशामे कही है और दो अस्वाध्याय ठाणांयागसूत्रमें कही है एव सब मिल ३४ अस्वाध्याय अवश्य टालनी चाहिये।

सवैया—तारोतुटे, रातीदिश, अकालमें गाजविज्ञ, कडक आकाश तथा भूमि कम्प भारी है बालचन्द्र यक्षचेन्ह आकाश अग्निकाय काली धोली धूमर ओर रजघात न्यारी है हाड मास लोहीराद ठरडे मसान जले, चन्द्र सूर्य ग्रहन और राजमृत्यु टालीये, पाचेन्द्रिका कलेवर राजयुद्ध सर्व मील चौस बोल टाल कर ज्ञानी आज्ञा पाली है आसाढ, भाद्रवो आसोज, कातो, चैती पुनम जाण, इनहीज पाचो मासकी पडिवा पाच व्याख्यान पडिया पाच व्याख्यान श्याम शुभे नही भणीये। आदो रात दे फार सर्व मीली चोतीस थुणिये चोतीस अस्वाध्याय टाल्ये सूत्र भणसे सोय, लालचन्द इणपर कहे जहा विघ्न न व्यापे कोय ॥ १ ॥ इति स्वाध्याय।

(११) ध्यान-ध्यानके च्यार भेद है (१) आर्त्तध्यान रौद्रध्यान, धर्मध्यान शुक्लध्यान जिस्मे आर्त्तध्यानके च्यार पाया है अच्छी मनोज्ञ वस्तुकि अभिलाषा करे सराब अमनोज्ञ वस्तु का वियोग चिंतवे रोगादि अनिष्ट पदार्थोका वियोग चिंतवे परभवमे सुखोका निदान करे। अब आर्त्तध्यानके च्यार लक्षण

पीकर चिंता शोकका करना आशुपातका करना, आमन्द शब्द करना रोना, छाती मस्तक पीटना विलापातका करना

रौद्रध्यानके च्यार पाये जीवहिंस्या कर खुशीमनाना जूठ बोल खुशीमनाना चौरी कर खुशीमनाना, दुसरोंकों कारागृहमें डलाय हर्ष मानना यह रौद्रध्यानके च्यार लक्षण है स्वल्प अपराधका बहुत गुस्सा द्वेष रखना ज्यादा अपराधका अत्यन्त द्वेष रखना अज्ञानतासे द्वेष रखना, जाव जीवतक द्वेष रखना इन प्ररिणामवालोंका रौद्रध्यान कहते है।

धर्मध्यानके च्यार पाये वीतरागकि आज्ञाका चिंतवन करना, कर्म आनेके स्थानोंको विचारना, कर्मोंके शुभाशुभ विपाकका विचार करना लोकका संस्थान चिंतवन करना धर्मध्यान के च्यार लक्षण इस मुजब है आज्ञारूची याने वीतरागके आज्ञाका पालन करनेकी रूची, नि सर्गरूची याने जातिस्मरणादिज्ञान से धर्मध्यानकि रूची होना, उपदेशरूची याने गुरवादिके उपदेश श्रवण करनेकि रूची हो सूत्ररुची-सूत्रसिद्धान्त श्रवण कर मनन करनेकी रूची यह धर्मध्यानके च्यार लक्षण है। धर्मध्यानके च्यार अवलम्बन है सूत्रोंकि वाचना, पृच्छना परावर्तना और धर्मकथा कहना धर्मध्यानके च्यार अनुपेक्षा है संसारको अनित्य समझना ससारमे कीसी सरणा नही है सुखदुःख अपने आप ही को भोगवना पडेगा, यह जीव एकेला आया है और अकेला ही जावेगा एकत्वपणा चितवे हे चैतन्य! तु इस ससारमें एकेक जीवोंसे कीतनी कीतनीवार सबन्ध कीया है इस सबन्धी योंमें तेरा कोन है, तु कीसका है कीसके लिये तुं ममत्वभाव करता है आखीर सब सबन्धीयोंओ छोडके एकलेको ही जाना पडेगा।

शुक्लध्यानके च्यार पाया है एक ही द्रव्यमें भिन्न भिन्न गुणपर्याय अथवा उपनेका विघनेका ध्रुवेका आदि भावका विचार करना, बहुत द्रव्यमि एक भावका चितवना जैसे षट्द्रव्यमे अगुरुलघुपर्याय स्वाधर्मिताका चितवना अचलावस्थामें तीनों योगोंका निरूपणा चितवना, चौदवा गुणस्थानमें सूक्ष्मक्रियासे निवृतन होनेका चितवन करना

शुक्लध्यानके च्यार लक्षण देवादिके उपसर्गसे चलायमान न होवे, सूक्ष्मभाव श्रवण कर ग्लानी न लावे, शरीरसे आत्मा अलग और आत्मासे शरीर अलग चितवे शरीरको अनित्य समझ पुद्गल जो पर वस्तु जान उनका त्याग करे।

शुक्लध्यानका च्यार अवलम्बन क्षमा करे, निर्लोभता रखे निष्कपटी हो, मदरहित हो

शुक्लध्यानके च्यार अनुपेक्षा यह मेरा जीव अनंतवार संसारमें परिभ्रमन कीया है इन आरापार संसारमे यह पौद गलीक वस्तु सर्व अनित्य है, शुभ पुद्गल अशुभपणे और अशुभ पुद्गल शुभपणे प्रणमते है इसी वास्ते पुद्गलोंसे प्रेम नही रखना एसा विचार करे। समारमें परिभ्रमन करनेका मूल कारण शुभाशुभ कर्म है कर्मोका मूल कारण च्यार हेतु है उनोंका त्याग कर स्वसत्तामे रमणता करना एसा विचार करे उसे शुक्ल ध्यान कहते है इति ध्यान।

(१२) विउस्सगतप–त्याग करना जिस्का दो भेद है (१) द्रव्य त्याग (२) भावत्याग–जिस्मे द्रव्यत्यागके च्यार भेद है शरीरका त्याग करना उपाधिका त्याग करना गच्छादि सघका त्याग करना (याने एकान्तमें ध्यान करे) भातपाणीका त्याग करना और भावत्यागके तीन भेद है कषाय–क्रोधादिका त्याग

करना कम ज्ञानावर्णियादिका त्याग करना, ममारा-नरकादि गतिका त्याग करना इति त्याग ॥ इति निर्जरातत्व ।

(८) बन्धतत्व-जीवरूपी जमीन, कर्मरूपी पत्थर राग द्वेषरूपी चुनासे मकान बनाना इसी माफीक जीवोंके शुभाशुम अध्यवसायसे कम पुद्गल एकत्र कर आत्माके प्रदेशोंपर बन्ध होना उसे बन्धतत्व कहते है

(१) प्रकृतिबन्ध-१४८ प्रकृतियोंका बन्धना
(२) स्थितिबन्ध-१४८ प्रकृतियोंकी स्थितिका बन्धना
(३) अनुभागबन्ध-कर्मप्रकृति बन्धते समये रस पडना
(४) प्रदेशबन्ध-प्रदेशोंका एकत्र हो आत्मप्रदेशपर बन्ध होना

इसपर लड्डूका दृष्टान्त जेसे लड्डू नुकी दानेका बनता है यह प्रकृति है यह लड्डू कीतने काल रहेगा यह स्थिति है यह लड्डू कया दुगुणी सकर तीगुणी सकर चोगुणी सकरका है यह रस विपाक है यह लड्डू कीतने प्रदेशोंसे बना है इत्यादि

केवल प्रकृति और प्रदेश बन्ध योगोंसे होते है और स्थिति तथा अनुभागबन्ध कषायसे होते ह कर्मबन्ध होनेमे मौख्य हेतु च्यार है मिथ्यात्व अव्रत कषाय योग जिसमें मिथ्यात्व पांच प्रकारके है अभिग्रह मिथ्यात्व अनाभिग्रह मिथ्यात्व, ससयमिथ्यात्व विप्रीत मिथ्यात्व अभिनिवेस मिथ्यात्व।

अव्रत-पाच इन्द्रियकि पाच अव्रत, छे कायाकि अव्रत छे, बारहवीमनकि अव्रत एवं १२ अव्रत।

कषाय पाचवीस=सोलह कषाय नौ नो कषाय एवं २५

योग पंदरा च्यार मनका, च्यार वचनका, सात कायाका

एव ५७ हेतु है इनोंसे कर्मबन्ध होते हैं यह सामान्य है अब विशेष प्रकारसे कर्मबन्धका हेतु अलग अलग कहते है।

ज्ञानावर्णिय कर्मबन्धके छे कारण है ज्ञानका प्रतनिक (वैरी) पणा करना, अथवा ज्ञानी पुरुषोंसे प्रतनिकपणा करना, ज्ञान तथा ज्ञिनोंके पास ज्ञान सुना हो पढा हो उनोंका नामको बदला क दुसराका नाम बतलाना। ज्ञान पढते हुवेको अतराय करना। ज्ञान या ज्ञानी पुरुषोंकि आशातना करना, पुस्तक पाना पाटी आदिकी आशातना करना। ज्ञान तथा ज्ञानी पुरुषोंके साथ द्वेप भाव रखना, ज्ञान पढते समय या ज्ञानी पुरुषोंपर विषमवाद तथा पढनेका अभाव करना इन छे कारणों से ज्ञानावर्णिय कर्म बन्धता है।

दर्शनावर्णीय कर्मबन्ध के छे कारण है जो कि उपर ज्ञानावर्णिय कर्मबन्ध के छे कारण बतलाया है उसी माफीक समझना

वेदनिय कर्मबन्ध के कारण इस मुजब है साता वेदनिय असाता वेदनिय कर्म जिस्मे साता वेदनिय कर्मबन्ध के छे कारण है सर्व प्राणभूत जीव सत्वको अनुकम्पा करे दु ख न दे शोक न करावे झुरापो न करावे, परताप न करावे उद्विग्न न करावे अर्थात् सर्व जीवों को साता देवे इन कारणों से साता वेदनियकर्म बन्धता है और सर्व प्राण भूतजीवसत्वको दु ख देवे तकलीफ दे शोक करावे झूरापो करावे परतापन करावे उद्विग्न करावे अर्थात् पर जीवोंको दु ख उत्पन्न कराने से असाता वेदनियकर्म बन्धता है।

मोहनिय कर्मबन्ध के छे कारण है तीव्र क्रोध मान माया लोभ राग द्वेप दर्शन मोहनिय चारित्र मोहनिय तथा दर्शन मोहनिका बन्ध कारण जिन पूजा में विघ्न करना देव द्रव्य भक्षण करना अरिहंतो के धर्मका अवगुण वाद बोलना इत्यादि कारणोंसे मोहनिय कर्मका बन्ध होता है।

आयुष्य कर्मबन्ध होनेका कारण-नरकायुष्य बन्धनेका च्यार कारण है महा आरंभ महा परिग्रह पांचेन्द्रियका घातो मांस भक्षण करना इन च्यार कारणोंसे नरकायुष्य बन्धता है। माया करे गुढ माया करे कुडा तोल माप करे असत्य लेख लिखना इन च्यार कारणोंसे जीव तीर्यंचका आयुष्य बन्धता है। प्रकृतिका भद्रीक हो विनयवान हो दयाका परिणाम है दुसरेकी संपत्ती देख इर्षा न करे इन च्यार कारणोंसे मनुष्यका आयुष्य बन्धता है। सराग संयम संयमासंयम अकाम निर्जरा बालतप इन च्यार कारणोंसे देवतावोंका आयुष्य बन्धता है।

नाम कर्मबन्ध के कारण-भावका सरल, भाषाका सरल कायाका सरल और अविषमवाद योग इन च्यार कारणोंसे शुभ नाम कर्मका बन्ध होता है तथा भावका असरल भाषाका असरल, कायाका असरल विषमवाद योग इन च्यारों कारणोंसे अशुभ नाम कर्मबन्ध होता है इति

गौत्र कर्मबन्ध के कारण जातिका मद करे कुलका मद करे बलका मद करे रूपका मद करे तपका मद करे लाभका मद करे सूत्रका मद करे ऐश्वर्यका मद करे इन आठ मदका त्याग करनेसे उच्च गौत्र कर्मका बन्ध होते है इनोसे विप्रीत आठ मद करनेसे निच गोत्र कर्मका बन्ध होते है।

अंतराय कर्मबन्धके पांच कारण है दान करते हुवेको अंतराय करना कीसी के लाभ होते हो उनो में अंतराय करना भोग मे अंतराय करना उपभोग मे अंतराय करना वीर्य याने कोइ पुरुषार्थ करता हो उनोंके अन्दर अंतराय करना इन पांचो कारणोंसे अंतराय कर्मबन्ध होते है।

(९) मोक्षतत्त्व-जीव रूपी सुवर्ण कर्म रूपी मेल ज्ञान दर्शन चारित्र रूपी अग्निसे सोधके निर्मल करे उसे मोक्ष तत्त्व कहते है जीव के आत्म प्रदेशोंपर कर्मदल अनादि काल से लगे हुवे है

उनोंको अनेक प्रकारकी तपश्चर्या कर सर्वथा कर्मोका नाश कर जीवको निर्मल बना अक्षयपद को प्राप्त करना उसे मोक्ष तत्त्व कहते है जिस्के सामान्य चार भेद ज्ञान, दर्शन, चारित्र वीर्य विशेष नौ भेद है

(१) सत्पद परूपना, सिद्ध पद सदाकाल शास्वता है

(२) द्रव्य प्रमाण-सिद्धोंके जीव अनंता है।

(३) क्षेत्र प्रमाण-सिद्धोंके जीव सिद्ध शीलाके उपर पैंतालीस लक्ष योजन के विस्तारवाला एक योजनके चौवीसवा भाग में सिद्ध भगवान विराजते है।

(४) स्पर्शना-एक सिद्ध अनेक सिद्धोंको स्पर्श कर रहे है अनेक सिद्ध अनेक सिद्धोंको स्पर्श कर रहे है।

(५) काल प्रमाण-एक सिद्धोंकि अपेक्षा आदि है परन्तु अन्त नही है और बहुत सिद्धोंकि अपेक्षा आदि भी नही और अन्त भी नही है।

(६) अन्तर सिद्धोंके परस्पर आंतरा नही है

(७) भाग-सिद्धोंके जीव अनंता है वह अभव्य जीवोंसे अनंत गुणा और सर्व जीवोंके अनंतमे भाग है।

(८) भाव-सिद्धोंके जीव क्षायक और परिणामीक भावमे है।

(९) अल्पाबहुत्व—

(१) सब स्तोक चोथी नरकसे निकला सिद्ध हुवे है

(२) तीजी नरकसे निकले सिद्ध हुवे सख्यात गुणे

(३) दुजी नरकसे निकले सिद्ध हुवे सख्यात गुणा

(४) वनास्पतिसे " " "

(५) पृथ्वी कायसे " " "

(६) अपकायसे निकले सिद्ध हुये मरयात गुणे
(७) भुवनपति देवीसे ” ” '
(८) भुवनपति देवसे ” ' '
(९) व्यंतर देवीसे ” ” '
(१०) व्यतर देवसे ” ' ”
(११) ज्योतीषी देवीसे ” '
(१२) ज्योतीषी देवसे ' ' '
(१३) मनुष्यणीसे ” ” '
(१४) मनुष्यसे ' ” '
(१५) पहले नरकसे ' ” ”
(१६) तीर्यचणीसे ” ” ”
(१७) तीर्यचसे ' ” '
(१८) अनुत्तर वैमान दे० ” ” ”
(१९) नवग्रैवक देवसे ” ” ”
(२०) बारहवा देवलोक दे० ” ” ”
(२१) इग्यारवा देवलोकसे ' '
(२२) दशवा देवलोकसे ” ” ”
(२३) नौवा देवलोकसे ” ' '
(२४) आठवा देवलोकसे” ' '
(२५) सातवा देवलोकसे ' ” ”
(२६) छट्ठा देवलोकसे ” ” ”
(२७) पाचवा देवलोकसे ” ” ”
(२८) चोथा देवलोकसे ” ” ”
(२९) तीजा देवलोकसे ” ' ”
(३०) दुजा देवलोककी देवी ” '
(३१) दुजा देवलोकके देव ” '

(३२) पहला देवलोककी देवी ,, ,,
(३३) पहला देवलोकके देवसे ,, ,,

नोट—नरकादिसे निकल मनुष्यका भव कर मोक्ष जाने कि अपेक्षा है।

इति मोक्ष तत्व ॥ इति नव तत्व सपूर्ण

सेवभते सेवभते तमेवसचम्

थोकडा नम्बर २

(श्री पन्नवणादि सूत्रोंसे क्रियाधिकार)

(१) नामद्वार
(२) अर्थद्वार
(३) सक्रियाद्वार
(४) क्रिया कोनसे करे
(५) क्रियाकरता कीतने कर्म बन्धे
(६) कर्म बान्धतो क्रिया
(७) एक जीवकों कीतनी०
(८) काइयादि क्रिया
(९) अजीजीया क्रिया
(१०) कीती क्रिया करे
(११) आरंभीयादि क्रिया
(१२) क्रियाका भागा
(१३) प्राणातिपादि
(१४) क्रियाका लगना
(१५) अल्पाबहुत्व
(१६) शरीरोत्पन्न
(१७) पांचक्रिया लागे
(१८) नौ जीवोंको क्रिया
(१९) मृगादि क्रिया
(२०) अग्नि
(२१) जाल
(२२) किरियाणे
(२३) भेड नेचे
(२४) ऋपीश्वर
(२५) अन्त क्रिया
(२६) समुद्घात
(२७) नौ क्रिया
(२८) तेरहा क्रिया
(२९) पचवीस क्रिया

इन थोकडेक सब १६४७२ भागा है।

(१) नामद्वार क्रिया पाच प्रकारकि है यथा—काइया क्रिया अधिकरणीया क्रिया पावसिया क्रिया, परितापनिया क्रिया, पाणाइवाइया क्रिया।

(२) अथद्वार—काइया क्रिया-अव्रतसे लागे तथा अशुभ योगोंस लागे। अधिगरणीया क्रिया, नयाशस्त्र करानेसे तथा पुराणा शस्त्र तैयार करानेसे। पावसिया क्रिया-स्वात्मापर द्वेष करना परमात्मापर द्वेष करना, उभयात्मापर द्वेष करनासे, परितापनिया क्रिया स्वात्माको प्रताप उत्पन्न करना परआत्माको प्रताप करना, उभयात्माको प्रताप करना, पाणाइवाइया क्रिया-स्वात्माकी घात करना परात्माकी घात करना, उभयात्माकी घात करना। उसे प्राणातिपात कहते है

(३) सक्रियद्वार—जीव सक्रिय है या अक्रिय १ जीव सक्रिय अक्रिय दोनों प्रकारका है कारण जीव दो प्रकारके है सिद्धोंके जीव, संसारी जीव जिस्में सिद्धोंके जीवतो अक्रिय है और ससारी जीवोंके दो भेद है-सयोगि जीव अयोगिजीव जिस्में अयोगि चौदवे गुणस्थानवाले वह अक्रिय है शेष जीव सयोगि वह सक्रिय है एव नरकादि २४ दंडक सयोगि होनेसे सक्रिय है मनुष्य समुच्चय जीवकी माफीक अयोगि है वह अक्रिय हैं और सयोगि है वह सक्रिय है इति।

(४) क्रिया कीनसे करते है। प्राणातिपातकी क्रिया छे कायके जीवोंसे करते है मृषावाद की क्रिया सब द्रव्यसे करते है। अदत्तादानकि क्रिया लेने लायक ग्रहन करने योग्य द्रव्योंसे करते है। मैथुनकि क्रिया-भोग उपभोगमें आने योग्य द्रव्यसे

अथवा रूप और रूपके अनुकुल द्रव्योंमे करते है। परिग्रहकि क्रिया सर्व द्रव्यसे करते है पर क्रोध, मान, माय, लोभ, राग द्वेष, कलह अभ्याख्यान, पैशुन्य परपरीवाद रति अरति माया मृषावाद और मिथ्यादर्शन इन सबकी क्रिया सर्व द्रव्यसे होती है अर्थात् प्राणातीपात, अदत्तादान, मैथुन इन तीन पापकि क्रिया देश द्रव्यी है शेष पदरा पापकी क्रिया सर्व द्रव्यी है। समुचय जीवापेक्षा अठारा पापकि क्रिया बतलाइ है इसी माफीक नरकादि चौवीस दंडक भी समझ लेना इसी माफीक समुचय जीवों और नरकादि चौवीस दंडकके जीवों (बहुवचन) का सूत्र भी समझना पर ५० बोलोंकों अठारा गुने करनेसे ९०० तथा १२५ पहले पाच क्रियाय मीलाके सर्व बहातर १०२५ भाग हुवे

जीव प्राणातिपातकि क्रिया करता हुवा स्यात् सात कर्म बान्धे स्यात् आठ कर्म बन्धे एव नरकादि २४ दंडक। बहुत जीवोंकि अपेक्षा सात कर्म बान्धनेवाला भी घणा, आठ कर्म बन्धनेवाले भी घणा। बहुतसे नारकीके जीवों प्राणातिपातकि क्रिया करते हुवे सात कर्म तो सदैव बाधते है सात कर्म बान्धने वाले बहुत आठ कर्म बाधनेवाले एक, सात कर्म बाधनेवाले बहुत और आठ कर्म बान्धनेवाले भी बहुत है इसी माफीक पचेन्द्रिय वर्जके १९ दंडकमें तीन तीन भाग होनसे ५७ भागे हुवें, पचेन्द्रिके पाच दंडकमे सात कर्म बन्धनेवाले बहुत और आठ कर्म बान्धनेवाले भी बहुत है। इसी माफीक मृषावादादि यावत् मिथ्याशल्य अठारे पापकि क्रिया करते हुवे समुचय जीव और चौवीस दंडकके पूर्ववत् सात कर्म (आयुष्य वर्जके) तथा आठ कर्मोंका बन्ध होते है जिस्के भागे प्रत्येक पापके ५७ सतावन होते है सतावनकों आठ गुणे करनेसे १०२६ भागे हुवे।

जीव ज्ञानावर्णिय कर्म बान्धे तो कितनी क्रिया लागे ? स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पांच क्रिया लागे कारण दुसरोंके लिये अशुभयोग होनेसे तीन क्रिया लगती है दुसरोंको तकलीफ होनेसे च्यार क्रिया लगती है अगर जीवोंकि घात होतो पांचो क्रिया लगती है जब जीव ज्ञानावर्णिय कर्म बान्ध समय पुद्गलोंको ग्रहन करते है उसी पुद्गल ग्रहन समय जीवोंको तकलीफ होती है जीससे क्रिया लगती है। इसी माफीक नरकादि चौवीस दंडक एक वचनापेक्षा स्यात् ३-४-५ क्रिया लाग एव बहुवचनापक्षा परन्तु यहां स्यात् नही कहना कारण जीव बहुत है इसी वास्ते बहुतसी तीन क्रिया बहुतसी च्यार क्रिया बहुतसी पांच क्रिया समुचय जीव और चौवीस दंडक एक वचन। और समुचय जीव और चौवीस दंडक बहुवचन ५० सूत्र हुए जैसे ज्ञानावर्णिय कर्मका पचास सूत्र कहा इसी माफीक दर्शनावर्णिय, वेदनिय मोहनिय आयुष्य नाम, गौत्र और अंतराय एव आठों कर्मो के पचास पचास सूत्र होनेसे ४०० भागा होते है।

एक जीवने एक जीवकि कीतनी क्रिया लागे ? समुचय एक जीवने एक जीवकी स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पांच क्रिया लागे स्यात् अक्रिय कारण समुचय जीवमें सिद्ध भगवान्भी सामल है। एक घणा जीवोंकि स्यात् ३-४-५-० एक घणा जीवोंकी एक जीवकी स्यात् ३-४-५-० एक घणा जीवोंने घणा जीवोंकी परन्तु घणी तीन क्रिया घणी च्यार क्रिया घणी पांच क्रिया घणी अक्रिया एक एक जीवकों नारकीके जीवकी कीतनी क्रिया लागे ? स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् अक्रिया कारण नारकी सोपक्रमि होनेसे मारा हुवा नही मरते इस वास्ते पांचवी क्रिया नही लागे एक एक जीवने घणे

नारकीकी स्यात् ३-४-०। एव घणा जीवोंने एक नारकिकी स्यात् ३-४-० एव घणा जीवोंको घणी नारकी की तीन क्रियाभी घणी च्यार क्रियाभी घणी अक्रियाभी है इसी माफीक १३ दंडक देवतोंकाभी समझना तथा पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रि तीर्यंचपांचेन्द्रिय और मनुष्य यह दश दंडक औदारीकके समुचय जीवकी माफीक ३-४-५-० समझना। समुचय जीवसे समुचयजीव और चोवीस दंडकसे १०० भागा हुवे। एक नारकीने एक जीवकी कीतनी क्रिया लागे ? स्यात् ३-४-५ क्रिया लागे एक नारकीने घणा जीवोंकि कीतनी क्रिया ? स्यात् ३-४-५ क्रिया लागे, घणी नारकीने एक जीवकी कीतनी क्रिया ? स्यात् ३-४-५ क्रिया लागे, घणी नारकीने घणा जीवोंकी कीतनी क्रिया ? घणी ३-४-५ क्रिया लागे एक नारकीने वैक्रिय शरीवाले १४ दंडकके एकेक जीवोंकी स्यात ३-४ क्रिया लागे एव एक नारकीने १४ दंडकके घणा जीवोंकी स्यात् ३-४ क्रिया एव घणा नारकीने १४ दंडकोंके एकेक जीवोंकी स्यात् ३-४ क्रिया एव घणा नारकीने १४ दंडकोंके घणा जीवोंकी घणी ३-४ क्रिया लागे इसी माफीक दश दंडक औदारीकके परन्तु यह स्यात् ३-४-५ क्रिया कहना कारण वैक्रिय शरीर मारा हुवा नही मरते है और औदारीक शरीर मारा हुवा मरभी जाते है। इति नरकके १०० भागा हुवा इसी माफीक शेष २३ दंडकके २३०० भागा समझना परन्तु यह ध्यानमें रखना चाहिये कि मनुष्यका दंडक समुचय जीवकी माफीक कहना कारण मनुष्यमें चौदवे गुणस्थान वालोंको बिलकुल क्रिया है ही नही इस वास्ते समुचय जीवकी माफीक अक्रिय भी कहना एव समुचयजीवके १०० और चौवीस दंडकके २४०० सर्व मील २५०० भांगे हुए।

क्रिया पांच प्रकारकी है काइया अधिगरणीया पावसीया

परतापनिया पाणाइयाइया जीव काइया क्रिया करेसा क्या
धिगरणी या भी करे ? यत्रसे देखे समुचय जीव और चौ

क्रियाकेनाम	काइया	अधिगरणी	पावसीया	परताप निया	पाण याइ
काइयाक्रिया	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भज
अधिगरणिया	निगमा	नियमा	नियमा	भजना	भज
पावसीया	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भज
परतावनिया	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	भज
पाणाइवाइया	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	नि

दडकमें पाच पाच क्रिया होनेसे १२५ भागा हुवा पवेक
यत्र मुजब नियमा भजना लगानेसे ६२५ भागा होते है। य
समुचय सूत्र हुवा इसी माफीक जीम समय काइयाक्रिया
उन समय अधिगरणीया क्रिया करे इसकाभी यत्रकी मा
६२५ भागा कहना अधिकता यह समय ? कि है इसी मा
जीस देशमें काइया क्रिया करे उन देशमें अधिगरणीया क्रि
करे ? यत्र माफीक ६२५ भागा कहना पव प्रदेशकाभी ६२५
जीस प्रदेशमे काइया क्रिया करे उन प्रदेशमें अधिगर
क्रिया करे समुचयके ६२५ समयके ६२५ देश (विभाग
६२५ प्रदेशके ६२५ सर्व मीली २५०० भागा होते है इसी
फीक अजीजीया ' क्रियाकाभी उपरवत् २५०० भागा क

क्रिया पाच प्रकारकि है काइयाक्रिया अधिगरणीया पाव सिया परतापनिया पाणाइवाइक्रिया समुचयजीव और चौवीस दंडकमे पाच पाच क्रिया पावे एवं १२५ भागा हुवा (१) जीव काइया अधिकरणीया पावसिया यह तीन क्रिया करे यह पर तापनीया पाणाइवाइयाभी करे (२) तीन क्रिया करे वह चोथी क्रिया करे पाचमी नही करे (३) तीन क्रिया करे वह चोथी पाचवी नभी करे (४) तीन क्रिया न करे वह चोथी पाचवी क्रियाभी न करे इसी माफीक च्यार भागा स्पर्श करनेकाभी समझ लेना यह समुचय जीवोंमें आठ भागा कहा इसी माफीक मनुष्यमेंभी समजना शेष २३ दंडकमे चोथो आठवों भागो छोडके छे छे भागा समझना कुल भागा १९८ हुवा।

क्रिया पाच प्रकारकी है आरंभिया, परिग्रहिया, मायाव त्तिया मिथ्यादर्शन वत्तिया, अपचखानिया समुचजीव और चोवीसदंडकमे पाच पाच क्रिया पानेसे १२५ भागा होते है।

समुचयजीव आरंभियाक्रिया करे वह परिग्रहीयाक्रिया करते है या नही करते है देखो यत्रमे

क्रियाका नाम	आरंभा०	परिग्रह	मायावतिन	मिथ्यादर्शन	अपचखाणि
आरंभिया	नियमा	भजना	नियमा	भजना	भजना
परिग्रहीया	नियमा	नियमा	भजना	भजना	भजना
मायाव त्तिया	भजना	भजना	नियमा	भजना	भजना
मिथ्या दर्शन	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा
अपचखानि	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	नियमा

एव २५ भागे हुवे। समुचय जीव आर चौवीस दंडकपर पचवीस गुण करनेसे ६२५ भागे हुवे जीस समयके ६२५ जीस देशके के ६२५ जीस प्रदेशके ६२५ एव सर्व २५०० एव बहुवच नापेक्षा २५०० मीलाके सब ५००० भाग हुवे।

जीव प्राणातीपातका विरमण (त्याग) करे वह छे जीवनी कायासे करे मृषावाद् का त्याग सब द्रव्यसे करे अदत्तादानका त्याग ग्रहनधरण द्रव्योंसे करे मैथुनका त्याग रूप और रूप के अनुकुल द्रव्यांसे करे परिग्रह क त्याग सर्व द्रव्यसे करे क्रोध, मान माया लोभ, राग, द्वेष, क्लह अभ्याख्यान पैशुन्य परपरी वाद रति अरति मायामृषावाद और मिथ्यादर्शन शल्यका त्याग सब द्रव्य से करे एव मनुष्य तथा २३ दडक के जीव सतरा पापों का त्याग नही कर सक मात्र पाचेन्द्रिय क १६ दडक के जीव मिथ्यादर्शन शल्यका त्याग कर सके है शेष आठ दडक नही करे एव समुचय जीव और चौवीस दडक को अठारा गुणे करनेसे ४५० भाग होते हैं।

समुचय जीव प्राणातिपात का त्याग कीया हुवा कीतने कर्म बान्धे ? सात कर्म बान्धे आठ कर्म बान्धे छे कर्म बान्धे एक कर्म बान्धे तथा अबन्धकभी होता है। बहुत जीवोंकि अपेक्षा सात, आठ छे एक कर्म बान्धनेवाले तथा अबन्धकभी होते है। इसी माफीक मनुष्यमे भी समजना शेष तेवीस दडकमें प्राणा तिपातका सर्वथा त्याग नही होते है ॥

समुचय जीवोंमें सात कर्म बान्धनेवाले तथा एक कर्म बा न्धनेवाले सदैव सास्वता मीलते है और आठ, छे और अबा न्धक असास्वता होते है जिनके भाग २७ होते है।

संख्या	सात कर्म के सास्वता	आठ कर्म	छे कर्म	अबन्धक
१	३	०	०	०
२	३	१	०	०
३	३	३	०	०
४	३	०	१	०
५	३	०	३	०
६	३	०	०	१
७	३	०	०	३
८	३	१	१	०
९	३	१	३	०
१०	३	३	१	०
११	३	३	३	०
१२	३	१	०	१
१३	३	१	०	३
१४	३	३	०	१
१५	३	३	०	३
१६	३	०	१	१
१७	३	०	१	३
१८	३	०	३	१

जहापर तीनका अंक है वह बहु वचन और एक का अंक है उसे एक वचन समझे जहा (०) है वह कुच्छभी नही।

समुच्चय जीवकी माफीक मनुष्यमेभी २७ भाग समझना एवं ५४ एक प्राणातीपातके त्याग के ५४ भागे हुवे इसी माफीक अठारा पापों के भी ५४-५४ भागे गीननेसे ९७२ भागे हुवे शेष तेवीस दंडकमे अठारा पापका विरमण नही होते हैं परन्तु इतना विशेष है की मिथ्यादर्शन शल्यका विरमण नारकी देवता और तीर्यच पाचेन्द्रिय एवं १५ दंडक कर सकते है वह जीव सात आठ कर्म बान्धते है बहुत जीवों कि अपेक्षा सात कर्म बान्धनेवाले सदैव सास्वत है आठ कर्म बान्धनेवाले असास्वते है जिस्के भागे तीन होते हैं (१) सात कर्म बान्धनेवाले सास्वते (२) सात कर्म बान्धनेवाले बहुत और आठ कर्म बान्धनेवाले एक (३) सात कर्म बान्धनेवाले घणे और आठ कर्म बान्धनेवालेभी बहुत है. एवं पंदरा दंडक के ४५ भागे होते है सर्व मीलके १०१७ भागे होते है।

समुच्चय जीव प्राणातीपातके त्याग करनेवालों के क्या आरंभकि क्रिया

१९	३	०	३	३
२०	३	१	१	१
२१	३	१	१	३
२२	३	१	३	१
२३	३	१	३	३
२४	३	३	१	१
२५	३	३	१	३
२६	३	३	३	१
२७	३	३	३	३

लागे ? स्यात् लागे (छट गुणस्थान) स्यात् न भी लागे अप्रमातादि गुण स्थान) परिग्रह मिथ्यादर्शन और अप्रत्याख्यानकि क्रिया नही लागे तथा मायावत्तिया क्रिया स्यात् लागे (दशव गुणस्थान तक) स्यात् न भी लाग (वीतरागी गुणस्थान) एवं मृषावादादि यावत् मिथ्यादर्शन शल्यतक अठारा पाप के त्याग किये हुवे को स मझना समुचय जीवकी माफीक मनुष्य को भी समजना शेष २३ दंडक के जीव १८ पापों के त्याग नही कर सक्ते है इतना विशेष है कि मिथ्यादर्शन के त्याग नारकी देवता तीर्यंच पाचेन्द्रिय एवं १५ दंडक के जीव कर सकते है उनों को मिथ्यात्वकी क्रिया नही लगती है। समुचय जीव चौवीस दंडक को अठारा पापसे गुणा करनेसे ४५० भाग हुवे।

अल्पा बहुत्व—सर्वस्तोक मिथ्यात्वकि क्रियावाले जीव है अप्रत्याख्यानकि क्रियावाले जीव विशेषाधिक है परिग्रहकि क्रियावाले जीव विशेषाधिक है आरंभकि क्रियावाले जीव विशेषाधिक है मायावत्तिया क्रियावाले जीवविशेषाधिक है।

समुचय जीव पाच शरीर, पाच इन्द्रिय तीनयोग उत्पन्न करते हुवे को कितनी क्रिया लगती है ? स्यात् तीन स्यात् च्यार स्यात् पाच क्रिया लगती है इसीमाफीक दशदंडकके जीव औदारीक शरीर नरतादंडकके जीव वैक्रिय शरीर एवं मनुष्य आहारीक शरीर चौवीस दंडकके जीव तेजस कारमण स्पर्शेन्द्रिय और कायाका योग शोलह दंडकके जीव श्रोत्रेन्द्रिय और मन

योग सत्तरा दडकके जीव चक्षु इन्द्रिय, अठारा दडकके जीव घ्राणेन्द्रिय उन्नीस दडकके जीव रसेन्द्रिय, और वचनके योग उत्पन्न करते हुवेको स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पाच क्रिया लगती हैं।

समुचय एक जीवको एक औदारीक शरीर कि कीतनी क्रिया लागे? स्यात् तीन क्रिया स्यात् च्यार क्रिया स्यात् पाच क्रिया स्यात् अक्रिया, एवं एक जीवने घणा औदारीक शरीरकी घणा जीवोंको एक औदारीक शरीर की घणा जीवोंकों घणा औदारीक शरीरकी, घणी तीन क्रिया घणी च्यार क्रिया घणी पाच क्रिया घणी अक्रिया। एक नारकीके जीवको औदारीक शरीरकि स्यात् ३-४-५ क्रिया, एवं एक नारकीने घणा औदारीक शरीरकी घणा नारकीयोंकों एक औदारीक शरीरकी और घणा नारकीको घणा औदारीक शरीरकी घणी ३-४-५ क्रिया लागे एवं चौवीस दडक मीलाके १०० भागे हुवे इसी माफीक जीव और वैक्रिय शरीर परन्तु क्रिया ३-४ एवं आहारीक शरीर क्रिया ३-४ लागे कारण वैक्रिय आहारीक शरीरके उपक्रम लागे नही तेजस-कारमण शरीरके ३-४-५ क्रिया, एवेक शरीरसे समुचय जीव और चौवीस दडक पचवीसको च्यार गुणा करनेसे १०० सो भागे हुवे एवं पाच शरीरके ५०० सो भागे समझना।

एक मनुष्य मृगको मारते है उनाकि निष्पत् नौ जीवोंको पाच पाच क्रिया लगती हैं जेसे मृग मारनेवाले मनुष्यको, धनुष्य जो बास से बना ह उन बासके जीव अन्य गतिमें उत्पन्न हुवे है यह व्रत प्रत्याख्यान नही कीया हो तो उनोंके शरीरसे धनुष्य बना है वास्ते मृग मारनेमें वह धनुष्य भी सहायक होनेसे उन जीवोंको भी पाच क्रिया लगती है।

जीवा जो धनुष्यके अग्र भागमें सुतकी डोरी, भेसाका श्रृंग जो धनुष्यके अधोभागमें रखा जाता है पाणच चम ताण भालोडी फूदा इन उपकरणोंके जीव जीस गतिमें है उनों स बर्को पाच पाच क्रिया लगती है। काइ जीव मृग मारनकों बाण तैयार कीया कान तक खीचके बाण फेंकनेकि तैयारीमें था इतनेमें दुसरा मनुष्य आके उनका शिरच्छेद किया जीसके जरिये वह बाण हाथसे छुटा जीनसे मृग मर गया तो कोनसा जीवके पापसे कोन स्पर्श हुवा ? मृग मारनेक परिणामवालोंको मृगका पाप लगा और मनुष्य मारनेवालेके परिणामवालाकों मनुष्यका पाप लगा।

एक मनुष्य बाणसे पाक्षी मारनेका विचारमें था उन बाणसे पाक्षीकों मारा पाक्षी निचे गिरता हुवा उनके शरीरसे दुसरा जीव मर गया तो पाक्षी मारनेवाला मनुष्यकों पाक्षीकी पाच क्रिया और दुसरे जीवकि च्यार क्रिया लागे पाक्षीको दुसरा जीवकी पाचो क्रिया लागे।

अग्नि—कीसी दुष्टने अग्नि लगाइ और कीस सुज्ञने अग्नि बुजाइ जिस्मे अग्नि लगानेवालेकों महाश्रव महाकर्म महाक्रिया महावेदना है और अग्नि बुजानेवालेकों स्वल्पाश्रव स्वल्पकर्म स्वल्पक्रिया, स्वल्प वेदना है कारण अग्नि लगानेवालेका परिणाम दुष्ट और बुजानेवालेका परिणाम विशुद्ध था। अग्नि जलानेके इरादेसे काष्ट कचरा एकत्र किया तथा मृगमारनेकों बाण तैयार कीया मच्छी पकडनेको जाल तैयार करी वर्षादा जाननेको हाथ बाहार निकाला उन सबकों पाच पाच क्रिया लगति है कारण अपना परिणाम खराब होनेसे ३ क्रिया दुसरे जीवोंको तकलीफ होना ४ क्रिया इनोसे जीव मरनेकी भावना होनेसे पाचो क्रिया लगति है।

कीसी याचकने अन्न पाणी वस्त्रादिकी आवश्यका होनेसे उने तीव्र क्रिया लगति है और कीसी दातारने अपनि वस्तुकि ममत्व उतार उसे देदी तों उन याचक कों पतली क्रिया लगती है और दातारकी ममत्व उतारनेसे उन पदार्थकि क्रिया बन्ध हो गइ है।

कियाणा-कीसी मनुष्यने कियाणा वेचा कीसी मनुष्यने क्रियाणा खरीद किया, वेचनेवालेकों क्रिया हलकी हुइ, और लेनेवालेको भारी हुइ कारण वेचनेवालोंको तो संतोष हो गया अब लेनेवालोंको उनका सरक्षण तथा-तेजो मदीका विचार करना पडता है, माल वेचीयों तोके तोल दीनो रूपैया लीना नहीतो वेचनेवालोंकों दोनो क्रिया हलकी लेनेवालोंकों दोनो क्रिया भारी लगती है। मालतो तोलीयों नही और रूपैया ले लीना इनसे वेचनेवालाकों क्रिया भारी, खरीदनेवालोंकों रूपैया कि क्रिया हलकी हुइ। माल तोलके रूपैया ले लीना तो रूपैया लेनेवालोंकों रूपयाकी क्रिया भारी माल उठानेवालोंकों मालकी क्रिया भारी लगती है।

कीसी मनुष्यकी दुकानपरसे एक आदमि एक वस्तु ले गया उनकी शोधके लिये घरधणी तलास कर रहा उनोंको कीतनी क्रिया ? जो सम्यग्दृष्टि हो तो च्यार क्रिया मिथ्यादृष्टि हो तो पाचों क्रिया परन्तु क्रिया भारी लागे और तलास करनेपर वह वस्तु मील जावे तो फीर वह क्रिया हलकी हो जाति है।

ऋषि—कोइ मनुष्य अश्वगजादि कोइ जीवको मारेतो उन अश्वगजादिके पापसे स्पर्श करे अगर दुसरा कोइ जीव विचमें मरजावे तो उनके पापसे भी मारनेवाला जरूर स्पर्श करे। एव

ऋषिकों कोइ पापीष्ट मारे तो उन ऋषिके पापके साथ निश्चय अनत जीवोंके पापसे स्पर्श करे कारण ऋषि अनत जीवोंके प्रतिपालक है इसी माफीक एक ऋषिकों समाधि देना अनत जीवोंको समाधि दीनी कहीजे

हे भगवान् जीव अन्त क्रिया करे? जो जीव हलन चलनादि क्रिया करता है वह जीव अन्त क्रिया नही करे कारण तेरहवे गुणस्थान तक हलन चलनादि क्रिया है वहा तक अन्त क्रिया नही है चौदवे गुणस्थान योगनिरूद्ध होने है हलन चलन क्रिया बन्ध होती है तब अंत समय कि अन्त क्रिया होती है (पन्नवणा)

जीव वेदनि समुद्घात करते हुवेको स्यात् ३-४-५ क्रिया लगती है इसी माफीक कषाय समु० मरणान्तिक समु० वैक्रिय समु० आहारीक समु० तेजस समुद्घात करते हुवेको स्यात् ३-४-५ क्रिया लागे दंडक अपने अपने कहना। (पन्नवणा)

मुनिक्रिया—मुनि जहा मासकल्प तथा चतुर्मास रह हो फीर दुणो तिगुणोकाल व्यतीत करीयां विगर उसी नगरमें आव तो कालातिकात क्रिया लागे। वार वार उनी मकानमें उत्तरे तो क्रिया लागे। परतु कीसी शरीरादि कारण हो तो ज्यादा रहना या जलदी आना भी कल्पते है।

कीसी श्रद्धालु गृहस्थने अन्य योगि सन्यासी त्रीदडीयोंके लिये मकान बनाया है। जहातक वह उन मकानमें न उतरे हो वहातक साधुवोंकों उन मकानमे ठेरना नही कल्पे अगर उन मकानमें ठेरे तो अनाभि कान्त क्रिया लागे। अगर वह लोक भोगव भी लिया हो तो भी जैन मुनियोंकों उन मकानमें नही ठेरना कारण वह लोग दुगच्छा करे पीच्छा मकान धावावे लिपावे आदि पश्चात्कर्म लागे अगर वस्तीके अभाव दातार सुलभ हो तो वस्तीवासी मुनि उनोंकी इजाजतसे ठेर भी सक्ते है।

वज्रक्रिया—अगर कोइ गृहस्थ मुनियोंके वास्ते ही मकान कराया है कदाच मुनि उसमे न ठेरे तो गृहस्थ विचार करे कि अपने रहनेका मकान मुनिको देदो अपने दुसरा बन्धा लेंगे अगर एसा मकानमें मुनि ठेरे तो उने वज्र क्रिया लागे।

महावज्र क्रिया—कोइ श्रद्धालु गृहस्थ अन्य तीर्थीयोंके लिये मकान बन्धाया है जिस्में भी उनोंका नाम खोलके अलग अलग मकान बन्धाया हो उनमे तो साधुवोंको उत्तरना कल्पता ही नहीं है अगर उत्तरे तो महावज्र क्रिया लागे।

सावद्य क्रिया—बहुतसे साधुवोंके नामसे एक धर्मसालादिक मकान कराया है उनमें मुनि ठेरे ता सावद्य क्रिया लागे तथा एक साधुका नामसे मकान बनाये उनमें उतरे तो महा सावद्य क्रिया लागे। गृहस्थ अपने भोगवने के लिये मकान बनाया है परन्तु साधुवोंके ठेरनेके लिये उन मकानको लीपणसे लिपावे छान छयावे, छपरा करावे एसा मकानमे साधुवोंको ठेरना नही कल्पे।

अगर गृहस्थ अपने उपभोग के लिये मकान बनाया है वह निर्वद्य होनेमे मुनि उन मकानमें ठेरे तो उनोंको कीसी प्रकारकी क्रिया नही लगती है उने अल्प सावद्य क्रिया कहते है अल्प निषेध अर्थमें माना गया है वास्ते क्रिया नही लगती है (आचाराग सूत्र)

क्रिया तरहा प्रकारकी है अर्थादंड क्रिया अपने तथा अपने सबन्धीयों के लिये कार्य करनेमे क्रिया लगति है उसे अर्थादंड कहेते हैं अनर्थादंड याने बिगर कारण कर्मबन्ध स्थान सेवन करना। हिंस्यादंड क्रिया हिंस्या करनेसे अकस्मात् दुसरा काय करते बिचमे बिगर परिणामोंसे पाप हो जावे दृष्टि विपर्यास

हानेसे पाप लाग। मृषावाद बोलनेसे क्रिया लागे। चोरा कम कर नेसे क्रिया लाग। खराब अध्यवसायमे० मित्रद्रोहीपणा करनेसे। मानसे मायासे लोभसे, इर्यापथिकी क्रिया (सूत्रकृताग सूत्र)

है भगवान कोइ श्रावक सामायिक कर बेठा है उनको क्रिया क्या सपराय कि लगती है या इर्यावहि कि १ उन श्राव कको सपराय की क्रिया लगती है किन्तु इयापथिकी क्रिया नहा लाग! कारण सामायिकमें बेठे हुवे श्रावककी आत्मा अधिकरण है यहा अधिकरण दो प्रकारके होते है द्रव्याधिकरण हलशक टादि नोंतों सामायिकके समय श्रावक के पास है नहीं और दुसरा भावाधिकरण जो क्रोध, मान माया, लोभ यह आत्म प्रदेशोंमें रहा हुवा है इस वास्ते श्रावकको इर्यावहि क्रिया नही लाग किन्तु सपराय क्रिया लगती है।

बृहत्कल्पसूत्र उदेश १ अधिकरण नाम क्रोधका है

बृहत्कल्पसूत्र उदेश ३ अधिकरण नाम क्रोधका है

व्यवहारसूत्र उदेश ४ अधिकरण नाम क्रोधका है

निशिथसूत्र उदेश १३ वा अधिकरण नाम क्रोधका है

भगवतिसूत्र शतक १६उ०१ आहारीक शरीरवाले मुनियोंकी कायाको भी अधीकरण कहा है

कीतनेक अज्ञलोग कहते है कि श्रावकको खानपान आदिसे साता उपजानेसे शस्त्रको तीक्ष्ण करने जेसा पाप लगता है लेकीन यह उन लोगोंकी मूर्खता है कारण श्रावको को शास्त्रमे पात्र कहा है अम्बड श्रावक छठ छठ पारणा करता था वह एक दिन के पारणामें सो सो घर पारणा करता था (उत्पातिकसूत्र) पडिमाधारी श्रावक गौचरी कर भिक्षा लाते है (दशाश्रुत स्कन्ध)

अगर श्रावकको खान पान देने में पाप होतो भगवान ने पडिमाधारी श्रावकोंको भिक्षा लाना क्यों बतलाय। सब श्रावक पोखली श्रावक स्वामिवात्सल्य कर पौषद किया भगवतीसूत्र १२। १ इस शास्त्र प्रमाणसे श्रावकको स्वामीकी भाल्मे मामी ग्मीणा गया है इत्यादि।

पच्चीस क्रिया—काइया अधिकरणीया, पावसिया, परतावणिया पाणाइवाइया, आरंभिया परिग्गहीया, मायावत्तिया मिच्छादंसणवत्तिया, अपच्चक्खाणवत्तिया दिठ्ठिया, पुठ्ठिया पाडुच्चिया सामंतवणिया, साहत्थिया परहत्थिया, आणवणिया, वेदारणीया अणवकंखवत्तिया अणभोगवत्तिया, पोग क्रिया, पेज्ज क्रिया, दोस क्रिया, समुदाणी क्रिया, इरियावही क्रिया

अन्तापद-सूत्र-गमा-भांगा-बोल-यह सब पदार्थों है यहापर थोकडोंकी भांगाके नामसे ही लीखा गया है सर्व भांगा १८४७२ हुवे है।

सूत्रोंमें जगह जगह लिखा है कि श्रावकों को " अभिगय जीवाजीव यावत् किरिया अहीगरणीयादि ' अर्थात् श्रावकोंका प्रथम लक्षण यह है कि वह जीवाजीव पुन्य पापाश्रव संवर निर्जरा बन्ध मोक्ष किया काइयादि का जानपणा करे जब श्रावकों के लिये ही भगवान् का यह हुक्म है तो साधुवों के लिये तो कहना ही क्या इस भागमें नव तत्व और पच्चीस किया इतनी तो सुगम रीतीसे लिखी गई है की सामान्य बुद्धिवाला भी इनसे लाभ उठा सकता है इस वास्ते हरेक भाइयों को इस सब भांगों को आद्योपान्त पढके लाभ लेना चाहिये। इत्यलम्॥ शान्ति शान्ति शान्ति॥

सेवभंते सवभंते तमेव सच्चम्

इति शीघ्रबोध भाग २ जो समाप्तम्।

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ३ जो।

थोकडा नम्बर २०

सूत्र श्री अनुयोग द्वारादि अनेक प्रकरणोंमे

(बालावबोध द्वार पच्चीस)

(१) नयसात (२) निक्षेपा च्यार (३) द्रव्यगुण पर्याय (४) द्रव्य क्षेत्र काल भाव (५) द्रव्य भाव (६) कार्य कारण (७) निश्चय व्यवहार (८) उपादान निमत्त (९) प्रमाण च्यार (१०) सामान्य विशेष (११) गुणगुणी (१२) ज्ञय ज्ञान ज्ञानी (१३) उपनेवा, विघनेवा, ध्रुवेवा (१४) अध्येय आधार (१५) आविर्भाव तिरोभाव (१६) गौणता मौख्यता (१७) उत्सर्ग पवाद (१८) आत्मातीन (१९) ध्यान च्यार (२०) अनुयोग च्यार (२१) जागृनातीन (२२) व्याख्या नौ (२३) पक्ष आठ (२४) सप्तभगी (२५) निगोद स्वरूप। इतिद्वार॥

नय-निक्षेपों क विवेचनमें बडे बडे ग्रन्थ बनचुके है परन्तु उनी ग्रन्थों में विस्तारसे विवेचन होनेसे सामान्य बुद्धिवाले सुगमता पूर्वक लाभ उठा नही सकते है तथा विवरणाधिक होनेसे वह कण्ठस्थ करनेमें आलस्य प्रमाद हुमला कर चैतन्यकि शक्ति रोक देते है इस वास्ते खास कंठस्थ करने के इरादेसेही हमने यह

संक्षिप्तसे सार लिख आपसे निवेदन करते है कि इस नयादिकों कण्ठस्थ कर फीर विवेचनवाले ग्रंथ पढो ।

(१) नयाधिकार

(१) नय-वस्तु के एक अश को ग्रहन कर वक्तव्यता करना उनको नय कहते है जब वस्तुमें अनत (पर्याय) अश है उनोंकि वक्तव्यता करने के लिये नयभी अनंत होना चाहिये ? जीतना वस्तुमें धर्म (स्वभाव) है उनोंकि व्याख्या करनेको उतनाही नय है परन्तु स्वल्प बुद्धिवालों के लिये अनत नयका ज्ञानको सक्षित कर सात नय बतलाया है । अगर नैगमादि एकेक नयसे ही एकात पक्ष ग्रहन कर वस्तुतत्त्वका निर्देश करे तो उनोंको नयाभास (मिथ्यात्वी) कहा जाता है कारण वस्तुमें अनतधर्म है उनोंकि व्याख्या एकही नयसे संपुरण नही होसक्ती है अगर एक नयसे एक अशकि व्याख्या करेंगे तो शेष जो धर्म रहे हुवे है उनोंका अभाव होगा । इसी वास्ते शास्त्रकारोंका फरमान है कि एक वस्तुमे एकेक नयकि अपेक्षा से अलग अलग धर्मकि अलग अलग व्याख्या करनासेही सम्यक् ज्ञानकि प्राप्ती हो सके उनोंकाही सम्यग्दृष्टि कहाजाते है

इसपर हस्ती और सात अंधे मनुष्यका दृष्टान्त-एक ग्राम के बाहार पहले पहलही एक महा कायावाला हस्ति आयाथा उस समय ग्रामके सब लोग हस्ति देखनेको गये उस मनुष्योंमें सात अन्धे मनुष्य भीथे । उनोंसे एक अन्धे मनुष्यने हस्तिके दान्ताशूलपे हाथ लगाके देखाकि हस्ति मूशल जेसा होता है दूसरेने शूंढपर हाथ लगाके देखा कि हस्ति हडूमान जेसा होता है तीसराने कानोपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति सुपडे जेसा होता हैं चोथाने उदरपर हाथ लगाके देखाकि हस्ति कोठी जेसा

होता है पाचवाने पैरोपर हाथ लगावे देखाकि हस्ति स्तंभ जैसा होता है छट्ठाने पुच्छपर हाथ लगावे देखाकि हस्ति चम्र जैसा होता है सातवाने कुम्भस्थलपर हाथ लगावे देखाकि हस्ति कुम्भ जेसा है हस्तिको देख ग्राम के लोग ग्राममे गये और वह सातों अन्धे मनुष्य एक वृक्ष निचे बैठे आपसमें विवाद करने लग अपने अपने देखे हुवे एकेक अंगपर मिथ्याग्रह करने लगे एक दुसरोंको झूठे बनने लगे इतनेमे एक सुज्ञ मनुष्य आया और उन सातों अन्धे मनुष्योंकि वार्ता सुन बोला के भाइ तुम एकक वातको आग्रहसे तानते हो तबतो सबके सब झूट हो अगर मेरे कहने माफीक तुमने एकेक अगहस्तिके दखे है अगर सातों जना सामील हो विचार करोंगे तो एकेकापेक्षा सातों सत्य हो। अन्धोने कहा की कसे? तब उन सुज्ञ विद्वानने कहाकी तुमने देखा वह हस्तिका दान्ताशूल है दूसराने देखा वह हस्तिकि शुंड हैं यावत् सातवाने देखा वह हस्ति के पुच्छ है इतना सुनके उन अन्ध मनुष्योंका ज्ञान होगया कि हस्ति महा कायावाला है अपने जो देखा था वह हस्तिका एकेक अग है इसका उपनय-वस्तु एक हस्ति माफीक अनेक अंश (विभाग) सयुक्त है उनको माननेवाले एक अगको मानके शेष अगका उच्छेद करनेसे अन्धे मनुष्योंके कदाग्रह तुल्य होते है अगर सपुरण अगोंको अलग अलगअपेक्षासे माना जाय तो सुज्ञ मनुष्यकि माफीक हस्ती ठीकतोरपर समज सक्ते है इति

नय के मूल दो भेद है (१) द्रव्यास्तिक नय जो द्रव्यको ग्रहन करते है (२) पर्यायास्तिक नय वस्तुके पर्यायको ग्रहन करे। जिसमें द्रव्यास्तिक नयके दश भेद है यथा नित्य द्रव्यास्तिक एक द्रव्यास्तिक सत् द्रव्यास्तिक वक्तव्य द्रव्यास्तिक, अशुद्ध द्रव्यास्तिक, अन्वय द्रव्यास्तिक, परमद्रव्यास्तिक, शुद्धद्रव्या-

स्तिक, सत्ताद्रव्यास्तिक, परम भाव द्रव्यास्तिक। पर्यायास्तिक नयके छे भेद है द्रव्यपर्यायास्तिक, द्रव्यव्यञ्जनपर्यायास्तिक गुणपर्यायास्तिक, गुणव्यञ्जनपर्यायास्तिक, स्वभाव पर्यायास्तिक विभावपर्यायास्तिकनय। इन द्रव्यास्तिक पर्यायास्तिक दोनों नयों के ७०० भागे होते है।

तर्कवादि श्रीमान सिद्धसेनदिवाकरजी महाराज द्रव्यास्तिकनय तीन मानते है नैगमनय, सग्रहनय, व्यवहारनय, और सिद्धान्तवादी श्रीमान् जिनभद्रगणी क्षमाश्रमणा द्रव्यास्तिनय च्यार मानते है नैगमनय सग्रहनय व्यवहारनय रूजुसूत्र नय। अपेक्षासे दोनों महा ऋषियोंका मानना सत्य है कारण ऋजुसूत्र नय प्रणाम ग्राही होनेसे भावनिक्षेपा के अन्दर मानके उसे पर्यायास्तिक नय मानी गइ है और ऋजुसूत्रनय शुद्ध उपयोग रहित होनेसे। श्री जिनभद्रगणी क्षमाश्रमणजीने द्रव्यास्तिक नय मानी है दोनों मतका मतव्य एक ही है

नैगम, सग्रह, व्यवहार, और रूजुसूत्र, इन च्यार नयको द्रव्यास्तिक नय कहते है अथवा अर्थ नय कहते है तथा क्रियानय भी कहते है और शब्द समभिरूढ और एवभूत इन तीनो नय को पर्यायास्तिक नय कहते है इन तीनों नयको शब्द नयभी कहते है इन तीनों नयको ज्ञान नयभी कहते है एव द्रव्यास्तिक नय और पर्यायास्तिक नय दोनोंको मीलानेसे सातनय-यथा नैगमनय सग्रहनय व्यवहारनय ऋजुसूत्रनय शब्दनय समभिरुढनय एवमूतनय अब इन सातों नयके सामान्य लक्षण कहाजाते है।

(१) नैगमनय-जिस्का एक गम (स्वभाव) नही है अनेक मान उन्मान प्रमाणकर वस्तुको वस्तुमाने जैसे सामान्यमाने विशेषमाने तीनकालकि बातमाने निक्षेपाचार माने तीनों

कालमें वस्तुका अस्तित्व भाव माने जिन नेगमनय के तीन भेद है (१) अंश (२) आरोप (३) विकल्प।

(क) अंश-वस्तुका एक अशकों ग्रहन कर वस्तुकों वस्तुमाने शेष निगोदीये जीवोंकों सिद्ध समान माने कारण निगोदीये जीवों के आठ रूचक प्रदेश+ सदैव निमल सिद्धों के माफीक है इस वास्ते एक अशकों ग्रहन कर नैगमनयवाला निगोदीये जीवोंकोभी सिद्ध ही मानते है। तथा चौदवें अयोगी गुणस्थानवाले जीवों कों ससारी जीव माने, कारण उन जीवोंके अभीतक चार अघाति कर्म बाकी है अन्तर महुर्त ससार बाकी है उतने अशकों ग्रहन कर चौदवे गुणस्थानक वति जीवोंको ससारी माने यह नैगम नयका मत है।

(ख) आरोप-आरोपक तीन भेद है (१) भूत कालका आरोप (२) भविष्य कालका आरोप (३) वर्तमान कालका आरोप जिस्मभूत कालका आरोप जेसे भूतकालमें वस्तु हो गइ है उन का वर्तमान कालमें आरोप करना यथा-भगवान वीरप्रभुका जन्म चैत्र शुक्ल १३ के दिन हुवा था उनका आरोप, वर्तमान का लमें कर पयुषण मे जन्म महोत्सव करना उनोंकी मूर्ति स्थापन कर सेवा पूजा भक्ति करना तथा अनते सिद्ध हो गये है उनोंके नामका स्मरण करना तथा उनोंकि मूर्ति स्थापन कर पूजन करना यह सब भूतकालका वर्तमानमे आरोप है (२) भविष्यकाल मे होने वालोंका वर्तमान कालमे आरोप करना जेसे श्री पद्मनाभ

+ श्री नन्दीजी सूत्रमें कहा है कि चारोंके अक्षर के अनन्त में भाग में कम दल नही लाग यह ही आत्मका चैतन्यता गुण है अगर यहा भी कर्म लग जावें तों जीवका अजीव हो जाते है परन्तु यह कभी हुवा नही और होगा भी नही इस वास्ते ८ रूचक प्रदेश सदैव सिद्ध समान गीना जाते है

तीर्थकर उत्सर्पिणी कालमे होंगे उनोंको (ठाणायागजी सूत्र के नौवे ठाणेमें) तीर्थकर समान उनोंकी मूर्ति स्थापनकर सेवाभक्ति करना तथा मरीचीयाके भवमें भावि तीर्थकर समझ भरतमहा राज उनको वन्दन नमस्कार कीयाथा यह भविष्यकालमें होने वालोंका वतमानमें आरोप करना (३) वर्तमानमे वर्तती वस्तु-का आरोप जेसे आचार्यापाध्याय तथा मुनि भक्तगोंके गुण कीर्तन करना यह वतमानका वर्तमानमें आरोप है तथा एक वस्तुमें तीन कालका आरोप जेसे नारकी देवता जम्बुद्विप मेरुगिरी देवलोकों मे सास्वते चैत्य-प्रतिमा आदि जोजो पदार्थ तीनो कालमे सास्व ते हैं उनोंका भूतकालमें थे भविष्यमें रहेगे वर्तमान मे वर्त रहे है एसा व्याख्यान करना यह एकही पदार्थ मे तीनो कालका आरोप हो सक्ते है

(ग) विकल्प-विकल्पके अनेक भेद है जेसे जसे अध्यवसाय उत्पन्न होते है उनको विकल्प कहेते है द्रव्यास्तिक और पर्याया-स्तिक नयके विकल्प ७०० होते है यह नय चक्र साराधि ग्रंथ से देखना चाहिये उन नैगमनयका मूल दो भेद है (१) शुद्ध नैगम नय (२) अशुद्ध नैगमनय जिसपर वसति-पायली-और प्रदेशका दृष्टांत आगे लिखाजावेगा उसे देखना चाहिये।

(२) संग्रहनय-वस्तुकि मूल सत्ता को ग्रहन करे जेसे जीवो के असख्यात आत्म प्रदेश मे सिद्धो कि सत्ता मोजुद है इस वास्ते सर्व जीवो को सिद्ध सामान्य माने और संग्रह-संग्रह वस्तुको ग्रहन करनेवाले नयकोसंग्रहनय कहते है यथा 'एगे आया-एगे अणाया' भावार्थ-जीवात्मा अनत है परन्तु सबजीव सातकर असख्यात प्रदेशी निर्मल है इसी वास्ते अनन्त जीवोंका संग्रह कर 'एगे आया' कहते है एव अनत पुदगलोमे सडन पडण विध्वसन स्वभाव होनेसे 'एगे अणाया' संग्रह नय वाला सामान्य माने विशेष नही

ने तीन कालकीवात माने निक्षेपाचारोंमाने एक शब्द में अनेक र्थ माने जैसे कीसीन कहाकी वन' ता उसके अन्दर जीतने । लता फल पुष्प जलादि पदार्थ है उन सबको संग्रह नयवाले माना तथा कीसी सेठने अपने अनुचरको कहाकी जावो तुम त्तण लावो ता उन संग्रह नयके मतवाला अनुचरने दातण ध जल झारी वस्त्रादि पासाक सब लेके आया-इसी माफीक ने कहाकी पत्रलिखना है कागद लावो तो उन दासने कागद म दवात कलमरी आदि सब ले आया इस वास्ते संग्रहनय ा एक शब्दमें अनेक वस्तु ग्रहन करते है जिस्के दोय भेद है) सामान्य संग्रहनय २) विशेष संग्रहनय।

(३) व्यवहारनय-बाह्य दीखती वस्तुका विवेचन कर कारण जीसका जैसा बाह्य व्यवहार देखे उसाही उनोंका व्यवहार है अर्थात् अन्त करणको नहीं माने जैसे यह जीव जन्मा है यह व मृत्युकोप्राप्त हुवा है जीव कर्म बन्ध करते है जीव सुख ख भोगवते है पुद्गलोंका संयोग वियोग होते है इस निमित रणसे हमारा भला बुरा हो गया यह सब व्यवहार नयका मत व्यवहार नयवाला सामा यके साथ विशेषमाने निक्षेपा च्यार ने तीनो कालकी बात माने जैसे व्यवहारमे कोयल श्याम हरा, मामलीयालाल हल्दी पीली हस सुफेद परन्तु निश्चय से इन पदार्थोंमें पांचो वर्ण दोय ध पाच रस आठ स्पर्श पावे वहारमें गुलाब सुगन्ध-मृतश्वान दुर्गन्ध सुठ तिक्त निंब कटुक म्लाकपायत आम्र आविल साकर मधुर करवोत कर्कश, ता वा मृदुल लोहागुरु अकतूल लघु पाणी शीतल, अग्निउष्ण घृत स्नग्ध राख रूक्ष यह सब व्यवहारमे मोख्यता गुण बतलाये रन्तु निश्चयमे गौणतामें सब बोलोंमे वर्णादि वीस वीस बोल

मीलते है। जिस व्यवहारनयके दो भेद है (१) शुद्ध व्यवहारनय (२) अशुद्ध व्यवहारनय।

(४) ऋजुसूत्रनय—सरलतासे बोध होना उसे ऋजुसूत्रनय कहते है ऋजुसूत्रनय भूत भविष्यकाल को नही माने मात्र एक वर्तमानकालको ही मानते है ऋजुसूत्रनयवाला सामान्य नही माने विशेष माने एक वर्तमानकालकि बात माने निक्षेपा एक भाव माने परवस्तु को अपने लिये निरर्थक माने आकाशकुसुमवत् ' जैसे कीसीने कहा की सो वर्षा पहले सूवर्णकि वर्षाद हुइथी तथा सो वर्षा के बाद सूवर्ण कि वर्षाद होगा ? निरर्थक अर्थात् भूत भविष्यमे जो कार्य होगा वह हमारे लिये निरर्थक है यह नय वर्तमानकाल को मोख्य मानते है जेसे एक साहुकार अपने घरमें सामायिक कर बेठा था इतनेमे एक मुसाफर आवे उन सेठके लडकेकी ओरतसे पुछा की बेहन ! तुमारा सुसराजी कहा गये है ? उन ओरतने उत्तर दीया कि मेरे सुसराजी पसारीकी दुकान सुठ हरडे खरीदने को गये है वह मुसाफर वहा जाके तलास की परन्तु सेठजी वहापर न मीलनेसे वह पीछा सेठजीके घरपर आके पुच्छा तो उन ओरतने कहाकि मेरे सुसराजी मोचीके वहा जुते खरीदनेको गयेहै इसपर वह मुसाफर मोचीके वहा जावे तलास करी वहापर सेठजी न मीले, तब फीरके पुन सेठजीके घरपे आये इतनेमें सेठजीके सामायिकका काल होजानेसे अपनि सामायिक पार उन मुसाफरसे वात कर विदा कीया फीर अपने लडककी ओरतसे पुच्छा कि क्यों वहुजी मे सामायिक कर घरके अन्दर वेठाथा यह तुम जानती थी फीर उन मुसाफर को खाली तकलीफ क्यों दीथी वहुजीने कहा क्यों सुसराजी आपका चित दोनों स्थानपर गयाथा

ी ? सेठजीने कहा बात सत्य है मेरा दील दोनों स्थानपर
। इससे यह पाया जाता है कि सेठजी व लडकेकी ओरत
न्त थी इसी माफीक ऋजुसूत्रनय गृहवासमें बेठ हुए के
प्रणाम होनेसे साधु माने और साधुवेश धारण करनेवाले
कि प्रणाम गृहस्थावासका होनसे उने गृहस्थ माने । इति
यार नयको द्रव्यास्तिकनय कहते है इन च्यार नयकि
त तथा देशव्रत सर्वव्रत भव्याभव्य दोनों को होते है परन्तु
पयोग रहीत होनेसे जीवोंका कल्याण नही हो सके !

(५) शब्दनय-शब्दनयवाला शब्दपर आरुढ हो सरीखे
का एकही अर्थ करे शब्दनयवाला सामान्य नही माने
माने वर्तमानकालकी बात माने निक्षेपा एक भाव माने
लिंगभेद नही माने जेसे शक्रेन्द्र देवेन्द्र पुरेन्द्र सूचि
न सबको एकही माने । यह शब्दनय शुद्ध उपयोग को
वाला है ।

(६) समभिरूढनय—सामान्य नही माने विशेष माने वर्त
ालकी बात माने निक्षेपा भाव माने लिंगमें भेद माने शब्द
र्थ भिन्न भिन्न माने जेसे शक्रनाम का सिंहासनपर देवतोंकि
दामें बेठे हुवे को शक्रेन्द्र माने देवतोंमें बेठा हुवा इन्साफ
पनि आज्ञा मान्य करावे उसे देवेन्द्र माने हाथमें वज्र
तों के पुरको विदारे उसे पुरेन्द्र माने अप्सरावोंके मह
नाटकादि पांचो इन्द्रियों के सुख भोगवताको सचीपती
समभिरूढवाला एक अंश उनी वस्तुकों वस्तु माने अर्थात्
श उणा है वह भी प्रगट होनेवाले है उसे समभिरूढ कहा
है ।

(७) एवंभूत नयवाला-सामान्य नही माने विशेष माने

वर्तमान कालकी बात मान निक्षेपा एकभाव माने सपुरण वस्तु को वस्तु माने एक अशभी कम हो तो एवभूत नयवाला वस्तु को अवस्तु माने। शब्दादि अपने अपने कायमें उपयोगसे युक्त कार्यको कार्य माने।

इन सातों नयपर अनुयोग द्वारमे तीन दृष्टान्त इसी माफीक है। (१) वस्तिका (२) पायलीका (३) प्रदेशका।

सामान्य नैगमनयवाले को विशेष नैगमनयवाला पुच्छता है कि आप कहापर निवास करते है? सामान्य नयवाला बोला कि मे लोकमे रहता हु

विशेष—लोक तीन प्रकारका है अधोलोक उर्ध्वलोक तीर्यग् लोग है आप कीस लोकमे रहते है?

सामान्य-मे तीर्यगलोगमे रहता हु।

विशेष—तीर्च्छालोगमे द्विप बहुत है तुम कोनसे द्विपमें रहते हो?

सामान्य—मे जम्बुद्विपमे नामका द्विपमे रहता हु

वि—जम्बुद्विमें क्षेत्र बहुत है तुम कोनसे क्षेत्रमे रहते हो?

सा—मे भरतक्षेत्र नामक क्षेत्रमे रहता हु

वि०—भरतक्षेत्र दक्षिण उत्तर दो है आप कोनसे भरतमे रहते हो?

सा—मैं दक्षिण भरतक्षेत्रमें रहता हु

वि—दक्षिण भरतमें तीन खड है तुम कोनसे खडमे रहते हो?

सा—मैं मध्यखडमे रहता हु

वि—मध्यखडमे देश बहुत है तुम कोनसा देशमे रहते हो?

सा—मैं मागध देशमे रहता हु

वि—मागध देशमे नगर बहुत है तुम कौनसा नगरमे रहते है ?

सा—मैं पाडलीपुर नगरमे निवास करता हु

वि०—पाडलीपुरमें तो पाडा (मोहला) बहुत है तुम०

सा०—मे देवदत्त ब्राह्मणके पाडामें रहता हु।

वि०—वहा तो घर बहुत है तुम कहा रहते हो।

सा०—मैं मेरे घरमें रहता हु—यहातक नैगम नय है।

संग्रहनयवाला बोलाके घरतो बहुत बडा है एस कहो कि मे मेरे सस्ताराके अन्दर रहता हु। व्यवहारनय वाला बोलाकि सस्तारा बहुत बडा है एसे कहो कि मैं मेरे शरीरमें रहता हु ऋजुसूत्रवाला बोलाकी शरीरमें हाड, मास, रौद्र, चरबी बहुत है एसा कहो कि मे मरे परिणाम वृतिमें रहता हु। शब्दनयवाला बोलाकी परिणाम प्रणमन है उनामे सूक्षमबादर जीवोंके शरीर आदि अवगहा है वास्ते एसा कहो कि मे मेरे गुणोंमे रहता हु। समभिरूढनयवाला बोला कि मे मेरा ज्ञानदर्शनके अन्दर रहताहु। एवंभूतनयवाला बोला की मे मेरे अध्यातम सत्तामें रमणता करता हु।

इसी माफीक पायलीका दृष्टान्त जेसे कोइ सुथार हाथमे कुल्हाडा ले पायलीके लिये जंगलमे काष्ट लेनेको जा रहाथा इस समें विशेष नैगमनय वाला बोलाकि भाइ साहिब आप कहा जाते हो जब सामान्य नैगमनयवाला बोला कि मे पायली लेनेको जाताहु काष्ट काटते समय पुच्छने पर भी कहा कि मे पायली काटता हु। घरपर काष्ट लेके आया उन समय पुच्छनेपर भी कहा कि मैं पायली लाया हु यह नैगमनयका वचन है संग्रह नय सामग्री तैयार करनेसे सत्तारुप पायली मानी। व्यवहारनय

पायली तैयार करनेपर पायली मानी। रूजुसूत्रनय परिणाम ग्राही होनेसे धान्य भरने पर पायली माने। शब्दनय पायली के उपयोग अर्थात् धान्य भर के उनकि गणीती लगानेसे पायली मानी। संभिरूढनय पायली के उपयोगकों पायली मानी। एव भूतनय-सर्व दुनिया उने मजूर करने पर पायली मानी इति।

प्रदेशका दृष्टान्त—नैगमनयवाला कहता है कि प्रदेश छे प्रकारके है यथा—धर्मास्तिकायका प्रदेश, अधर्मास्ति कायका प्रदेश, आकाशास्तिकायका प्रदेश, जीवास्तिकायका प्रदेश, पुद्गलास्तिकायके स्कन्धका प्रदेश, तस्स देशका प्रदेश, इस नैगमनय वालासे संग्रहनयवाला बोलाकि एसा मत कहो क्यों कि जो देशका प्रदेश कहा है वह तो देश स्कन्धका ही है वास्ते प्रदेश भी स्कन्धका हुवा तुमारा कहेने पर दृष्टान्त जैसे कीसी साहुकारका दासने अपने मालक के लिये एक खर मूल्य खरीद कीया तब साहुकारने कहा कि यह दास भी मेरा ओर खर भी मेरा है इस न्यायसे दास और खर दोनों साहुकारका ही हुवा इसी माफीक स्कन्धका प्रदेश ओर देशका प्रदेश दोनों पुद्गल द्रव्यका ही हुवा इस वास्ते कहो कि पाच प्रकारके प्रदेश है यथा-धर्मास्तिकायका प्रदेश०अधर्म० प्रदेश-आकाश० प्रदेश, जीवप्रदेश, स्कन्ध प्रदेश, इन संग्रहनयवाले ने पाच प्रदेशमाना इस पर व्यवहारनयवाला बोला कि पाच प्रदेश मत कहो ? क्यों कि पाच गोटीले पुरुषोंके पास द्रव्य है वह चान्दी सुवर्ण धन धान्य तो एसा एक गोटीले के अन्दर च्यारों धनका समावेश हो शकेगें इसी वास्ते कहो के पाच प्रकारके प्रदेश है यथा धर्मास्तिकायका प्रदेश यावत् स्कन्ध प्रदेश इस माफीक व्यवहारनयवाला बोलने पर ऋजुसूत्रनयवाला बोला कि एसा मत कहो कि पाच प्रकार

प्रदेश है कारण एसा कहनेसे यह शंका होगी कि यह पांचों का धर्मास्तिकायका होगा। यावत् पांचों प्रदेश 'स्कन्धके तो एसे २५ प्रदेशोंकी संभावना होगी इस वास्ते एसा कहो स्यात् धर्मास्तिकायका प्रदेश यावत् स्यात् स्कन्धका प्रदेश इस पर शब्दनयवाला बोला कि एसा मत कहो कारण एसा कहनेसे यह शंका होगी कि स्यात् धर्मास्तिकायका प्रदेश है यह स्यात् अधर्मास्तिकायका प्रदेश भी हो सकेगे इसी माफीक पांचों प्रदेशोंमें आपसमें अनवस्थित भावना हो जायगी इस वास्ते एसा कहो कि स्यात् धर्मास्तिकायका प्रदेश सो धर्मास्तिकायका प्रदेश है एवं यावत् स्यात् स्कन्ध प्रदेश सो स्कन्धका ही प्रदेश है। इसी माफीक शब्दनयवाले के कहनेपर समभिरूढनयवाला बोला कि एसा मत कहो यहांपर दो समास है तत्पुरुष और कर्मधारय जो तत्पुरुष कहा तो अलग अलग कहो और कर्मधारयसे कहो तो विशेष कहो कारण जहां धर्मास्तिकायका एक प्रदेश है वहां जीव पुद्गलके अनन्त प्रदेश है वह सब अपनि अपनि क्रिया करते है एक दुसरे के साथ मीलते नहीं है इस पर एवंभूतनयवाला बोला कि तुम एसे मत कहो कारण तुम जो जो धर्मास्तिकायादि पदार्थ कहते हो वह देश प्रदेश स्वरूप ह हो नहीं सक्ता है वह भी कीसीका प्रदेश है वह भी कीसीका एक समय में स्कन्ध देश प्रदेशकी व्याख्या हो ही नहीं सक्ती है वस्तु भाव अभेद है अगर एक समय धर्मद्रव्य कि व्याख्या करोगे तो शेष देश प्रदेशादि शब्द निरर्थक हो जायगे तो एसा करते ही क्यों हो एक ही अभेद भाव रखो इति।

जीवपर सात नय—नैगमनय, जीव शब्दको ही जीव माने संग्रहनय सत्तामें असंख्यात प्रदेशी आत्माको जीव मान इसने अजीवात्माको जीव नहीं माना, व्यवहारनय त्रस थावर के भेद

कर जीव माने, ऋजुसूत्रनय परिणामग्राही होनेसे सुख दुःख वेदते हुये जीवोंको जीव माने इसने अभवीको नहीं माने शब्द-नय क्षायक गुणवालेको जीव माना, समभिरूढनयवाला केवल-ज्ञानको जीव माना, एवंभूतनय सिद्धोंको जीव माना।

सामायिक पर सात नय नैगमनयवाला सामायिक के परिणाम करनेवालोंको सामायिक माने संग्रहनयवाला सामायिकके उपकरण चरवलो मुहपत्तीयादि ग्रहन करनेसे सामायिक माने व्यवहारनयवाला सामायिक दंडक उच्चारण करनेसे सामायिक माने ऋजुसूत्रनयवाला ४८ मिनीट समता परिणाम रहनेसे सामायिक माने शब्दनय अनंतानुबन्धी चौक और मिथ्यात्वादि मोहनिका क्षय होनेसे सामायिक माने समभिरूढ नयवाला रागद्वेषका मूलसे नाश होनेपर वीतरागको सामायिक माने एवंभूतनय संसारसे पार होना (सिद्धावस्था) को सामायिक माने

धर्म उपर सात नय नैगमनय धर्मशब्दको धर्म माने इसने सब धर्मवालोंका धर्म माना संग्रहनय कुलाचारको धर्म माना इसने अधर्मको धर्म नहीं मानते हुये नीतिको धर्म माना व्यवहारनयवाला पुन्यकि करणीको धर्म माना ऋजुसूत्रनयवाला अनित्यभावनाको धर्म माना इसमे सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि दोनोंको ग्रहन कीया शब्दनयवाला क्षायिकभावको धर्म माने समभिरूढ केवलीयोंको धर्म माने एवंभूतनय सपुरण धर्म प्रगट होने पर सिद्धोंको ही धर्म माने।

बाण पर सात नय. कीसी मनुष्यके बाण लगा तब नैगम नयवाला बाणका दोष समझा संग्रहनयवाला सत्ताको ग्रहन कर बाण फेंकनेवालाका दोष समझा व्यवहारनयवाला गृहगोचरका

दोष समझा ऋजुसूत्रनयवाला अपने कर्मोंका दोष समझा शब्द नयवाला कर्मोंके कर्ता अपने जीवका दोष समझा समभिरूढनय वालाने भवितव्यता याने ज्ञानीयोंने अनंतकाल पहले यह ही भाव देख रखाथा एवंभूत कहता है कि जीवको तो सुख दुःख है ही नहीं जीवतो आनन्दघन है।

राजा उपर सात नय नैगमनयवाला बत्तीस हाथ पगोंमें राजचिन्ह रेखा तील मसादि चिह्न देखके राजा माने संग्रहनय वाला राजकुलमें उत्पन्न हुवा बुद्धि, विवेक, शौर्यतादि देख राजा माने व्यवहारनयवाला युवराज पदवालेको राजा माने ऋजुसूत्रनयवाले राजकार्यमें प्रवृत्तनेसे राजा माने शब्दनयवाला सिंहासनपर आरूढ होनेपर राजा माने समभिरूढनयवाला राज अवस्थाकी पर्याय प्रवृत्तनरूप कार्य करते हुवेको राजा माने एवं भूतनय उपयोग सहित राज भोगवतो दुनियों सर्व मंजुर करे, राजाकी आज्ञा पालन करे, उस समय राजा माने इसी माफीक सब पदार्थोंपर सात सात नय लगा लेना इति नयद्वार।

(२) नक्षपाधिकार

एक वस्तुमें जेसे नय अनंत है इसी माफीक निक्षेपा भी अनंत है कहा है कि-" जं जत्थ जाणेजा, निक्खेवा निक्खेवण ठवे, ज जत्थ न जाणेज्ज, चत्तारी निक्खेवण ठवे " भावार्थ—जहा पदार्थके व्याख्यानमें जीतने निक्षेप लगा सके उतने हो निक्षेपसे उन पदार्थका व्याख्यान करना चाहिये कारण वस्तुमें अनंत धर्म है वह निक्षेपों द्वारा ही प्रगट हो सके। परन्तु स्वल्प बुद्धिवाले कसा अगर ज्यादा निक्षेप नहीं कर सके, तथापि च्यार निक्षेपों के साथ उन वस्तुका विवरण अवश्य करना चाहिये। (प्रश्न) जब नयसे ही वस्तुका ज्ञान हो सक्ते है तो फीर निक्षेपेकि क्या

जरूरत है ? निक्षपाद्वारे वस्तुका स्वरूपकों जानना यह सामान्य पक्ष है और नयद्वारा जानना यह विशेष पक्ष है। कारण नय है सो भी निक्षेपाकि अपेक्षा रखते है, नयकि अपेक्षा निक्षेपा स्थुल है और निक्षेपाकि अपेक्षा नय सूक्षम है अन्यापेक्षा निक्षेपे है सो प्रत्यक्ष ज्ञान है और नय है सो परोक्ष ज्ञान है इस वास्ते वस्तु-तत्व ग्रहन करनेके अन्दर निक्षेप ज्ञानकि परमावश्यकता है नि क्षेपोंके मूल भेद च्यार है यथा—नाम निक्षेप, स्थापनानिक्षेप, द्रव्यनिक्षेप और भावनिक्षेप।

(१) नामनिक्षेपा—जेसे जीव अजीव वस्तुका अमुक नाम रख दीया फीर उसी नामसे बोलानेपर उन वस्तुका ज्ञान हो उन नाम निक्षेपाका तीन भेद है (१) यथार्थ नाम (२) अयथार्थ नाम, (३) और अथशुन्य नाम जिस्मे।

यथार्थनाम—जेसे जीवका नाम जीव, आत्मा, हस, परमात्मा, सचिदानद, आनन्दघन, सदानन्द, पूर्णानन्द, निजानन्द, ज्ञानानन्द, ब्रह्म, शाश्वत, सिद्ध, अक्षय, अमूर्त्ति इत्यादि

अयथार्थनाम—जीवका नाम हेमो, पेमो, मूलो, मोती, माणक, लाल, चन्द्र, सूर्य, शार्दुलसिंह, पृथ्वीपति, नागचन्द्र इत्यादि

अर्थशून्यनाम—जेसे हासी, खासी, छींक, उभासी, मृदग ताल, सतार आदि ४९ जातिके वाजित्र यह सर्व अर्थशुन्य नाम है इनसे अर्थ कुच्छ भी नही निकल्ते है। इति नामनिक्षेप

(२) स्थापना निक्षेपका—जीव अजीव कीसी प्रकारके पदार्थकि स्थापना करना उसे स्थापना निक्षेपा कहते है जिस्के दो भेद है (१) सद्भाव स्थापना (२) असद्भाव स्थापना जिस्मे सद्भाव स्थापनाके अनेक भेद है जेसे अरिहन्तोका नाम

और अरिहन्तोंकि स्थापना (मूर्त्ति) सिद्धोंका नाम और सिद्धोंकि स्थापना एव आचार्योपाध्याय साधु, ज्ञान, दर्शन चारित्र इत्यादि जैसा गुण पदार्थमें है वैसे गुणयुक्त स्थापना करना उसे सत्यभाव स्थापना कहते है और असत्यभाव स्थापना जेसे गोल पत्थर रखके भेरूकि स्थापना तथा पाच सात पत्थर रख शीतला माताकि स्थापना करनी इसमे भेरू और शीतलाका आकार तो नही है परन्तु नामके साथ कल्पना देखकी कर स्थापना करी है

इस वास्ते ही सुज्ञ जन स्थापना देखकी आशातना टालते है जिस रीतीसे आशातना का पाप लगता है इसी माफीक भक्ति करनेका फल भी होते है उस स्थापनाका दश भेद है (सूत्र अनुयोगद्वार ।

(१) कट्ठकम्मेया काष्टकि स्थापनाजेसेआचार्यादिकि प्रतिमा

(२) पात्थ कम्मेया-पुस्तक आदि रखके स्थापना करना

(३) चित्त कम्मेया-चित्रादिकरके स्थापना करना

(४) लेप्प कम्मेया-लेप याने मट्टी आदिके लेपसे ॥

(५) वडीम्मेया-पुष्पोंक वींटसे वींटकर मीलाके स्था० ॥

(६) गुथीम्मेया-चीटा प्रमुक को ग्रथीत करना ॥

(७) पुरिम्मेया-सुवर्ण चान्दी पीतलादि भरतका काम

(८) संघाइम्मेया-बहूत वस्तु एकत्र कर स्थापना

(९) अखेइया-चन्द्राकार समुद्रके अक्षकि स्थापना

(१०) बराडइया-सख कोडी आदि की स्थापना

एव दश प्रकार की सद्भाव स्थापना और दशप्रकारकी असद्भाव स्थापना एव २० एकेक प्रकार की स्थापना एव वीस

अनेक प्रकार कि स्थापना सब मील स्थापना के ४० भेद होते हैं इनके अतिरिक्त अन्य प्रकारसे भी स्थापना होती है

प्रश्न—नाम और स्थापना में क्या भेद विशेष है ?

उत्तर—नाम यावत्काल याने चीरकाल तक रहता है और स्थापना स्वल्पकाल रहती है अथवा नाम निक्षेपाकि निष्पत् स्थापना निक्षेपा—विशेष ज्ञानका कारण है जैसे—

लोक का नाम लेना और लोक कि स्थापना (नकशा) देखना अरिहंतोंका नाम लेना और अरिहन्तोंकि मूर्त्ति को देखना जम्बुद्विपका नाम लेना और नकशा देखना संस्थान दिशा भागा इत्यादि अनेक पदार्थ हैं कि जिनोंका नाम लेने कि निष्पत स्थापना (नकशा) देखनेसे विशेष ज्ञान हो सक्ते हैं इति स्थापना निक्षेप।

(३) द्रव्य निक्षेपा-भावशून्य वस्तु को द्रव्य कहते है जीस वस्तुम भूतकाल मे भावगुण था तथा भविष्य मे भावगुण प्रगट होनेवाला है उसे द्रव्य कहा जाता है जैसे भुतकालमें तीर्थ कर नाम कर्म उपार्जन किया है वहासे लगाके जहातक केवल ज्ञान उत्पन्न न हुवे ३४ अतिशय पैंतीस वाणि गुण अष्ट महा प्रतिहार प्राप्त न हुवे वहा तक द्रव्य तीर्थंकर कहा जाता है तथा तीर्थंकर मोक्ष पधारगये के बाद उनोंका नाम लेना वह सिद्धों का भाव निक्षेपा है परन्तु अरिहन्तोंका द्रव्य निक्षेपा है वह भूत भविष्य कालके अरिहन्त वन्दनीय पूजनीय है उन द्रव्य निक्षेपाके दो भेद है (१) आगमसे (२) नोआगमसे जिस्में आगमसे द्रव्य निक्षेपा जो आगमों का अर्थ उपयोग शून्यतासे करे जिस-पर आवश्यक का दृष्टान्त यथा कोइ मनुष्य आवश्यक सूत्र का अध्ययन किया है जैसे—

पदं सिक्खितं—पद पदार्थ अच्छी तरफसे पढा हो
ठित—वाचनादि स्वाध्यायमें स्थिर कीया हुवा हो
जित—पढा हुवा ज्ञानको भूलना नही सारणा वारणा धारणासे अस्खलित
मित—पद अक्षर बरावर याद रखना
परिजितं—क्रमोत्क्रम याद रखना
नामसम—पढा हुवा ज्ञान को स्व नामवत् याद रखना
घोस सम—उदात्त अनुदात्त स्वर व्यञ्जन सयुक्त
अहीण अक्खर—अक्षर पद हीनता रहीत हो
अणाचअक्खर—अक्षर पद अधिक भी न बोले
अव्वाद्ध अक्खर—उल्ट पुल्ट अक्षर रहित
अक्खलिय—अखिलत पणसे बोल्ना
अमिलिय अक्खर—विरामादि सयुक्त बोलना
अवचामेलिय—पुनरूक्ती आदि दोषरहित बोल्ना
पडि पुन्न—अष्टस्थानोच्चारणसयुक्त
कठोष्ठविपमुक्त—बालक की माफीक अस्पष्टता न बोले।
गुरुवायणोवगय—गुरु मुखसे वाचना ली हो उस माफीक
सेण तत्थ वायणाए—सूत्राथ की वाचना करना
पुच्छणाए—शका होनेपर प्रश्न का पुच्छना
परिअट्टणाए—पढा हुवा ज्ञानकि आवृत्ति करना
धम्मकाहाए—उच्चस्वर से धर्मकथाका कहना

इतनि शुद्धताके साथ आवश्यक करनेवाला होनेपर भी नोअणुपेहाए" जीस लिखने पढने वाचने के अन्दर जीवोंका अनुपेक्षा (उपयोग) नही है उन सबको द्रव्य निक्षेपा में माना

गया है अर्थात् जो काम कर रहा है उन काम को नही जानता है तथा उनके मतलब को नही जानता है यह सब द्रव्यकार्य है इति आगमसे द्रव्य निक्षेपा

नोआगमसे द्रव्य निक्षेपा के तीन भेद है (१) जाणगशरीर (२) भविय शरीर (३) जाणग शरीर, भविय शरीर वितिरक्त॥ जिस्मे जाणगशरीर जैसे कोइ श्रावक कालधर्म प्राप्त हुवा उनका शरीर का चन्ह चक्र देख कीसीने कहा कि यह श्रावक आवश्यक जानता था-करता था-जैसे कीसी घृत के घडा को देख कहाकि यह घृतका घडा था तथा मधुका घडा था। दूसरा भाविय शरीर जैसे कीसी श्रावक के घहा पुत्र जन्मा उनका शरी रादि चिन्ह देख कीसी सुज्ञने कहा कि यह बचा आवश्यक पढेगें-करेगें जैसे घट देख कहाकी यह घट घृतका होगा यह घट मधुका होगा। तीसरा जाणग शरीर भविय शरीरसे वितिरक्तके तीन भेद है लौकीक द्रव्यावश्यक लोकोत्तर द्रव्यावश्यक, कुप्रवचन द्रव्य आवश्यक। लौकीक द्रव्यावश्यक जो लोक प्रतिदिन आवश्य करने योग्य क्रिया करते है जैसे राज राजेश्वर युगराजा तलवर माडबी कौटुम्बी सेठ सेनापति सार्थवाह इत्यादि प्रात उठ स्नान मज्जन कर केशर चन्दन के तीलक लगा के राजसभामें जाये इत्यादि अवश्य करने योग्य कार्य करे उसे लौकीक द्रव्या वश्यक कहते है और लोकोत्तर द्रव्यावश्यक जैसे

जे इमे समणगुणमुक्क जोगी-लोकमें गुणरहीत साधु
छकाय निरणु कम्पा-छेकाया के जीवोंकी अनुकम्प रहित
हयाइवउद्दमा--बिगर लगामके अश्वकी माफीक
गयाइव निरंकुसा- निरंकुश हस्तिकि माफीक
घठा--शरीर वस्त्रादिको वारवार धोये धोवाये।

मठा—शरीरको तेलादिकसे मालिसपीटी करे
तुपुठा—नागरवेली के पानोंसे होटे को लाल घना रखे
पंडुर पट्ट पाउरणा—उज्वल सुपेद वस्त्री चोलपट्टा पहने।
जिणाणमणाणाए—जिनाज्ञाके भगको करनेवाले।
सच्छद विहारीउण—अपने छदे मापीक चलनेवाला।

उभओकाल आवस्सयस्स उवटति " अण उवओगदव्वं "
दोनोंवग्त आवश्यक करने पर भी उपयाग " न होनेसे द्रव्य
आवश्यक कहते हैं इति

कुप्रवचन द्रव्यावश्यक जेसे चक्रचीरीया चर्मखंडा दडधारी
फलाहारी तापसादि प्रात समय स्नान मञ्जन कर देव सभामें
इन्द्रभुवनमें अर्थात् अपने अपने माने हुए देवस्थानमे जाके उप
याग शून्य क्रिया करे उसे कुप्रवचन द्रव्यावश्यक कहते हैं। इति
द्रव्यनिक्षेपा।

(४) भावनिक्षेपा—जीस वस्तुका प्रतिपादन कर रहे हो
उसी वस्तुमे अपना संपुरण गुण प्रगट हो गया हो उसे भाव निक्षेप
कहते हैं जेसे अरिहन्तोका भाव निक्षेपा केवलज्ञान दर्शन संयुक्त
समवसरणमे विराजमानको भाव निक्षेप कहते है उन भावनि
क्षेप के दो भेद है (१) आगमसे (२) नो आगमसे। जिस्मे
आगमसे आगमोंका अर्थ उपयोग संयुक्त ' उवओगो भावो "
दूसरा नो आगम भावावश्यक के तीन भेद है (१) लौकीक भावा
वश्यक (२) लोकोत्तर भावावश्यक (३) कुप्रवचन भावावश्यक।

लौकीक भावावश्यक जेसे राज राजेश्वर युगराजा तलवर
माडम्बी कौटुम्बी सेठ सैनापति आदि प्रात समय स्नान मञ्जन
तीलक छापा कर अपने अपने माने हुये देवोंको भाव सहित

नमस्कार कर शुभे महाभारत, दोपहरको रामायण सुने उसे लौकीक भावावश्यक कहते है

लोकोत्तर भावावश्यक जैसे साधु साध्वि श्रावक श्राविकाओ तहमन्ने तहचित्ते तहलेश्या तहअध्यवसाय उपयोग सयुक्त आवश्यक दोनोवरवत प्रतिक्रमणादि नित्य कर्म करे उसे लोकोत्तर भावावश्यक कहते हैं।

कुप्रवचन भावावश्यक जैसे चक्रचीरीया चर्मखडा दडधारा फलाहारा तपसादि प्रात समय स्नान मज्जन कर गोपीचन्दन के तीलक कर अपने माने हुवे नाग यक्ष भूतादि के देवालय में भावसहित उँकार शब्दादिसे देव स्तुति कर भोजन करे उसे कुप्रवचन भावावश्यक कहते है इति भावनिक्षेप।

कीसी प्रकारके पदार्थ का स्वरूप जानना हो उनोको पहले च्यारों निक्षेपाओका ज्ञान हासल करना चाहिये। जैसे अरिहन्तोंके च्यार निक्षेप-नाम अरिहन्त सो नाम निक्षेपा-स्थापन अरिहन्त-अरिहन्तोंकि मूर्त्ति-द्रव्यारिहत तीर्थकर नाम गौत्र बन्धा उन समयसे केवलज्ञान न हो वहा तक—भाव अरिहन्त समवसरणमें विराजमान हो। इसी माफीक जीवपर च्यार निक्षेपा-नाम जीव सो नाम निक्षेपा, स्थापना जीव-जीवकि मूर्त्ति याने नरककी स्थापना एवं तीर्यंच-मनुष्य-देव तथा सिद्धोंकि जीव हो तों सिद्धोंकि मूर्त्ति-तथा सिद्ध एसा अक्षर लिखना, द्रव्य जीव-जीवपणाका उपयोग शुन्य तथा सिद्धोंका जीव हो तों जहा-तक चौदवा गुण स्थान वृत्ति जीव हो वह द्रव्य सिद्ध है। भाव जीव जीवपणाका ज्ञान हो उसे भाव जीव कहते है

इसी माफीक अजीव पदार्थोपर भी च्यार च्यार निक्षेप लगालेना जैसे नाम धर्मास्तिकाय सो नाम निक्षेपा है धर्मास्ति-

कायका सस्थानकि स्थापना करना तथा धर्मास्तिकाय एसा अक्षर लिखना सा स्थापना निक्षेपा है जहा धर्मास्तिकाय हमारे काममें नहीं आति हो वह द्रव्य धर्मास्तिकाय द्रव्य निक्षेपहै जहा हमारे चलन में सहायता करती हो उसे भावनिक्षेप भाव धर्मास्तिकाय है इसी माफीक जीतने जीवाजीव पदार्थ है उन सब पर च्यार च्यार निक्षेपा उत्तरादेना इति निक्षेप द्वार ।

(३) द्रव्य-गुण-पर्यायद्वारद्रव्य-धर्मास्तिकाय द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य, जीवद्रव्य पौद्गल द्रव्य-कालद्रव्य इन छ द्रव्यकागुण अलग अलग है जेसे चलन गुण स्थिर गुण अवगाहन गुणउपयोग गुणमीलन पुरणगुण, वर्तनगुण, यह षट् द्रव्यके गुण है इन षट्द्रव्यके अन्दर जो अगुरु लघु पर्याय है वह समय समयमें उत्पात व्यय हुवा करती है दृष्टान्त जेसें द्रव्य एक लड्डु है उनका गुण मधुरता और पर्याय मधुरता में न्युनाधिक होना जसे द्रव्य जीव गुण ज्ञानादि-पर्याय अगुरु लघु तथा पर्यायके दो भेद है (१) कम भावी (२) आतम भावी-जिस्मे कम भावी जो नरकादि च्यार गति केजीव अष्टकम पाश में भ्रमन करते सुख दु खकी पर्यायका अनुभव करे और आतमभावी जो ज्ञानदर्शन चारित्रको जेसा जेसा साधन कारन मीलता रहे वेसी वेसी पर्याय कि वृद्धि होती रहै ।

(४) द्रव्य क्षेत्र काल भाव द्वार—द्रव्य जीवा जीव द्रव्य-क्षेत्र आकाश प्रदेश काल समयावलिका यावत् काल-चक्र-भाव वर्ण गन्ध रस स्पर्श-जेसें मेरु पर्वत द्रव्यसे मेरु है क्षेत्रसे लक्ष योजनका क्षेत्र अवगाहा रखा है कालसे आदि अंत रहित है भावसे अनंतवर्ण पर्यय पय गन्ध रस स्पर्श पर्यय अनत है दुसरा दृष्टान्त द्रव्यसे एक जीव क्षेत्रसे असंख्यात प्रदेशी कालसे आदि

अन्त रहात भायमें ज्ञानदर्शन चारित्र मयुक्त इत्यादि सब पदा र्थोपर द्रव्यक्षेत्र काल भाव लगा लेना इन च्यारोंमे सबे स्तोक काल है उनसे क्षेत्र असंख्यात गुणा है कारण एक सूचीके निचे जितने आकाश आये है उनको एकेक समय में एकेक आकाशप्रदेश निकाले तो असंख्यात सर्पिणी उत्सर्पिणी व्यतित हो जावे उनसे द्रव्य अनत गुणे है कारण एकेक आकाश प्रदेशपर अनते अनन्ते द्रव्य है उनोंसे भाव अनत गुणे है कारण एकेक द्रव्यमें पर्याय अनंत गुणी है। जैसे कोइ मनुष्य अपने घरसे मन्दिरजी आया जिस्मे सर्व स्तोक काल स्पर्श कीया है उनोंसे क्षेत्र स्पर्श असं ख्यात गुणे कीया उनोंसे द्रव्यस्पर्श अनत गुणे कीया उनोंसे भाव स्पर्श अनतगुण कीया। भावना उपर लिखी माफीक समझना।

(५) द्रव्य-भाव—द्रव्य है सो भावको प्रगट करने में सहा-यता भूत है द्रव्य जीव अमर सास्वता है भावसे जीव असा स्वता है द्रव्यसे लोक साम्वता है भावसे लोक असास्वता है द्रव्यसे नारकी साम्वती भावसे असास्वती अर्थात् द्रव्य है सो मूल वस्तु है यह सदेव सास्वती है भाव वस्तुकि पर्याय है यह असास्वती है जैसे कीसी अमर ने पत्र काष्टको कारा उसमे रव भावसे (क) का आकार बन गया वह (क) अमरके लिये द्रव्य (क) है और उनी (क) को कीसी पडित देख उन (क) कि पर्याय को पेच्छान के कहा कि यह (क) है अमर के लिये वह द्रव्य (क) है और उन पडित के लिये भाव (क) है।

(६) कारण कार्य—कारण है सो कार्य को प्रगट करनेवाला है विगर कारण कार्य बन नहीं सकता है। जैसे कुंभकार घट बनाना चाहे तो दंड चक्रादि की सहायता अवश्य होना चाहिये जैसे किसी साहुकार को रत्नद्विप जाना है रहस्तामें समुद्र आ गया

जब नौका कि आवश्यकता रहती है रत्नद्विप जाना यह कार्य है। और रत्नद्विपमें पहुचने के लिये नाका मे बेठना यह नौका कारण है। कीसी जीव को मोक्ष जाना है उनोके लिये दान शील तप भाव पूजा प्रभावना स्वामि वात्सल्य सयम ध्यान ज्ञान मौन इत्यादि सब कारण है इन कारणासे कार्यकी सिद्धि हो मोक्षमे जा सक्ते है। कारण काय के च्यार भागा होते है।

(क) कार्य शुद्ध कारण अशुद्ध-जेसे सुबुद्धि प्रधान-दुगन्ध पाणी खाइसे लाके उनोंको विशुद्ध बना जयशत्रु राजाको प्रति बोध किया उन कारणमे यद्यपि अनते जीवादि हिंसा हुइ परन्तु कार्य विशुद्ध था कि प्रधानका इरादा राजाकोंप्रतिबोध देनेका था

(ख) कार्य अशुद्ध है और कारण शुद्ध जेसे जमाली अनगार ने कष्ट क्रिया तपादि बहुत ही उग्र कोटी का किया था परन्तु अपना कदाग्रह को सत्य बनाने का काय अशुद्ध था आखिर निन्हवों की पंक्ति मे दाखल हुवा।

(ग) कारण शुद्ध ओर कार्यभी शुद्ध जेसे गुरु गौतम स्वामि आदि मुनिवर्ग तथा आनंदादि श्रावकवर्ग इन महानुभावों का कारण तप सयम पूजा प्रभावना आदि कारण भी शुद्ध और वीतराग देवोंकी आज्ञा आराधन रूपकाय भी शुद्ध था

(घ) कारण अशुद्ध ओर काय भी अशुद्ध जेसे जीनोंकी क्रियादि प्रवृति भी अशुद्ध है कारण यज्ञ होम ऋतु दानादि भव वृद्धक क्रिया भी अशुद्ध और इस लाक पर लोक के सुखा कि अभिलाषा रूप काय भी अशुद्ध है

इस वास्ते शास्त्र कारोने कारण को मौख्यमाना है।

(७) निश्चय व्यवहार—व्यवहार है सो निश्चय को प्रगट करनेवाला है जिनशासनमे व्यवहारको बलवान माना है कारण

पहला व्यवहार होगा सो फीर निश्चय भी कभी आ जावे गे। जैसे निश्चयमें जीव अमर है व्यवहार मे जीव मरे जन्मे, निश्चयमे कर्मोका कर्ता कर्म है व्यवहारमे कर्मोका कर्ता जीव है, निश्चयमें जीव अव्याबाध गुणोका भोक्ता है व्यवहार में जीव सुखदु ग का भोक्ता है निश्चयमे पाणी चवे व्यवहार में घर चवे निश्चयमें आप जावे व्य० ग्राम आवे नि० वेल चाले व्य० गाडी चाले नि० पाणी पडे व्य० पनालपडे इत्यादि अनेक दृष्टान्तोंसे निश्चय व्यवहारको समजना चाहिये निश्चयकि श्रद्धना और व्यवहार कि प्रवृति रखना शास्त्रकारों कि आज्ञा है।

(८) उपादान निमत्त-निमत्त है सो उपादान का साधक बाधक है जेसे शुद्ध निमत्त मीलनेसे उपादानका साधक है अशुद्ध निमत्त मीलना उपादानका बाधक है। जैसे उपादान मातांके निमत्त पिताको पुत्रकि प्राप्ती हुइ-उपादान गौका निमत्त गोपा लको दुध की प्राप्ती हुइ। उपादान दुध निमत्त खटाइ दहीको प्राप्ती हुइ। उपादान दहीका निमत्त भोगने का घृतकि प्राप्ती हुइ उपादान गुरुका निमत्त सुशील शिष्य को ज्ञानकि प्राप्ती हुइ उपादान भव्य जीवको निमत्त ज्ञानदर्शन चारित्र तप ध्यान मौन पूजा प्रभावनादिका जीनसे मोक्षकी प्राप्ती हुई

(९) प्रमाण च्यार—प्रत्यक्ष प्रमाण, आगम प्रमाण अनुमान प्रमाण ओपमा प्रमाण जिस्मे प्रत्यक्ष प्रमाण के दो भेद ह (१) इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण (२) ना इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण के पाच भेद है श्रोत्रेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, चक्षु इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, घ्राणेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण रसेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, स्पर्शेन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, । नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण के दो भेद (१) देशसे (२) सर्वसे। जिस्मे देशसेका दो भेद अवधिज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण, मन पर्यव ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण, सर्वसेका एक भेद

केवलज्ञान नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण । अर्थात् जिस्के जरिये वस्तुको प्रत्यक्ष जानी जाये उसे प्रत्यक्ष प्रमाण कहा जाते है ।

(क) आगम प्रमाण—जो पदार्थका ज्ञान आगमोंद्वारा होते है उसे आगम प्रमाण कहते है उन आगम प्रमाण के बारहा भेद है आचारागसूत्र सूयगडायागसूत्र स्थानायागसूत्र समवायागसूत्र भगवतीसूत्र ज्ञातासूत्र उपासकदशांगसूत्र, अतगददशागसूत्र अनुत्तरोववाइदशागसूत्र प्रश्न-याकरणसूत्र विपाकसूत्र दृष्टिवादसूत्र-अथ तीर्थकरोंने फरमाया है सूत्र गणधरोंने गुथा है इस वास्ते अथ तीथकरों क फरमाये हुवे है वह सूत्र गणधरों क अत्तागम है और सूत्रोंका अर्थ गणधरोंके अनतरागम है और उनोंक शिष्योंके अथ परम्परागम है इति आगम प्रमाण

(ख) अनुमान प्रमाण—जो वस्तु अनुमानसे जानी जावे उसे अनुमान प्रमाण कहते है उन अनुमान प्रमाणके तीन भेद ह (१) पुव्व (२) सासव (३) दिट्ठि सामन्न । जिस्मे पुव्व के च्यार भेद है जेसे कीसी माताका पुत्र बचपनसे प्रदेश गया वह युवक अवस्थामें पीच्छा घरपर आया उन लडके को वह माता पूत्र के चिन्हौसे पेच्छाने जेसे शरीर के तीलसे, ममसे शिरसे नाकसे आखसे तथा कीसी प्रकारके चन्हसे माता जानेकि यह मेरा पुत्र है इसी प्रकार बेहनका भाइ स्त्रिका भरतार, मित्रका मित्र इनोंको अनुमान चन्हसे पेच्छाना जाय, यह पूव प्रमाण है दुसारा सासव अनुमान प्रमाण क पाच भेद है कज्जण, कारणेण गुणेण, आसवेण, अवयवण । जिस्मे कज्जेणका च्यार भेद है गुलगुलाट कर हस्ति जाने हणहणाट कर अश्व जाने, झणझणाट कर रथ जाने बलबलाट कर मनुष्य समुह जाने अर्थात् इन अनुमानसे उक्त वातों जाण सक ।

(क) कारणेणं के पाच भेद है यथा घटका कारण मट्टि है

न्तु मट्टिका कारण घट नही हैं। पट्टका कारण ततु है किन्तु
दा कारण पट्ट नही है। रोटीका कारण आटा हैं किन्तु आ
का कारण रोटी नही है। सुवर्णका कारण कसोटी हैं किन्तु
ोटीका कारण सुवर्ण नही है। मोक्षका कारण ज्ञान दर्शन
रित्र हैं किन्तु ज्ञान दर्शन चारित्रका कारण मोक्ष नही है।

(ख) गुणेणवे छे भेद है जैसे पुष्पोमे सुगन्धका गुण, सुव
ं कोमलताका गुण, दुधमें पौष्टिक गुण, मधुमें स्वादका गुण,
रडामे स्पर्शका गुण, चैतन्यमें ज्ञान गुण, परमेश्वरमे पर उप
रका गुण। इत्यादि।

(ग) आसरणका छे भेद हैं धुवेकों देख जाने कि यहा अग्नि
गा विद्युत् बादलोंकों देख जाने कि वर्षात होगे, बुद देखके
ाने कि यहा पाणी होगें। अच्छी प्रवृत्ति देख जाने कि यह कोइ
त्तम कुलका मनुष्य है। साधुकों देख जाने यह अच्छा शील म
यान होगे। प्रतिमा देख जाने यह परमेश्वरका स्वरूप है।

(घ) आवयवेणके अढारा भेद हैं। यथा—दान्ताशूल से
स्ति जाने, शृगकर भेमा जाने, शिखासे कुकट जाने तिक्षण
ाढांसे सुवर जाने, विचित्र वर्णवाली पांखो से मयूर जाने,
कन्धकर अश्व जाने, नखकर व्याघ्र जाने केशकर चमरी गौ
ाने लम्बी पुच्छ कर बदर जाने, दो पावसे मनुष्य जाने, च्यार
ावोंसे पशु जाने, बहु पावोसे कानशीलाया जाने केशरों करके
ार्दूलसिंह जाने, चुडीयों से ओरत जाने हथियार से सुभट
ाने, एक काव्यसे कवि जाने, एक शीतकर राधा हुवा अन्नाजकों
ाने। एक व्याख्यान से पडित जाने दयाका परिणाम करभव्य
ीय जाने, शासनकि रूचीसे सम्यग्दृष्टि जाने प्रतिबिंब देख परमे-
श्वर जाने इत्यादि-इतिसासव अनुमान प्रमाणके पाच भेद हुवे।
१२

(३) दिठ्ठिसामसवे अनेक भेद—जेसे सामान्य से विशेष जाने, विशेष से सामान्य जाने एक शिक्का रूपैयाको देख बहुत से रूपैयोंको जाने, एक देशक मनुष्यकों देख बहुत से मनुष्योंकों जाने इत्यादि। यह भी अनुमान प्रमाण है।

और भी अनुमान प्रमाण से तीन कालकि वार्ताको जाने जेसे कोइ प्रज्ञावन्त मुनि विहार करते किसो देशमे जाते समय बागबगीचे शुके हुवे देखे, धरती कादे कीचड रहीत देखी, लाटों स्थलोमे धानके समूह कम देखा, इसपर मुनिने अनुमान कीयाकि यहापर भूतकालमे दुर्भिक्ष था एसा संभव होते है। नगरमें जाने पर यहा बहुत से लोगोंके उचे उचे मकान देख मुनि गौचरी गये परन्तु पर्याप्त आहार न मीलनेसे मुनिने जाना कि यहा वर्तमान में दुर्भिक्ष वर्ते रहा संभव होते है मुनि विहारके दरम्यान पर्वत, पहाड भयंकर देखा दिशा भयोत्पन्न करनेवाली देखी, आकाश मे बादले विजली अमोघे उदगमच्छे धनुष्य बान न देखने से अनुमान कीया कि यहा भविष्यमें दुष्काल पडनेके चिन्ह दीखाइ देते है। इसी माफीक अच्छे चिन्ह देखनेसे अनुमान करते है कि यहापर भूत, भविष्य और वर्तमान कालमें सुभिक्षका अनुमान होते है यह सब अनुमान प्रमाण है।

(४) ओपमा प्रमाणके च्यार भेद है यथा—

(क) यथार्थ वस्तुकि यथार्थ ओपमा—जेसे पद्मनाभ तीर्थकर केसा होगा कि भगवान वीर प्रभु जेसा।

(ख) यथार्थ वस्तु और अनयथार्थ ओपमा जेसे नारकी, देवतोंका पल्योपम सागरोपमका आयुष्य यथार्थ है किन्तु उनोंके लिये एक योजन प्रमाण कुवाके अन्दर बाल भरना इत्यादि ओ-

पमा अनयथार्थ है कारण एसा कीसीने कीया नही है यह तो केवलीयोंने अपने ज्ञानसे देखा है जिसका प्रमाण बतलाया है।

(ग) अनयथार्थ वस्तु और यथार्थ ओपमा—जेसे

दोहा—पत्र पडा तो इम कहै। सुन तरवर वनराय
अबके बिछडियों कब मीले, दूर पडेंगे जाय ॥ १ ॥
तब तरूवर इम बोल्यों, सुन पत्र मुझ बात
हम घर यह ही रीत है, एक आवत एक जात ॥२॥
नही तरू पत्र बोलीया, नही भाषा नही विचार
वीर व्याख्यानी ओपमा, अनुयोग द्वार मझार ॥३॥

याने तरूवर और पत्रके कहनेका तात्पर्य यथार्थ है यह ओपमा यथार्थ परन्तु वस्तुगते वस्तु यथाथ नही है

(घ) अनयथार्थ वस्तु अनयथार्थ ओपमा अश्वके श्रृंग गर्दभ जेसे है और गर्दभके श्रृंग अश्व जेसे है न तो अश्वके श्रृंग है न गर्दभके श्रृंग है केवल ओपमा ही है इति प्रमाणद्वार।

(१०) सामान्य विशेषद्वार—सामान्य से विशेष बलवान है। जसे सामान्य द्रव्य एक विशेष द्रव्य दो प्रकारके है (१) जीवद्रव्य (२) अजीवद्रव्य सामान्य जीवद्रव्य एक, विशेष जीवद्रव्य दो प्रकारके (१) सिद्धोंके जीव (२) ससारी जीव सामान्य सिद्धोंके जीव विशेष सिद्धोंके जीव दो प्रकारके (१) अणतर सिद्ध (२) परम्पर सिद्ध इत्यादि सामान्य ससारी जीव एक प्रकार विशेष सयोगी अयोगी एव क्षीण मोह, उपशान्त मोह सकषाय-अकषाय-प्रमत्त-अप्रमत्त-सयति-असयति-असयति नारकी तीर्यच मनुष्य देवता इत्यादि। जो अजीवद्रव्य है सो सामान्य एक है विशेष दो प्रकारके है रूपी अजीव द्रव्य, अरूपी अजीव द्रव्य, सामान्य रूपी अजीव विशेष स्कन्ध देश प्रदेश

परमाणु पुद्गल सामान्य अरूपी अजीवद्रव्य विशेष धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आकाशद्रव्य कालद्रव्य इत्यादि सामान्य तीर्थंकर विशेष च्यार निक्षेपे नाम तीर्थंकर स्थापना तीर्थंकर, द्रव्य तीर्थंकर भाव तीर्थंकर सामान्य नाम तीर्थंकर विशेष वीस प्रकार से तीर्थंकर नाम कर्म बन्धता है, अरिहन्तोंकि भक्ति करनेसे यावत् समकितका उद्योत करनेसे (देखो भाग १ लेमें वीस बोल) सामान्य अरिहन्तोंकि भक्ति विशेष स्तुति गुणकीर्तन पूजा नाटक इत्यादि सामान्यमें विशेष विस्तारवाला है

(११) गुण और गुणी–पदार्थमें खास वस्तु है उसे गुण कहा जाते है और जो गुणको धारण करनेवाले है उस गुणी कहा जाता है यथा—गुणी जीव और गुणज्ञानादि, गुणी अजीव गुणवर्णादि। गुणी अज्ञान संयुक्त जीव गुणमिथ्यात्व गुणीपुष्प गुणसुगन्ध गुणीसुवर्ण गुणपीलास–कोमलता गुणी और गुण भिन्न नहीं है अर्थात् अभेद है।

(१२) ज्ञेय ज्ञान ज्ञानी—ज्ञेय जो जगतके घटपटादि पदार्थ है उसे ज्ञेय कहते है, उनोंका जानपणा वह ज्ञान और जाननेवाला वह ज्ञानी है ज्ञानी पुरुषोंके लिये जगतके सब पदार्थ वैराग्यका ही कारण है कारण इष्ट अनिष्ट पदार्थ सब ज्ञेय–जाननेलायक है सम्यग्ज्ञान उनोंका नाम है कि इष्ट अनिष्ट पदार्थोंको सम्यक् प्रकारसे यथार्थ जानना इसी माफीक ध्येय ध्यान ध्यानी–जो जगतके सब पदार्थ है वह ध्येय है, जिसका ध्यान करना वह ध्यान है और ध्यानके करनेवाला वह ध्यानी है।

(१३) उपन्नेवा, विगमेवा धूवेवा—उत्पन्न होना, विनाश होना ध्रुवपणे रहना यह जगतके सर्व जीवाजीव पदार्थमें एक समयके अन्दर उत्पात व्यय ध्रुव होते है जैसे सिद्ध भगवानने

जो पहले समय भाव देखा था वह उत्पात है उसी समय जिस पर्यायका नाश हो दुसरी पर्यायपणे उत्पन्न हुवा वह व्यय हो उसी समय है और सिद्धोंका ज्ञान है वह ध्रुव है जेसे किसीको बाजुबन्ध तोडाके चुडी करानी है तो चुडीका उत्पात बाजुका नाश और सुवर्णका ध्रुवपणा है। जैसे धर्मास्तिकायमे जो पहले समय पर्याय थी वह नाश हुइ, उसी समय नये पर्याय उत्पन्न हुवा और चलनादि गुण प्रदेशमें है वह ध्रुवपणे रहे इसी माफीक सर्व द्रव्यके अन्दर समझ लेना।

(१४) अध्येय और आधार—अध्येय जगतके घटपटादि पदार्थ आधार पृथ्वी अध्येय जीव और पुद्गल आधार आकाश, अध्येय ज्ञानदर्शन आधार जीव इत्यादि सर्व पदार्थमें समझना।

(१५) आविर्भाव-तिरोभाव—तिरोभाव जो पदार्थ दूर है आविभाव आकर्षित कर नजीक लाना जैसे घृतकी सत्ता घासके तृणोंमें होती है यह तिरोभाव है और गायके स्तनोंमें दुध है यह आविर्भाव है। गायके स्तनोंमे घृत दूर है और दुधमें नजदीक है दुधमे घृत दूर है और दहींमें नजदीक है दहींमे घृत दूर है और मक्खनमें नजदीक है इसी माफीक सयागीको मोक्ष दूर है अयोगीको मोक्ष नजदीक है वीतरागको मोक्ष नजदीक है, छद्मस्थको दूर है क्षपकश्रेणिको मोक्ष नजदीक है उपशमश्रेणिको मोक्ष दूर है इसी माफीक सकषाइ, अकषाइ, प्रमत्त, अप्रमत्त, सयति-असंयति, सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि यावत् भव्य-अभव्य।

(१६) गौणता-मौख्यता—जो पदार्थके अन्दर गुप्तपणे रहा हुवा रहस्यको गोणता कहते है जिस समय जिस वस्तुके व्या ख्यानकी आवश्यक्ता है शेष विषयको छोड उन्ही आवश्यक्ता वाली वस्तुका व्याख्यान करना उसे मौख्यता कहते है जैसे

ज्ञानसे मोक्ष होता है तो ज्ञानकी मौख्यता है और दर्शन चारित्र तप वीर्य क्रियादिकी गौणता हैं पुरुषार्थसे कार्यकी सिद्धि होती है इस्मे काल स्वभाव नियत पूर्वकर्मकी गौणता है और पुरुषार्थकी मौख्यता है आचारांगादि सूत्रमें मुनिआचारकी मौख्यता बतलाइ है, शेष साधन कारणोंको गौणता रखा है भगवति सूत्रादिमे ज्ञानकी मौख्यता बतलाइ गइ है, शेष आचारादि गौण तामें रखा है। जीस समय जीस पदार्थका मौख्यपणे बतलानेकी आवश्यक्ता हो उसे मौख्यपण ही बतलाना जसे कोयलका रंग मौख्यतामें श्यामवर्ण है शेष च्यार वर्ण, दो गन्ध पांच रस आठ स्पर्श गौणतामें है इसी माफीक याह्य दीसती वस्तुका व्याख्यान करे वह मौख्य है और उनोंके अन्दर अन्य धर्म रहा हुवा है वह गौण है।

(१७) उत्सर्गापवाद—उत्सर्ग है सो उत्कृष्ट मार्ग है और अपवाद है सो उत्सर्गमार्गका रक्षक है उत्सर्गमार्गसे पतित होता है उन समय अपवादका अवलम्बन कर उत्सर्गमार्गको अपने स्थानमे स्थिरीभूत कर सक्ते है इसी वास्ते महान रथको चलानेमें उत्सर्गापवाद दोनों धोरी माने गये है। जसे उत्सर्गमें तीन गुप्ति है उनोंके रक्षणमें पांच समिति अपवादमे है सथवा अहिंसा मार्गमें भी नदी उतरना, नौकामे बेठना नौकल्पी विहार करना यह उत्सर्गमें भी अपवाद है स्थिवरकल्प अपवाद है जिनकल्प उत्सर्ग है आचारांग दशवैकालिक प्रश्नव्याकरणादि सूत्रोंमे मुनि मार्ग है सो उत्सर्ग है और छेद सूत्रोंमे मुनि मार्ग है वह अपवाद है "करेमिभंते सामायिकं सव्व सावज्जं जोगं पच्चक्खामि" यह उत्सर्ग पाठ है जयचरे जयचिट्ठे' यह अपवाद पाठ है समयं गोयमा म पमाए" यह उत्सर्ग है संस्तारा पौरसीके पाठ अपवाद

है परिसह अध्ययनमे रोग आनेपर औषधि न करना उत्सर्ग है भगवतीसूत्रमे तथा छेदसूत्रोंमे निर्यथ औषधि करना अपवाद है इत्यादि इसी माफीक षट्द्रव्यमें भी उत्सर्गापवाद समझना ।

(१८) आत्मा तीन प्रकारकी है बाह्यात्मा, अभितरात्मा, परमात्मा जिस्मे जो आत्मा धन धान्य सुवर्ण, रुपा, रत्नादि द्रव्यकों अपना मान रखा है पुत्रकलत्र, मातापिता, बन्धव मित्रको अपना मान रखा है इष्ट सयोगमे हर्ष अनिष्ट संयोगमे शोक पुद्गल जो परवस्तु हे उसे अपनि मान रखी है जो कुच्छ तत्त्व समजते है तो उनी बाह्यसयोगको ही समजते है वह बाह्यात्मा उसे ज्ञानीयों भवाभिनन्दी मिथ्यादृष्टि भी कहते है। दुसरी अभितरात्मा जीस जनोने स्वसत्ता परसत्ताका ज्ञानकर परसत्ताका त्याग और स्वसत्तामे रमणता कर बाह्य सयोगको पर वस्तु समज त्यागबुद्धि रखे अर्थात् चोथा सम्यग्दृष्टी गुणस्थानसे लगाके तेरवे गुणस्थान तक के जीव अभितरात्माके जानना परमात्म—जीनोंके सर्व कार्य सिद्ध हो चुके सर्व कर्मोसे मुक्त हो लोकके उग्रभागमें अनत अव्याबाध सुखमि विराजमान है उसे परमात्मा कहते है तथा आत्मा तीन प्रकारके है स्वात्मा परात्मा परमात्मा जिस्मे स्वात्माको दमन कर निज सत्ताको प्रगट करना चाहिये, परात्माका रक्षण करना और परमात्माका भजन करना यह ही जैनधर्मका सार है ।

(१७) ध्यान च्यार-पदस्थध्यान अरिहन्तादि पाच पदोंके गुणोंका ध्यान करना पिंडस्थध्यान-शरीररूपी पिंडके अन्दर स्थित रहा हुवा अनत गुण सयुक्त चैतन्यका ध्यान करना अर्थात् अध्यात्मसत्ता जो चैतन्य के अन्दर रही हुइ है उन सत्ताके अन्दर रमणता करना। रुपस्थ ध्यान यद्यपि चैतन्य अरुपी है तदपि कर्म

सग रहनेसे अनेक प्रकारके नये नये रूप धारण करने पर भ
चैतन्य तो अरूपी है परन्तु छद्मस्थोंके ध्यानके लिये कीसी
कीसी आकारकि आवश्यक्ता है जैसे अरिहंत अरूपी है तथा
उनोंकि मूर्ति स्थापन कर उन शान्त मुद्राका ध्यान करना। रूप
तित ध्यान जो निरञ्जन निराकार निष्कलंक अमूर्ति अरूपी अ
मल अकल अगम्य अवेदी अखेदी अयोगि अलेशी इत्यादि
सच्चिदानन्द बुद्धानन्द सदानन्द अनन्त ज्ञानमय अनत दर्शनम
जो सिद्ध भगवान है उनोंके स्वरूपका ध्यान करना उसे-रूपा
तित ध्यान कहते है।

(२०) अनुयोग च्यार-द्रव्यानुयोग-जिस्मे जीवाजीव चे
तन्य जड कर्म लेश्या परिणाम अध्यवसाय कर्मबन्धके हेतु कार
सिद्धि सिद्धअवस्था इत्यादि स्वरूपको समजाये गये हो उसे द्रव्य
नुयोग कहा जाता है जिस्मे क्षेत्र पर्वत् पाहड नदी द्रह देवलो
नारकी चन्द्र सूर्य ग्रह इत्यादि गीणत विषय हो उसे गीनतानु
योग कहते है। जिस्मे साधु श्रावकके क्रिया कल्प कायदा अ
चार व्यवहार विनय भाषा व्यावच्चादिक व्याख्यान हो उ
चरण करणानुयोग कहते है जिस्के अन्दर राजा महाराजा शे
सेनापतियोंके शुभ चारित्र हो जिस्मे धर्म देशना वैराग्यमय उप
देश हो संसारकी असारता बतलाइ हो उसे धर्मकथानुयो
कहते है इति।

(२१) जागरणा तीन प्रकारकी है। बुद्ध जागरणा तीर्थंक
रोंकी केवलीयोंकी अबुद्ध जागरण-छद्मस्थमुनियोंकी सुदुक्ख ज
गरण श्रावकोंकी।

(२२) व्याख्या—उपचारनयसे एक वस्तुमें एक गुणक
मौख्यकर व्याख्यान करना जिस्का नौ भेद है।

(१) द्रव्यमें द्रव्यका उपचार जैसे काष्टमें वंशलोचन
(२) द्रव्यमें पर्यायका उपचार यह जीव ज्ञानवन्त है
(३ द्रव्यमे पर्यायका उपचार यह जीव सरूपवान है
(४) गुणमे द्रव्यका उपचार–अज्ञानी जीव है
(५ गुणमे गुणका उपचार–ज्ञानी होनेपरभी क्षमावहुतहै
(६) गुणमें पर्यायका उपचार–यह तपस्वी बडे रूपवन्त है
(७) पर्यायमे द्रव्यका उपचार–यह प्राणी देवलोका जीव है
(८) पर्यायमे गुणका उपचार–यह मनुष्य बहुत ज्ञानी है
(९) पर्यायमें पर्यायका उपचार–मनुष्य–श्यामवर्णका है

(२३) अष्टपक्ष–एक वस्तुमे अपेक्षा ग्रहनकर अनेक प्रकारकि व्याख्या हो सक्ती है, जैसे नित्य अनित्य, एक, अनेक सत्, असत्, वक्तव्य अवक्तव्य यह अष्टपक्ष एक जीवपर निश्चय और व्यवहारकि अपेक्षा उतारे जाते है यथा—

व्यवहारनयकि अपेक्षा जीव गतिमे उदासि भावमे वर्तता हुवा नित्य है और समय समय आयुष्य क्षीण होनेकि अपेक्षा अनित्य भी है। निश्चयनयकि अपेक्षा ज्ञान दर्शन चारित्रापेक्षा नित्य है और अगुरु लघु पर्याय समय समय उत्पात व्यय होनेकि अपेक्षा अनित्य भी है।

व्यवहार नयमे जीस गतिमे जीव उदासिभावमें वर्तता हुवा एक है और दुसरे माता पिता पुत्र स्त्रि बन्धवादिकि अपेक्षा आप अनेक भी है। निश्चयनयापेक्षा सर्व जीवोंका चैतन्यता गुण एक होनेसे आप एक है और आत्माके असंख्यात प्रदेश तथा पयेक प्रदेशमे गुण पर्याय अनंता अनंत होनेसे अनेक भी है।

व्यवहार नयकि अपेक्षा जीव जीस गतिमे वत रहा है उन गतिमे स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभावापेक्षा सत् है और पर द्रव्य परक्षेत्र परकाल परभावापेक्षा असत् है। निश्चयनयापेक्षा जीव अपने ज्ञानादि गुण अपेक्षा सत् है और पर गुण अपेक्षा असत् है।

व्यवहारनयापेक्षा मिथ्यात्व गुणस्थानसे चौदवा अयोगी केवली गुणस्थान तक कि व्याख्या केवली भगवान् करे वह वक्तव्य है और जो व्याख्या केवली कह नहीं सके वह अवक्तव्य है। निश्चयनयापेक्षा सिद्धोंके अनंतगुणोंसे जितने गुणोंकि व्याख्या केवली करे वह वक्तव्य है और जितने गुणोंकि व्याख्या केवलीभी न कर सके वह सब अवक्तव्य है। जीवकि आदि और सिद्धोंका अन्त सबके लिये अवक्तव्य है।

(२४) सप्तभंगी-स्यात् अस्ति, स्यात् नास्ति, स्यात् अस्ति नास्ति, स्यात् अवक्तव्य, स्यात् अस्ति अवक्तव्य स्यात् नास्ति अवक्तव्य, स्यात् अस्तिनास्ति युगपात् अवक्तव्य यह सप्तभंगी हर कोसी पदार्थ पर उतारी जाती है स्याद्वाद रहस्य अपेक्षामें ही रहा हुवा है एक वस्तुमें अनेक अपेक्षा है। यहापर सिद्ध भगवान् पर यह सप्तभंगी उतारी जाती है यथा-सिद्धोंमे स्यात् अस्ति स्यात् याने अपेक्षासे सिद्धोंमें स्वगुणोंका अस्ति है स्यात्नास्ति अपेक्षासे सिद्धोंमें परगुणोंकि नास्ति है स्यात् अस्ति नास्ति याने सिद्धोंमें स्वगुणोंकि अस्ति है और परगुणोंकि नास्ति भी है स्यात् अवक्तव्य-अस्तिनास्ति एक समय है किन्तु समयका काल स्वल्प होनेसे व्यक्तव्यता हो नही सके इस वास्ते अवक्तव्य है स्यात् अस्ति अवक्तव्य जीन समय अस्ति है किन्तु वह अवक्तव्य है। स्यात् नास्ति अवक्तव्य परगुणकी नास्ति है वह भी एक समय के लिये अवक्तव्य है स्यात् अस्ति नास्ति युगपत्

समय है अर्थात् अस्ति नास्ति एक समयमें है परन्तु है अवक्तव्य। कारण वचनके योगसे वक्तव्यता करनेमें असंख्यात समय लगते हैं वास्ते एक समय अस्तिनास्ति का व्याख्यान हो नही सक्ते हैं। इसी माफीक जीवादि सर्व पदार्थों पर सप्तभंगी लग सक्ती है। यह बात खास ध्यानमें रखना चाहिये कि जहां स्वगुणकी अस्ति होगे वहां परगुणकि नास्ति अवश्य है। इति

(२-) निगोदस्वरूपद्वार-निगोद दो प्रकार की है (१) सूक्ष्म निगोद (२) बादर निगोद जिस्मे बादर निगोद जेसे कन्दमूल कान्दा मूला आलु रताल पींडालु आदो अदवी सूवर्ण कन्द वज्रकन्द मयरकन्द निलण फूलण लसणादि इनोंमे अनन्त जीवोंका पढ है और जो सूक्ष्म निगोद है सो दो प्रकारकि है (१) व्यवहाररासी (२) अव्यवहाररासी जिस्मे अव्यवहाररासी है वह तों अभीतक बादर पणेका घर देखाही नहीं है उन जीवों की शास्त्रकारोंने कीसी प्रकारकी गणतीमें व्याख्या करीभी नहीं है जो अठाणु बोलादि अल्पाबहुत्व है उनमें जा जीवोंकि अल्प बहुत्व बतलाइ है वह सब व्यवहाररासी की अपेक्षा है उन व्यवहार रासीसे जीतने जीव मोक्ष जाते है व उतने ही जीव अव्यवहाररासीसे निकल व्यवहाररासी में आजाते है वास्ते व्यवहाररासीमें जीव कम नही होते है। व्यवहाररासी कि जो सूक्षम निगोद है उनोंका स्वरूप इस माफीक है।

सूक्षम निगोद के गोले सपूर्ण लोकाकाशमें भरा हुवा है एकभी आकाश प्रदेश एसा नही है कि जीसपर सूक्षम निगोदके गोले न हो सपूर्ण लोकका एक घन बनानेसे सात राजका घन होता है उनोंसे एकसूची अगुलक्षेत्र के अन्दर असंख्यात श्रेणि है प्रत्येक श्रेणिमें असंख्या २ परतर है। प्रत्येक परतर में अ

सरयात २ गोले है । पवेक गोले म असरयात २ शरीर है । पवत्र शरीर मे अनतेअनते जीव है पवेक जीवों के असख्यात २ आत्म प्रदेश है पवेक आत्म प्रदेशपर अनत अनत कम यगणार्वो है । पवक कम यगणा में अनन्ते अनते परमाणु है पवेक परमाणु में अनती अनंती पर्याय है पवेक परमाणु में अनंतगुण हानि वृद्धि हाती है यथा-अनतभाग हानि असरयातभाग हानि सख्यातभाग हानि सरयात गुण हानि असंरयातगुण हानि अनतगुण हानि । वृद्धि-अनतभाग वृद्धि असरयातभाग वृद्धि सग्यातभाग वृद्धि सरयातगुण वृद्धि असरयातगुण वृद्धि अनंतगुण वृद्धि । इसी माफीक पट्द्रन्य में भी समय समय पटगुण हानि वृद्धि हुवा करती है । पक शरीर में निगोद के जीव अनत ह वह पक सायमें साधारण शरीर बान्धते है साथ ही मे आहार लेते है साथ ही में श्वासोश्वास लेते है साथ ही मे उत्पन्न हाते है सायही मे चयते है उन जीवोंकों जन्ममरणकी कीतनी वेदना होती है जेसे कोइ अधा पगु वेहरा मुका जीव हो उनों के शरीर में महा भयकर सोलहा प्रकार के राजरोग हुवा है वह दुसरे मनुष्य से देखा नही जावे पसा दु खसे अनतगुण दु खों तों प्रथम रत्नप्रभा नरक में है उनोंसे अनतगुणा दु ख दुसरी नरक में पव तीजी चोथी पाचमी छठी नरक मे अनतगुण दु ख है छठी नरक करतों भी सातवी नरकमें अनतगुणा दु ख है उन सातवी नरक के उत्कृष्ट ३३ सागरोपम का आयुष्य के जीतने समय (असख्यात) हो उन पवेक समय सातवी नरकका उत्कृष्ट आयुष्य वाला भव करे उन असख्यात भवोंका दु ख को पकत्र कर उनों का वर्ग करे उन दु खसे सूक्ष्म निगोद में अनतगुणा दु ख है कारण वह जीव पक महुर्त मे उत्कृष्ट भव करे तो ६५५३६ भव करते है ससार मे जन्म मरणसे अधिक दुसरा कोइ दु ख नही है

हे भव्यजीवों यह अपना जीव अनतीवार उन सूक्ष्म बादर निगोदमे तथा नरकमें दु खों का अनुभव कर आया है इस समय मनुष्यादि अच्छी सामग्री मीली है वास्ते यह परम पवित्र पुरुषोंका फरमाया हुवा स्याद्वादनय निक्षेप द्रव्यगुण पर्यायादि अध्यात्म ज्ञान का अभ्यास कर अपनि आत्मामें रमणता करों ताके फीर उन दु खमय स्थानोंकों देखने का अवसर ही न मीले। सज्जनों! आधुनिक लोगों का आलस्य प्रमाद बहुत बढजानेसे बडे बडे ग्रन्थों कों अल्मारी में रख छोडते हैं इस वास्ते यह संक्षिप्त में सार लिख सूचना करते है कि इस सबन्ध का आप कठस्थ कर फीर रमणता करे ताके आपकि आत्मा को बडी भारी शान्ति मिलेगी। इति।

सेवभंते सेवभते—तमेव सचम्।

—→⊹←—

थोकडा नम्बर २२

—

(षट् द्रव्यके द्वार ३१)

नामद्वार आदिद्वार, सस्थानद्वार, द्रव्यद्वार, क्षेत्रद्वार, कालद्वार भावद्वार, सामान्यविशेषद्वार निश्चयद्वार नयद्वार, निक्षेपद्वार, गुणद्वार, पर्यायद्वार साधारणद्वार स्वामिद्वार, परिणामिकद्वार जीवद्वार, मूर्तिद्वार, प्रदेशद्वार एकद्वार, क्षेत्र द्वार क्रियाद्वार, कर्ताद्वार, नित्यद्वार, कारणद्वार, गतिद्वार, प्रवेशद्वार पृच्छाद्वार, स्पर्शनाद्वार, प्रदेशस्पर्शनाद्वार, अल्पाब हुत्वद्वार।

(१) नामद्वार—धर्मास्तिकायद्रव्य, अधर्मास्तिकायद्रव्य आकाशास्तिकायद्रव्य, जीवास्तिकायद्रव्य पुद्गलास्तिकायद्रव्य और कालद्रव्य

(२) आदिद्वार—द्रव्यकी अपेक्षा षट्द्रव्य अनादि है क्षेत्रकी अपेक्षा जो लोकव्यापक षट्द्रव्य है वह सादि है, एक आकाश नादि है कालकी अपेक्षा षट्द्रव्य अनादि है और भावापेक्षा षट्द्रव्यमें अगुरु लघु पर्यायका समय समय उत्पात व्ययापेक्षा सादि सान्त है। यद्यपि यहां क्षेत्रापेक्षा कहते हैं कि इस जम्बुद्विपके मध्यभागमे मेरुपर्वत है उनोंके आठ रुचक प्रदेश है उनोंके सस्थान निचे च्यार प्रदेश उनोंके उपर विषम याने दो दो प्रदेशपर एकेक प्रदेश रहा हुवा हैं, उन रुचक प्रदेशोंसे धर्मास्तिकायकि दो प्रदेशोंसे आदि है और फीर दो दो प्रदेश वृद्धि होती हुइ लो

आठ रुचक प्रदेशकी स्थापना

कान्त तक असंख्यात प्रदेशी चौतर्फ गइ है एवं अधर्मास्तिकाय एवं आकाशास्तिकाय परन्तु अलोकमें अनंतप्रदेशी भी है अधो उर्ध्व च्यार च्यार प्रदेशी है जीवका आदि अन्त नहीं है सर्व लोकव्यापक है पुद्गलास्तिकाय सब लोकव्यापक है कालद्रव्य प्रवर्तन रुप तो आढाइ द्विपमें ही है, कारण आढाइ द्विपके चन्द्र सूर्य चर है और जीवपुद्गलकी स्थिति पूर्णरुप सपुर्ण लोकमें है।
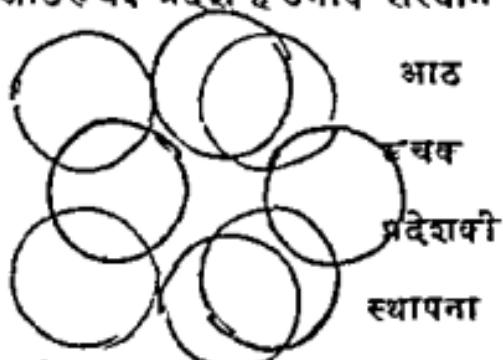
(३) सस्थानद्वार—धर्मास्तिकायका सस्थान गाडाका ओधणकी माफीक है कारण दो प्रदेश आगे च्यार च्यार आगे छे

छे आगे आठ, एव दो दो प्रदेश वृद्धि होनेसे लोकान्त तक असख्यात प्रदेशी है एव अधर्मास्तिकाय और आकाशा स्तिकायका सस्थान लोकमें ग्रीधाके आभरण जैसा और अलोकमें गाडाके ओधनाकार है जीव पुद्गलके अनेक प्रकारके सस्थान है कालका कोइ आकार नहीं है।

(४) द्रव्यद्वार—गुणपर्यायके भाजनकों द्र य कहते है जिस्मे समय समय उत्पाद व्यय होते रहे-कारण कार्य एकही समयमें हो जो एक समय कार्य में उत्पाद व्यय है उसी समय कारणका उत्पाद व्यय है मूलजों एक द्रव्य है उनोंका निश्चय दो खड नहीं होता है कारण जीवद्रव्य तथा परमाणुद्रव्य इनोंका विभाग नही होते है। अगर द्रव्यके स्कन्ध देश प्रदेश कहा जाते है यह सब उपचरित नयसे कहा जाते है। द्रव्यके मूल सामान्य छे स्वभाव है।

(१) अस्तित्व—नित्यानित्य परिणामिक स्वभाव।

(२) वस्तुत्व—गुणपर्यायका आधारभूत स्वभाव।

(३) द्रव्यत्व—षट्द्रव्य एकस्थानमें रहने परभी एकेक द्रव्य अपना अपना स्वभाव मुक्त नही होते है अर्थात् एक दुसरे स्वभावमें नहीं मीलते हुवे अपनि अपनि क्रिया करे।

(४) प्रमेयत्व—स्वात्मा परात्माका ज्ञान होना यह स्वभाव जीवद्रव्यमें है। शेषद्रव्यमें स्वपर्याय स्वभावकों प्रमेयत्व स्वभाव कहते है।

(५) सतत्व उत्पाद व्यय ध्रुव एकही समय होनेपर भी वस्तु अपने स्वभावका त्याग नही करती है।

(६) अगुरुलघुत्व-समय समय षट्गुण हानिवृद्धि होने पर भी अपने अपने गुणोंमें प्रणमते हैं।

द्रव्यके उत्तर सामान्य स्वभाव ।

(१) अस्तिस्वभाव-द्रव्य द्रव्यका गुणपर्याय क्षेत्र जिस क्षेत्रमे द्रव्य रहा हुवा है-काल द्रव्यमें उत्पात व्यय ध्रुव-भाव एक समय कारणकार्य स्वभाव। जेसे घटमे घटका अस्तित्व और पटमे पटका अस्तित्व ।

(२) नास्तिस्वभाव-एक द्रव्यकि अपेक्षा दुसरे द्रव्यमे वह द्रव्य क्षेत्र काल भाव नहिं है जसे घटमे पटकि नास्ति पटमें घटकि नास्ति ।

(३) नित्यस्वभाव-द्रव्यमे स्वगुणो प्रणमनका स्वभाव नित्य है

(४) अनित्यस्वभाव-द्रव्यमे परगुण प्रणमनेका स्वभाव अनित्य है ।

(५) एक स्वभाव-द्रव्यमें द्रव्यत्व गुण एक है

(६) अनेकस्वभाव-द्रव्यमें गुण पर्याय स्वभाव अनेक है

(७) भेदस्वभाव-आतम परगुणापेक्षा भेद स्वभाववाला है जेसे चतन्य कर्मसग परवस्तुकों अभेद मान रखी है तथपि चेतन्य जडत्वमें भेद स्वभाववाले है मोक्षगमन समय निजगुणोंसे जड भेद स्वभाववाले है

(७) अभेदस्वभाव-आत्माके ज्ञानादि गुण अभेद स्वभाववाले है

(९) भव्यस्वभाव-आत्माके अन्दर समय समय गुणपर्याय कारण कार्यपणे प्रणमते रहेना इनको भव्य स्वभाव कहेते है।

(१०) अभव्यस्वभाव-आत्माका मुल गुण कीसी हालतमे नही बदलता है याने हरेक द्रव्य अपना मुल गुणको नही पलटाते है

उसे अभव्य स्वभाव कहते है। अर्थात् भव्य कि अनेक विवस्थायों होति है और अभव्य कि विवस्था नही पलटती है।

(११) वक्तव्य स्वभाव—एक द्रव्यमे अनंत वक्तव्यता है उसमें जीतनि वक्तव्यता कर सके उसे वक्तव्य स्वभाव कहते है।

(१२) अवक्तव्य स्वभाव—शेष रहे हुवे गुणोंकि वक्तव्यता न हो उसे अवक्तव्य स्वभाव कहते है।

(१३) परम स्वभाव—जो एक द्रव्यमें गुण है वह कीसी दुसरे द्रव्यमें न मीले उसे परम स्वभाव कहते है। जैसे धर्मद्रव्यमे चलनगुण

द्रव्यके विशेष स्वभाव अनते है। षट्द्रव्यमें धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य आकाशद्रव्य यह एवेक द्रव्य है और जीवद्रव्य, पुद्गलद्रव्य अनते अनते द्रव्य है कालद्रव्य वर्तमानापेक्षा एक समय है वह अनते जीवपुद्गलोंकी स्थिति पुरण कर रहा है वास्ते उपचरितनयसे कालद्रव्यको भी अनते कहते है और भूत भविष्यकालके समय अनत है परन्तु उने यहापर द्रव्य नही माना है।

(५) क्षेत्रद्वार—जीस क्षेत्रमें द्रव्य रहे के द्रव्य कि क्रिया करे उसे क्षेत्र कहते हैं धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य जीवद्रव्य और पुद्गलद्रव्य यह च्यार द्रव्य लोक व्यापक है। आकाशद्रव्य लोकालोक व्यापक है कालद्रव्य प्रवर्तन रूप आढाइ द्विप व्यापक है और उत्पाद व्यय रूप लोकालोक व्यापक हैं।

(६) कालद्वार—जीस समय में द्रव्य क्रिया करते है उसे काल कहते हैं धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आकाशद्रव्य-द्रव्यापेक्षा आदि अन्त रहित है और गति गमनापेक्षा सादि सान्त है। पुद्गल द्रव्य द्रव्यापेक्षा आदि अन्त रहीत है द्विप्रदेशी तीन प्रदेशी यावत् अनत प्रदेशी अपेक्षा सादि सान्त है। कालद्रव्य-द्रव्यापेक्षा आदि अन्त रहीत है और वर्तमान समयापेक्षा सादि सान्त है।

(७) भावद्वार—धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य जीव द्रव्य कालद्रव्य यह पाचद्रव्य अरूपी है वर्ण गन्ध रस स्पर्श रहीत है और पुद्गलद्रव्य रूपी-वर्ण गंध रस स्पर्श संयुक्त है तथा जीव शरीर संयुक्त होनेसे यह भी वर्णादि संयुक्त है परन्तु चैतन्य निजगुणापेक्षा अमूर्त्ति है।

(८) सामान्य विशेषद्वार—सामान्यसे विशेष बलवान है जेसे सामान्य द्रव्य एक-विशेष जीवद्रव्य अजीवद्रव्य सामान्य धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है विशेष धर्मद्रव्यका चलन गुण है सामान्य धमद्रव्यका चलन गुण है विशेष चलन गुण कि अनंत अगुरु लघु पर्याय है इसी माफीक सर्व द्रव्य मे समझना।

(९) निश्चय व्यवहारद्वार—निश्चय से षटद्रव्य अपने अपने गुणों में प्रवृत्ति करते है और व्यवहार में धमद्रव्य जीवा जीव द्रव्यकों गमनागमन समय चलन सहायता करे अधर्मद्रव्य स्थिर सहायता, आकाशद्रव्य स्थान सहायता करते है, जीव व्यवहारसे रागद्वेष में प्रवृति करते है, पुद्गल द्रव्य गलन मीलन सडन पडनादि मे प्रवृते काल-जीवाजीव कि स्थितिको पुरण करे। तात्पर्य यह है कि व्यवहार में सहायक हो तों अपने गुणोंसे उसे सहायता करे अगर सहायक न हो तो भी द्रव्य अपने अपने गुणमें प्रवृति करते ही रहते है जेसे अलोक में आकाशद्रव्य है किन्तु वहा अवगाहान गुण लेने के लिये जीवाजीव सहायक नही होने पर भी अवगाहन गुण में षट्गुण हानिवृद्धि सदैव हुवा करती है इसी माफीक सब द्रव्यमें समझना।

(१०) नयद्वार—धर्मास्तिकाय-एमा तीन काल में नाम होने से नैगमनय धर्मास्तिकाय माने धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश में चलनगुण सत्ताकों संग्रहनय धर्मास्ति माने धर्मास्ति काय के स्कन्ध देश प्रदेश रूपी विभागकों व्यवहारनय धर्मास्ति-

काय माने , जीवाजीवकों चलन सहायता देते हुये को ऋजुसूत्र नय धर्मास्तिकाय माने एव अधर्मास्तिकाय, परन्तु ऋजुसूत्रनय स्थिर और आकाशास्तिकाय में ऋजुसूत्रनय अवगाहान पुद्गलास्तिकाय में ऋजुसूत्र-गलन मीलन-और कालमे ऋजुसूत्रनय वर्त्तमान गुणकों काल माने। जीवद्रव्य, नैगमनय नाम जीवकों जीव माने समग्रहनय असंख्यात प्रदेशकों जीव माने व्यवहार नय त्रस स्थावर जीवोंकों जीव माने ऋजुसूत्रनय सुख दुःख भोगवते हुये जीवोंको जीव माने शब्दनय वाला क्षायक सम्यक्त्व कों जीव माने समभिरूढनय वाला केवलज्ञानीकों जीव माने एवमूतनयवाला सिद्धोंकों जीव माने।

(११) निक्षेपद्वार-धर्मास्तिकायका नाम है सो नाम निक्षेप है, धर्मास्तिकाय कि स्थापना (प्रदेशों) तथा धर्मास्तिकाय ऐसा अक्षर लिखना उसे स्थापना निक्षेप कहते है जहांपर धर्मास्तिकाय हमारे उपयोगमे अर्थात् सहायता न दे वह द्रव्य धर्मास्तिकाय और हमारे उपभोग में आवे उसे भाव धर्मास्तिकाय कहते है। एव अधर्मास्तिकाय के भी च्यार निक्षेप परन्तु भाव निक्षेप स्थिरगुणमें वर्ते एव आकाशास्तिकाय परन्तु भावनिक्षेप-अवग्गहान गुणमे वर्ते। जीवास्तिकाय उपयोग शून्यकों द्रव्यनिक्षेप और उपयोग संयुक्त कों भावनिक्षेप एव पुद्गलास्तिकाय परन्तु गलन मीलन कों भाव निक्षेप कहते है एव काल द्रव्य परन्तु भाव निक्षेप जीवाजीव कि स्थितिकों पुरण करते हुये कों भावनिक्षेप कहते है।

(१२) गुणद्वार—षट्द्रव्यों में प्रत्येक च्यार च्यार गुण है।
धर्मास्तिकाय—अरूपी अचैतन्य अक्रिय चलन।
अधर्मास्तिकाय ,, ,, ,, स्थिर।
आकाशास्तिकाय ,, ,, ,, अवगाहान।

जीवास्तिकाय चैतन्य अक्रिय उपयोग।
, अनंत-ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य
पुद्गलास्ति— रूपी अचैतन्य-सक्रिय गलनपूरण
काल द्रव्य—अरूपी अचतन्य अक्रिय वर्तन

(१३) पर्यायद्वार षट्द्रव्यों कि प्रत्येक च्यार च्यार पर्याय है
धर्मद्रव्य स्कन्ध देश प्रदेश अगुरु लघु
अधर्मद्रव्य , , ,, ,
आकाशद्रव्य , ,, ,, ,
जीवद्रव्य अव्याबाद अनावगहान अमूर्त अगुरुलघु
पुद्गलद्रव्य वर्ण गन्ध रस स्पर्श ,,
कालद्रव्य भूत भविष्य वर्तमान ,

(१४) साधारणद्वार—जो धर्म एक द्रव्यमें है वह ध
दुसराद्रव्यमें मीले उसे साधारण धर्म कहते है जैसे धर्म द्रव्य
अगुरु लघु धर्म है यह अधर्म द्रव्यमें भी है एव षट् द्रव्य में अ
लघु धर्म साधारण है और असाधारण गुण जो एक द्रव्य में
है वह दुसरे द्रव्य में न मीले। जैसे धर्मद्रव्य में चलन गुण
वह शेष पांचों द्रव्य में नहीं उसे असाधारण गुण कहते है।
अधर्म द्रव्य में स्थिर गुण आकाश में अवगाहन गुण जी
चैतन्य गुण पुद्गल मे मीलन गुण काल मे वर्तन गुण यह
असाधारण गुण है यह गुण दुसरे कीसी द्रव्य मे नहीं मी
है। पांच द्रव्य अजीव परित्याग करने योग है एक जीव
ग्रहन करने योग्य है। पांच द्रव्य अरूपी है एक पुद्गल
रूपी है।

(१५) स्वधर्मीद्वार—षट्द्रव्यों मे समय समय उ
न्यय पणा है यह स्वधर्मी है कारण अगुरु लघु पर्यायमें
समय षट्गुण हानि वृद्धि होती है यह छहों द्रव्योंमें होतं

(१६) परिणामिद्वार—निश्चय नयसे षट्द्रव्य अपने अपने गुणों मे सदैव परिणमते है वास्ते परिणामि स्वभाव वाले है और व्यवहार नयसे जीव और पुद्गल अन्याअन्य स्वभावपणे परिणमते है जेसे जीव, नरक तीर्यच मनुष्य देवतापणे और पुद्गल द्वि प्रदेशी यावत अनत प्रदेशी पणे परिणमते है।

(१७) जीवद्वार—षट् द्रव्य में पाच द्रव्य अजीव है और एक जीव द्रव्य है सो जीव है वह असंख्यात आत्म प्रदेश ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य गुण सयुक्त निश्चय नयसे कर्मोका अकर्ता अभक्ता सिद्ध सामान्य है।

(१८) मूर्तिद्वार— षट् द्रव्य में पाच द्रव्य अमूर्त्ति याने अरूपी है एक पुदगल द्रव्य मूर्तिमान है परन्तु जीव जो कर्म सगसे नये नये शरीर धारण करते है उनापेक्षा जीव भी उपचरित नयसे मूर्तिमान है।

(१९) प्रदेश द्वार—षट् द्रव्य में पाँच द्रव्य सप्रदेशी है एक काल द्रव्य अप्रदेशी है कारण-धर्म द्रव्य अधम द्रव्य असख्यात प्रदेशी है एक जीव के असख्यात्त प्रदेश है और अनत जीवों के अनंत प्रदेश है आकाश द्रव्य अनत प्रदेशी है। पुदगल द्रव्य निश्चय नयसे तो परमाणु है परन्तु अनते परमाणु एकत्र होनेसे अनत प्रदेशी है काल द्रव्य वर्तमान एक समय होनेसे अप्रदेशी है भूत भविष्य काल अनत है।

(२०) एकद्वार—षट् द्रव्योंमे धर्म द्रव्य अधमद्रव्य आकाश द्रव्य यह प्रत्येक प्रत्येक द्रव्य है जीव पुद्गल-और कालद्रव्य अनते अनते द्रव्य है।

(२१) क्षेत्रद्वार-एक आकाश द्रव्य क्षेत्र है और शेष पाच

द्रव्य क्षेत्र में रहनेवाले क्षेत्री है अर्थात् एक आकाश प्रदेशपर धर्मास्ति अधर्मास्ति जीव पुद्गल और काल द्रव्य अपनि अपनि क्रिया करते हुवे भी एक दुसरे व अन्दर नही मीलते है।

(२२)—क्रियाद्वार–निश्चय नयसे षट् द्रव्य अपनि अपनि क्रिया करते है परन्तु व्यवहार नयसे जीव और पुद्गल क्रिया करते है शेष च्यार द्रव्य अक्रिय है।

(२३) नित्यद्वार—द्रव्यास्तिक नयसे षट् द्रव्य नित्य शास्वते है और पर्यायास्तिक नयसे (पयायापेक्षा) षट् द्रव्य अनित्य हैं व्यवहार नयसे जीव द्रव्य और पुद्गल द्रव्य अनित्य है शेष च्यार द्रव्य नित्य है।

(२४) कारणद्वार--पाच द्रव्य है सो जीव द्रव्य के कारण है परन्तु जीव द्रव्य पाचों द्रव्यों के कारण नहीं है। जेसे जीव द्रव्य कर्ता और धर्मास्तिकाय द्रव्य कारण मीलनेसे जीव के चलन कार्य कि प्राप्ती हुइ इस माफीक सब द्रव्य समझना

(२५) कर्ताद्वार–निश्चय नयसे षट् द्रव्य अपने अपने स्व भाव काय के कर्ता है और व्यवहार नयसे जीव आर पुद्गल कर्ता है शेष च्यार द्रव्य अकर्ता है।

(२६) सर्व गतिद्वार--आकाश द्रव्य कि गति सब लोका लोक मे है शेष पाच द्रव्य लोक व्यापक होनेसे लोक मे गति है।

(२७) अप्रवेश—एक आकाश प्रदेशपर धर्म द्रव्य चलन क्रिया करे अधर्म द्रव्य स्थिर क्रिया करे आकाश द्रव्य अव गाहान, जीव उपयोग गुण पुद्गल गलन मीलन काल वर्तमान क्रिया करे परन्तु एक दुसरे कि गतिको रक सके नहि एक दुसरे मे मील सके नहीं जेसे एक दुकान में पाच व्यपारी बेठे हुवे अपनि

अपनि कार रवाइ करे परन्तु एक दुसरेकों न तों बादा करे न एक दुसरे से मीले। इसी माफिक पट् द्रव्य समझ लेना।

(२८) पृच्छाद्वार—क्या धर्मास्तिकाय के एक प्रदेशकों धर्मास्तिकाय कहते है ? यहापर एवभूत नयसे उत्तर दिया जाता है कि एक प्रदेशकों धर्मास्तिकाय नहीं कहा जावे। एव दो तीन च्यार पाच यावत् दश प्रदेश सख्याते प्रदेश असख्याते प्रदेश मय धर्मास्तिकायसे एक प्रदेश कम हानेसे भी धर्मास्तिकाय नही कही जावे तर्क—क्या कारण है ? उ—समाधान खडे दडकों संपुरण दड नही कहा जाते है एव खड छत्र चक्र चर्म इत्यादि जहा तक सपुरण वस्तु, न हो वहा तक एवभूतनय उन वस्तुकों वस्तु नही माने इस वास्ते सपुरण लोक व्यापक असंख्यात प्रदेशी धर्मास्तिकाय कों धर्मास्तिकाय कहते हैं एव अधर्मास्तिकाय एव आकाशास्तिकाय परन्तु प्रदेश अनत कहना एव जीव पुद्गल और काल समझना।

लोकका मध्य प्रदेश रत्नप्रभा नाम पहली नरक १८०००० योजनकी है उनोंके निचे २०००० योजनकी घणोदधि असख्यात योजनका घणवायु असख्यात योजनका तनवायु उनोंके निचे जो असख्यात योजनका आकाश है उन आकाशके असख्यातमे भागमे लोकका मध्य प्रदेश है इसी माफीक अधो लोकका मध्य प्रदेश चोथी पङ्कप्रभा नरकके आकाश कुच्छ अधिक आदा चले जानेपर अधो लोकका मध्य प्रदेश आता है। उर्ध्व लोकका मध्य प्रदेश पाचवा देवलोकके तीजा रिष्टनामका परतरमें है। तीर्च्छा लोकका मध्य प्रदेश मेरूपर्वतके आठ रूचक प्रदेशोंमें हैं। इसी माफीक धर्मास्तिकायका मध्य प्रदेश अधर्मास्ति कायका मध्य प्रदेश आकाशास्ति कायका मध्य प्रदेश समझना, जीवका मध्य प्रदेश आत्मा के आठ रूचक प्रदेशोंमें हैं, कालका मध्य प्रदेश वर्तमान समय है।

(२९) स्पर्शना द्वार-धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकायको स्पश नही करते है-कारण धर्मास्तिकाय एक ही है। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकायको सपुरण स्पर्श करी है एव लोकाकाशास्तिकाय को एव जीवास्तिकायको एव पुद्गलास्तिकायको कालको कहा पर स्पर्श कीया है कहापर न भी कीया है, कारण काल आढाइ द्विपमे ही है। एव अधर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकायका स्पश नही करे शेष धर्मास्तिवत् एव लोकाकाशास्ति-कारण सपुरण आकाश लोकालोक व्यापक है। अलोकाकाश शेष पाच द्रव्योंको स्पश नही करते है। एव जीवास्तिकाय, जीवास्ति कायका स्पश नही कीया है कारण जीवास्तिकायका प्रश्न होनेसे सब जीव समावस होगये शेष धर्मास्तिवत् एवं पुद्गलास्ति काय पुद्गलास्ति कायका स्पर्श नही किया शेष धर्मास्तिवत् एव काल, कालको स्पश नही करे शेष पाच द्रव्योंको आढाइ द्विपमें स्पश करे शेष क्षेत्रमे स्पश नही करे।

(३०) प्रदेश स्पशनाद्वार-धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकायके कीतने प्रदेश स्पश करे ? जघ य तीन प्रदेश-कारण अलोककि व्याघत आनेसे लोकके चरम प्रदेशपर तीन प्रदेशांका स्पश करे उत्कृष्ट छे प्रदेशांका स्पर्श करे कारण च्यार दिशाके च्यार, अधो दिशामे एक, उर्ध्व दिशमें एक । धर्मास्ति काय अधर्मास्तिकायके जघन्य च्यार प्रदेश स्पर्श करे उ० सात प्रदेश स्पर्श करे भावना पूर्ववत् यहा विशेष इतना है कि जहा धर्म प्रदेश है वहा अधर्म प्रदेश भी है वास्ते ४-७ प्रदेश कहा है। धर्मास्तिका एक प्रदेश, आकाशास्तिका ज० सात प्रदेश, और उत्कृष्ट भी सात प्रदेश स्पश करे कारण आकाशके लिये अलोक कि व्याघात नही है। धर्म० एक प्रदेश जीव पुद्गल के अनंत प्रदेश स्पर्श करते है कारण एकेक आकाशपर जीव पुद् गलके अनंत प्रदेश है। एक धर्म० प्रदेश कालके प्रदेशको स्यात्

स्पर्श करे स्यात् न भी करे कारण आढाइ द्विपके अन्दर जो धर्मास्ति है वह तो कालके प्रदेशको स्पर्श करे वह अनत प्रदेश स्पर्श करे यहा उपचरित नयसे कालके अनत प्रदेश माना है और जो आढाइद्विपके बाहार धर्मास्ति है वह कालके प्रदेश स्पर्श नही करते है। इसी माफीक अधर्मास्तिकाय भी समझना स्वकाया पेक्षा ज० तीन प्रदेश उ० छे प्रदेशपर कायापेक्षा धर्मास्तिकाय वत्-आकाशास्तिकायका एक प्रदेश-धर्मद्रव्यका जघन्य १-२-३ प्रदेश स्पर्श करे उ० सात प्रदेश स्पर्श करे-कारण आकाशास्ति अलोकमे भी है वास्ते लोकके चरमान्तमे एक प्रदेश भी स्पर्श कर सक्ते हैं। शेष धर्मास्ति कायवत् जीवका एक प्रदेश धर्मास्तिकायका ज० च्यार उ० सात प्रदेशोका स्पर्श करते है शेष धर्मास्तिवत। पुद्गलास्तिकायका एक प्रदेश-धर्मास्तिकायके ज० च्यार उ० सात प्रदेश स्पर्श करते है शेष धर्मास्तिकायवत्। कालका एक समय धर्मास्तिकायको स्यात् स्पर्श करे स्यात् न भी करे जहापर करते है वहा ज० च्यार उ० सात प्रदेश स्पर्श करे शेष धर्मास्तिकायवत। पुद्गलास्तिकायके दो प्रदेश-धर्मास्तिकायके ज० दुगुणासे दो अधिक याने छेप्रदेश उत्कृष्ट पाच गुणासे दो अधिक याने बारहा प्रदेश स्पर्श करे एव तीन च्यार पाच छे सात आठ नौ दश सख्याते असख्याते अनते सब जगह जघन्य दुगुणोसे दो अधिक उ० पाचगुणासे दो अधिक

(३१) अल्पाबहुत्वद्वार-द्रव्यापेक्षा सर्व स्तोक धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आकाशद्रव्य तीनो आपसमे तुल्य है कारण तीनोका एकेक द्रव्य है उनोसे जीवद्रव्य अनत गुणे है उनोसे पुद्गलद्रव्य अनंत गुणे है कारण एकेक जीवके अनते अनते पुद्गलद्रव्य लगे हुये है। उनोसे काल द्रव्य अनत गुणे है इति। प्रदेशापेक्षा, सर्व स्तोक धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य के प्रदेश है कारण दोनोके प्रदेश असख्याते २ है (२) उनोसे जीव प्रदेश अनंतगुणे है (३) उनोसे

पुद्गल प्रदेश अनत गुणे है (४) उनोंसे काल प्रदेश अनतगुणे है (५) उनोंसे आकाश प्रदेश अनत गुणे है इति। द्रव्यप्रदेशों की सामिल अल्पाबहुत्य। सब स्तोक धमद्रव्य अधर्मद्रव्य आकाश द्रव्य इनोंके आपसमे तुल्य द्रव्य है (२) उनोंसे धर्मप्रदेश अधम प्रदेश आपसमें तुले असख्यात गुने है (३) उनोंसे जीवद्रव्य अनंत गुणे है (४) उनोंसे जीव प्रदेश असख्यात गुणे है (५) उनोंसे पुद्गलद्रव्य अनंतगुणे (६) उनोंसे पुद्गल प्रदेश असख्यातगुणे (७) उनोसे काल द्रव्यप्रदेश अनतगुणे (८) उनोसे आकाश प्रदेश अनतगुणे। इति।

सेव भंते सेव भंते—तमेवसच्चम्

—※(◎)※—

थोकडानम्बर २३

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद ११ वा)

(भाषाधिकार)

(१) भाषा की आदि जीवसे है अर्थात् भाषा जीवोंके होती है। अजीव क नही अगर कीसी प्रयोगसे अजीव पदार्थो से अवाज आति हो उसे भाषा नही कही जाती है वह तो जीतना पावर भरा हो उतनाही अवाज हो जाते है वह भी जीवोंकीही सत्ता समजना चाहिये।

(२) भाषाकी उत्पत्ति-तीन शरीरोंसे है औदारीक शरीरसे वैक्रियशरीरसे, आहारीक शरीरसे, और तेजस कारमण यह दो शरीर सूक्ष्म है वास्ते भाषा इनोंसे बोली नही जाती है।

(३) भाषाका सस्थान वज्रसा है कारण भाषाका पुद्गल है वह वज्रके सन्थानवाला है

(४ भाषा के पुद्गल उत्कृष्ट लोकान्त तक जाते हैं।

(५। भाषा दो प्रकारकी है पर्याप्तभाषा, अपर्याप्तभाषा, जैसे सत्यभाषा, असत्यभाषा पर्याप्ति है और मिश्रभाषा, व्यवहार भाषा अपर्याप्ति है

(६) भाषा-समुच्चयजीव और तसकाय के १९ दडकों के जीव भाषावाले है और पाच स्थावर तथा सिद्ध भगवान अभाषक है सर्वस्तोक भाषक जीव, उनोसे अभाषक अनंतगुणे है।

(७) भाषा च्यार प्रकार की है सत्यभाषा असत्यभाषा मिश्रभाषा, व्यवहार भाषा, समुच्चयजीव और नरकादि १६ दडकमें भाषा च्यारों पावे तीन वैकलेन्द्रियमे भाषा एक व्यवहार पावे पाच स्थावरमे भाषा नही है। एक बोल।

(८। भाषा पणे जो जीव पुद्गल ग्रहन करते है वह क्या स्थित पुद्गल याने स्थिर रहा हुवा-अथवा आत्माके अदूर स्थिर पुद्गल ग्रहन करते है या-अस्थिर-चलाचल अथवा आत्मासे दूर रहे पुद्गल ग्रहन करते है ? जीव जो भाषापणे पुद्गल ग्रहन करते है वह स्थिर आत्माके नजदीक रहे पुद्गलों को ग्रहन करते है। जो पुद्गल भाषापणे ग्रहन करते है वह द्रव्य क्षेत्र काल भावसे।

(क) द्रव्यसे एक प्रदेशी दो प्रदेशी तीन प्रदेशी यावत् दश प्रदेशी सख्यात प्रदेशी असख्यात प्रदेशी पुद्गल बहुत सूक्षम होनेसे भाषा वर्गणा के लेने योग्य नही है अनंत प्रदेशी द्रव्य भाषापणे ग्रहन करते है। एक बोल

(ख) क्षेत्रसे अनत प्रदेशी द्रव्यभी कीतनेकतो अति सूक्षम

होनेसे भापापणे अग्रहन है जैसे एक आकाश प्रदेश अवगाह्य एवं दो तीन यावत् संख्यात प्रदेश अवगाह्ये नही लेते है किन्तु असंख्यात प्रदेश अवगाह्या अनंत प्रदेशी द्रव्य भापापणे लीये जाते है। एक बोल।

(ग कालसे एक समयकि स्थितिवाले एव दो तीन यावत् दश समयकि स्थिति संख्यात समयकि स्थिति असंख्यात समयकि स्थिति के पुद्‌गल भापापणे ग्रहन करते है। कारण स्थिति है सो सूक्ष्म पुद्‌गलों कि भी एक समय यावत् असंख्यात समयकि होती है और स्थुल पुद्‌गलों की भी एक समय से असंख्यात समयकि स्थिति होती है। इस वास्ते एक समय से असंख्यात समयकि स्थिति के द्रव्य ग्रहन करते है एवं १२ बोल।

(घ भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श के पुद्‌गल जीव भापापणे ग्रहन करते है वह वर्ण से चाहे एक वर्ण का हो चाहे दो तीन च्यार पांच वर्णका हो, एक वर्ण होनेसे चाहे वह श्याम वर्ण हो, चाहे हरा-लाल-पीला-सुपेद वर्णका हो, अगर श्याम वर्णका होनेपर चाहे वह एक गुण श्याम वर्ण हो दो तीन च्यार यावत् दश गुण श्याम वर्ण संख्यातगुण श्याम वर्ण ११ असंख्यात गुण श्याम वर्ण १२ अनंतगुण श्यामवर्ण १३ हो जैसे एक गुणसे अनंत गुण एवं तेरहा बोलोंसे श्याम वर्ण कहा है इसी माफीक पांचों वर्ण के ६५ बोल एवं गन्ध में सुभिगन्ध दुभिगन्ध के तेरहा तेरहा बोल २६ रसके तिक्त कटुक कषाय आबिल मधूर के तेरह तेरह बोलोंसे ६५ स्पर्श में एक-दो-तीन स्पर्श के द्रव्य भापापणे नही लेते है किन्तु च्यार स्पर्शवाले द्रव्य भापापणे लिये जाते है यथा-शीतस्पर्श उष्णस्पर्श, स्निग्ध स्पर्श, रूक्ष स्पर्श जिस्मे एक गुणशीत दो तीन च्यार पांच छे सात आठ नौ दश संख्यात असंख्यात और अनंते गुण शीत स्पर्श के द्रव्य भापापणे ग्रहन करते है इसी माफीक उष्णके १३ स्निग्धके १३ रूक्षके १३ एवं

सर्व संख्या द्रव्यका एक बोल, अनत प्रदेशी स्कन्ध, क्षेत्रका एक बोल असंख्यात प्रदेशो उगाहा काल के बारहा बोल एक समयसे असंख्यात समय तक एव १२ भावके वर्णके ~ गन्धके २, रसके ६५ स्पश के ५४ कुल २२२ बाल हुवे

उक्त २२२ बोलोंके द्रव्य भाषापणे ग्रहन करते है सो (१) स्पर्श कीये हुवे (२) आत्म अवगाहन कीये हुवे (३) वह भी परम्पर अवगाहान कीये नही किन्तु अणन्तर अवगाहान कीये हुवे (४) अणुवा-छोटे द्रव्य भी लेवे (५) बादर स्थुल द्रव्य भी लेवे (६) उर्ध्व दिशाका (७) अधोदिशाका (८) तीयगदिशाका (९) आदिका (१०) अन्तका (११)मध्यका (१२) स्वविषयका (भाषाके योग्य) (१३) अनुपूर्वी (क्रमश) (१४ भाषापणे द्रव्य ग्रहन करनेवाले त्रसनालीमें होनेसे नियमा छे दिशाका द्रव्य ग्रहन करे (१५) भाषाका द्रव्य सान्तर ग्रहन करे तों जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात समय का अन्तर महुर्त (१६) निरान्तर लेवे तों ज० दो समय उ० असंख्यात समयका अन्तरमहुर्त (१७) भाषाका पुद्गल प्रथम समय ग्रहन करे अन्त समय त्याग करे मध्यम ग्रहन करे और छडता रहै एव २२२ के अन्दर १७ बाल मीलानेसे २३९ बाल होते है। समुचयजीव और १९ दडक एव बीस गुना करनेसे ४७८० बोल हुवे।

(१) समुचयजीव सत्यभाषापणे पुद्गल ग्रहन करे ता २३९ बोल पूर्ववत् कहना इसीमाफीक पाचेन्द्रियके शोलहादडक एव सतरेको २३९ गुना करनेसे ४०६३ बोल हुवा इसी माफीक असत्यभाषाकाभी ४०६३ इसीमाफीक मिश्रभाषाकाभी ४०६३ व्यवहार भाषा में समुचय जीव और १९ दडक है कारण एकलेन्द्रिय में व्यवहार भाषा है बीसकों २३९ गुणा करनेसे ४७८० बोल हुवे समुचयके ४७८० बोल मीलानेसे एक वचनापेक्षा २१७४९

अज्ञानके वस भूलजानेसे क्रोधादि वस सत्य ही असत्य भाषाके माफीक है और पर-परतापनावाली भाषा तथा जीवोंके प्राण चला जाय एसी भाषा बोलना यह दशों असत्य भाषा है।

मिश्र भाषाके दश भेद है-इस नगरमें इतने मनुष्यों उत्पन्न हुवे है, उन नगरमे इतने मनुष्योंका मृत्यु हुवा है, इस नगरमें आज इतने मनुष्योंका जन्म और मृत्यु हुवे यह सब पदार्थ जीव है यह सब पदार्थ अजीव है यह सब पदार्थोंमें आदे जीव आदे अजीव है यह वनास्पति सब अनंतकाय है यह सब परित्तकाय है कालमिश्र उठो पोरसी दीन आगये है। लो इतने वष हो गये है भावार्थ जब तक जिस बातका निश्चय न हो जाय वहा तक अगर कार्य हुवा भी हो तो भी यह मिश्रभाषा है जिसमे कुच्छ सत्य हो कुच्छ असत्य हो उसे मिश्रभाषा कहते है।

व्यवहार भाषाका बार भेद है (१) आमत्रणि भाषा-हे वीर हे देव (२) आज्ञा देना यह काय एसा करो (३) याचना करना यह वस्तु हमे दो (४) प्रश्नादिका पुच्छना (५) वस्तु तत्वकि प्ररूपना करना (६) प्रत्याख्यानादि करना (७) आगलेकी इच्छानुसार बोलना 'जहासुखम्' (८) उपयोग शुन्य बोलना (९) इरादा पूर्वक व्यवहार करना (१०) शंका संयुक्त बोलना (११) अस्पष्ट बोलना (१२) स्पष्टतासे बोलना। जिस भाषामे असत्य भी नहीं और पूर्ण सत्य भी नहीं उसे व्यवहार भाषा कही जाति है जेसे जीव मरगया इसमे पुर्ण सत्य भी नही है कारणकि जीव कभी मरता नही है और पूर्ण असत्य भी नही है कारण व्यवहारसे सब लोगोंने मरना जन्मना स्वीकार कीया है इत्यादि—

(२१) अल्पाबहुत्वद्वार (१) सर्वस्तोक सत्य भाषा बो

लने वाले (२) मिश्र भाषा बोलनेवाले असख्यात गुणे (३) असत्य भाषा बोलनेवाले असख्यात गुणे (४) व्यवहार भाषा बोलनेवाले असख्यात गुणे (५) अभाषक अनत गुणे कारण अभाषकमे एकेन्द्रिय तथा सिद्धभगवान् है इति।

सेवभते सेवभते–तमेव सच्चम्

थोकडा नम्बर २४

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २८ वा उ० १

(आहाराधिकार)

(१) आहार तीन प्रकारके है सचिताहार–जीव सयुक्त पदार्थोंका आहार करना अचिताहार–जीवरहित पुद्गलोंका आहार करना, मिश्राहार जीवाजीव द्रव्योंका आहार करना नारकी देवतोंमें अचित्त पुद्गलोंका आहार है और पाच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यचपाचेन्द्रिय और मनुष्य इन दस दडकोंमे तीनो प्रकारका आहार है सचिताहार अचित्ताहार मिश्राहार।

(२) नरकादि चौवीस दडकोंमे आहारकि इच्छा होती है

(३) नरकमे जीवोंको आहारकी इच्छा कीतने कालसे उत्पन्न होती है ? नरकादि सब जीवों जो अज्ञानपणे आहारके पुद्गल खेचते है वह तो सब संसारी जीव समय समय आहार के पुद्गलोंको ग्रहन करते है। किन्तु परभव गमन समय विग्रह गति या जीव, केवली समुद्घात और चौदवे गुणस्थानके जीव अनाहारी भी रहते है। जो जीवों को ज्ञानपणे के साथ आहार इच्छा होती

है उनोंका काल-नरकमे असंख्यात समय के अन्तर महुर्तसे आहारकी इच्छा उत्पन्न होती है असुरकुमार देवोंके जघन्य एक दिनसे उ० एकहजार वर्ष साधिक से नागादिनौकायके देवोंको तथा व्यंतर देवों को ज० एक दिन उ० प्रत्येक दिनोंसे ज्योतिषी देवोंको जघन्य उत्कृष्ट प्रत्येक दिनोंसे-वैमानीक देवोंमे सौधर्म देवलोक के देवोंको ज० प्रत्येक दिन उ० २००० वर्ष इशान देवलोक के देवों ज० प्रत्येक दिन उ० साधिक २००० वर्ष, सनत्कुमार देवलोक के देवोंको ज० २००० वर्ष उ० ७००० वर्ष महेन्द्र देवोंके ज० साधिक २००० वर्ष, उ० साधिक ७००० वर्ष ब्रह्मदेवों को ज० ७००० वर्ष उ० १००० वर्ष लांतक देवों के ज० १०००० उ० १४००० वर्ष महाशुक्र देवोंको ज० १४००० उ० १७००० वर्ष सहस्रादेवोंको ज० १७००० उ० १८ ०० वर्ष अणतदेवोंके ज० १८००० उ० १९००० वर्ष पणत् ज० १९००० उ० २०००० वर्ष आरण्य ज० २०००० वर्ष उ० २१००० वर्ष अच्युत देवोंको ज० २१००० उ० २२००० वर्ष ग्रीवैक प्रथम त्रीक ज० २२००० उ० २५००० वर्ष मध्यम त्रीक ज० २५००० उ० २८००० उपरकी त्रीकको ज० २८००० उ० ३१००० वर्ष च्यार अनुत्तर वैमानवासी देवों को ज० ३१००० उ० ३३००० वर्ष सर्वार्थसिद्ध वैमानवासी देवोंको ज० उ० ३३००० वर्षोंसे आहार इच्छा उत्पन्न होती है। पांच स्थावर को निरान्तराहार इच्छा होती है तीन वकलेन्द्रिय को अंतर महुर्तसे तीर्यंच पांचेन्द्रि ज० अंतर महुर्त उ० दो दिनोंसे ओर मनुष्योंको आहार इच्छा ज० अंतरमहुर्त उ० तीन दिनोंसे आहार इच्छा उत्पन्न होती है।

(४) नारकी के नैरिये जो आहारपणे पुद्गल ग्रहन करते है वह द्रव्यसे अनंते अनंतप्रदेशी, क्षेत्रसे असंख्यात प्रदेश अवगाहान कीये हुवे, कालसे एक समयकि स्थिति यावत् असंख्यात

समयकि स्थिति के पुद्गल, भावसे वर्ण गन्ध रस स्पर्श जेसे भाषाधिकारमें कहा है इसी माफीक परन्तु इतना विशेष है कि भाषापणे च्यार स्पर्शवाले पुद्गल लेते थे यहा आहारपणे आठों स्पर्शवाले पुद्गल ग्रहन करते है इस वास्ते पाच वर्ण दोगन्ध पांच रस आठ स्पर्श एव वीस बोलसे प्रत्येक बोल पर तेरह तेरह बोलोंकि भावना करणी जेसे एक गुण काला पुद्गल दोगुण तीनगुण च्यारगुण पाचगुण छेगुण सात गुण आठगुण नौगुण दशगुण संख्यातगुण असंख्यातगुण और अनंतगुणकाले इसी माफीक वीसों बोलोकों तेरहा गुणे करनेसे २६० बोल हुवे स्पर्शादि १९ देखो भाषाधिकारमें बोल मीलानेसे १-१-१२-२६०-१४ सर्व २८८ बोलोंका आहार नारकी ग्रहन करते है। अधिकतर नारकी वर्णमें श्याम वर्ण हरावर्ण गन्धमें दुर्भिगन्ध रसमें तिक्त कटुक रस स्पर्शमें कर्कश गुरु शीत रूक्ष स्पर्श के पुद्गलो का आहार लेते है यह ग्रहन कीये हुये पुद्गलोंको भी सडावे खराब करके पूर्वका वर्णादि गुणोंकों विप्रीत कर नये खराब वर्णादि उत्पन्न कर फीर ग्रहन कीए हुए पुद्गलों का आहार करे

इसी माफीक देवता के तेरहा दंडकों मे भी २८८ बोलोंका आहार लेते है परन्तु वह शुभ द्रव्य वर्णमें पीला सुपेद गन्धमें सुभिगन्ध रसमें आंबिल मधुर रस स्पर्शमे मृदुल लघु उष्ण स्निग्ध पुद्गलों का आहार करे वहभी उन पुद्गलोंका पूर्वके खराब गुणों को अच्छा बनावे मनोज्ञ पुद्गलोंका आहार करे इसी माफीक पृथ्व्यादि दश दंडकों मे वीसों बोलोंके पुद्गलों कों ग्रहन कर चाहे उसे अच्छे के खराब बनावे चाहे खराब के अच्छे बनावे २८८ बोल पूर्ववत् आहार ग्रहन करे परन्तु पाच स्थावरमें दिशापेक्षाम्यात् ३-४-५ दिशाका भी आहार लेते है कारण

अहा अलोक कि व्याघात है यहा ३-४-५ दिशाका ही पुद्गल लेते है शष छे दिशा सब ७२०० बाल हुये।

(५) नारकी जो आहारपणे पुद्गल ग्रहन करते है वह क्या सर्व आहार करे सर्वप्रणमे सबउश्वासपणे सर्वनिश्वासपणे प्रणमे तथा पर्याप्ता कि अपेक्षा वारवार आहार करे प्राणमें उश्वासे निश्वासे और अपर्याप्ता कि अपेक्षा कदाच् आहारे कदाच् प्रणमे कदाच् उश्वासे कदाच् निश्वासे ? उत्तरमें बारहा बोल हो करे है एवं २४ दडको मे बारहा बाल हानेसे २८८ बोल हुय।

(६) नारकी जे नैरियों क आहार क योग्य पुद्गल है उ नोंसे असंख्यात मे भाग के द्रव्यों को ग्रहन करते है ग्रहन कीये हुये द्रव्योंसे अनतमे भागके द्रव्य अस्वादन मे आते है शेष पुद् गल विगर अस्वादन कियेही विध्वस हो जाते है इसी माफीक २४ दडकमें परन्तु पाच स्थावरमे एक स्पर्शेन्द्रिय होनेसे वह विगर स्पश कीये अनत भाग पुद्गल विध्धंस हो जाते है।

(६) नारकी देवताओ और पाचस्थावर एव १९ दडकोंक आहार पणे पुद्गल ग्रहन करते है वह सबक सब आहार करते जीव जों है कारण उनोंके रोम आहार है और वे इन्द्रिय जो आहार लेते है वह दो प्रकारसे लेते है एक रोम आहार जो समय समय लेत है वह तो सब के सब पुद्गलों का आहार करते है और दुसरा जो कवलाहार है उनोसे ग्रहन कीये हुवे पुदगलो के असख्यातमे भागका आहार करते है और अनेक हजारो भागक पुद्गल विगर स्वाद विगर स्पश किये ही विध्वस हो जाते है जिस्कीतरतमत्ता (१) सब स्तोक विगर अस्वादन कीये पुद्गल (२) उनोंसे अस्पश पुद्गल अनत गुणें है एव तेइन्द्रि परन्तु एक विगर गन्धलिये ज्यादा कहना (१) सब स्तोक विगर गन्धके पुद्गल (२) विगर अस्वादन किये पुद्गल अनंत गुणे (३)

विगर स्पश विये पुद्गल अनतगुणे इसी माफीक चोरिंन्द्रिय पाचेन्द्रिय और मनुष्यभी समझना।

(८) नारकी जो पुद्गल आहारपणे ग्रहन करते है वह नारकीके कीस कायपणे प्रणमते है? नारकीके आहार किये हुये पुद्गल श्रोत्रेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय अनिष्ट अक्रा त अप्रिय अमनोज्ञ विशेष अमनोज्ञ अशुभ अनिच्छापणे भेदपणे ऊचापणे नहीं किन्तु निचापणे, सुखपणे नही, कि तु दु खपणे, इन सत्तरा बोलांपणे वारवार प्रणमते है पाच स्थावर तीनवेकलेन्द्रिय तीर्यच पाचेन्द्रिय और मनुष्य इन दश दडकोंमे औदारीक शरीर होनेसे अपनि अपनि इन्द्रियोंके सुख और दु ख दोनांपणे प्रणमते है। देवतोंने तेरह दडकमे नारकसे उल्टे याने सत्तरा बोलोंभी अच्छे सुखकारी प्रणमते है अर्थात् नारकीमें आहारके पुद्गल एकान्त दु खपणे देवतोंमे ए का त सुखपणे और औदारीक शरीरवाले शेषजीवोंके सुख दु ख दोनोंपणे प्रणमते है।

(९) नारकीके नैरिय जो पुद्गल आहारपणे ग्रहन क-रते है वह क्या एकेन्द्रियके शरीर है यावत् क्या पाचेन्द्रियके शरीर है? पूव पर्यायापेक्षातो जो जीव अपना शरीर छोडा है उनोंकाही शरीर है चाहे एकन्द्रियके हो यावत् चाहे पाचेन्द्रियका हो और वर्तमान वह पुद्गल नारकी ग्रहन किये हुये है वास्ते पाचेन्द्रियके पुद्गल कहा जाते है एव १६ दडक एव पाच स्था वर पर तु वर्तमान एकेन्द्रिय के पुद्गल कहा जाते है एव बेन्द्रिय तेइन्द्रिय चोरिन्द्रिय अपनि अपनि इन्द्रिय कहना कारण पहले आहार लेनेवाले जीव उन पुद्गलोंको अपना करलेते है वास्ते उनोंके ही पुद्गल कहलाते है।

(१०) नारकी देवता और पाच स्थावर—रोमाहारी है किन्तु प्रक्षेप आहारी नही है तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यंच पाचेन्द्रिय और मनुष्य रोमाहारी तथा प्रक्षेपाहारी दोनों प्रकारके होते है ।

(११) नारकी पाच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यंच पाचेन्द्रिय और मनुष्य ओजाहारी है और देवता ओज आहारी और मन इच्छताहारी भी है कारण देवता मन इच्छा करे वसे पुद्गलोंका आहार कर सके है शेष जीवकों जेसा पुद्गल मीले वैसोंका ही आहार करना पडता है इति

॥ सेव भंते सेव भंते—तमेव सचम् ॥

—०००—

थोकडा नम्बर २५

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद ७ वा श्वासोश्वास)

नारकीके नेरिया श्वासोश्वास लोहारकि धमणकि माफीक लेते है तीर्यंच और मनुष्य वे मात्रा याने जल्दीसे या धीरे धीरे दोनों प्रकारसे श्वासोश्वास लेते है । देवतोंमे असुर कुमारके देव जघन्यसे सात स्तोक कालसे उत्कृष्ट साधिक एक पक्ष (पन्द्रा दिन) से श्वासोश्वास लेते है । नागादि नौ निकायके देव तथा व्यंतर देव ज० सात स्तोक कालसे उ० प्रत्येक महुर्तसे । ज्योतिषीदेव ज० प्रत्येक महुर्त उ० प्रत्येक महुर्त सौधर्म देवलोकके देव ज० प्रत्येक महुर्त उ० दो पक्षसे इशानदेव ज० प्रत्येक महुर्त उ० साधिक दो पक्षसे सनत्कुमारके देव ज० दो पक्ष उ० सात पक्ष महेन्द्र ज० दो पक्ष साधिक उ० साधिक सात पक्षसे ब्रह्म देव ज० सातपक्ष उ० दशपक्षसे, लातकदेव, ज० दशपक्ष, उ० चौ

दापक्ष महाशुक्र देव ज० चौदापक्ष उ० सत्तरापक्ष सहस्रादेव ज० सत्तरापक्ष उ० अठारापक्षसे अणतदेव ज० अठारापक्ष उ० उन्नि सपक्षसे, पणतदेव ज० उन्निसपक्ष उ० बीस पक्षसे अरण्यदेव ज० बीसपक्ष उ० एकवीस पक्षसे अच्युतदेव ज० एकवीस पक्ष उ० वा वीसपक्षसे ग्रीवैकये पहले ग्रीकके देव ज० बावीसपक्ष उ० पचवीस पक्ष दुसरी ग्रीकके देव ज० पचवीस पक्ष उ अठावीस पक्षसे तीसरी ग्रीकये देव ज० अठावीस पक्ष उ० एकतीस पक्ष च्यारा नुत्तर वैमानवे देव ज० एकतीस पक्ष उ० तेत्तीसपक्ष सर्वार्थसिद्ध वैमानके देव जघन्य उत्कृष्ट तेत्तीसपक्षसे श्वासोश्वास लेते है। जेसे जेसे पुन्य वडते जाते है वैसे वैसे योगोंकी स्थिरता भी वढती जाती है देवताओंमें जहां हजारों वर्षोंकि स्थिति है वह सात स्तोक कालसे, पल्योपमकि स्थिति है वह प्रत्येक दिनोंसे और सागरोपमकी स्थिति है वहा जीतने सागरोपम उतनेही पक्षसे श्वासोश्वास लेते है। नोट-असख्यात समयकि एक आवि-लका सख्याते आविल्का, का एक श्वासोश्वास सात श्वासोश्वा-सका एक स्तोक काल होते है इति।

सेवभंते सेवभंते-तमेवसच्चम्

—**—

थोकडा नम्बर २६

———

(सूत्रश्री पन्नवणाजी पद ८ वा सज्ञाधिकार)

सज्ञा—जीवोंकि इच्छा वह सज्ञा दश प्रकारकी है आहार संज्ञा, भयसज्ञा, मैथुनसज्ञा, परिग्रहसज्ञा क्रोधसज्ञा मानसज्ञा, मायासंज्ञा, लोभसंज्ञा, लोकसज्ञा, ओघसज्ञा।

आहारसज्ञा उत्पन्न होनेके च्यार कारण है उदररीता होनेसे क्षुधावेदनिय कर्मोदयसे आहारको देखनेसे और आहा रकि चिंतवना करनेसे आहार सज्ञोत्पन्न होती है।

भयसज्ञा उत्पन्न होने के च्यार कारण है अधैर्य रखनेसे भयमोहनिय कर्मोदयसे, भय उत्पन्न करनेवा पदार्थ देखने से और भय कि चिंतवना करने से। हा हा अब क्या करुगा ?

मथुन सज्ञा उत्पन्न होने के च्यार कारण है शरीर को पौष्ट याने हाड मास रौद्र बढानेसे वेद मोहनिय कर्मोदयसे मैथुन उत्पन्न करनेवाले पदार्थ स्त्रि आदि को देखने से मैथुन कि चित वना करने से मैथुनसज्ञा उत्पन्न होती है।

परिग्रह संज्ञा उत्पन्न होने का च्यार कारण है ममत्वभाव बढाने से लोभ मोहनिय कर्मोदय से, धनादि के देखने से परि ग्रह कि चितवना करनेसे ”

क्रोध सज्ञा उत्पन्न होने के च्यार कारण है क्षेत्र खला बाग बगेचे घर, हाट, हवेली शरीरादि से धनधान्यादि औषधि से क्रोध उत्पन्न होते है एव मान माया लोभ

लोकसंज्ञा-अन्य लोकों का देख के आप ही वह क्रिया करते रहे ओघसज्ञा-शुन्य चित्तसे विलापात करे खाजखोणे, तृणतोडे धरती खोणे इत्यादि उपयोग शुन्यतासे।

नरकादि चौवीसों दंडकों मे दश दश सज्ञा पावे कीसी दडक में सामग्री अधिक मीलने से प्रवृत्ति रूपमें ह कीसी जीवों कों इतनी सामग्री न मीलने मे सतारूप में है फीर सामग्री मीलने से प्रवृत्ति रूप मे भी प्रवृतेगे सज्ञा का आस्तित्व छट्ठे गुणस्थान तक है।

अल्पाबहुत्व—नरक में (१) स्तोक मैथुनसंज्ञा (२) आहार संज्ञा संख्यातगुणे (३) परिग्रहसंज्ञा संख्यातगुणे (४) भयसंज्ञा संख्यातगुणे-तीर्यंच में (१) सर्वस्तोक परिग्रहसंज्ञा (२) मैथुन संज्ञा संख्यातगुणे, (३) भयसंज्ञा संख्यातगुणे (४) आहारसंज्ञा संख्यातगुणे। मनुष्य में (१) सर्वस्तोक भयसंज्ञा, (२) आहार संज्ञा संख्यातगुने (३) परिग्रहसंज्ञा संख्यातगुणे (४) मैथुनसंज्ञा संख्यातगुणे। देवता में (१) सर्वस्तोक आहारसंज्ञा (२) भय संज्ञा संख्यातगुणे (३) मैथुनसंज्ञा संख्यातगुणे (४) परिग्रहसंज्ञा संख्यातगुने

नरकमें सर्वस्तोक लोभसंज्ञा मायासंज्ञा संख्यातागुणे मान संज्ञा संख्या० क्रोधसंज्ञा संख्यागु० तीर्यंच मनुष्य में सर्वस्तोक मानसंज्ञा क्रोधसंज्ञा, विशेषाधिक मायासंज्ञा विशेषाधिक, लोभ संज्ञा विशेषाधिक। देवता में सर्वस्तोक क्रोधसंज्ञा मानसंज्ञा संख्यातगुणे मायासंज्ञा संख्यातगुणे लोभसंज्ञा संख्यातगुणे इति।

॥ सेवंभते सेवंभते तमेवसच्चम् ॥

—•—

थोकडा नम्बर २७

(सूत्र श्री पन्नवणाजीपद ९ वा योनिपद)

जीवों के उत्पन्न होने के स्थानों को योनि कही जाती है यह योनि तीन प्रकार की है। शीतयोनि, उष्णयोनि, शीतोष्ण योनि। पहली, दुसरी तीसरी, नरक में शीतयोनि नैरिये है चोथी नरक में शीतयोनि नैरिये ज्यादा है और उष्ण योनि नैरिये

कम है पाचवी नरक में शीतयोनि नरिये कम है उष्णयोनि ज्यादा है छठी सातवी नरक म उष्णयोनि नैरिया है। सर्व देवता तीर्यंच पाचेन्द्रिय और मनुष्यों में शीतोष्णयोनि है। च्यार स्थावर तीन वेकलेन्द्रिय में तीनों योनि पाये और तेउ वाय वेवल उष्णयोनि है। सिद्ध भगवान् अयोनि है। (१) सर्व स्तोक शीताष्ण योनिवाले जीव (२) उनो से उष्णयोनिवाले जीव असख्यातगुणे (३) अयोनिवाले जीव अनतगुणे ४) शीतयोनिवाले जीव अनतगुणे।

योनि तीन प्रकार कि है सचित्तयोनि, अचित्तयोनि, मिश्र योनि नारकी देवता अचितयानि में उत्पन्न हात है पाच स्थावर तीन वकलेन्द्रि असज्ञी तीयच, असज्ञी मनुष्य में यानि तीनों पाये सज्ञी मनुष्य तीयच मे एक मिश्रयोनि है (१) सिद्धभगवान अयोनि है (१)सयम्तोक मिश्रयोनिवाले जीव २) अचितयोनि वाले जीव असख्यातगुणे (३) अयोनीवाले जीव अनतगुणे (४) सचित योनिवाले अनतगुणे

योनि तीन प्रकार की ह सवृतयोनि, असवृतयोनि, मिश्र योनि नारकी देवता और पाच स्थावर के सवृतयोनि है तीन वेकलेन्द्रिय, असज्ञी तीर्यंच मनुष्य के असवृतयानि है सज्ञी तीयच सज्ञी मनुष्यों के मिश्रयोनि सिद्ध भगवान् अयोनि है।(१) सवस्तोक मिश्रयोनिवाले जीव है (२) असवृतयोनिवाले असख्यात गुणे(३) अयोनिवाले अनतगुणे (४)सवृतयोनिनवाले अनंतगुणे है।

योनि तीन प्रकार की है कुम्भायोनि सक्खावर्तनयोनि व सोपत्तायोनि कुम्भायोनि तीर्थंकरादिके माताकि होती है। सक्खावर्तन योनि चक्रवर्त्ति के स्त्रि रत्नकी होती है जिस्में जीव पुद्गल उत्पन्न होते है विध्वसभी होते है परन्तु योनिद्वारा जन्मते

नहीं है। यन्सीपत्तायोनि शष मर्व ससारी जीवोंकि मालावे होती है जीस योनि मे जीव उत्पन्न होते है वह जन्मते भी है वि ध्वंस भी होते है। इति

सेवभते सेवभते तमेवसचम्।

थोकडा नम्बर २८

सूत्रश्री भगवतीजी शतक १ उद्देशा १

सर्व जीव दो प्रकार के है उसे आरभी कहते है (१) आत्मा का आरंभ करे परका आरभ करे, दोनों का आरभ करे (२) कीसी का भी आरभ नही करे यह अनारभीक है इसका यह कारण है कि जा सिद्धों के जीव है वह ता अनारभी है और जो ससारी जीव है वह दो प्रकार के है (१) सयति (२) असयति जिस्में सयति के दो भेद है (१) प्रमादि सयति दुसरे अप्रमादि सयति जो अप्रमादि सयति है वह तो अनारभी है और जो प्रमादि सयति है उनोंके दो भेद है एक शुभयोगि दुसरा अशुभ योगि जिस्मे शुभ योगि है वहतो अनारभी है और जो प्रमादि सयति अशुभ योगि है वह आत्मा आरभी है परारभी है उभयारभी है एव असयति भी समजना। एव नरकादि २३ दडकनों आत्मारभी परारभी उभयारभी है परन्तु अनारभी नहो है और मनुष्य समुचय जीवकि माफीक सयति अप्रमादि और शुभ योग वाले तो अनारभी है ३। शेष आरभी है

लेश्यासयुक्त जीवोंके लिये यह ही बात है जो सयति अप्रमादि और शुभ योगवाले है वह तो अनारभी है शेष आरभी है

एव मनुष्य शेष २३ दंडक के लेश्या समुच्चय जीव आत्मारंभी परा रंभी उभयारंभी है कृष्ण निल, कापोत, लेश्यावाले समुच्चय जीव और बावीस बावीस दंडक व जीव सबके सब आरंभी है कारण यह तीनों अशुभ लेश्या है इनोंके परिणाम आरंभसे बच नहीं सकते है। तेजो लेश्या समुच्चय जीव और अठारा दंडकोंमें है जिस्मे समुच्चय जीव और मनुष्यके दंडकमे जो संयति अप्रमादि और सुभयोगवाले तों अनारंभी है शेष सब आरंभी है एव पद्म लेश्या तथा शुक्ल लेश्या भी समजना परन्तु यह समुच्चय जीव वैमानिक देव और सन्नी मनुष्य तीर्यंचमें ही है जिस्मे संयति अप्रमादिपणा मनुष्यमें ही होते है वह अनारंभी है शेष जीव तों आत्मारंभी परारंभी उभय आरंभी होते है वह अनारंभी नहीं है।

आत्मारंभी स्वयं आप आरंभ करे। परारंभी दुसरोंसे आरंभ करावे उभयारंभी आप स्वयं करे तथा दुसरोंसे भी आरंभ करावे इति

सेवभंते सेवभंते—तमेवसच्चम्

—>*@◎@*<—

थोकडा नम्बर २६

(अल्पाबहुत्व)

सन्नी, असन्नी तस स्थावर पर्याप्ता, अपर्याप्ता, सूक्ष्म और बादर इन आठ बोलोंके लद्धिया अलद्धिया एवं १६।

(१) सबस्तोक सन्नी के लद्धिया (२) तस जीवोंके लद्धिया असंख्यात गुणे (३) असन्नीके अलद्धिये अनंतगुणे (४) स्थावर के अलद्धिये विशेष (५) बादर के लद्धिये अनंत गु० (६) सुक्ष्मके अलद्धिये विशेष (७) अप-

र्याप्ता के अलद्धिये असख्यात गुणे (८) पर्याप्ता के अल द्धिये विशेष (९) पर्याप्ताके लद्धिया सग्यात गुणे (१०) अपर्याप्ताके अलद्धिये विशेष (११) सूक्षमके लद्धिये विशेष (१२) बादरके अलद्धिये वि० (१३) स्थावरके लद्धिये विशे० (१४) त्रसके अलद्धिये वि० (१५) असज्ञीके लद्धिये वि० (१६) सज्ञीके अलद्धिये विशेषाधिक । लद्धिया जैसे सज्ञीके लद्धिये कहनेसे सज्ञी जीव और सज्ञीके अलद्धिये कहनेसे असज्ञी जीव और सिद्धोंके जीव गीने जाते हैं इसी माफीक जीसके लद्धिये कहनेसे वह जीव है और जीसको अलद्धिया कहनेसे उन जीवोंक सिवाय शेष जीव अलद्धिये मे गीने जाते हैं इति ।

चौदाभेद जीवोंकी अल्पाबहुत्व (१) सर्व स्तोक सज्ञी पाचेन्द्रियका अपर्याप्ता (२) सज्ञी पाचेन्द्रियके पर्याप्ता सख्यात गुणे (३) चौरिन्द्रिय पर्याप्ता सख्या गु० (४) असज्ञी पाचे-न्द्रिय पर्याप्ता विशेष (५) बेइन्द्रियके पर्याप्ता विशे० (६) तेइ न्द्रियके पर्याप्ता विशेष (७) असज्ञी पाचेन्द्रिय के अपर्याप्ता असख्यात गुणे (८) चौरिन्द्रियके अपर्याप्ता विशे० (९) तेइन्द्रियके अपर्याप्ता विशे० (१०) बेइन्द्रियके अपर्याप्ता विशे (११) बा-दर एकेन्द्रियके पर्याप्ता अनत गुणे (१२) बादर एकेन्द्रियके अपर्याप्ता असख्यात गुणे (१३) सूक्षम एकेन्द्रियके अपर्याप्ता असख्यात गुणे (१४) सूक्षम एकेन्द्रियके पर्याप्ता सख्यातगुणे इति ।

आठ बोलोंकि अल्पाबहुत्व-(१) सर्वस्तोक अभव्यजीव (२) प्रतिपाति सम्यग्दृष्टि अनतगुणे (३) सिद्धभगवान् अनत-गुणे (४) ससारीजीव अनतगुणे (५) सर्व पुद्गल अनतगुणे (६) सर्व काल अनतगुणे (७) आकाशप्रदेश अनतगुणे (८) केवलज्ञान केवलदर्शनके पर्यव अनत गुणे ।

स्तोक परत्तससारी जीव, शुक्लपक्षी जीव अनतगुणे, कृष्ण-

पक्षीजीव अनतगुणे, अपरत्त संसारी जीव विशेष । पुन । स्तोक अपर्याप्ता जीव सुत्ताजीव सख्यातगुणे जाग्रतजीव सख्यातगुणे पयाप्ताजीव विशेष ॥ पुन ॥ स्तोक समोह या मरणवाले जीव इन्द्रिय बहुता सख्यात गुणे नोइन्द्रिय बहुते विशेष असमोहये जीव विशेषा । पुन । स्तोक बादरजीव, अणाहारी जीव सख्यात गुणे सूक्ष्मजीव सख्यातगुणे आहारीक जीव विशेष ॥ पुन ॥ स्तोक बादरके लद्धिये, सूक्षमके अलद्धिये विशेष सूक्षमके लद्धिये असख्यातगुणे बादरके अलद्धिये विशेष इति ।

—⟶◎◎◎⟵—

थोकडा नम्बर ३०

स्तोक अभव्यके लद्धिये (२) शुक्लपक्षके लद्धिये अनत गुण (३) भव्यके अलद्धिये अनतगुणे (४) भव्यके लद्धिये अनत गुणे (५) कृष्णपक्षीके लद्धिये विशेष (६) कृष्णपक्षीके अलद्धिय अनतगुण (७) शुक्लपक्षीके अलद्धिये विशेष (८) अभव्य के अलद्धिये विशेष ॥ पुन ॥ स्तोक मनुष्यके लद्धिये (२) नारकीके लद्धिये असख्यातगुणे (३) देवताके लद्धिये अस० गु० (४) तीर्यंचके अलद्धिये विशेष (५) तीर्यंचके लद्धिये अनतगुणे (६) देव अलद्धिये वि० (७) नरक अलद्धिये वि० मनुष्य अलद्धिये विशेष ॥

स्तोक मिश्रदृष्टि [२] पुरुषवेद असख्यात गुणे [३] स्त्रिवेद सख्यात गुणे (४) अवधिदर्शन विशेष (५) चक्षुदर्शन स० गु० (६) केवलदर्शन अनतगुणे (७) सम्यग्दृष्टि विशेष (८) नपुंसकवेद अनतगुणे (९) मिथ्यादृष्टि वि० (१०) अचक्षुदर्शन विशेष ॥ पुन ॥ स्तोक अचर्मेजीव (२) नोसन्नीजीव अनतगुणे (३) नोमनयोगीजीव विशेष ४) नोगर्भजजीव विशेष ॥

स्तोक मन बलप्राण [२] वचन बलप्राण असंख्यातगुणे [३] श्रोतेन्द्रिय बलप्राण असंख्यात गुणे [४] चक्षुइन्द्रिय बलप्राण विशेष [५] घ्राणन्द्रिय बलप्राण विशेष वि० [६] रसेन्द्रिय बलप्राण वि० (७) स्पर्शेन्द्रिय बलप्राण अनंतगुणे [८] काय बल प्राण विशेष [९] श्वासोश्वास बलप्राण वि० [१०] आयुष्य बलप्राण विशेष ॥ पुन ॥ स्तोक मन पर्यासिये जीव [२] भाषापर्यासिये जीव असंख्यात गुणे [३ श्वासोश्वास पर्यासि ये जीव अनंतगुणे [४] इन्द्रिय पर्यासि० वि० [५] शरीर पर्यासिये जीव वि० [६] आहार पर्याप्तिये जीव विशेष ॥पुन॥ स्तोक मनुष्य [२] नारकी असंख्यात गुणे [३] देवता असं ख्यातगुणे [४] पुरुषवेद विशेष [५] स्त्रिवेद संख्यातगुणे [६] नपुसकवेद अनंत गुणे [७] तीर्यंच विशेषाधिक ॥ इति

थोकडा नम्बर ३१

स्तोक मनुष्यणी [२] मनुष्य असंख्यात गुणे [३] नैरिये असंख्यातगुणे [४] तीर्यचणी असंख्यातगुणी [५] देवता सं ख्यात गुणे [६] देवी संख्यातगुणी [७] पांचेन्द्रिय संख्यात गुणे [८] चोरिन्द्रिय वि० [९] तेइन्द्रिय वि० [१०] बेइन्द्रिय वि० (११) त्रसकाय वि० [१२] तेउकाय असंख्यात गुणे [१३] पृथ्वी काय वि० [१४] अपकाय वि० [१५] वायुकाय वि० [१६] सिद्ध भगवान अनंतगुणे [१७] अनेन्द्रिय विशेष [१८] वनास्पति अनंतगुणे [१९] एकेन्द्रिय वि० [२०] तीर्यंच विशेष [२१] सेन्द्रिय वि० [२२] सकाया वि० [२३] समुचय जीव विशेष

स्तोक मनुष्य [२] नारकी असंख्यात गुणे [३] देवता असंख्यात गुणे [४] पुरुषवेद विशेष (५) स्त्रियोंसंख्यातगुणी

[६] पाचेन्द्रिय वि० [७] चोरिन्द्रिय वि० [८] तेइन्द्रिय वि० [९] बेइन्द्रिय वि० [१०] त्रसकाय वि० [११] तेउकाय असंख्यात गुणे [१२] पृथ्वीकाय वि० [१३] अपकाय वि० [१४] वायुकाय विशेष [१५] वनास्पतिकाय अनतगुणे [१६] एकेन्द्रिय विशेष [१७] नपुसक जीव विशेष [१८] तीयचजीव विशेष ।

सब स्तोक पाचेन्द्रियके लद्धिये [२] चोरिन्द्रियके लद्धिये विशेष [३] तेइन्द्रियके लद्धिये वि० [४] वेइन्द्रियके लद्धिये वि० [५] तेउकायके लद्धिये असं० गु० [६] पृथ्वीकायके लद्धिये वि० [७] अपकायके लद्धिये वि० [८] वायुकायके लद्धिये वि० [९] अभव्यके लद्धिये अनतगुणे [१०] परत ससारी जीवोंके लद्धिये अनतगुण [११] शुक्लपक्षी विशेष [१२-१३] सिद्धोंके लद्धिये और ससारके अलद्धिये आपसमें तुल्य और अनतगुणे [१४] वनास्पतिकायके अलद्धिये विशेष [१५] भव्य जीवोंके अलद्धिये विशेष [१६] परत्तजीवोके अलद्धिये वि० [१७] कृष्णपक्षीके अलद्धिये वि० [१८] वनास्पतिके लद्धिये अनतगुणे [१९] कृष्णपक्षीके लद्धिये वि० [२०] अपरत्तजीवोंके लद्धिये वि० [२१] भव्यजीवोंके लद्धिये वि० [२२-२३] ससारी जीवोके लद्धिये और सिद्धके अलद्धिये आपसमें तुल्य वि० [२४] शुक्लपक्षीके अलद्धिये वि० [२५] परतजीवोंके अलद्धिये वि० [२६] अभव्यजीवोंके अलद्धिये वि० [२७] वायुकायके अलद्धिया वि० [२८] अपकायके अलद्धिये वि० [२९] पृथ्वीकायके अलद्धिये वि० [३०] तेउकायके अलद्धिये वि० [३१] बेइन्द्रियके अलद्धिये वि० [३२] तेइन्द्रियके अलद्धिये वि० [३३] चौरिन्द्रियके अलद्धिये वि० [३४] पाचेंद्रियके अलद्धिये विशेषाधिकार इति ।

इति शीघ्रबोध भाग तीजो समाप्तम्

श्री सयमभसूरीश्वराय नम

शीघ्रबोध भाग ४ था

थोकडा नम्बर ३२.

सूत्र श्री उत्तराध्ययनजी अध्ययन २४

(अष्ट प्रवचन)

ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदान भडमत्तोयगणसमिति, उच्चार पासवण जल खेल मैल परिठावणिया समिति, मनोगुप्ति वचनगुप्ति, कायगुप्ति इन पाच समिति तीन गुप्तिके अन्दर पाच समिति अपवाद है और तीन गुप्ति उत्सर्ग है जैसे मुनिको उत्सर्ग मार्गमें गमनागमन करना मना है, परन्तु अपवाद मार्गमें आहार, निहार, विहार और जिनमन्दिर दर्शन करनेको जाना हो तो ईर्यासमितिपूर्वक जावे उत्सर्ग मार्गमें मुनिको मौन रखना, परन्तु अपवाद मार्गमें याचना पुच्छना, आज्ञा लेना और प्रश्नादि पुच्छाका उत्तर देना इन कारणो से बोलना पडे तो भाषा समिति सयुक्त बोले उत्सर्ग मार्गमें मुनिको आहार करना ही नहीं अपवादमे सयम यात्रा-शरीरके निर्वाहके लिये आहार करना पडे तो एषणासमिति निर्दोष आहार लावे करे, उत्सर्ग मार्गमें मुनिको निरूपाधि रहना, अपवादमें लज्जा तथा परिसह न सहन हो तो मर्यादा माफिक औषधि राखे, उत्सर्गमें

मल मात्र करे नही, आहार पाणीके अभाव परठे नही, अपवाद मागमे निर्वेद्य भूमिपर विधिपूर्वक परठे।

(१) इर्यासमितिका च्यार भेद है-आलम्बन, काल, मार्ग, यत्ना जिस्मे आलम्बन-ज्ञान दर्शन, चारित्र काल-अहोरात्री मार्ग-कुमार्ग त्याग और सुमार्ग प्रवृत्ति यत्नाका च्यार भेद है-द्रव्य क्षेत्र काल भाव द्रव्यसे इर्यासमिति-छे कायाके जीवादि यत्ना करते हुवे गमन करे क्षेत्रसे-च्यार हाथ परिमाण भूमि देखके गमनागमन करे कालसे दिनको देखके रात्रीमे पूंजके चाले भावसे-गमनागमन करते हुवे वाचना पुच्छना, परावर्तना अनुपेक्षा, धर्मकथा न करे शब्द, रूप गन्ध, रस स्पर्शपर उपयोग न रखते हुवे इर्यासमिति पर ही उपयोग रखे।

(२) भाषासमितिके च्यार भेद--द्रव्य क्षेत्र काल भाव द्रव्यसे-ककशकारी, कठोरकारी छेदकारी भेदकारी ममकारी सावद्य पापकारी मृषावाद और निश्चयकारी भाषा न बोले क्षेत्र से-गमनागमन करते समय रहस्तेमें न बोले कालसे-एक पहर रात्री जानेके बाद सूर्योदय हो वहातक उच्चस्वरसे नही बोले भावसे-राग द्वेष संयुक्त भाषा नही बोले।

(३) एषणासमितिके च्यार भेद--द्रव्य क्षेत्र, काल भाव द्रव्यसे मुनि निर्दोष आहार पाणी, वस्त्र, पात्र, मकानादिको ग्रहन करे, कारण निर्दोष अशनादि भोगवनेसे चित्तवृत्ति निर्मल रहती है, इसवास्ते फासुक आहार देनेवाले और लेनेवाले दुष्कर बतलाये है और विगर कारण दोषित आहारादि देनेवाले या लेनेवाले दोनोंको शास्त्रकारोंने चोर बतलाये हैं देखो स्थानांगसूत्र स्थाने ३ जे तथा भगवतीसूत्र शतक ५ उ० ६ में दोषित आहार देनेसे स्वल्प आयुष्य तथा अशुभ दीर्घायुष्य बन्धते है और भगवतीसूत्र शतक १ उ० ९ मे आधाकर्मी आहार करनेवालोंको

साताष्ठ कर्मोका-बन्ध अनंत संसारी और छ कायाकी अनुकम्पा रहित बतलाये है और निर्दोषाहार करनेवालेका शीघ्र संसारसे पार होना बतलाया है। निर्दोषाहार ग्रहन करनेवाले मुनियोंको निम्नलिखित दोषोंपर पूर्ण ध्यान रखना चाहिये।

(१) आधाकर्मी दोष—जिनोंके पर्याय नाम च्यार है (१) आधाकर्मी-साधुके निमत्त छे काया जीवोंकि हिंस्या कर अशनादि तैयार करे (२) अधोकर्मी-एसा दोषिताहार करनेवाले आखीर अधोगतिमें जाते है (३) आत्मकर्मी-आत्माके गुण जो ज्ञान दर्शन चारित्र है उनोंके उपर आच्छादन करनेवाले है (४) आत्मघ्नकर्मी-आत्मप्रदेशोंके साथ तीव्र कर्मोका बन्ध घन माफिक करनेवाले है। आधाकर्मी आहार लेनेसे आठ जीव प्रायश्चितके भागी होते है यथा— आधाकर्मी आहार करनेवाला, करानेवाला लेनेवाला, देनेवाला दीरानेवाला, अनुमोदन करनेवाला, खानेवाला, और आलोचना नही करनेवाला इसवास्ते मुनियोंको सदैव निर्दोषाहार ही करना चाहिये।

एक मुनि निर्दोष फासुक जल लेके जंगलमे ध्यान करनेको गया था उस जल भाजनको एक वृक्षके नीचे रख आप कुच्छ दूर चले गये थे पीच्छेसे सैन्य रहित पीपासा पिडित एक राजा उस वृक्ष नीचे आया मुनिका शीतल पाणी देख राजाने जलपान कर लिया पीच्छेसे राजाकि सैना आइ, उन मुनिके पात्रमे राजा अपना जल डालके सब लोक चले गये। कुच्छ देरी से मुनि उस वृक्ष नीचे आया, अपना जल समजके जलपान कीया दोनो पाणीका असर एसा हुवा कि राजाको संसार असार लगने लगा, और योग धारण करनेकी इच्छा हुइ इधर मुनिको योगसे रूची हटके संसारकि तर्फ चित्त आकर्षण होने लगा देखिये सदोष, निर्दोष आहार पानीका कैसा असर है आखीर समजदार श्रावकोने

मुनिजीको जुलाय दीया और अक्लमन्द प्रधानोंने राजाको जुलाव दीया दोनोंके पाणीका अश निकल जाने से राजा राजमें और मुनि अपने योगमे रमणता करने लगे

[२] उद्देसीक दोष—एक साधुके लिये किसीने आहार बनाया ह वह साधु गवेषना करने पर उसे मालुम हुवा कि यह आहार मेरे ही लिये बना है उसे आधाकर्मी समजके ग्रहन नही किया अगर वह आहार कोइ दुसरा साधु ग्रहन न करे तो उनोंक लिये उद्देसीक दोष है

[३] पुतिकर्म दोष—निर्वद्याहारके अन्दर एक सीत मात्र भी आधाकर्मीकि मील गइ हो तथा सहस्र घरोंके अन्तर भी आधाकर्मीका लेप मात्र भी मील्या हुवा शुद्धाहारभी ग्रहन करनेसे पूतिकर्म दोष लगते हैं श्री सुत्रकृताग अध्ययन पहले उद्देसे तीजे पूतिकर्माहार भोगवनेवालोंको द्रव्ये साधु और भावे गृहस्थ एक दो पक्ष सेवन करनेवाला कहा है।

[४] मिश्रदोष—कुच्छ गृहस्थोंका कुच्छ साधुवोंका निमित्त से बनाया आहार लेनेसे मिश्रदोष लगता है।

[५] ठवणा दोष—साधुके निमत्त स्थापक रखे

[६] पाहुडिय—महेमान—कीसी महेमानोंको जीमाण है साधुके लिये उनोंकि तीथी फीरा देवे उन महेमानाके साथ मुनि को भी मिष्टान्नादि से तृप्त करे। एसा आहार लेना दोषित है।

[७] पावर—जहा आंधेरा पडता हो वहा साधुके निमित्त प्रकाश [बारी] करवाके आहार देना

[८] क्रिय—क्रियविक्रय मुनिके निमित्त मूल्य लायके देवे

[९] पामिच्चे दोष—उधारा लाके देवे

[१] परियठे दोष—वस्तु बदलाके देव

[११] अभिहड दोष—अन्यस्थानसे सन्मुख लाके देवे

[१२] भिन्नेदोष—छान्दो कीमाडादि खुल्याके देवे

[१३] मालोहड दोष—उपरसे जो मुश्किलसे उतारी जाये एसे स्थानमे उतारके दी जाये।

[१४] अच्छीजे दोष—निर्बल जनोंसे सबल जबरदस्ति बलात्कारे दीरावे उसे लेना

[१५] अणिसिठ्ठ दोष—दो जनोंने विभागमें हो एकको देने का भाव हो एकके भाव न हो वह वस्तु लेवे तो भी दोषित है

[१६] अझोयर दोष—साधुके निमित्त कमाहार बनाते समय ज्यादा करदे वह आहार लेना। „

इन १६ दोषोंको उद्गमन दोष कहते है यह दोष जो गृहस्थ भद्रीक साधु आचारसे अज्ञात और भक्तिके नामसे दोष लगाते है

[१७] धाइदोष—धात्रीपणा याने गृहस्थ लोगोंके बालबचों को रमाना, खलाना इनोंमे आहार लेना। ,

[१८] दुइदोष—दूतिपणा इधर उधर के समाचार कह के आहार लेना

[१९] निमित्तदोष—भूत भविष्यका निमित्त कहके आ० „

[२०] आजीवदोष—अपनि जातिका गौरव बतलाके ,

[२१] वणिमग्गदोष—राककि माफिक याचना कर आ०„

[२२] तिगच्छदोष—औषधि वगरह बतलाके आ० „

[२३] कोहेदोष—क्रोध कर भय बतलाके आहार लेना

[२४] माणेदोष—मान अहकार कर आहार लेना

[२५] मायादोष—मायावृत्ति कर आहार लेना

[२६] लोभेदोष—लालच लोलुपता से आहार लेना

[२७] पुव्वपच्छसथुव दोष—आहार ग्रहन करनेके पहले या पीच्छे दातारके गुण कीर्तन करके आहार लेना।

[२८] विज्ञादोष—गृहस्थोंको विद्या बतलावे अर्थात् रोह णि आदि देवीयोंको साधन करनेकी विद्या ,

[२९] मित्तदोष—यन्त्र मन्त्र शीखाना अर्थात् हरीणगमेषी आदि देवतोंका साधन करवाना

[३०] चुन्नदोष—एक पदार्थके साथ दुसरा पदार्थ मीला क एक तीसरी वस्तु प्राप्त करना सीखावे ,,

[३१] जोगदोष—लेप वसीकरणादि बतावे आ०

[३२] मूलकम्मदोष—गर्भापातादि औषधीयां उपायों बत लावे आहार पाणी ग्रहन करना दोष है

[क] यह सोलह दोष मुनियोंके कारण से लगते है वास्ते मोक्षाभिलाषीयोंको अपने चारित्र विशुद्धिके लिये इन दोषोंको टालना चाहिये इन १६ दोषोंको उत्पात दोष कहते है ।

[३३] सकिय दोष—आहार ग्रहन समय मुनिको तथा गृ हस्थोंको शका हो कि यह आहार शुद्ध है या अशुद्ध है एसे आ- हारको ग्रहन करना यह दोष है ।

[३४] मक्खिय दोष—दातारके हाथकि रेखा तथा बाल कचे पाणी से समक हानेपर भी आहार ग्रहन करना ।

[३५] निक्खित्तिये दोष—सचित्त वस्तुपर अचित्ताहार रखा हुवा आहार ग्रहन करे

[३६] पहियेदोष—अचित्तवस्तु सचित्तसे ढाकी हुइ हो ,,

[३७] मिसीयेदोष—सचित्त अचित्त वस्तु सामिल हो

[३८] अपरिणियेदोष—शस्त्र पूरा नहीं लागा हो अर्थात् जो जलादि सचित्तवस्तु है उनोंको अग्न्यादि शस्त्र पूरा न लगा हो ,,

[३९] सहारियेदोष—एक बतनसे दुसरे वर्तनमे लेके देवे

यह कटोरी कुडछी लीत पडी रहने से जीवादि विराधना होती है और धोने से पाणीके जीवोंकी विराधना हो ,

[४] दायगोदोष—दातार अंगोपांगसे हिन हो, अधा हो जिनसे गमनागमनमें जीव विराधना होती हो

[४१] लीपूदोष—तत्काल्का लिपा हुवा आंगण हो ,

[४२] छडियेदोष—घृतादि छांटे टीपक पडते देवे ,,

[ख] यह दश दोष मुनि गृहस्थों दानाके प्रयोग से लगते है वास्ते दोनोंको ख्याल रखना चाहिये। एव ४२ दोष श्री आचाराग सूयगडायाग तथा निशियसूत्रोंमें और विशेष खुलासा पिंड निर्युक्तिमें है। प्रसंगोपात अन्य सूत्रों से मुनि भिक्षाके दोष लिखे जाते है।

श्री आवश्यकसूत्रमें [१] गृहस्थोंने घरका कमाड दरवाजा खुलाके तथा कुच्छ खुला हो उनोंके अन्दर जा के भिक्षा लेना मुनियोंके लिये दोषित है [२] कीतनेक देशोंमें पहले उत्तरी हुइ रोटी तथा घाट खीच चावल अग्रभागका गो कुत्तादिको डालते है यह लेना मुनिको दोषित है [३] देव दवीक बलीका आहार लेना दोषित है [४] विगर देखी हुइ वस्तु लेना दोष है [५] पहले निरस आहार आया हो पीच्छे से कीसी गृहस्थोंने सरसाहारकि आमंत्रण करी हो यह लोलुपतासे ग्रहन करते समय विचार करे कि अगर आहार बढ जावेंगे तो निरस आहार परठ देंगे तो दोषित है कारण आहार परठनेका बडा भारी प्रायश्चित्त है

श्री उत्तराध्ययनजीसूत्र—

[१] अज्ञात कुलकि भिक्षा न करके अपने सज्जन सबंधी यांके वहांकि भिक्षा करना दोष है [२] अकारण याने विनों कारण आहार करना भी दोष है यह कारण छे प्रकारके है शरीर में रोगादि होने से उपसर्ग होने से ,, ब्रह्मचर्य न पलता हो तो०

जीव रक्षा निमित्त० तपश्चर्या निमित्त० और अनसन करने निमित्त इन छे कारण से आहारका त्याग कर देना चाहिये। और छे कारण से आहार करना कहा है क्षुधा वेदना सहन नही हो सके आचार्यादिकि व्यायच करना हो, इर्या सोधनेके लिये, संयम यात्रा निर्वाहानेको, प्राणभूत जीव सत्वकि रक्षा निमित्ते धर्मकथा कहनेके लिये इन छे कारणों से मुनि आहार कर सके है।

श्री दशवैकालिक सूत्रमें—

[१] निचा दरवाजा हो वहा गौचरी जानेमें दोष है कारण सिरके लग जावे पात्रा विगरे फूट जानेका सभय है।

[२] जहापर अन्धकार पडता हो वहा जानेम दोष है

[३] गृहस्थोके घर द्वारपर बकर बकरी [४] बचे बची [५] श्वान कुत्ते [६] गायांके वाछरू बेठे हो उनोको उलगके जाना दोष है। कारण वह भीडके-भय पामे इत्यादि [७] औरभी काइ प्राणी हो उनोंको उल्घके जानेसे दोष है कारण वहां शरीर या संयमकि घात होनेका प्रसंग आ जाते है।

[८] गृहस्थोंके वहा मुनि जानेके पहले देनेकि वस्तुवों आधी-पाछी कर दी हो सघटकि वस्तुवों इधर उधर रख दी हो वह लेनेमें दोष है।

[९] दानके निमित्त बनाया हुवा भोजन [१०] पुन्यके निमित्त [११] वणिमग्ग-रांकादिके [१२] श्रमण शाक्यादिके निमित्त इन च्यारोके लिये बनाया हुवा भोजन मुनि ग्रहन करे तो दोष। अगर गृहस्थ उन निमित्तवालोको भोजन कराये बचा हुवा आहार अपने घरमे खाते पीते हो तो उनोंके अन्दर से लेना मुनिको कल्पता है कारण वह आहार गृहस्थोंका हो चुका है।

[१३] राजाके वहांका बलीष्टाहार तथा राज्याभिषेक स

मयका आहार (शुभाशुभ निमित्त) या राजाके बचीत आहारमें पढालोगोके भाग होते है वास्ते अन्तरायका कारण होनेसे दोष है।

[१४] शय्यातर—मकानके दातारका आहार लेनेसे दोष

[१५] नित्यपड—नित्य एक ही घरका आहार लेना दोष

[१६] पृथ्व्यादिके सघटे से आहार लेना दोप हे।

[१७] इच्छा पुरण करनेवाली दानशालाका आहार लेना,

[१८] कम खानेमे आवे ज्यादा परठना पडे एसा आहार,

[१९] आहार ग्रहन करनेके पहले हस्तादि धोके तथा आहार ग्रहन करनेके बाद सचित्त पाणी आदिसे हाथ धोवे एसा आहार लेना दोप है।

[२०] प्रतिनिषेध कुल स्वल्पकालके लिये सुवासुतक (जन्म मरण) वाले कुलमें तथा जावजीव-चडालादि कुलमें गौचरी आना मना है अगर जावे ता दाप है।

[२१] जास कुलम औरतोका चाल चलन अच्छा न हो एसे अप्रतितकारी कुलमें मुनि गौचरी जाय ता दोप है।

[२२] गृहस्थ अपने घरमें आनेके लिये मना करदो हो कि मरे धर न आना एसे कुलमे गौचरी जाना दोप है।

[२३] मदिरापान लेना तथा करना महा दोप हे।

श्री आचारागसूत्रमे—

(१) पाहुणोंके लिये बनाया आहार जहातक पाहुणा भोजन नहीं किया हो वहातक वह आहार लेना दोप है।

(२) त्रस जीवका मास बिलकुल निषेध है।

(३) जिस गृहस्थोंके पैदाससे आधा भाग तथा अमुक भाग पुन्यार्थ निकालते हो उनोसे अशनादि देवे वह भी दोप है।

(४) जहा बहुत मनुष्योंके लिये भोजन किया हो तथा याति सबन्धी जीमणवार हो वहा आहार ले तो दोष है।

(५) जहापर बहुतसे भिक्षुक भाजनार्थी एकत्र हुवे हो उन रोंमे जा के आहार ले तो दोष [अविश्वास हो]

(६) भूमिग्रह तेखानादिमे निकालके आहार देवे तो दोष।

[७] उष्णादि आहारको ठंडा कर के आहार दे तो भी दोष है।

[८] वींजणादि से शीतल कर आहार दे तो भी दोष है।

श्री भगवतीसूत्रमे—

[१ लाये हुवे आहारको मनाज्ञ बनानेके लिये दूसरी दफे से दुध आ जानेपर भी मकरक लिये जाना इसे संयोग दोष कहते है।

[२] निरस आहार मीलनेपर नफरत लाके करना इसीसे चारित्रके कोलसा हो जाते है [द्वेषका कारण]

[३] सरस मनोज्ञ आहार मीलनेपर गृद्धि बन खावे तो चारित्रसे धूवा निकल जाव [रागका कारण]

[४] प्रमाणसे अधिकाहार करनेसे दोष कारण आलस्य प्रमाद अजीर्णादि रोगोत्पत्तिका कारण है।

[५] पहले पहोरमें लाया हुवा आहारादि चरम पहरमे भोगवनेसे कालातिक्रत दोष लगते है।

[६] दो कोश उपरान्त ले जाके आहार करने से मार्गातिक्रत दोष लगता है।

[७] सूर्योदय होनेके पहेले और सूर्य अस्त होनेके पीछे अशनादि ग्रहन करना तथा भोगवना दोष है।

[८] अन्यो विगरेमें दानशालाका आहार लेना दोष।

[९] दुष्कालमे गरीबोंके लिये किया आहार लेना दोष।

(१०) ग्लोनादि लिये किया आहार लेना दोष।

(११) वादलोंमे अनाथादि लिये बनाया आहार लेना दो

(१२) गृहस्थ नेतादि लोग कहे कि हे स्वामिन आज हमारे घरे गोचरीको पधारो इस मा फीक जावे तो दोष।

श्री प्रश्नव्याकरण सूत्रमें—

(१) मुनिके लिये रूपान्तर रचना करके देवे जैसे मुव दानोंका लड्डु बना देवे इत्यादि तो दोष है।

(२) पयाय बदलके-जैसे दहीका मट्ठा रायता बनाये

(३) गृहस्थोंके यहा अपने हाथों से आहार लेवे तो दो

(४) मुनिके लिये अन्दर आरडादि से आहार लावे तो दोष।

(५) मधुर मधुर वचन बोलके आहारादिकि याचना

श्री निशियसूत्रमें—

(१) गृहस्थोंके यहा जावे पुच्छे कि इस वर्तनमें क्या इस्में क्या है एसी याचना करने से दोष है।

(२) अटवीमें अनाथ मजुरीके लिये गया हुवा से याच कर दीनता से आहार ले तो दोष है।

(३) अन्यतीर्थी जो भिक्षावृत्ति से लाया हुवा आहा उनों से याचना कर आहार ले तो दोष है।

(४) पासत्थे शीथिलाचारीयों से आहार ले तो दोष

(५) जीम कुलमें गोचरी जावे वह लोग जैन मुनियो दुगंच्छा करे एसे कुल्मे जावे आहार ले तो दोष।

(६) शय्यातरको साथ ले जावे उनोंकि दलाली से अ नादिकि याचना करना दोष है।

श्री दशाश्रुतस्कन्ध सूत्रमें—

(१) बालकके लिये बनाया हुवा आहार मुनि लेय तो दोष है कारण बालक रोने लग जाय हठ पकड लेय ।

(२) गर्भवन्तीके लिये बनाया आहार लेवे तो दोष ।

श्री वृहत्कल्पसूत्रमें—

(१) अशन पान, खादिम, स्वादिम यह च्यार प्रकारके आहार रात्रीमें वासी रखव भोगवे तो दोष ।

एव ४२-५-२-२३-८-१२-४-६-१-१ मय १०६ जिसमें पांच दोष माडलेके और १०१ दोष गोचरी स्वनका है द्रव्यसे इन दोषोंको टाले ।

(२) क्षेत्रसे दो कोश उपरान्त ले जाय नही भोगवे

(३) कालसे पहिलापहर का लाया चरमपहर में न भोगवे ।

(४) भावसे माडलेके पाच दोष सयोग, अगाल धुम परिमाण, कारण इनी दोषों को वर्ज के आहार करे उसममय सरसराट चरचराट न करे स्वादके लिये एक गलाफका दुसरी गलाफमें न लेवे टेरा टीपके न डाले केवल सयम यात्रा निवाहने के लिये गाडा क भागण तथा गुमडेपर लगती कि माफीक शरीर का निर्वाह करने के लिये ही आहार करे ॥ आहार पाणी के दोष दो प्रकार के होते है । (१) आम दोष जाकि आम दोषवाला आहार पात्रमें आजावे तौ भी परठने योग्य होते है । (२) गन्ध दोष जोकि सामान्य दोपीत आहार अनोपयोगसे आ जावे तो उनोकि आलोचना लेके भोगवीया जाते है । आम दोष वाला आहार बारहा प्रकारका है शेष गन्ध दोषवाला आहार समझना ।

आधाकर्मी उद्देसीक पूतिकम, मिश्र सूर्यादय पहलका सूर्यास्त पीछेका, कालातिक्रमका मार्गातिक्रमका, ओछामें अ

धिक किया हुवा, शकावाला, मूल्य लाया हुवा, सचित्त पाणीको थुन्द जो शीतल आहारमें गीर गइ है यह इति। एषणा समिति।

(४) आदान मत्त भंडोपगरणीय समिति के च्यार भेद है द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव

द्रव्यसे संयम यात्रा निर्वाहनेको वस्त्रपात्रादि भंडोमत्ता पगरण रखा जाते है उनोंकि संख्या।

(१) रजोहरण-जीवरक्षानिमित्त तथा जैन मुनियोंका चन्ह इनकों शास्त्रकारोने धर्मध्वज कहा है यह आठ अगुलकि दसीयों चौवीस अगुल कि दडी कुल ३२ अंगुलका रजोहरण होनाचाहिये।

(२) मुखवस्त्रिका-मक्खी मच्छरादि त्रस जीवों कि बोलते समय विराधना न हो या सूत्रादिक पर थुक से अशातना न हो बोलते समय मुह आगे रखनेकों एकविलस च्यार अगुल समचोरस होना चाहिये।

(३) चोलपट्टा-कटीबन्ध पाच हाथका होता है।

(४) चदर-मुनियोंको तीन साध्वीयोंको च्यार।

(५) कम्बली-जीवरक्षानिमित्त, गमनागमन समय शरीर आच्छादन करनेकों चतुर्मासमें छेघडी शीतकालमें च्यार घडो उष्णकालमें दो घडी पाछला दिनसे उक्त काल दिन उगणे से बाद कम्बली रखना चाहिये।

(६) दडो-मुनियोंको अपने कान प्रमाणे दडा सयम या शरीर रक्षणनिमित्त रखना चाहिये।

(६) पात्रे-काष्टके तुंबेके मट्टीके आहार पाणी लानेके लिय एक विलसके चाडे हो तीन विलास च्यारागुलके परधीवाले।

(८) झोली-पात्रे बन्ध जानेके बाद गाठसे च्यारों पले च्यारागुल ज्यादा रहना चाहिये आहार लेनेको।

(९) गुच्छे-उनके गुच्छे पात्रोंके उपर नीचे देके जीवरक्षाके लिये पात्रा बन्धनेको रख जाते है।

(१०) रजतान—पात्रे वन्धते समय विचमे कपडे दिये जाते है जीवरक्षा तथा पात्रोंकी रया निमित्त।

(११) पडिले–अढाइ हाथके लवे, आधा हाथसे ज्यादा चाहे घन कपडेके ३–५–७ पडिले गोचरी जाते समय झोलीपर डाले जाते है जीवरक्षा निमित्ते।

(१२) पायकेसरी—पात्र पुजनेक लिये छोटी पुञ्जणी जीवरक्षा निमित्त।

(१३) मडलो–आहार करते समय उनका वस्त्र–पात्रोंक नीचे बीछाया जाते है जिनसे आहार कीसी धरतीपर न गीरे जीवरक्षाके निमित्त रखते हैं।

(१४) सस्तारक—उनका २॥ हाथ लम्बा रात्रीमे सस्तारा –शयन समय विछाया जाता है।

कंचवी और जधीयों यह साध्वीयोंको शीलरक्षा निमित्त रखा जाते है इन सिवाय उपग्रहा ही उपगरण जो कि—

ज्ञाननिमित्त—पुस्तक पाने कागज कल्म सहि आदि।

दर्शननिमित्त—स्थापनाचार्य स्मरणका आदि।

चारित्रनिमित्त—दडासन तृपणी तुणा गरणा आदि।

(१) द्रव्यसे इन उपगरणोंको यत्नासे ग्रहन करे, यत्नासे रखे यत्नासे काममें ले–धापरे–भोगवे।

(२) क्षेत्रसे सब उपकरण यथायोग योग्यस्थानकपर रखे न कि इधर उधर रखे सा भी यत्नापूवक।

(३) कालोकाल प्रतिलेखन करे प्रतिलेखन २८ प्रकारकी है जिसमें बारह प्रकारकी प्रशस्त प्रतिलेखन है।

१ प्रतिलेखन समय वस्त्रकों धरतीसे उचा रखे।

२ प्रतिलेखन समय वस्त्रकों मजबुत पकडे।

३ उतावला-आतुरतासे प्रतिलेखन न करे।

४ वस्त्रके आदि अन्त तक प्रतिलेखन करे।

इन च्यार प्रकारकी प्रतिलेखनकों दृष्टिप्रतिलेखन कहते है।

५ वस्त्रपर जीव चढ गया हो तो उसे थोडासा खखेरे।

६ खखेरनेसे न निकले तो रजोहरणसे पुजे।

७ वस्त्र या शरीरकों हीलावे नहीं।

८ वस्त्रके शल पड जानेपर मसले नही भट न देवे।

९ स्वल्प भी वस्त्र विगर प्रतिलेखन कीया न रखे।

१० ऊंचा नीचा तीरछा भिंत विगेरेके अटकाये नहीं।

११ प्रतिलेखन करते जीवादि दृष्टिगोचर हो तो यत्नापूर्वक परठे।

१२ वस्त्रादिकों झटका पटका न करे।

इनको प्रशस्त प्रतिलेखन कहते है अन्य अप्रशस्त कहते है, जल्दी जल्दी करे, वस्त्रकों मसले उंचा नीचा अटकावे, भींत जमीनका साहारा लेवे, वस्त्रकों झटकावे, वस्त्र इधर उधर तथा प्रतिलेखन किया हुवा-विगर किया हुवा सामिल रखे, वेदिका ठीक न करे याने एक गोडेपर दोनों हाथ रख प्रतिलेखन करे, दोनों हाथ गोडोंसे निचे रखे, दोनों हाथ गोडोंसे उचे रखे, दोनों हाथ गोडोंके भीतर रखे, एक हाथ गोडोंके अन्दर एक बहार यह पाच वेदिक दोष है (दोनों हाथ गोडोंसे कुच्छ उंचा रखना शुद्ध है) वस्त्रकों अति मजबुत पकडे, वस्त्रकों बहुत लम्बा करे, वस्त्र जमीनसे रगडे एक ही नजरमे संपूर्ण वस्त्रकी प्रतिलेखन करे, शरीर वस्त्रकों वारवार हलावे, पांच प्रकारके प्रमाद करता-हुवा प्रतिलेखन करे इन बारह प्रकारकी प्रतिलेखनकों अप्रशस्त कहते है एवं २४ प्रतिलेखन करता शंका पडनेसे

गीणती करे, उपयोगशुन्य हो पथ २५ प्रकारकी प्रतिलेखन हुइ इससे न्युन भी न करे, अधिक भी न करे विप्रोत न करे, जिसके विकल्प आठ है।

नं	ज्यादा	कम	विप्रीत	नं	ज्यादा	कम	विप्रीत
१	नकरे	नकरे	नकरे	५	करे	नकरे	नकरे
२	नकरे	नकरे	करे	६	करे	नकरे	करे
३	नकरे	करे	नकरे	७	करे	करे	नकरे
४	नकरे	करे	करे	८	करे	करे	करे

इन आठ भागासे प्रथम भागा विशुद्ध है सात भागा अशुद्ध है प्रतिलेखन करते समय परस्पर वातें न करे, च्यार प्रकारकी विकथा न करे प्रत्याख्यान न करे न कराये, आगमवाचना लेना, आगमवाचना देना यह पांच कार्य न करे अगर करे तो छे कायाके विराधक होते है।

(४) भावसे भंड उपकरणादि ममत्वभाव रहित वापर, संयमका साधन-कारण समझ।

(५) परिष्टापनिका समितिके च्यार भेद है द्रव्य, क्षेत्र काल भाव जिसमें द्रव्यसे मल मूत्र श्लेष्मादि वडी बातुर्वसे परठे कारण प्रगट आहार-निहार करनेसे मुनि दुर्लभबोधि होता है।

(१) कोइ आवे नही देखे नही वहा जाय परठे।
(२) कोसी जीवोंको तकलीफ या घात न हो वहा परठे।
(३) विषम भूमि हो वहापर न परठे
(४) पाली भूमि हो वहा न परठे कारण निचे जीवादि
(५) सचितभूमिका हो वहां न परठे। [होतो मरे।

(६) विशाल लम्बी चोडी हो वहा जाके परठे।
(७) स्वल्प कालकि अचित भूमि हो वहा न परठे।
(८) नगर ग्रामके नजदीकमें न परठावे।
(९) मूषादिके बील हो वहापर न परठे।
(१०) जहा निलण फूलण त्रस प्राणी हो वहा न परठे।

इन दशों स्थानोंका विकल्प १०२४ होते है जिस्मे १०२३ विकल्प तो अशुद्ध है मात्र १ भागा विशुद्ध है जहातक बने वहा तक विशुद्धिकि खप करना चाहिये।

(२) क्षेत्रसे मुनियोंको मल मात्र जगल नगरसे दुर जाना चाहिये जहा गृहस्थ लोग जाते हो वहा नही जाना चाहिये नगरके बाहार ठेरे होतो नगरमे तथा नगरके अन्दर ठेरे होतो गृहस्थोंके घरमें जाके नहीं परठे।

(३) कालसे कालोकाल भूमिकाकी प्रतिलेखन करे।

(४) भावसे पूजी प्रतिलेखी भूमिकापर टटी पैशाब करते समय पहिले आवस्सही तीन दफे कहे 'अणुजाणह जस्सग्गा' आज्ञालेके परठनेके बाद 'वोसिरामि' तीन दफे कहे पीछा आति वख्त 'निसिही' शब्द कहे स्थानपर आके इर्यावहि याने आलोचना करे इति समिति

(१) मनोगुप्तिका चार भेद द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, द्रव्यसे मनको सावद्य—सारंभ समारंभ आरंभमें न प्रवर्तावे क्षेत्रसे सर्वत्र लोकमें कालसे जाव जीवनक भावसे मन आर्त रौद्र विषय कषायमें न प्रवर्तावे

(२) वचनगुप्तिका चार भेद द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, द्रव्यसे चार प्रकारकी विकथा न करे क्षेत्रसे सर्वत्र लोकमे कालसे जाव जीवतक भावसे राग द्वेष विषयमे वचन न प्रवर्तावे सावद्य न बोले

(३) कायगुप्तिका चार भेद द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव द्रव्यसे खाजखुने नहीं मैल उतारे नहीं थुक थूके नहीं आदि शरीरकी शुश्रूषा न करे क्षेत्रमें सर्वत्र लोकमें कालसे जावजीव तक भावसे कायाको सावद्ययोगमें न प्रवर्तावे इति तीन गुप्ति

सेवं भंते सेवं भंते—तमेवसच्चम्

—※◎※—

थोकडा नम्बर ३३

(३६ बोलोका संग्रह)

(१) असंयम यह संग्रह नयका मत है।

(२) बन्ध दो प्रकारका है (१) रागबन्धन (२ द्वेषबन्धन।

(३) दंड ३ मनदंड वचनदंड, कायदंड ३ गुप्ति—मन गुप्ति, वचनगुप्ति कायगुप्ति ३ शल्य—मायाशल्य नियाणाशल्य मिथ्याशल्य ३ गार्व—ऋद्धिगार्व, रसगार्व सातागार्व ३ विराधना—ज्ञानविराधना, दर्शनविराधना और चारित्र विराधना

(४) चार कषाय - क्रोध, मान, माया लोभ ४ विकथा—स्त्रीकथा राजकथा, देशकथा, भक्तकथा ४ सज्ञा—आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा परिग्रहसंज्ञा ४ ध्यान—आर्तध्यान रौद्र ध्यान, धर्मध्यान शुक्लध्यान

(५) पांच क्रिया—काइया अधिगरणिया, पाउसिया, परितापणिया पाणाइवाईया पांच कामगुण—शब्द रुप, गन्ध रस, स्पर्श। ५ समिति—इर्यासमिति, भाषासमिति एषणा समिति, आदान भंडमत निक्षेपणासमिति, उच्चार पासवण ज ल्लखेलमल संघयण परिष्टापनिका समिति।५ महाव्रत--सर्वथाओ

पाणाईवायाओ वेरमण सव्वाओ मृषाओ वायाओ वेरमण, सव्वाओ अदीन्नादानाओ वेरमण, सव्वाओ मेहुआणो वेरमण, सव्वाओ परिग्गहो वेरमण।

(६) छे काय—पृथ्वीकाय अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय त्रसकाय। छ लेश्या—कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजसलेश्या पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या।

(७) सात भय—आलोक भय, परलोक भय, आदान भय, अकस्मात भय, मरण भय अपयश भय, आजीवका भय।

(८) आठ मद—जातीमद कुलमद, बलमद, रूपमद, तप मद, सूत्रमद, लाभमद, ऐश्वर्यमद।

(९) नौ ब्रह्मचर्यगुप्ति—स्त्री पशु नपुंसक सहीत उपाश्रयमें न रहे। यथा बिल्ली और मूषकका दृष्टांत १ स्त्रियोंकी कथा वारता न करे। यथा नींबूकी खटाईका दृष्टांत २ स्त्री जिस आसनपर बैठी हो उस आसनपर दो घडीसे पहिले न बैठे। अगर बैठे तो तपी हुई जमीन पर ढले हुये घृतका दृष्टांत। ३ स्त्रीके अंगोपांग इन्द्रिय वगैरह न देखे। जैसे कची आख और सूर्यका दृष्टांत। ४ विषयभोगादि शब्दोंको भींत, टाटा, कनात आदिके अन्तरसेभी न सुने। यथा गर्जारव समय मयूरका दृष्टांत। ५ पूर्व (गृहस्था श्रम) के कामभोगको याद न करे। इसपर पथिक और डोकरीके छासका दृष्टांत। ६ प्रतिदिन सरस आहार न करे। अगर करे तो सन्निपातका रोगमें दूध मिश्रीका दृष्टांत। ७ प्रमाणसे अधिक आहार न करे। जैसे सेरकी हंडीमें सवासेर पकाना (रांधना) का दृष्टांत ८ शरीरकी शुश्रुषा विभूषा न करे। अगर करे तो काजलकी कोठरीमें सफेद कपडेका दृष्टांत ९

(१०) दश यति धर्म—खंते (क्षमा करना) मुत्ते (निर्लोभता) अज्जवे (सरलता) मद्दवे (मदरहित) लाघवे (द्रव्य-

भावसे हलका) सच्चे (सत्य बोले०) सयमे (१७ प्रकार सयम पाले। तवे (१२ प्रकारका तप करे) चईए (ग्लानिमुनिको आहार प्रमुख लादे) बभचेरे (ब्रह्मचर्य पालें)

(११) इग्यारा श्रावक प्रतिमा (अभिग्रह विशेष) दर्शन प्रतिमा व्रतप्रतिमा आवश्यकप्रतिमा, पौषधप्रतिमा, एकरात्रीप्र तिमा ब्रह्मचर्यप्रतिमा, सचित्तप्रतिमा, आरभप्रतिमा सारभ प्रतिमा, उद्दिष्टभूतप्रतिमा, श्रमणभूतप्रतिमा, विस्तारसे शीघ्रबोध भाग २० वा में

(१२) बाराहों भिक्षुप्रतिमा क्रमशः सातों प्रतिमा एकक मासकि है आठवी प्रथम सात रात्री नौवी दुसरे सात रात्रा, दशवी तीसरे सात रात्रीकी, इग्यारवी दो रात्रीकी, बारहवी एक रात्रीकि महाप्रतिमा इनका भी सविस्तर वर्णन शीघ्रबोध भाग २० पृष्ट में देखो।

(१३) तेरहा क्रिया अर्थदंडक्रिया, अनर्थदडक्रिया, हिंसादड अकस्मात्, अज्ञात्यदोपवत्तिया पेज्जवत्तिया मित्रदो षवत्तिया, मासवत्तिया, अदत्तवत्तिया मानवत्तिया माया० लोभ० इर्यावहिक्रिया

(१४) जीवके चौद भेद — सूक्ष्मएकेन्द्री बादरएकेन्द्री, बे इन्द्री, तेइन्द्री, चौरेन्द्रि, असज्ञीपचेन्द्री सज्ञीपचेन्द्री इन सातों का पर्याप्ता अपर्याप्ता गणने से चौदे भेद हुवे

(१५) पनरह परमाधामी देवता — आम्रे अम्बरसे, साम, सबले रुद्र, विरुद्रे, काले, महाकाले असीपति धणु कुंभे, वालु वतरणी, खरस्वरे महाघोषे

(१६) सुयगडागसूत्रके प्रथम स्कधका सोलह अध्ययन — स्वसमय परसमय, वताली, उपसर्गप्रज्ञा स्त्रीप्रज्ञा नरक० वीर स्तुइ० कुसीलप्रयास० धर्मपन्नति० वीर्य० समाधी० मोक्षमार्ग०

समोसरण० यथास्थित० ग्रन्थ अध्ययन० यमतिथि अध्ययन० गहा अध्ययन०

(१७) सतरह प्रकारे सयम—पृथ्विकायसयम अप्पकाय० तउकाय० वायुकाय० वनस्पतिकाय० बेइन्द्री० तेइन्द्री० चौरिंद्री० पचेन्द्री० अजीव० प्रेक्षा० (जयणापूर्वक वर्ते बहुमूल्य वस्तु न वापरे) उपेक्षा० (आरभ तथा उत्सूत्रादि न प्ररुपे) पुजणप्रतिलेखन० परटावणीय० मन० वचन० काय०

(१८) ब्रह्मचर्य १८ प्रकार—औदारिक शरीर सबधी मैथुन (न सेवे) न करे न दूसरेसे करावे और न करतेको अच्छा समजे मनसे, वचनसे कायासे यह नौ भेद औदारिक से हुवे ऐसे ही नौ वैक्रियसे भी समज लेना एवम् १८

(१९) ज्ञातासूत्रका अध्ययन १९ मेघकुमार धनासार्थवाह, मोरड्डीकाईडा कूर्म-काच्छप, शैलकराजऋषीश्वर, तूंबडीके लेप का रोहिणीजीका मल्लीनाथजीका, जिनऋषीजिनपालका, चन्द्र माकीकलाका, दरद्दवावृक्षका जयशत्रु राजा और सुबुद्धि प्रधान का नन्दनमणीयारका, तेतलीप्रधान पोटलासोनारीका नदीफल वृक्षका, महासती द्रौपदीका, कालोद्धीपके अश्वोंका, सुसमा बाल काका पुडरीकजीका

(२०) असमाधीस्थान—बीस बोलोंको सेवन करनेसे स यम असमाधी होते है। धमधम करते चले, विना पूजे चले, कहीं पूजे और कहीं चले मर्यादासे उपरान्त पाट पाटलादिक भोगवे आचार्योपाध्यायका अवर्णवाद बोले स्थिवरकी घात चिंतवे, प्रणभूतकी घात चिंतवे, प्रतिक्षण क्रोध करे परोक्षे अव गुणवाद बोले, शंकाकारी भाषाको निश्चयकारी बोले नया क्रोध करे, उपशमे हुवे क्रोधको फीर उत्पन्न करे अकालमें सझाय करे सचित रजयुक्तपावसे आसनपर बैठे पेहरराती पीछे दिन निक

ले पहातक उंचे स्वरसे उच्चारण करे मनसे झुंझकरे
झुंझकरे कायसे झुझकर सूर्यके उदयसे अस्त तक
करे, आहारपानीकी शुद्ध गवषणा न करे तो असमाधी

(२१) सबला—यह एकवीस दोषका सेवन करने
सबी घातरूपी सबला दोष लगे हस्तकर्म करेतो० मैथुन
रात्रिभोजन करेतो० आधाकर्मी आहार करेतो० राजपिं
वेतो० पांच दोष सहित आहार करेतो० वारवार प्र
भागेतो० दिक्षा लेकर छे महीना पहिले एक गच्छसे दूस
जायतो० एक मासमें तीन नदीका लेप लगावेतो० एक
तीन मायास्थान सेवेतो० सिज्झातरका पिंड (आहार भ
आकुटी (जानकर)जीव मारेतो० जानकर मूठबोले ता
चोरी करेतो० सचित्त पृथिवी उपर बैठे जीवको उपसर्ग
स्निग्ध पृथिवीपर बैठके जीवको उपद्रव करेतो० प्र
जीव सत्ववाली धरतीपर बैठता० दशजातकी हरी व
खावेतो० एक वर्षमे दश नदीका लेप लगावेतो० एक
मायास्थान सेवेतो सचित्त पानी पृथ्वी आदि लगेहु
आहारपानी लेतो सबला दोष लागे।

(२२) बावीस परिसह—क्षुधा पीपासा, शीत
दंश (मच्छर) अचेल (वस्त्ररहित) अरति स्त्री
चर्या (चलना) निसिया, (बैठना) आक्रोश, वध
अलाभ रोग, तृणस्पर्श जल्मेल, सत्कार, प्रज्ञा अज्ञा
दर्शन परिसह

(२३) सुयगडांगसूत्रके पहले दूसरे श्रुत स्कंधके २३
जिसमें पहिले श्रुत स्कंधके १६ अध्ययन सोलहवें गाथामें

है और दूसरे श्रुत स्कधके सात अध्ययन—पुष्करणीपाउडीका० क्रियाका० भाषाका० अनाचारका० आहारप्रज्ञा० आर्द्रकुमारका० उदक पेढालपुत्रका० एव २३

(२४) चौवीस तीर्थंकर—ऋषभदेवजी, अजीत, संभव, अभिनदन, सुमती, पद्मप्रभु सुपार्श्व चन्द्रप्रभु सुविधि, शीतल, श्रेयास, वासुपूज्य विमल अनन्त धर्म शान्ति कुन्थु अर मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व, वर्धमान० एव २४ तथा देवता-दश भुवनपति, आठ वाणव्यतर पाच ज्योतिषि, एक वैमानिक एव २४ देव।

(२५) पाच महाव्रतकी पचवीस भावना (सयमकी पुष्टी) यथा पहिले महाव्रतकी पाच भावना—र्याभावना मनभावना, भाषाभावना भडोपगरण यत्नापूर्वक लेने रखनेकि भावना, आहारपानीकी शुद्ध गवेषणा करना भावना॥ दूसरे महाव्रतकी पाच भावना—द्रव्य, क्षेत्र काल, भाव देखकर विचार पूर्वक बोले, क्रोधके वस न बोले (क्षमा करे) लोभवस न बोले, (सन्तोष रखे) भयवस न बोले (धैर्य रखे) हास्यवस न बोले (मौन रखे)॥ तीसरे महाव्रतका पाच भावना—विचार कर अ विग्रह (मकानादिकी आज्ञा) ले, आहारपानी आचार्यादिककी आज्ञा लेकर वापरे, आज्ञा लेता कालक्षेत्रादिककी आज्ञा ले, सा धर्मीका भडोपगरण वापरे तो रजा लेकर वापरे, ग्लानी आदिक की वैयावच्च करे॥ चौथे महाव्रतकी पाच भावना—वारवार स्त्रीके श्रृंगारादिककी कथा वार्ता न करे स्त्रीके मनोहर इन्द्रियों कों न देखे, पूर्वमें किये हुवे काम क्रीडाओंको याद न करे, प्रमाण उपरान्त आहारपानी न वापरे स्त्रीपुरुष नपुसकवाले मकानम न रहे॥ पाचवे महाव्रतकी पाच भावना—विषयकारी शब्द न

सुने विषयकारीरुप न देखे विषयकारी गन्ध न ले, विषयकारी रस न भोगवे, विषयकारी स्पर्श न करे

(२६) दशाश्रुतस्कंधका दश अध्ययन व्यवहारसूत्रका दशअध्ययन बृहत्कल्पका छे अध्ययन, कुल मिलाकर २६ अध्ययन हुवे

(२७) मुनिके गुण सत्तावीस—पाच महाव्रत पाले, पाच इन्द्रिय दमे चार कषाय जीते मनसमाधी, वचनसमाधी, काय समाधी नाणसंपन्ना दर्शनसंपन्ना चारित्रसंपन्ना, भावसच्चे, करणसच्चे योगसच्चे क्षमावंत, वैराग्यवंत वेदनासहे मरणका भय नही जीनेकि आशा नहीं

(२८) आचाराग कल्पका २८ अध्ययन—आचाराग प्रथम श्रुतस्कंधका नौ अध्ययन—शस्त्रप्रज्ञा, लोकविजय, शीतोष्ण समकितसार लोकसार धुत्ता विमुक्ता, उपधान, महाप्रज्ञा ॥ दूसरे श्रुतस्कंधका १६ अध्ययन—पडेषणा, सज्झायषणा इर्याषण भाषाषणा वस्त्रेषणा पात्रेषणा उग्गपडिमा, उच्चारशतकी या ठाणशतकीया, निसिहशतकीया शब्दशतकीया रुपशतकीया, अन्या यशतकीया प्रन्नीयाशतकीया भावना अध्ययन विमुक्ति अध्ययन ॥ निशियसूत्रके तीन अध्ययन—उग्घाया (गुरु प्रायश्चित्) अनुग्घाया (लघु प्रायश्चित्) आरोपण (प्रायश्चित्त देनेकी विधि)

पापसूत्र—भूमिकंप, उत्पात, (आकाशमें उत्पातादिक) सुपन (स्वप्ना) अंगे (अंग स्फुरण) न्तर (चन्द्रसूर्यादिक) अतलिख्खे (आकाशादिमें चिन्ह) व्यजन (तिलमसादि) लख्खण (हस्तादिकी रेखा वगेरे) ये आठ सूत्रसे आठ वृत्तिसे और आठ सूत्रवृत्ति दोनोंसे एवम् चोवीस निशाणुयोग विज्ञाणुयोग मंत्राणुयोग, योगाणुयोग अणतिर्थीय पयत्ताणुयोग २९ ॥

(३) महा मोहनियबंधका कारण तीस—१ त्रस जीवोंको पानीमें डुबाकर मारनेसे महा मोहनियकर्म बांधे २ त्रस जीवों को श्वास रोकके मारे तो० ३ त्रस जीवोंको अग्निमें या धूप देकर मारे तो० ४ त्रस जीवोंको मस्तकपर चोट देकर मारे तो० ५ त्रस जीवोंका मस्तकपर चमडे वगेरेका बंधन देकर मारे तो० ६ पागल (घेला) गुंगा बावला (चित्तभ्रम) वगेरेकी हासी करे तो० ७ मोटा (भारी) अपराधको गोपकर (छिपाकर) रखे तो० ८ अपना अपराध दूसरेपर डाले तो० ९ भरीसभामें मिश्रभाषा बोले तो० १० राजाकी आती हुइ लक्ष्मी रोके या दाणचोरी करे तो० ११ ब्रह्मचारी न हो और ब्रह्मचारी कहावे तो० १२ बाल ब्रह्मचारी न हो और बालब्रह्मचारी कहावे तो० १३ जिसके प्रयागसे अपनेपर उपकार हुवा हो उसीका अवगुण बोले तो० १४ नगरके लोगोंने पंच बनाया वह उसी नगरका नुकसान करे तो० १५ स्त्री भरतारको या नौकर मालिकको मारे तो० १६ एक देश के राजाकी घात चिंतवे तो० १७ बहुत देशोंके राजावोंकि घात चिंतवे तो १८ चारित्र लेनेवालेका परिणाम गिरावे तो० १९ अरिहंतका अवर्णवाद बोले तो० २० अरिहंतके धर्मका अवर्णवाद बोले तो० २१ आचार्योपाध्यायका अवर्णवाद बोले तो० २२ आचार्योपाध्याय ज्ञान देनेवालेकी सेवाभक्ति यश कीर्ति न करे तो० २३ बहुश्रुति न होकर बहुश्रुति नाम धरावे तो० २४ तपस्वी न होकर तपस्वी नाम धरावे तो० २५ ग्लानी की व्यावच (टेहल चाकरी) करनेका विश्वास देकर वैयावच न करे तो० २६ चतुर्विधसंघमें छेदभेद करे तो० २७ अधर्मकी प्ररूपणा करे तो० २८ मनुष्य देवतोंके कामभोगमें अतृप्त होकर मरे तो० २९ कोई श्रावक मरके देवता हुवा हो उसका अवर्णवाद बोले तो० ३० अपने पास देवता न आते हो और कहे कि मेरे पास देवता आता है तो महा मोहनियकर्म बांधे

उपरोक्त तीस बोलोंमेसे कोई भी बोलका सेवन करनेवाला ७० कोडाकोडी सागरोपम स्थितिका महा मोहनियकर्म बांधे

(३१) सिद्धोंके गुण ३१ ज्ञानावर्णिय कर्मकि पांच प्रकृति क्षय करे यथा—मतिज्ञानावर्णिय, श्रुतज्ञा० अवधिज्ञा० मन पर्यव ज्ञा० केवलज्ञानावर्णिय० दर्शनावर्णियकर्मकी नौ प्रकृति क्षय करे यथा—चक्षुदर्शनावर्णिय अचक्षुद० अवधिद० केवलद० निद्रा निद्रानिद्रा प्रचला, प्रचलाप्रचला, थीणद्धी, वेदनिकर्मकी दो प्रकृति क्षय करे—शाता वेदनिय, अशाता वेदनिय मोहनियकर्मकी दो प्रकृति—दर्शनमोहनी, चारित्रमोहनी आयुष्यकर्मकी चार प्रकृति—नारकी तिर्यंच मनुष्य, देवतावा आयुष्य० नामकर्मकी दो प्रकृति—शुभनाम अशुभनाम गोत्र कर्मकी २ प्रकृति—उञ्चगोत्र, निचगोत्र और अंतरायकर्मकी पांच प्रकृति—दानांतराय लाभांतराय भोगांतराय, उपभोगांतराय, विर्यांतराय एवं ३१ प्रकृति क्षय होनेसे ३१ गुण प्रगट हुवे है

(३२) योगसंग्रह—भावक शिष्य आलोचना देनी, आलोचन देनेवाले सिवाय दूसरेको न कहना, आपत्तीकालमें भी दृढता धारण करनी, किसीकी सहायता विना उपधानादि तप करना, ग्रहण आसेवना शिक्षा धारणकरनी, शरीरकी सालसभाल न करनी गुप्त तपस्या करनी निर्लोभ रहना, परिषह सहन करना सरल भाव रखना, सत्यभाव रखना, सम्यक्दर्शन शुद्ध० चित्त स्थिरता० निष्कपटता अभिमान रहित० धैर्यता० संवेग० माया शल्य रहित० शुद्धक्रिया० संवरभाव० आत्मनिर्दोष० विषय रहित० मूलगुण धारणा० उत्तरगुण धारणा० द्रव्यभावसे पापको वोसिरे २ कहना० अप्रमाद कालोकाल क्रियाकरनी० ध्यानस माधि धरना मरणांत कष्ट सहन करना प्रतिज्ञा दृढता० प्राय श्चित लेना० समाधीमे संथारा करना०

(३३) गुरुकी तैतीस आशातना—गुरुके आगे शिष्य चलेतो आशातना, गुरुकी बराबर चलेतो० गुरुके पीछे स्पर्श करता चलेतो० एवम् तीन, बैठते समय और तीन खडे रहते समय तीन एव नौ प्रकारसे गुरुकी आशातना होती है गुरुशिष्य एकसाथ स्थंडिल जावे और एक पात्रमे पानी होतो गुरुसे शिष्य पहिले सूचि करे तो, स्थंडिलसे आकर गुरुसे पहिले इरियावही पडिकमेतो० विदेशसे आयेहुवे श्रावकके साथ गुरुसे पहिले शिष्य वार्तालाप करेतो० गुरु कहे कौन सूते है और कौन जागते है तो जागताहुवा शिष्य न बोलेतो० शिष्य गौचरी लाकर गुरुसे आलोचना न ले और छोटेके पास आलोचना करेतो० पहिले छोटेको आहार बताकर फिर गुरुको आहार बतावेतो० पहले छोटे साधुको आमन्त्रण करके फिर गुरुको आमन्त्रण करेतो० गुरुसे विना पुछे दूसरोंको मनमान्य आहार देतो० गुरुशिष्य एक पात्रमें आहार करे और उसमेंसे शिष्य अच्छा २ आहार करेतो० गुरुके बोलानेपर पीछा उत्तर न देतो० गुरुके बुलानेपर शिष्य आसनपर बैठाहुवा उत्तर देतो० गुरुके बुलानेपर शिष्य कहे क्या कहते हो ऐसा बोलेतो० गुरु कहे यह काम मतकरो शिष्य जवाब दे कि तू कौन कहनेवालातो० गुरु कहे इस ग्लानीकी वैयावच्च करो तो बहोत लाभ होगा इसपर जवाब दे क्या आपको लाभ नहीं चाहिये ऐसा बोलेतो० गुरुको तुंकारा टुकारा दे (लापरवाइसे बोले) तो० गुरुका जातीदोष कहेतो० गुरु धर्मकथा करे और शिष्य अप्रसन्न होवेतो० गुरु धर्मदेशना देताहो उसवक्त शिष्य कहे यह शब्द ऐसा नहीं ऐसा है तो० गुरु धर्मकथा कहे उस परिषदामें भेदभेद करेतो० जो कथा गुरु परिषदामें कहीहो उसी कथाको उसीपरिषदामें शिष्य अच्छी तरहसे वर्णन करेतो० गुरु धर्मकथा कहतेहो और शिष्य कहे गोचरीकी वखत होगई

वहातक व्याख्यान होगे तो० गुरुके आसनपर शिष्य बैठे तो० गुरुके पाव या बिछोनेको ठोकर लगाकर क्षमा न मागेतो० गुरुसे ऊचे आसनपर बैठे तो० यह तेतीस आशातना अगर शिष्य करेंगे तो वह गुरु आज्ञाका विराधि हो ससारमे परिभ्रमन करेंगे।

(३४) तीर्थकरोंके चौतीस अतिशय--तीर्थकरोंके केश नख न बधे सुशोभित रहै० शरीर निरोग० लोहीमास गोक्षीरजैसा० श्वासोश्वास पद्म कमलजेसा सुगन्धी, आहार निहार चर्मचक्षु वाला न देखे० आकाशमें धर्मचक्र चले० आकाशमें तीन छत्र धारण रहै० दो चामर वींजायमान रहै० आकाशमे पादपीठ सहित सिंहासन चले० आकाशमें इन्द्रध्वज चले० अशोकवृक्ष रहे० भामडल होवे० भूमीतल सम होवे० कांटा अधोमुख होवे० छहो ऋतु अनुकुल होना० अनुकूल वायु चले० पाच वर्णके पुष्प प्रगट होवे० अशुभ पुद्गलका नाश होवे० सुगंधपाणीसे भूमी स्वच्छ होवे० शुभ पुद्गल प्रगटे० योजनगामिनी ध्वनी होवे० अर्ध मागधी भाषामें देशना दे० सर्व सभा अपनी २ भाषामें समझे० जन्मवैर, जातीवैर शांतहो० अन्य मतावलबी भी आकर धर्म सुने और विनय करे० प्रतिवादी निरूत्तर होवे० पचीस योजनसुधी कोइ किस्मका रोग उपद्रव न होवे० मरकी न होय० स्वचक्रका भय न होवे० परचक्रका भय न होवे० अतिवृष्टि न होवे० अनावृष्टि नहो० दुकाल न पडे० पहिले हुवा उपद्रव भी शांत होय० इन अतिशयोंमे ४ अतिशय जन्मसे होते है ११ अतिशय कर्म क्षय होनेसे होते है और १९ अतिशय देवकृत होते है

(३५) वचनातिशय पैंतीस--संस्कारवचन, उदात्त गंभीर० अनुनादी० दाक्षिण्यता० उपनीतराग० महा अर्थगर्भित० पूर्वापर अविरुद्ध० शिष्ट० सदेह रहित० योग्य उत्तरगर्भित० हृदयग्राही०

क्षेत्रकालानुकूल० तत्वानुरूप० प्रस्तुत व्याख्या० परस्पर अवि रूद्ध० अभिजात० अति स्निग्ध० मधुर० अन्य मर्मरहित अर्थ धर्मयुक्त० उदार० परनिंदा स्वश्लाघा रहित० उपगतश्लाघा० अनयनीत० कुतूहल रहित० अद्भूत स्वरूप० विलंब रहित० विभ्रमादि दोष रहित विचित्रवचन० आहित विशेष० साकार विशेष० सत्व विशेष० खेद रहित० अव्युच्छेद०

(३६) उत्तराध्ययनसूत्रके ३६ अध्ययन—विनय० परिसह० चउरंगिय० असंखय० अकाम सकाम मरण० खुड्डानियठि० एलय० काविल० नमिपव्वज्जा० दुमपत्तय० बहुस्सुय० हरिएस-बल० चित्तसमू० उसुयार० भिक्खु० बम्भचेरसमाहि० पाव समण संजइराय० मियापुत्तो० महानिग्गथी० समुद्दपालिय० रहनेमी० केसीगोयम० पवयणमाया० जयघोस विजयघोस० सामायारी० खलुंकि० मुक्खमग्गई० समत्त परिक्कमिय० तवमगाय० चरणविहीय० पमायठाण० अठकम्मप्पगडी० लेस० अणगारमग्ग० जीवजीव विभत्ती० इति ।

सेवभंते सेवभंते—तमेवसचम्

—○◎○—

थोकडा नम्बर ३४

श्री भगवतीजीसूत्र श० २५ उ० ६

(निग्रन्थोंके ३६ द्वार)

पन्नवणा—प्ररुपणा वय-वेद ३ राग-सरागी २ कल्प-कल्प ५ चारित्र-सामायिकादि ५ पडिसेवण-दोष लागेके नही ?

ज्ञान-मत्यादि ५, तित्थे तीर्थमें होवे २, लिंग-स्वलिंगादि शरीर-औदारिकादि खित्ते-किसक्षेत्रमें काले-किसकालमें, गती-किस गतीमें सयम-सयमस्थान निकासे-चारित्रपर्याय योग सयोगी अयोगी उपयोग-साकार बहुता २ कषाय-सकषाय २ लेसा-कृष्णादि ६ परिणाम-हियमानादि ३ बध-कमका वेदय-कर्मवेदे उदीरणा-कमकी उपसपज्जाण कहाजाय सज्ञा सन्नाबहुता आहार-आहारी २ भव-कितना भव करे आगरेस कितने वरत आवे काल-स्थिती अंतरा समुद्घात-वेदना ७ क्षेत्र-कितने क्षेत्रमें होव फुसणा-कितक्षेत्रस्पर्शी भाव-उदयादि ५ परिणाम-कितनालाभे अल्पाबहुत्व इति ३६ द्वार।

(१) पन्नवणा-नियठा (साधु) छे प्रकारके है

(१) पुलाक-दो प्रकारके है। (१) लब्धी पुलाक जैसे चक्रवर्ती आदि कोई जैनमुनी या शासनकी आशातना करे तो उसकी सेना वगरहको चकचूर करनेके लिये लब्धीका प्रयोग करे (२) चारित्र पुलाक—जिसके पाच भेद ज्ञानपुलाक, दर्शन पुलाक, चारित्रपुलाक लिंगपुलाक (विना कारण लिंग पलटावे) अहसुहम्मपुलाक, (मनसेभी अकल्पनीय वस्तु भोगनेकी इच्छा करे। जेसे चावलोंकि सालीका पुला जिस्में सार वस्तु कम और मटी कचरा ज्यादा।

(२) बकुश-क पाच भेद है। आभोग (जानता हुवा दोष लगावे) अणाभाग (विनाजाने दोष लगे) सवुडा (प्रगट दोष लगावे) असवुडा (छाने दोष लगावे) अहासुहम्म (हस्त मुख धोवे या आर्ख आजे) जेसे शालका गाइदा जिस्मे रुरा कर जेसे कुच्छ मट्टी कम हुइ है।

(३) पडिसवना—५ भेद-ज्ञान, दर्शन चारित्र में अतिचार लगावे। लिंगपलटावे, आहासुहम तप करके देवताकी

पदवी पान्छे। जैसे शालीके गाइठाको उपण-वायुसे बारीक झीणे कचरेका उठा दीया परन्तु बडे बडे डाखले रह गये।

(४) कषायकुशील-५ भेद-ज्ञान, दर्शन, चारित्रमें कषाय करे कषायकरके लिंग पलटावे, अहासुहम, (तप करी कषाय करे) कचरा रहित शाली।

(५) निग्रथ-५ भेद-प्रथम समय निग्रथ (दशमे गुण स्थानकसे, इग्यारवें गु० बारहवें गु० वाले प्रथम समयवत) अप्रथम समय (दो समयसे ज्यादा हो) चर्मसमय, जिसको १ समयका छद्मस्थपना शेष रहा हो) अचर्मसमय (जिसको दो समयसे ज्यादा बाकी हो) अहासुहम, (सामान्य प्रकारे वर्ते) शालीको दल छातु निकालके चावल निकाले हुवे।

(६) स्नातक-५ भेद-अच्छवी, (योगनिरोध) असबले, (अतिचारादि सबला दोष रहित) अकम्मे (घातीकर्म रहित) ससुद्ध ज्ञानदर्शन धारी केवली, अपरिस्सावी, (अबंधक) ज्ञान दर्शनधारी अरिहत जिन केवलीजैसे निर्मल अखडित सुग न्धी चावलोकी माफीक।

ऐसे छे प्रकारके साधु कहे हैं इनकी परस्पर शुद्धता शालीका दृष्टांत देकर समझाते हैं। जैसे मट्टी सहित उखाडी हुइ शालाकापुला जिसमें सार कम और असार जादा वैसेही पुलाकसाधुमें चारित्रकी अपेक्षा सारकम और अतिचारकी अपेक्षा असार ज्यादा है दूसरा शालका गाईठा (खला) पहलेसे इसमें सार जादा है क्योंके पूलमें जो रेतीथी वह निकल गई वैसेही पुलाकसे बकुशमें सार जादा है तीसरा उडाई हुई शाली, जो बारीक कचराथा वह हवासे उड गया वैसेही बकुशसे पडिसे

धनमे सार जादा है चौथा सबै कचरा निकाली हुई शाली के समान कषाय कुशील है पाचवा शालीसे निकालाहुवा चावल इसके समान निग्रंथ है छठा साफ किया हुवा अखंड चावल जिसमे किसी किस्मका कचरा नहीं ऐसे स्नातक साधु है द्वारम्

(२) वद—पुरुष, स्त्री नपुंसक अवेदी० जिस्म पुलाक पुरूष वेदी और-पुरुष नपुंसकवेदी होते है, बकुश पु० स्त्री० न० वेदी होते है वैसेही पडिसेवनमें तीनो वेद कषायकुशील सवेदी, और अवेदी सवेदी होतो तीनोवेद अवदी होतो उपशान्त अवेदी या क्षीण अवेदी निग्रंथ उपशान्त अवेदी और क्षीण अवेदी होते है और स्नातक क्षीणअवेदी होते है द्वारम्

(३) रागी-सरागी वीतरागी-पुलाक, बुकश पडिसेवना कषाय कुशील एव ४ नियठा सरागी होते है निग्रंथ उपशान्त वीतरागी और क्षीण वीतरागी होते है स्नातक क्षीण वीतरागी होते है द्वारम्

(४) कल्प ५=स्थितकल्प, अस्थितकल्प, स्थिवरकल्प, जिनकल्प, कल्पातीत-कल्प दश प्रकारके है, १ अचेल २ उदेशी ३ रायपिंड ४ सेझातर ५ मासकल्प ६ चौमासीकल्प ७ व्रत, ८ पडिक्रमण, ९ किर्तीकर्म १० पुरुषाजेट, यह दशकल्प० पहिले और छहले तीर्थंकरोके साधुवोंके स्थितकल्प होता है शेष २२ तीर्थंकरोके शासनमें अस्थितकल्प है उपर जो १० कल्प कहआये है उसमे ६ अस्थितकल्प है १-२-३-५-६-८ और चार स्थितकल्प है ४ ७-९-१० (३) स्थिवरकल्प वस्त्रपात्रादि शास्त्रोक्त रखे (४) जिनकल्प जघन्य २ उत्कृष्ट १२ उपकरण रक्खे (५) कल्पातित केवलज्ञानी मन पर्यवज्ञानी अवधिज्ञानी,

चौदे पूर्वधर दश पूर्वधर, श्रुतकेवली, और जातिस्मरणादि-ज्ञानी ॥ पुलाक-स्थितीकल्पी, अस्थितीकल्पी स्थिवरकल्पी होते हैं बकुश पडिसेवणा पूर्ववत् तीन और जिनकल्प भी होवे कषायकुशील पूर्ववत् चार और कल्पातीतमें भी होवे निग्रंथ, स्नातक-स्थित० अस्थित० और कल्पातीतमे होवे द्वारम्

(५) चारित्र ५ सामायिक, छेदोपस्थापनिय परिहारवि-शुद्धि, सुक्षमसपराय यथाख्यात—पुलाक बकुश, पडिसेवणमें० समायक छेदा० चारित्र होता है कषायकुशीलमें सामा० छेदो० परि० सूक्ष्म० चारित्र होते है और निग्रंथ, स्नातकमें यथाख्यात चारित्र होता है द्वारम्

(६) पडिसेवण २ मूलगुणप० उत्तरगुणप० पुलाक, पडिसे-वणी मुलगुणमें (पचमहाव्रत) और उत्तरगुणमें (पिण्डविसु द्धादि) दोषों लगावे बुकश मुलगुणअपडिसेवी उत्तरगुणपडिसेवी वाकी तीन नियठा अपडिसेवी द्वारम्

(७) ज्ञान ५ मत्यादि पुलाक, बकुश पडिसेवणमें दो ज्ञान मति श्रुति ज्ञान और तीन हो तो मति, श्रुति, अवधि, क-षायकुशील, और निग्रंथमे ज्ञान दो तीन चार पावे दो हो तो मति श्रुति तीनहो तो मति श्रुति, अवधि या मनःपर्यव० चार हो तो मति, श्रुति, अवधि और मन पर्यव स्नातकमे एक केवलज्ञान और पढनेआश्री पुलाक जघन्य नौ । ९) पूर्वन्युन उत्कृष्ट नौ (९) पूर्व सम्पूर्ण बकुश पडिसेवण जघन्य अष्टप्रवचनमाता उ० दश-पूर्व कषायकुशील ज० अष्टप्रवचनमाता उ० १४ पूर्व निग्रंथ भी ज० अष्ट प्र० उ० १४ पूर्व पढ स्नातक सूत्र वितिरिक्त द्वारम्

(८) तीर्थ-पुलाक बकुश, पडिसेवण तीर्थमें होवे शेष

तीन नियठा तीथमे और अतीर्थमे भी हाते है तीर्थंकर हो और प्रत्येक बुद्धि हो द्वारम्

(९) लिंग-छेहो निर्यठा (साधु) द्रव्य लिंग आश्री स्व लिंग, अन्यलिंग गृहलिंग तीनोंमें होवे और भावलिंग आश्री स्वलिंगमें हाते है द्वारम्

(१०) शरीर—५ औदारिक वैक्रिय, आहारक, तेजस, कारमण, पुलाक निग्रथ, स्नातकमें औ० ते० का० तीन शरीर बकुश पडिसेवणमें औ० ते० का० वै० और कषायकुशीलमें पाचों शरीरवाले मिलते है द्वारम् ।

(११) क्षेत्र २ कर्मभूमी अकर्मभूमी-छे हो नियठा जन्म आश्री १५ कर्मभूमीमे हाय और सहरणआश्री पुलाकको छोडके शेष ५ नियठा कर्मभूमी अकर्मभूमी, दोनोंमे होते है प्रसगोपात पुलाक लब्धि आहारिक शरीर, मध्वीका अप्रमादी उपशम श्रणीवालेका क्षपकश्रेणी०, कवलज्ञान उत्पन्न हुये पीछे, इन सा तोंका सहरण नहीं होता द्वारम्

(१२) काल—पुलाक उत्सर्पिणीकालमें जन्मआश्री तीजे चौथे आरामें जन्मे और प्रवतनाश्री ३-४-५ आरामें प्रवते अव सर्पिणीकालमे दूजे, तीजे चौथे आरामें जन्मे और तीज चौथे आरामें प्रवते नो उत्सर्पिणी नोअवसर्पिणी चौथे पल्ली भाग (दु षमासुषमा काल महाविदेह क्षेत्रमें) होवे और प्रवते एसेही निग्रथ स्नातकमें समझलेना पुलाकका सहरण नहीं और नि ग्रथ स्नातक सहरणआश्री दुसरे कालमें भी होते है और बकुश पडिसेवण कषायकुशील, अवसर्पिणीकालके ३-४ ५ आरेमें जन्मे और प्रवर्ते उत्सर्पिणीकालमें २-३-४ आरेमे जन्मे और ३ ४ आरेमें प्रवत नो उत्सर्पिणी नोअवसर्पिणी चौथा पल्ली भागमे होवे और सहरणआश्री दूसरे पल्ली भागोंमें होवे द्वारम्

(१३) गति—देखो यन्त्रम

	गति		स्थिति	
नाम	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	सुधर्म देवलोक	सहस्रार दे०	प्रत्येक पल्योपम	१८ सागर
बकुश	,,	अच्युत दे०		२२ सागर
पडिसेवण	,,	,	,	,,
कषायकुशील	,	अनुत्तर वि०	,,	३३ सागर
निग्रंथ	अनुत्तर वि०	सर्वार्थसिद्ध	३१ सागर	,,
स्नातक	०	मोक्ष	३३ सागर	,,

देवताओंमें पद्वि ५ है इन्द्र, लोकपाल, त्रायत्रिंषक, सामा निक, अहमइन्द्र, पुलाक, बकुश पडिसेवणमें पहिलेकी ४ पद्विमेंसे १ पद्विवाला होवे कषायकुशीलको ५ मेंकी १ पद्वि होवे, निग्रंथको अहमइन्द्रकी १ पद्वि होवे पर स्नातक तथा मोक्षमें जावे और जघन्य विराधक हो तो चार जातिका देवता होवे, उत्कृष्ट विराधक चौवीस दंडकमें भ्रमण करे द्वार

(१४) संयम—संयमस्थान असंख्याते है पुलाक, बकुश, पडिसेवण, कषायकुशील इन चारोंके संयमस्थान असंख्याते २ है निग्रंथ स्नातकका संयमस्थान एक है अल्पाबहुत्व सर्वस्तोक निग्रंथ स्नातकके संयमस्थान एक है इनोंसे असंख्यातगुणे पुला कके संयमस्थान, इनोंसे अस० गुणे बकुशके, इनोंसे असं० गुणे पडिसेवणके, इनोंसे अस० गुणे कषायकुशीलके संयमस्थान द्वार

(१५) निकासे—(संयमके पर्याय) चारित्र पर्याय अनंते

है पुलाकके चारित्र पर्याय अनन्ते एव यावत् स्नातक कहना, पुलाकसे पुलाकके चारित्र पर्याय आपसमें छे ठाणवलिया यथा १ अनन्तभागहानि, २ असंख्यातभागहानि, ३ संख्यातभागहानि, ४ संख्यातगुणहानि, ५ असंख्यातगुणहानि, ६ अनन्तगुणहानि ॥ १ अनन्तभागवृद्धि, २ असंख्यातभागवृद्धि, ३ संख्यातभागवृद्धि, ४ संख्यातगुणवृद्धि, ५ असंख्यातगुणवृद्धि, ६ अनन्तगुणवृद्धि, पुलाक, बकुश पडिसेवणसे अनन्तगुणहीन, कषायकुशील छे ठाणवलिया निग्रंथ स्नातकसे अनन्तगुणहीन ॥ बकुश पुलाकसे अनन्तगुणवृद्धि बकुश बकुशसे छे ठाणवलिया बकुश, पडिसेवण कषायकुशीलसे छे ठाणवलिया निग्रंथ स्नातकसे अनन्तगुणहीन ॥ २ ॥ पडिसेवण, बकुश माफिक समजना ॥ ३ ॥ कषायकुशील है सो पुलाक बकुश, पडिसेवण और कषायकुशील, इन चारोंसे छे ठाणवलिया और निग्रंथ स्नातकसे अनन्तगुणहीन ॥ ४ ॥ निग्रंथ प्रथमके चारोंसे अनन्तगुणे अधिक निग्रंथ स्नातकसे समतुल्य ॥ ५ ॥ स्नातक निग्रंथके माफिक समजना ॥ ६ ॥

अल्पाबहुत्व—पुलाक और कषायकुशीलका जघन्य चारित्र पर्याय आपसमें तुल्य १ पुलाकका उत्कृष्ट चारित्र पर्याय अनन्त गुणे, २ बकुश और पडिसेवणके जघन्य चारित्र पर्याय आपसमें तुल्य अनन्तगुणे, बकुशका उ० चा० पर्याय अन० ४ पडिसेवणका उ० चा० पर्याय अन० ५ कषायकु० उ० चा० पर्याय अन० ६ निग्रंथ और स्नातकका जघन्य और उत्कृष्ट चारित्र पर्याय आपसमें तुल्य अनन्तगुणे द्वार

(१६) योग ३ मन, वचन, काय-पहलेके पांच नियंठा सयोगी, स्नातक सयोगी और अयोगी द्वार

(१७) उपयोग २ साकार, अनाकार-छए नियंठामें दोनों उपयोग मिले द्वारम्

(१८) कषाय ४ पहलेके ३ नियठामें सकपाय मेज्वलका चौक कषायकुशीलमें मज्वलका ४-३-२-१ निग्रथ अकपायी उपशमकपायी या भीणकपायी स्नातक क्षीणकपायी होते है द्वार

(१९) लेश्या ६ पुलाक, बकुश, पडिसेवणमें तीन लेश्या तेजु, पद्म, शुक्कलेश्या पावे कषायकुशीलमें छहो लेश्या पावे निग्रंथमें शुक्ललेश्या पावे और स्नातकमें शुक्ललेश्या तथा अलेश्या द्वार

(२०) परिणाम—पहिलेके चार नियठामें तीनों परिणाम पावे हियमान वद्धमान, अवस्थित जिसमें हियमान, वर्द्धमानकी जघन्य स्थिति १ समय उ० अन्तर्मुहुत अवस्थितकी ज० १ समय उ० ७ समय निग्रथमें वर्द्धमान अवस्थित दो परिणाम पावे स्थिति ज १ समय उ० अन्तर्मुहुर्त स्नातकमें वर्द्धमान अवस्थित दो परिणाम वद्धमानकी ज० समय उ० अन्तर्मुहुर्त अवस्थितकी स्थिति ज० अन्तर्मुहुर्त उ० देशोणो पूर्व कोड द्वार

(२१) बध—पुलाक आयुष्य छोडके सात कर्म बाधे बकुश और पडिसेवण सात या आठ कर्म बाधे कषायकुशील ७-८-६ कर्म बाधे (आयुष्य मोहनी छोडके) निग्रथ १ शातावेदनी बाधे और स्नातक १ शातावेदनी बाधे या अबधक द्वार

(२२) वेदे—पहलेके चार नियठा आठों कर्म वेदे निग्रथ मोहनी छोडके ७ कर्म वेदे स्नातक चार कर्म वेदे (वेदनी, आयुष्य, नाम गोत्र) द्वार

(२३) उदिरणा—पुलाक आयुष्य मोहनी छोडके ६ कर्मोकी उदिरणा करे बकुश और पडिसेवण ७-८ ६ कर्मोकी उदिरणा करे (आयुष्य मोहनी छोडके) कषायकुशील ७-८-६-५ कर्मोकी उदिरणा करे वेदनी विशेष निग्रथ ५-२ कर्मोकी उदिरणा करे पूर्ववत् २ नाम, गोत्रकर्म स्नातक उणोदरिक द्वार

(२४) उपसपहण—पुलाक पुलाकपणा छोडके कपायकुशी लमें या असयममें जावे बुकश बुकशपणा छोडे तो पडिसेवणमें, कपायकुशीलमें या असयममें या सयमासंयममें जावे, एव पडिसेवण भी च्यार ठीकाने जावे कपायकुशील छ ठीकाने जावे (पु० बु० प० असयम० सयमास० निग्रंथ) निग्रथ निग्रथपना छोडे तो कपायकुशील स्नातक और असयममें जाय और स्नातक मोक्षमें जावे द्वार

(२५) सज्ञा ४ पुलाक, निग्रथ, स्नातक नोसज्ञायउत्ता० बुकश, पडिसेवण और कपायकुशील, सज्ञायहुत्ता, नोसज्ञायहुत्ता

(२६) आहारी—पहलेके ५ नियठा आहारीक, स्नातक आहारीक या अनाहारीक द्वार

(२७) भव—पुलाक, निग्रथ जघन्य १ उ० ३ भव करे बुकश, पडिसेवणा, कपायकुशील ज० १ उ० १५ भवकरे स्नातक तद्भव मोक्ष जावे द्वार

(२८) आगरिस—पुलाक एक भवमें जघन्य १ उ० ३ वार आवे घणा (बहुत) भवआश्रयी ज० २ उ० ७ वार आवे बुकश पडिसेवण और कपायकुशील एक भव० ज० १ उ० प्रत्येक सो वार आवे घणा भवआश्रयी ज० २ उ० प्रत्येक हजार वार आवे निग्रथपना एक भवआश्रयी ज० १ उ० २ वार बहुत भवआश्रयी ज० २ उ० ५ वार आवे स्नातकपना जघन्य उत्कृष्ट एक ही वार आवे द्वार

(२९) काल—स्थिति, पुलाक एक जीव आश्रयी जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त बहोतसे जीवों आश्रयी ज० १ समय उ० अन्तरमु० बुकश एक जीवाश्रयी ज० १ समय उ० देशोणा पूर्व क्रोड बहुत जीवों आश्रयी शाश्वता एव पडिसेवण, कपायकुशील बकुशवत् समजना निग्रथ एक जीव तथा बहुत जीवों आश्रयी ज०

१ समय उ० अन्तर मुहूर्त्त० स्नातक एक जीवाश्रयी ज० अन्तर्मु० उ० देशोणा पूर्वक्रोड वहुत जीवो आश्रयी शाश्वता द्वार

(३०) आतरा—पहलेके पाच नियंठाके एक जीवाश्रयी ज० अन्तर्मु० उ० देशोणा अर्ध पुद्गलपरावर्तन स्नातकका आतरा नहीं बहुत जीवो आश्रयी पुलाकका आतरा ज० १ समय उ० संख्यात काल निग्रथ ज० १ समय उ छे मास शेष चार नियठाका आतरा नहीं

(३१) समुद्घात+ पुलाकमे समुद्घात, तीन वेदनी, कषाय और मरणन्ति, बुकशमे पाच वे० क० म० वैक्रिय और तेजस, कषायकुशीलमें ६ (केवली छोडके) निग्रंथमें समुद्० नहीं है द्वार

(३२) क्षेत्र—पहलेके पाच नियठा लोकके असंख्यात भागमें होवे, स्नातक लोकके असख्यातमें भागमें हो या बहोतसे असख्यात भागमें होवे या सर्व लोकमें होवे द्वार

(३३) स्पर्शना—जैसे क्षेत्र कहा वैसे ही स्पर्शना भी समझना स्नातककी अधिक स्पर्शना भी होती है द्वार

(३४) भाव—पहलेके ४ नियठा क्षयोपशम भावमे होवे निग्रथ उपशम या क्षायिकभावमे होवे, स्नातक क्षायिकभावमें होवे द्वार

(३५) परिमाण—पुलाक वर्तमान पयायआश्रयी स्यात् मीले स्यात् न भी मीले मीले तो जघन्य १-२-३ उ० प्रत्येक सौ पूर्वपर्यायआश्री स्यात् मीले स्यात् न मीले अगर मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक हजार मीले बुकश वतमान पर्यायाश्री स्यात् मीले स्यात् न मीले यदि मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक सो पूर्वपर्यायाश्री नियमा प्रत्येक सो क्रोड मीले एव पडिसेवणा कषायकुशील वर्तमान पर्यायाश्री स्यात् मीले स्यात् न मीले जो

+ वेदना कषाय, मरण, वैक्रिय, तेजस आहारिक केवली

मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक हजार मीले, पूवपर्यायाश्री नियमा प्रत्येक हजार क्रोड मीले निग्रंथ वर्तमान पर्यायाश्री स्यात् मीले न मीले, अगर मीले तो ज १-२-३ उ० १६२ मीले पूवपर्यायाश्री स्यात् मीले न मीले मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक सो मीले स्नातक वर्तमान पर्यायाश्री जघन्य १-२-३ उ० १०८ मीले पूर्वपर्यायाश्र नियमा प्रत्येक क्रोड मीले द्वार

(३६) अल्पाबहुत्व ( ) सबसे थोडा निग्रंथ नियंठाका जीव, (२) पुलाकवाले जीव संख्यातगुणे, (३) स्नातकके संख्यातगुणे (४) बकुशके संख्यातगुणे (५) पडिसेवणके संख्यातगुणे, (६) कषायकुशील नियंठाके जीव संख्यातगुणे इति द्वारम्।

॥ सेव भंते सेव भंत तमेव सचम ॥

—※◎※—

थोकडा नम्बर ३५

सूत्र श्री भगवतीजी शतक २५ उद्देशा ७

(संयति)

संयति (साधु) पांच प्रकारके होते है यथा सामायिक संयति छदोपस्थापनिय संयति परिहार विशुद्ध संयति सूक्ष्म संपराय संयति, यथाख्यात संयति इन पांचों संयतियोंके ३६ द्वारसे विवरण कर शास्त्रकार बतलाते है।

(१) प्रज्ञापना द्वार—पांच संयतिकी प्ररूपणा करते है (१) सामायिक संयतिके दो भेद है (१) स्वल्प कालका जो प्रथम और चरम जिनोंके साधुवोंको होता है उसकी मर्यादा जघन्य सात

दिन मध्यम च्यार मास उत्कृष्ट छे मास (२) बावीस तीर्थकरों व तथा महाविदेह क्षेत्रमे मुनियोंके सामायिक सयम जावजीव तक रहते है (२) छदोपस्थापनिय सयम जिस्का दो भेद है (१) स अतिचार जो पूर्व सयमके अन्दर आठवा प्रायश्चित सेवन करने पर फीरसे छदो० सयम दिया जाता है (२) तेवीसवे तीर्थ करोंका साधु चौवीसवें तीर्थकरोंके शासनमें आते है उसको भी छदो० सयम दिया जाते हैं यह निरातिचार छदो० संयम है (३) परिहार विशुद्ध सयमके दो भेद है (१) निवृतमान जेसे नौ मनुष्य नौनो वर्षके हो दीक्षा ले वीस वर्ष गुरुकुलवासमें रहकर नौ पूर्वका अध्ययन कर विशेष गुण प्राप्तिके लिये गुरु आज्ञासे परिहार विशुद्ध सयमको स्वीकार करे। प्रथम छे मास तक च्यार मुनि तपश्चर्या करे च्यार मुनि तपस्वी मुनियोंकि व्यावच करे एक मुनि व्याख्यान वाचे दूसरे छ मासमें तपस्वी मुनि व्यावच करे व्यावच्चवाले तपश्चर्या करे तीसरे छ मासमें व्याख्यानवाला तपश्चर्या करे सात मुनी उन्होंकि व्यावच करे, एक मुनि व्याख्यान वाचे। तपश्चर्याका क्रम उष्णकालमें एकान्तर शीत कालमें छट छट पारणा चतुर्मासामे अठम अठम पारणा करे, एसे १८ मास तक तपश्चर्या करे। फीर जिनकल्पको स्वीकार करे अगर एसा न हो तो वापिस गुरुकुल वासाको स्वीकार करे। (४) सूक्ष्म सपराय सयमके दो भेद है। (१) सक्लेश परिणाम उपशम श्रेणिसे गिरते हुवेके (२) विशुद्ध परिणाम क्षपकश्रेणि छडते हुवेके (५) यथाख्यात सयमके दो भेद है (१) उपशान्त वीतरागी (२) क्षिणवितरागी जिस्में क्षिणवितरागीके दो भेद है (१) छदमस्त (२) केवली जिसमें केवलीका दोय भेद है (१) सयोगी केवली (२) अयोगी केवली। द्वारम्

(२) वेद-सामायिक स० छदोपस्थापनियस० सवेदी, तथा अवेदा भी होते है कारण नौवा गुण स्थानके दो समय शेष र

इनेपर वेद क्षय होते है और उस दोनों सयम नौवा गुणस्थान तक है। अगर सवेद हातों त्रिवेद, पुरुषवेद नपुमकवेद इस तीनों वेदमें होते है। परीहार विशुद्ध सयम पुरुषवद पुरुष नपुसकव दमें हाते है सुक्ष्म० यथारयात यह दोनों सयम अवदी होते है जिस्मे उपशात अवदी (१०-११-गु०) और क्षिण अवेदी (१० १२-१३-१४ गुणस्थान) हाते है इति द्वारम्

(३ राग-च्यार सयम सरागी होते है यथाख्यात स० वित रागी होते है सो उपशान्त तथा क्षिण वीतरागी होते है।

(४) कल्प-कल्पके पाच भेद है।

(१) स्थितकल्प-वस्त्रकल्प उदशीय आहारकल्प राजपण्ड शय्यातरपण्ड मासीकल्प चतुर्मासीक कल्प व्रतकल्प प्रतिक्रमण कल्प कृतकर्मकल्प पुरुषजेष्टकल्प एव (१०) प्रकारके कल्प प्रथम और चरम जिनोंके साधुवोंके स्थितकल्प है।

(२) अस्थित कल्प पूर्वोक्त १० कल्प कहा है वह मध्यमके २२ तीर्थकरोंके मुनियोंके अस्थित कल्प है क्योंकि (१) शय्यातर व्रत, कृतकर्म, पुरुष जेष्ट, यह च्यार कल्पस्थित है शेष छे कल्प अस्थित है विस्तार पयुषण कल्पमें है।

(३) स्थिवर कल्प-मर्यादा पूर्वक १४ उपकरण से गुरुकुल वासो सेवन करे गच्छ सग्रहत रहै। और भी मर्यादा पालन करे।

(४) जिनकल्प-जघन्य मध्यम उत्कृष्ट उत्सग पक्ष स्वीकार कर अनेक उपसग सहन करते जगलादिमें रहै देखो नन्दीसूत्र विस्तार।

(५) कल्पातित-आगम बिहारी अतिशय ज्ञानवाले महात्मा जो कल्पसे वीतिरक्त अर्थात् भूत भविष्यके लाभालाभ देख काय करे इति। सामा० स० मे पूर्वोक्त पाचों कल्पपावे छेदो० परि हार० मे कल्प तीन पावे, स्थित कल्प स्थिवर कल्प, जिन कल्प,

सूक्ष्म० यथाख्या० मे कल्पदोय पावे अस्थित कल्प और कल्पातित इतिद्वारम्।

(५) चारित्र-सामा० छदो० में निर्ग्रंथ च्यार होते है पुलाक बुकश प्रतिसेवन, कषायकुशील। परिहार० सूक्ष्म० में एक कषाय कुशील निर्गथ होते है यथाख्यात सयममे निर्गथ और स्नातक यह दोय निग्रन्थ होते है द्वारम्।

(६) प्रति सेवना-सामा० छेदो० मूलगुण (पाच महाव्रत) प्रति सेवी (दोष लगाव) उत्तर गुण (पिंड विशुद्धादि) प्रतिसेवी तथा अप्रतिसेवी शेष तीन सयम अप्रतिसेवीहोते है द्वारम्।

(७) ज्ञान-प्रथमके च्यार सयममें क्रम मर च्यार ज्ञानकि भजना २-३-३-४ यथाख्यातमें पाच ज्ञानकि भजना ज्ञान पढने अपेक्षा सामा० छदो० जघन्य अष्ट प्रवचन उ० १४ पूर्व पढ। परिहार० ज० नौवा पूर्वकि तीसरी आचार वस्तु उ० नौ पूर्व सम्पूर्ण, सूक्ष्म० यथाख्यात ज० अष्ट प्रवचन उ० १४ पूर्व तथा सूत्र वितिरक्त हो इति द्वारम्।

(८) तीर्थ-सामा० तीर्थमें हो, अतीथमें हो, तीर्थंकरकि हो और प्रत्येक बुद्धियोंकि होते है। छदो० परि० सूक्ष्म० तीर्थमें ही होते है यथाख्यात० सामायिक सयमवत् च्यारोंमें होते है। इति द्वारम्।

(९) लिंग-परिहार विशुद्धि द्रव्ये और भावे स्वलिंगी, शेष च्यार सयम द्रव्यापेक्षा स्वलिंगी अन्यलिंगी गृहलिंगी भी होते है। भावे स्वलिंगी होते इति द्वारम्।

(१०) शरीर—सामा० छेदो० शरीर ३-४-५ होते है शेष तीन सयममें शरीर तीन होते है वह वैक्रय आहारीक नही करते है द्वारम्।

(११) क्षेत्र-जन्मापेक्षा सामा० सूक्ष्म सपराय यथाख्यात,

(२८) आगरेस—सयम कितनीवार आते है।

सयम नाम	एकभयापेक्षा		बहुतभयापेक्षा	
	ज०	उत्कृष्ट	ज०	उत्कृष्ट
सामायिक०	१	प्रत्येक सौवार	२	प्रत्येक हजारवार
छेदो०	१	प्रत्येक सौवार	२	साधिक नौसोवार
परिहार०	१	३ तीनवार	२	साधिक नौसावार
सूक्ष्म०	१	च्यारवार	२	नौवार
यथाख्यात	१	दोयवार	२	५ वार

(२९) स्थिति—सयम कितने काल रहे।

सयम नाम	एकजीवापेक्षा		बहुत जीवापेक्षा	
	ज०	उ०	ज०	उ०
सामा०	एक समय	देशोनक्रोड पूर्व	शाश्वते	शाश्वते
छेदो०		,,	२५० वर्ष	५० क्रो० सा०
परिहार०	,,	२९ वर्षोंना क्रोड	देशोनपूर्व दो	देशोनक्रोड पूर्व
सूक्ष्म०		अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
यथा०		देशोनक्रोड पूर्व	शाश्वते	शाश्वते

(३०) अन्तर—एक जीवापेक्षा पांचों सयमका अन्तर ज० अन्तर्मुहूर्त उ० देशोना आधा पुद्गलपरावर्तन बहुत जीवापेक्षा सा० यथा० के अन्तर नहीं है। छेदो० ज० ६३००० वर्ष परिहार० ज० ८४००० वर्ष उत्कृष्ट अठारा क्रोडाक्रोड सागरोपम देशोना। सूक्ष्म० ज० एक समय उ० छे मास।

(३१) समुद्‌घात—सामा० छेदो० में केवली समु० वर्जके छे समु० पावे परिहार० तीन क्रमसर सूक्ष्म० समु० नहीं यथा० एक केवली समुद्‌घात।

(३२) क्षेत्र० च्यार संयम लोकके असंख्यातमे भागमे होवे। यथा० लोकके असंख्यात भागमे होवे तथा सर्व लोकमें (केवली समु० अपेक्षा)

(३३) स्पर्शना—जैसे क्षेत्र है वैसे स्पर्शना भी होती है परन्तु यथाख्यातापेक्षा कुच्छ स्पर्शना अधिक भी होती है।

(३४) भाव—प्रथमके च्यार संयम क्षयोपशम भावमे होते है और यथाख्यात उपशम तथा क्षायिक भावमे होता है।

(३५) परिणाम द्वार—सामा० वर्तमानापेक्षा स्यात् मीले स्यात् न मीले अगर मीले तो ज० १-२-३ उ० प्रत्येक हजार मीले। पूर्व पर्यायापेक्षा नियम प्रत्येक हजार क्रोड मीले। एव छेदो० वर्तमानापेक्षा मीले तो १-२-३ प्रत्येक सौ मीले। पूव पर्यायापेक्षा अगर मीले तो ज० उ० प्रत्येक सौ क्रोड मीले। परिहार० वर्तमान अगर मीले तो १-२-३ प्रत्येक सौ पूर्व पयाय मीले तो १-२-३ प्रत्येक हजार मीले। सूक्ष्म० वर्तमानापेक्षा मीले तो १-२-३ उ० १६२ मीले जिस्मैं १०८ क्षपकश्रेणि और ५४ उपशमश्रेणि चढते हुये पूव पर्यायापेक्षा मीले तो १-२-३ उ० प्रत्येक सौ मीले। यथा० वर्तमान अगर मीले तो १-२-३ उ० १६२। पूर्व पर्यायापेक्षा नियमा प्रत्येक सौ क्रोड मीले (केवलीकी अपेक्षा)

(३६) अल्पाबहुत्व।

(१) स्तोक सूक्ष्म संपराय संयमवाले।

(२ परिहार विशुद्ध संयमवाले संख्याते गुने।

(३) यथाख्यात संयमवाले संख्यात गुने ।
(४) छदोपस्थापनिय संयमवाले संख्यात गुने ।
(५) सामायिक संयमवाले संख्यात गुने ।

॥ सेवभते सेवभते तमेव सचम् ॥

थोकडा नम्बर ३६

सूत्र श्री दशवैकालिक अध्ययन ३ जा

(५२ अनाचार)

जिस वस्तुका त्याग कीया हो उन वस्तुको भोगवनेकी इच्छा करना, उनको अतिक्रम कहते है और उन वस्तुप्राप्तिके लिये कदम उठाना प्रयत्न करना, उनको व्यतिक्रम कहते है तथा उन वस्तुको प्राप्त कर भोगवनेकी तैयारीमें हो उनको अतिचार कहते है और त्याग करी वस्तुको भोगव लेनेसे शास्त्रकारोंने अनाचार कहा है। यहांपर अनाचारके ही ५२ बोल लिखते है।

(१) मुनिके लिये वस्त्र, पात्र मकान और असनादि च्यार प्रकारका आहार मुनिके उद्देशस कीया हुवा मुनि लेवे तो अनाचार लागे।

(२) मुनिके लिये मूल्य लाइ हुइ वस्तु लेके मुनि भोगवे तो अनाचार लागे।

(३) मुनि नित्य एक घरका आहार भोगवे तो अनाचार
(४) सामने लाया हुवा आहार भोगवे तो अनाचार ,,
(५) रात्रिभोजन करते अनाचार लागे।

(६) देशस्नान सर्वस्नान करे तो अनाचार लाग।
(७) सचित्त-अचित्त पदार्थोंकी सुगन्धी लेवे तो अना०
(८) पुष्पादिकी माला सेहरा पहेरे तो अनाचार,
(९) पखा वींजणासे वायु ले हवा खावे तो अना०
(१०) तैल घृतादि आहारका संग्रह करे तो अना०
(११) गृहस्थोंके वर्तनमें भोजन करे तो अना०
(१२) राजपिंड याने बलिष्ट आहार लेवे तो अना०
(१३) दानशालाका आहारादि ग्रहन करे तो अना०
(१४) शरीरका विना कारण मर्दन करे तो अना०
(१५) दातोंसे दातण करे तो अनाचार लाग।
(१६) गृहस्थोंको सुखशाता पुच्छे टैल वन्दगी करे तो ,,
(१७) अपने शरीरको दर्पणादिमें शोभा निमित्त देखे तो
(१८) चोपाट सेतरंजादि रमत रमे तो अनाचार।
(१९) अर्थोपार्जन करे तथा जुवारमें सट्टा करे तो अना०
(२०) शीतोष्णके कारण छत्र धारण करे तो अना०
(२१) औषधि दवाइयों बतलाके आजीवीका करे तो अना
(२२) जुत्ते माजे बुटादि पावोंमें पहरे तो अना०
(२३) अग्निकायादि जीवोंके आरंभ करे तो अना०
(२४) गृहस्थोंके यहा गादीतकीयों आदि पर बैठनेसे ,
(२५) गृहस्थोंके यहा पलंग मेज खाट पर बैठनेसे ,,
(२६) जीसकी आज्ञासे मकानमे ठेरे उनोंका आहार भोग
लेनेसे ,,
(२७) विना कारण गृहस्थोंके यहा बेठना कथा कहनेसे ,
(२८) विगर कारण शरीरके पीठी मालीसादिका करनेसे

(२९) गृहस्थ लोगोंकि वैयावच्च करनेसे अनाचार ,,

(३०) अपनि जाति कुल बतलाये आजीविका करे तो ,,

(३१) सचित्त पदार्थ अम्बरी आदि भोगवे तो अना ,,

(३२) शरीरमें रोगादि आनेसे गृहस्थोंकि सहायता लेनेसे

(३३) मूलादि बनस्पति (३४) इक्षु (३५) कन्द (३६) मूल भोगवे तो अनाचार लागे

(३७) फल फूल (३८) बीजादि भोगवेतो अनाचार ,

(३९) सचित्तनमक (४०) सिंधु देशका सिंधालुण (४१) साबर देशका साबरलुण (४२) रूम खादिका लुण (४३) समुद्रका लुण (४४) कालानमक यह सब सचित्त भोगवे तो अनाचारलागे।

(४५) कपडोंको धूपादि पदार्थोंसे सुगन्ध बनानेसे अना०

(४६) भोजन कर वमन करने से अनाचार ,,

(४७) विगर कारण जुलाबादिका लेनासे अनाचार ,,

(४८) गुंजस्थानको धोना समारनादि करनेसे अना०

(४९) नैत्रोंमें सुरमा अञ्जन लगावे शोभनिक बनावे ,,

(५०) दांतोंको अल्तादिका रंग लगाके सुन्दर बनावे

(५१) शरीरको तैलादिसे उबटनादि कर सुन्दर बनानेसे

(५२) शरीरकि शुश्रुषा करना रोम नख समारणादि शोभा करनेसे

उपर लिखे अनाचारको सदेव टालके निर्मल चारित्र पालना चाहिये।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्

—•—

थोकडा नम्बर ३७

सूत्र श्री दशवैकालिक अ ययन ४

(पाच महाव्रतोंका १७८२ तणावा.)

जिस तरह तबू (डेरे) को खडा करनेके लिये मुल चोब (बडी) उत्तर चोब (छोटी) बास और तणावा (खूटीसे बधी हुइ रसी) की जरूरत है, इसी तरह साधूको सयमरूपी तबूके खडे (कायम) रखनेमें पाच महाव्रतादि सात बडी चोबकी जरूरत है और प्रत्येक चोबकी मजबूतीके लिये सूक्ष्म, बादरादि (४-४-६-३-६-८-८) करके तेतीस उत्तर चोब है प्रत्येक उत्तर चोबको सहारा देनेवाले तीन करण, तीन जोगरूपी नौ २ बास लगे हैं (इस तरह ३३ को ९ का गुणा करनेसे २९७ हुए) और इन बासोंको स्थिर रखनेके वास्ते प्रत्येक बासपे दिनरात्रादि, छे २ तणावा है इस तरह २९७ को छे गुणा करनेसे १७८२ तणावे हुए यह तणावे चोब बासादिकों स्थिर रखते हैं जिससे तंबू खडा रहता है यदि इनमे से एक भी तणावा मोहरूपी हवा से ढीला हो जाय तो तत्काल आलोचना रूपी हथोडेसे ठोक कर मजबूत करदे तो सजमरूपी तबू कायम रह सकता है अगर एसा न किया जावे तो क्रमसे दूसरे तणावे भी ढीले हो कर तबू गिर जानेका संभव है इस लिये पूर्णतय इसको कायम रखनेका प्रयत्न करना चाहिये क्योंकि सयम अक्षयसुखका देनेवाला है

अब प्रत्येक महाव्रतके कितने २ तणावे है सो विस्तार सहित दिखाते है

(१) महाव्रत प्राणातिपात—सूक्ष्म, बादर, त्रस और स्था

(२९) गृहस्थ लोगोंकि वैयावच्च करनेसे अनाचार ,,

(३०) अपनि जाति कुल बतलाके आजीविका करे तो ,,

(३१) सचित्त पदार्थ जलहरी आदि भोगवे तो अना ,,

(३२) शरीरमे रोगादि आनेसे गृहस्थोंकि सहायता लेनेसे

(३३) मूलादि वनस्पति (३४) इक्षु (३५) कन्द (३६) मूल भोगवे तो अनाचार लागे

(३७) फल फूल (३८) बीजादि भोगवेतो अनाचार ,

(३९) सचित्तनमक (४०) सिंधु देशका सिंधालुण (४१) मायर देशका मायरलुण (४२) धूल खाडिका लुण (४३) समुद्रका लुण (४४) कालानमक यह सब सचित्त भोगवे तो अनाचारलागे।

(४५) कपडोंको धूपादि पदार्थोंसे सुगन्ध बनानेसे अना०

(४६) भोजन कर वमन करने से अनाचार ,,

(४७) विगर कारण जुलाबादिका लेनासे अनाचार ,,

(४८) गुंजस्थानको धाना समारनादि करनेसे अना०

(४९) नैत्रोंमे सुरमा अञ्जन लगाके शोभनिक बनाने ,,

(५०) दांतोंको अलतादिका रंग लगाके सुन्दर बनाव

(५१) शरीरको तैलादिसे उघटनादि कर सुन्दर बनानेसे,

(५२) शरीरकि शुश्रूषा करना रोम नख समारणादि शोभा करनेसे

उपर लिखे अनाचारको मदय टालके निर्मल चारित्र पालना चाहिये।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्

—•—

थोकडा नम्बर ३७

सूत्र श्री दशवैकालिक अध्ययन ४

(पाच महाव्रतोका १७८२ तणावा.)

जिस तरह तबू (डेरे) को खडा करनेके लिये मुल चोब, (बडी) उत्तर चोब (छोटी) बास और तणावा (खूटीसे बंधी हुई रसी) की जरूरत है, इसी तरह साधूको सयमरूपी तबूके खडे (कायम) रखनेमें पाच महाव्रतादि सात बडी चोबकी जरूरत है और प्रत्येक चोबकी मजबूतीके लिये सूक्ष्म, बादरादि (४-४-६-३-६-८-६) करके तेतीस उत्तर चोब है प्रत्येक उत्तर चोबको सहारा देनेवाले तीन करण, तीन जोगरूपी नौ २ बास लग है (इस तरह ३३ को ९ का गुणा करनेसे २९७ हुए) और इन बासोंको स्थिर रखनेके वास्ते प्रत्येक बासके दिनरात्रादि, छै २ तणावा है इस तरह २९७ को छै गुणा करनेसे १७८२ तणावे हुए यह तणावे चोब बासादिको स्थिर रखते है जिससे तंबू खडा रहता है यदि इनमे से एक भी तणाया मोहरूपी हवा से ढीला हो जाय तो तत्काल आलोचना रूपी हथोडेसे ठोक कर मजबूत करदे तो सजमरूपी तंबू कायम रह सकता है अगर एसा न किया जावे तो क्रमसे दूसरे तणाये भी ढीले हो कर तबू गिर जानेका संभव है इस लिये पूर्णतय इसका कायम रखनेका प्रयत्न करना चाहिये क्योंकि सयम अक्षयसुखका देनेवाला है

अब प्रत्येक महाव्रतके कितने २ तणाये है सो विस्तार सहित दिखाते है

(१) महाव्रत प्राणातिपात—सूक्ष्म, बादर, त्रस और स्था

यर इन चार प्रकारके जीवोंको मनसे हणे नहीं, हणावे नहीं, हणताको अनुमोदे नहीं एवम् बाराह और बाराह वचनका तथा बाराह कायासे कुल छत्रीश हुए इनको दिनको रातको अकेलेमें, परदा में निद्रावस्थामें, जागृत अवस्थामें, ६ इन भागोंको ३६ के साथ गुणा करनेसे प्रथम महाव्रतके २१६ तणावे हुए

(२) महाव्रत मृषावाद—क्रोधसे लोभसे हास्यसे, और भयसे इस तरह चार प्रकारका झूठ मनसे बोले नहीं बोलावे नहीं बोलतेको अनुमोदे नहीं एवम् वचन और कायासे गुणता ३६ हुए इनको दिन, रात्रि अकेलेमें, परदामें, निद्रा और जागृत अवस्था ये छै प्रकारसे गुणा करनेसे २१६ तणावा दूसरे महाव्रतके हुए

(३) महाव्रत अदत्तादान—अल्पवस्तु बहुतवस्तु, छोटी वस्तु बडी वस्तु सचित्त, (शीष्यादि) अचित्त, (वस्त्रपात्रादि) ये छै प्रकारकी वस्तुका किसीके बिना दिये मनसे लेवे नही, लेवावे नही और लेतेको अनुमोदे नही एवम् मन वचन और काया से गुणानेसे ५४ हुए जिसको दिन, रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे तीसरे महाव्रतके हुए

(४) महाव्रत ब्रह्मचार्य—देवी, मनुष्यणी, और त्रीर्यंचणी, ये साथ मैथुन मनसे सेवे नहीं, सेवावे नहीं सेवतको अनुमोदे नहीं एवम् वचन और कायासे गुणाता २७ हुए जिसको दिन रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे १६२ तणावे चौथे महाव्रतके हुए

(५) महाव्रत परिग्रह—अल्प, बहुत, छोटा बडा, सचित अचित छै प्रकार परिग्रह मनसे रखे नहीं रखावे नहीं, राखतेको अनुमोदे नहीं एवम् वचन और कायासे गुणाता ५४ हुए जिस को दिनरात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे पांचवे महाव्रतके हुए

(६) रात्रिभोजन-अशन पाण खादिम, स्वादिम, ये चार

प्रकारका आहार मनसे रात्रिको करे नही, करावे नही करतेको अनुमोदे नही, एवम् वचन और कायासे गुणाता ३६ हुए इनको दिनमें (पहिले दिनका लाया हुवा दूसरे दिन) रात्रिमें, अधे लेमें, पर्षदामें, निद्राअवस्था, और जागृत अवस्था ६ का गुणा करनेसे २१६ तणावे हुए

(७) छकाय—पृथ्वीकाय, अप्पकाय, तेउकाय, वायुकाय वनास्पतिकाय, और त्रसकायको मनसे हणे नही, हणावे नही हणतेको अनुमोदे नही एवम् वचन और कायासे गुणता ५४ हुए जिसको दिन रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे हुए

एवम् सर्व २१६-२१६-३२४-१६२-३२४ २१६ ३२४ सब मिला कर १७८२ तणावा हुए

अथ प्रसंगोपात दशवैकालिक सूत्रके छट्ठे अध्ययनसे अठाराह स्थानक लिखते है यथा पाच महाव्रत, तथा रात्रिभोजन, और छ काय एव १२ अकल्पनीय वस्त्र, पात्र, मकान और चार प्रकारका आहार १३ गृहस्थके भाजनमें भोजन करना १४ गृहस्थके पलग खाट आसन पर बैठना १५ गृहस्थके मकानपर बेठना अर्थात् अपने उतरे हुये मकानसे अन्य गृहस्थके मकान बेठना १६ स्नान देससे या सर्वसे स्नान करना १७ नख वेस रोम आदि समारना १८ इन अठाराह स्थान में से एक भी स्थानकको सेवन करनेवा लोंको आचारसे भ्रष्ट कहा है ।

गाथा—दश अट्ठय ठाणाइ, जाइ बालो धरज्झइ
तथ्थ अन्नयरे ठाणे, निग्गथ ताउ भेसइ

अर्थ—दस आठ अठाराह स्थानक है उनको बालजीव वि राधे या अठाराहमेंसे एक भी स्थान सेवे तो निर्ग्रंथ (साधु) उन स्थानसे भ्रष्ट होता है इस लिये अठाराह स्थानकी सदैव यतना करणी चाहिये इति

॥ सेवं भते सेव भते तमेव सचम् ॥

घर इन चार प्रकारके जीवोंको मनसे हणे नहीं, हणावे नहीं हणताको अनुमोदे नहीं एवम बाराह और बाराह वचनका तथ बाराह कायासे कुल छत्रीश हुए इनको दिनको रातको अकेलेमे परपदा में निद्रावस्थामें, जागृत अवस्थामें, ६ इन भागोंको ३६ साथ गुणा करनेसे प्रथम महाव्रतके २१६ तणावे हुए

(२) *महाव्रत मृषावाद—क्रोधसे लोभसे हास्यसे औ भयसे इस तरह चार प्रकारका झूठ मनसे बोले नहीं बोला नहीं बोलतेको अनुमोदे नहीं एवम् वचन और कायासे गुणता ३ हुए इनका दिन रात्रि अकलेमें, परपदाम निद्रा और जागृत अव स्था ये छैं प्रकारसे गुणा करनेसे २१६ तणावा दूसरे महाव्रतके हुए*

(३) महाव्रत अदत्तादान—अल्पवस्तु बहुतवस्त, छोट वस्तु बडी वस्तु सचित्त, (शीष्यादि) अचित्त, (वस्त्रपात्रादि य छै प्रकारकी वस्तुको किसीके विना दिये मनसे लेवे नहीं लेवावे नही और लेतेको अनुमोदे नही एवम् मन वचन और काया से गुणानेसे ५४ हुए जिसको दिन, रात्रि आदि ६ का गुण करनेसे ३२४ तणावे तीसरे महाव्रतके हुए

(४) *महाव्रत ब्रह्मचार्य—देवी, मनुष्यणी, और श्रीयेचणी के साथ मैथुन मनसे सेवे नहीं, सेवावे नहीं सेवतको अनुमो नहीं एवम् वचन और कायासे गुणाता २७ हुए जिसको दि रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे १६२ तणावे चौथे महाव्रतके हुए*

(५) महाव्रत परिग्रह—अल्प, बहुत, छोटा बडा, सचित अचित छै प्रकार परिग्रह मनसे रखे नहीं रखावे नहीं, राखते अनुमोदे नहीं एवम् वचन और कायासे गुणाता ५४ हुए जि को दिनरात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे पाच महाव्रतके हुए

(६) रात्रिभोजन-अशन पाण खादिम, स्वादिम, ये च

प्रकारका आहार मनसे रात्रिको करे नही, कराये नही करतेको अनुमोदे नही, एवम् वचन और कायासे गुणाता ३६ हुए इनको दिनमें (पहिले दिनका लाया हुवा दूसरे दिन) रात्रिमें, अके लेमें, परिषदामें, निद्राअवस्था, और जागृत अवस्था ६ का गुणा करनेसे २१६ तणावे हुए

(७) छकाय—पृथ्वीकाय, अप्पकाय, तेउकाय, वायुकाय वनास्पतिकाय, और त्रसकायको मनसे हणे नही, हणावे नही हणतेको अनुमोदे नही एवम् वचन और कायासे गुणता ५४ हुए जिसको दिन रात्रि आदि ६ का गुणा करनेसे ३२४ तणावे हुए

एवम् सर्व २१६-२१६-३२४-१६२-३२४ २१६ ३२४ सब मिला कर १७८२ तणावा हुए

अब प्रसंगोपात दशवैकालिक सूत्रके छट्ठे अध्ययनसे अठाराह स्थानक लिखते है यथा पाच महाव्रत, तथा रात्रिभोजन, और छ काय एव १२ अकल्पनीय वस्त्र, पात्र, मकान और चार प्रकारका आहार १३ गृहस्थके भाजनमे भोजन करना १४ गृहस्थके पलंग खाट आसन पर बैठना १५ गृहस्थके मकानपर बैठना अर्थात् अपने उतरे हुवे मकानसे अन्य गृहस्थके मकान बैठना १६ स्नान देससे या सर्वसे स्नान करना १७ नख केस रोम आदि समारना १८ इन अठाराह स्थान में से एक भी स्थानकको सेवन करनेवा लोंको आचारसे भ्रष्ट कहा है ।

गाथा—दस अट्ठय ठाणाइ, जाइ बालो वरज्झइ
तत्थ अन्नयरे ठाणे, निग्गथ ताउ भेसइ

अर्थ—दस आठ अठाराह स्थानक है उनको बाल्जीव वि राधे या अठाराहमेंसे एक भी स्थान सेवे तो निर्ग्रंथ (साधु) उन स्थानसे भ्रष्ट होता है इस लिये अठाराह स्थानकी सदैव यतना करणी चाहिये इति

॥ सेव भंते सेव भंते तमेव सचम् ॥

थोकडा नंबर ३८

श्री भगवती सूत्र श० ८ उद्देसा १०

आराधना.

आराधना तीन प्रकारकी है ज्ञान आराधना १, दर्शन आराधना २ और चारित्र आराधना

ज्ञान आराधना तीन प्रकारकी है उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य उत्कृष्ट ज्ञान आराधना चौदे पूर्वका ज्ञान या प्रबल ज्ञानका उद्यम करे मध्यम आराधना इग्यारे अंग या मध्यम ज्ञानका उद्यम करे जघन्य आराधना अष्ट प्रवचन माताका ज्ञान व जघन्य ज्ञानका उद्यम

दर्शन आराधनाके तीन भेद उत्कृष्ट (क्षायक सम्यक्त्व) मध्यम (क्षयोपशम स०) जघन्य (क्षयोपशम या सास्वादनस०)

चारित्र आराधनाके तीन भेद उत्कृष्ट (यथाख्यात चारित्र) मध्यम (परिहार विशुद्धादि) जघन्य (सामायिक०)

उत्कृष्ट ज्ञान आराधनामें दर्शन आराधना कितनी पावै ? दो पावै उत्कृ० मध्य० ॥ उत्कृष्ट दर्शन आराधनामें ज्ञान आराधना कितनी पावै ? तीनों पावै उत्कृष्ट मध्यम और जघन्य

उत्कृष्ट ज्ञान आराधनामें चारित्र आराधना कितनी पावै ? दो पावै उत्कृष्ट और मध्यम ॥ उत्कृष्ट चारित्र आराधनामें ज्ञान आराधना कितनी पावै ? तीनों पावै उत्कृष्ट मध्यम और जघन्य

उत्कृष्ट दर्शन आराधनामें चारित्र आराधना कितनी पावै

तीनो पावे उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य ॥ उत्कृष्ट चारित्र आराधनामें दर्शन आराधना कितनी पावे ? एक पावे उत्कृष्ट ॥

उत्कृष्ट ज्ञानआराधना वाले जीव कितने भव करे ? जघन्य एक भव, उत्कृष्ट दोय भव

मध्यम ज्ञान आराधनावाले जीव कितने भव करे ? जघन्य दो उत्कृष्ट तीन भव करे

जघन्य ज्ञान आराधनावाले जीव कितन भव करे ? जघन्य तीन और उत्कृष्ट पदराह भव करे ॥ एवम् दर्शन और चारित्र आराधनामें भी समझ लेना

एक जीवमे उत्कृष्ट ज्ञानआराधना होय, उत्कृष्ट दर्शन आराधना होय और उ० चारित्र आराधना होय जिसके भागा नीचे यत्रमें लिखे हैं

पहिला एक ज्ञान दुसरा दर्शन और तीसरा चारित्र तथा ३ क आकको उत्कृष्ट २ के आकको मध्यम और १ के आकको जघन्य समझना

३-३-३	२-३-२	२-१-२	१-३-१
३ ३-२	२-३-१	२-१-१	१-२-२
३-२-२	२-२-२	१-३-३	१-२-१
२-३-३	२-२-१	१-३-२	१-१-२
			१-१-१

सेव भंते सेव भंते–तमेव सच्चम्.

—»©«—

भ समभूमि पर खडा हो कर अपना दिचणकी छाया "डे यह दो पग प्रमाण हो तो एक पेहर दीनका परिमाण समझना अथवा नडक्षामें विलश (नेथ) की छाया विलश परिमाण हो तो पेहर दीन समझना और श्रावण कृष्ण सप्तमीको एक आगुल छाया वडे श्रावण कृष्ण अमावास्याको २ आंगुल छाया वडे, श्रावण शुक्ल सप्तमीको ३ आगुल छाया वडे, और श्रावण शुक्ल पूर्णमाशी ४ आगुल छाया वडे (एक मासमें ४ आगुल छाया वडे) श्रावण शुक्ल पूर्णमा २ पग और ४ आगुल छाया आनेसे पेहर दीन आया समझना, भाद्रपद शुक्ल पूणमा को २ पग ८ आगुल छाया, आश्विन पूर्णमा ३ पग छाया कार्तिक पूर्णमा ३ पग ४ आगुल, मागसर पूर्णिमा ३ पग ८ आगुल पौष पूर्णमा ४ पग छायाके पेहर दीन समजना इसी माफक एक एक मासमे ४ आगुल कम करते आषाढ पूर्णमाको २ पग छायाको पेहर दीन समझना यह प्रमाण सम भूमिका है वर्तमान विषम भूमि होनेसे कुच्छ तफावत भी रहता है यह गीतार्थों से निर्णय करे।

पोरसी और पडिलेहणा पोरसीका यंत्र

जेठ पग २-४ अगुल ६×२-१०	भाद्रपद पग ३ ८ अगुल ८-३-४	माग० पग २-८ अ० १०-४ ६	फाल्गुन पग ३-[illegible] अ० ८-८
आषाढ पग २ अगुल ६×२-६	आश्विन पग ३ अगुल ८-३-८	पौष पग ४ अ० १०-४-१०	चैत्र पग ३ अंगुल ८-३-८
श्रावण पग २-४ अगुल ६-२-१०	कार्तिक ३ ४ अगुल ८-४	माघ प ३-८ अ० १०-४-६	वैशाख पग २-८ अगुल ८-२-८

बहुपडि पूनापोरसीका मान जेष्ठआसाढ श्रावण मासमे जो पेहरकी छाया बताइ है जीसमे ६ आगुल छाया ज्यादा और भाद्रपद आश्विन कार्तिकमें ८ आगुल मगसर पोष माघमें १० आगुल फाल्गुन चैत वैशाखमें ८ आगुल छाया बढानेसे पडिपूना पौरसीका काल आते है इस वक्त मुपत्ती या पात्रादिकी फिरसे पडिलेहन की जाती है

पक्ख मास और सवत्सरका मान विशेष जोतीषीयाको थोकडेमें लिखेंग यहा सक्षेपसे लिखते है जैन शास्त्रमें सवत्सर की आदि श्रावण कृष्ण प्रतिपदासे होती है श्रावण मास ३० दीनोंका होता है. भाद्रपद मास २९ दीनोंका जीसमें कृष्णपक्ष १४ दीनोंका और शुक्ल पक्ष १५ दीनोंका होता है आश्विन मगसर माघ चैत्र जेष्ट मास यह प्रत्येक ३० दीनोंका मास होता है और कार्तिक पोष फाल्गुन वैशाख आषाढ मास प्रत्येक २९ दीन का होता है जो एक तिथी घठती है यह कृष्णपक्षमें ही घठती है इस सुधर्मा भगवान के मत का मान देनासे जैनोंमें पक्खि म यत्सरिका झघडा का स्वय तिलाजली मिल जायेगी ॰

दिनका प्रथम पेहरका चोथा भागमें (सूर्योदय होनासे दो घडी) पडिलेहन करे किंचत् मात्र वस्त्रपात्रादि उपगरण बिगेरे पडिलेहा न रखे + पडिलेहनकि विधि इसी भागके चतुर्थ समिति में लिखि गइ है सो देखो

पडिलेहन कर गुरु महाराजकों विधिपूर्वक वन्दन नमस्कार कर प्रार्थना करेकि हे भगवान अब मैं कोइ साधुवोंकी व्यावच्च करूं या स्वाध्याय करु? गुरु आदेश करेकि अमुक साधुकि व्यावच्च

---

* यह मान चन्द्र सवत्सर [illegible]

+ किंचत् मात्रापधि बिगर [illegible] ना [illegible] निषसूत्र तीज उद्देश मासिक प्रायश्चित कहा है

करो तो अग्लानपने स्वाध्याय करे अगर गुरु आदेश करेकी स्वाध्याय करो तो प्रथम पेहरका रहा हुवा तीन भागमें मुलसूत्रोंकि स्वाध्याय करे अथवा अन्य साधुवोंको वाचना देवे स्वाध्याय कर्मो है की सब दुःखोंको अन्त करनेवाली है

दिनका दुसरा पहेरमें ध्यान करे अर्थात् प्रथम पेहरमे मूल पाठकी स्वाध्याय करी थी उस्का अर्थउपयोग संयुक्त चितवन करे शास्त्रोंका नया नया अपूर्वज्ञानके अन्दर अपना चित्त रमण करते रहना जीनसे जगत् कि सब उपाधीया नष्ट हो जाती है यही चेतनका मोक्ष है

दिनके तीसरे पेहरमें जब पूर्ण क्षुधा सताने लग जाये अर्थात् छ कारण (थोकडा नं० ३२ में देखो) से कोइ कारण हो तो पूर्व पडिलेहा हुवा पात्रा ले व गुरु महाराजकी आज्ञा पूर्वक आतुरता चपलता रहित भिक्षाके लिये अटन करे भिक्षा लानेका ४२ तथा १०१ दोष (थोकडे नं० ३२ में देखो) वर्जित निरवद्याहार लाके इरियावहि आलोचना कर गुरुको आहार दीखा के अन्य महात्मावोंको आमन्त्रण करे शेष रहा हुवा आहार माण्डलाका पांच दोष वर्जके क्षणवार भावना भावे धन्य है जो मुनि तपश्चर्या करे बादमे अमुच्छित अगिर्द्धीपणे संयम यात्रा निर्वाहने व लिये तथा शरीरको भाडा रुप आहार पाणी करे। अगर कोसी क्षेत्रमें तीसरा पेहरमें भिक्षा न मिलती हो तो जीस वक्तमें मीले उस वक्तमें लावे (देखो दशवैकालिकसूत्र अ० ५ उ २ गाथा ४ में है) इस कार्यमें तीसरी पेहर खतम हो जाति है

दिनके चोथे पेहरका चार भागमें तीन भाग तक स्वाध्याय करे और चोथा भागमें विधिपूर्वक पडिलेहन (पूर्व प्रमाणे) कर सायम स्थंडिल भी इसीसे प्रतिलेखे बादमें दीनके विषय जो लागा हुवा अतिचार जिस्की आलोचना रुप उपयोग संयुक्त प्रतिक्रमण करे

क्रमश षटावश्यक और साथमें इन्होंका + फल बताते है

षटावश्यकका नाम *

यथा.—सावद्य जोगविरइ उकत्ताणगुण पडिवति ॥
खलियस्स निंदणा तिगिच्छगुण धारणाचेव ॥ १ ॥

तथा सामायिक चउवीसत्थो वन्दना प्रतिक्रमण काउस्सग पच्चखाण (आवश्यकसूत्र)

(१) प्रथम सामायिकावश्यक इरियावहि पडिक्कमे देवसि प्रतिक्रमणठाउ जाव अतिचारका काउस्सग पारके एक नमस्कार कहे वहातक प्रथम आवश्यक है दीनके अन्दर जीतना अतिचार लगा हो वह उपयोग सयुक्त काउस्सगमें चितवन करना इसका फल सावद्य योगोंसे निवृती होती है कमानेका अभाव

(२) दुसरा चउवीसत्थावश्यक। इन अव सर्पिणिमें हो गये चोवीश तीर्थंकरोंकी स्तुति रूप लोगस्स कहेना-फल सम्यक्त्व निर्मल होता है

(३) तीसरावश्यक वन्दना गुरु महाराजको द्वादशावृतनसे वन्दना करना फल निच गौत्रका नास होता है और उच्च गौत्रकी प्राप्ती होती है

(४) चोथा प्रतिक्रमणावश्यक दिनके विषय लागा हुवा अतिचार को उपयोग सयुक्त गुरु साखे पडिक्कमे सो देवसी अतिचारसे लगाके आयरियोवज्झाया तीन गाथा तक चोथा आवश्यक है फल सयम रूपि जो नौका जिसमें पडा हुवा छेद्रको दे

+ फल उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन ९ मा बताया है।

* सूत्र श्री अनुयागद्वारमें।

करे छेद्रका निरुद्ध करणा, जीनसे अमवला चारित्र और अष्ट प्रवचन माताकी उपयोग मयुक्त आराधना (निर्मल) करे

(५) पचम काउसग्गावश्यक प्रतिक्रमण करता अना उप योग रहा हुवा अतिचार रुपि प्रायश्चित जीस्को शुद्ध करणे के लिये चार लोगस्सका काउसग करे एक लोगस्स प्रगट करे फल-भूत और वर्तमान कालका प्रायश्चितको शुद्ध कर जैसे कोइ मनुष्यको देना हो या वजन कीसी स्थानपर पहुचाना हो उनको पहुचा देवे या देना दे दीया फिर निर्भय होता है इसी माफीक व्रत मे लगाहुवा प्रायश्चितको शुद्ध कर प्रशस्त ध्यानक अन्दर सुखे सुखे विचरे

(६) छठा पच्चखाणावश्यक-गुरु महाराजका द्वादशा वृतसे २ वन्दना देके भविष्यकालका पच्चखाण करे। फल आता हुवा आश्रवको रोके और इच्छाका निरुद्ध हानासे पूर्व उपार्जित कर्मोंका क्षय करे

यह षटावश्यक रुप प्रतिक्रमण निर्विघ्नपणे समाप्त होने पर भाव मगल रुप तीर्थंकरादि स्तुति चैत्यवन्दन जघन्य ३ श्लोक उत्कृष्ट ७ श्लोकसे स्तुति करना। फल ज्ञान दर्शन चारित्रकि आ राधना होती है जीससे जीव उन्ही भवमे मोक्ष जावे अथवा विमानीक देवता में जावे वहासे मनुष्य होके मोक्षमे जावे उत्कृष्ट करे तो भी १५ भवसे अधिक न करे

रात्रिका कृत्य

जब प्रतिक्रमण हो जावे तब स्वाध्यायका काल आनेसे काल पडिलेहन करे जेसे ठाणायंग सूत्रका दशमा ठाणामें १० प्रकारकी आकाशकी असज्झाय बताइ है यथा तारो तुटे दीशा लाल, अकालमे गाज बीजली, कडक, भूमिकम्प, बालचन्द्र,

यक्षचिन्ह, अग्निका उपद्रव धुधडु (रजोघातादि) यह दश प्रकारकी आस्वाध्यायसे काइ भी अस्वाध्याय न हो तो

+ रात्रिके प्रथम पेहरमें मुनि स्वाध्याय (सूत्रका मूल पाठ) करे रात्रिके दुसरे पेहरमें जो प्रथम पेहरमें मूल सूत्रका पाठ किया था उन्होंका अर्थ चिंतवनरुप ध्यान करे परन्तु वार्ता की स्वाध्याय और सुत्ताका ध्यान जो कर्मबन्धका हेतु है उनको स्पर्श तक भी न करे स्वाध्याय सर्व दु खोंका अन्त करती है।

रात्रिके तीसरा पेहरमें जब स्वाध्याय ध्यान करता निंद्राका आगमन हो तो विधिपूर्वक संथारा पोरसी भणा के यत्नापूर्वक संथारा करके स्वल्प समय निन्द्रार्थी मुक्त करे

रात्रिका चोथा पेहर-जब निंद्रासे उठे उस वक्त अगर कोइ खराब सुपन विगेरे हुआ हो तो उसका प्रायश्चितके लिये काउस्सग्ग करना फिर एक पेहरका ४ भागमें तीन भाग तक मूल सूत्रकी स्वाध्याय करणा वार वार स्वाध्यायका आदेश देते है इसका कारण यह है की श्री तीर्थंकर भगवान् के मुखारविंद से निकली हुइ परम पवित्र आगमकी वाणी जिसको गणधर भगवानने सूत्ररुपे रचना करी उस वानीके अन्दर इतना असर भरा हुवा है कि भव्य प्राणी स्वाध्याय करते करते ही सर्व दु खोंका अन्त कर केवलज्ञानको प्राप्त कर लेते है इससे हि शास्त्रकार कहते हैं कि यथा " सव्वदु क्खविमोक्खाण "

अब पेहरका चोथा भाग (दो घडी) रात्रि रहे तब रात्रि सबन्धी जो अतिचार लागा हो उसकि आलोचना रुप षटावश्यक पूर्ववत् प्रतिक्रमण करना + सूर्योदय होता हि गुरु महाराजका

+ रात्रिका काल पारसीका प्रमाण नक्षत्र आदिसे मुनि जान वह जोतीषायाका अधिकारका थारडामें लिया जावगा

+ सुमेरा सान्स्गमें तो चितवन करना मुझे क्या तप करना ह ?

वन्दन कर पच्चखान करना और गुरु आज्ञा माफिक पूर्ववत् दीनकृत्य करते रहेना

इसी माफिक दिन और रात्रिमें वरताव रखना और भी, ज्ञान, ध्यान, मौन विनय, व्यावच पर्याराधन तपश्चर्या दीनरात्रिमें सात वर चैत्यवन्दन वार वार सज्झाय समिति गुप्ति भाषा पूजन प्रतिलेखनके अन्दर पूर्ण तय उपयोग रखना पच महाव्रत पच समिति तीन गुप्ति यह १३ मूल गुण है जीसमे हमेशा प्रयत्न करते रहेना एक भवमे यदकिंचित् परिश्रम उठाणा पडता है परन्तु भवाभवमें जीव सुखी हो जाता है

यह श्री सुधर्मास्वामिकी समाचारी सब जैनोंको मान्य है वास्ते झघडे की समाचारीयाको तिलाञ्जलि देके सुधर्म समाचारीमें यथाशक्ति पुरुषार्थ करे ताके शीघ्र कल्याण हो

शान्ति   शान्ति   शान्ति

सेवभंते—सेवभंते—तमेवसच्चम्
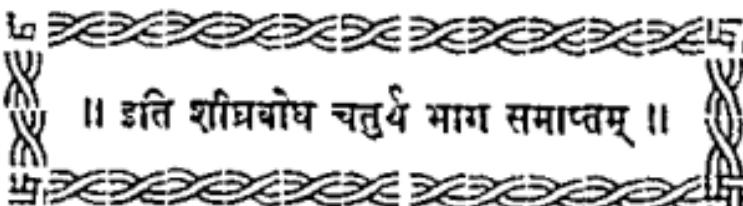
॥ इति शीघ्रबोध चतुर्थ भाग समाप्तम् ॥

श्री रत्नप्रभसूरि सद्गुरुभ्यो नमः

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग ५ वा
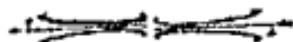
थोकडा नम्बर ४०

(जड चैतन्य स्वभाव)

जीवका स्वभाव चैतन्य और कर्मोका स्वभाव जड एव जीव और कर्मोका भिन्न भिन्न स्वभाव होने पर भी जैसे धूल्मे धातु तीलोंमें तैल दूधमें घृत है, इसी माफीक अनादि काल से जीव और कर्मों के सबन्ध है जैसे यंत्रादि के निमित्त कारण से धूलसे धातु तीलोंमे तेल दूधमे घृत अलग हो जाते है इसी माफीक जीवों का ज्ञान दर्शन, तप, जप, पूजा प्रभावनादि शुभ निमित्त मीलनेसे कर्म और जीव अलग अलग हो जीव सिद्ध पदको प्राप्त कर लेते है

जयतक जीवोंके साथ कर्म लगे हुवे है तबतक जीव अपनि दशाको भूल मिथ्यात्वादि परगुण में परिभ्रमन करता है जैसे सुवर्ण आप निर्मल अकलंक कोमल गुणवाला है किन्तु अग्निका संयोग पाके अपना असली स्वरुप छोड उष्णता को धारण करता है फीर जल वायुका निमित्त मीलने पर अग्निको त्यागकर अपने असली गुणको धारण कर लेता है इसी माफीक जीव भी निर्मल

अकलंक अमूर्त्ति है परन्तु मिथ्यात्वादि अज्ञानके निमित्त कारण से अनेक प्रकारका रूप धारण कर संसारमें परिभ्रमन करता है परन्तु जब सद्ज्ञान दर्शनादिका निमित्त प्राप्त करता है तब मिथ्यात्वादिका संग त्याग अपना असली स्वरूप धारण कर सिद्ध अवस्थाको प्राप्त कर लेता है

जीव अपना स्वरूप कीस कारणसे भूल जाता है ? जसे कोइ अकलमद समजदार मनुष्य मदिरापान करने से अपना भान भूल जाता है फीर उन मदिराका नशा उतरने पर पश्चात्ताप कर अच्छे कार्यमें प्रवृत्ति करता है इसी माफीक अनंत ज्ञान दर्शनका नायक चैतन्यको मोहादि कर्मदलक विपाकोदय होता है तब चैतन्यका बेभान-विकल-बना देता है फीर उन कर्मोको भोगवके निर्जरा करने पर अगर नया कर्म न बन्धे तो चैतन्य कर्म मुक्त हो अपने स्वरूपमें रमणता करता हुवा सिद्ध पदको प्राप्त कर लेता है

कर्म क्या वस्तु है ? कर्म एक कीसमका पुद्गल है जिस पुद्गलोंमें पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, च्यार स्पर्श है जीवोंके उन पुद्गलोंसे अनादि कालका सबन्ध लगा हुवा है उन कर्मोकि प्रेरणासे जीवोंके शुभाशुभ अध्यवसाय उत्पन्न होते है उन अध्य वसायोंकी आकर्षणासे जीव शुभाशुभ कर्म पुद्गलोंको ग्रहन करते है। वह पुद्गल आत्माके प्रदेशोंपर चीपक जाते है अर्थात् आत्म प्रदेशोंके साथ उन कर्म पुद्गलोंका खीरनिरकी माफीक बन्ध होता है जिनों से वह कर्म पुद्गल आत्माके गुणोंको झांखा बना देते है जैसे सूर्यको बादल झांखा बनाता है। जैसे जैसे अध्यव सायोंकी मंदता तीव्रता होती है वैसे वैसे कर्मोके अन्दर रस तथा स्थिति पड जाति है वह कर्म बन्धने के बाद वह कर्म कीतने कालसे विपाक उदय होते है उनको अबाधा काल कहते हैं जैसे हुंडीके अन्दर मुदत डाली जाति है। कर्म दो प्रकारसे भोगवीये

जाते है (१) प्रदेशोदय (२) विपाकोदय जिस्मे तप, जप, ज्ञान ध्यान पूजा, प्रभावनादि करनेसे दीर्घ कालके भोगवने याग्य कर्मोको आकर्षण कर स्वल्प कालमें भोगव लेते है जिसकी खबर छद्मस्थोंको नहीं पडती है उसे प्रदेशादय कहते है तथा कर्म विपाकोदय होने से जीवोंको अनेक प्रकारकी विटम्बना से भोगवना पडे उसे विपाकोदय कहते है।

अशुभ कर्मोदय भोगवते समय आर्तध्यानादि अशुभ क्रिया करने से उन अशुभ कर्मोंमें और भी अशुभ कर्म स्थिति तथा अनुभाग रसकि वृद्धि होती है तथा अशुभ कर्म भोगवते समय शुभ क्रिया ध्यान करने से वह अशुभ पुद्गल भी शुभपणे प्रणम जाते है तथा स्थितिघात रसघात कर बहुत कर्म प्रदेशों से भोगवने निर्ज्जरा कर देते है॥ शुभ कर्मादय भोगवते समय अशुभ क्रिया करनेसे वह शुभ कर्म पुद्गल अशुभपणे प्रणमते है और शुभ क्रिया करनेसे उन शुभ कर्मोंमें और भी शुभकि वृद्धि होती है वह शुभ कर्म सुखे सुखे भोगवके अन्तमे मोक्षपदको प्राप्त कर लेत है।

साहुकार अपने धनका रक्षण कब कर सकेंगे कि प्रथम चोर आनेका कारण हेतु रहस्तेको ठीक तोरपर समज लेगे फीर उन चोर आनेक रहस्तेकों बन्ध करवादे या पेहरादार रखदे तो धन का रक्षण कर सके इसी माफीक शास्त्रकारोंने फरमाया है कि प्रथम चोर याने कर्मोंका स्वरूपको ठीक तोरपर समजो फीर कम आनेका हेतु कारणको समजो फीर नया कर्म आनेके रहस्तेको रोको और पुराणे कर्मोंको नाश करनेका उपाय करो ताके ससार का अन्त कर यह जीव अपने निज स्थान (मोक्ष) को प्राप्त कर सादि अनत भागे सुखी हो।

कर्मोंकि विषय के अनेक ग्रन्थ है परन्तु साधारण मनुष्योंके लिये एक छोटीसी कीताब द्वारा मूल आठ कर्मोंकि उत्तरकर्म

प्रकृति १५८ का संक्षिप्त विवरण कर आप के सेवाम रखी जाति है आशा है कि आप इस कर्म प्रकृतियोंको कंठस्थ कर आगे के लिये अपना उत्साह बढाते रहेंगे इत्यलम् ।

—✻—

थोकडा नम्बर ४१

(मूल आठ कर्मोंकि उत्तर प्रकृति १५८.)

(१) ज्ञानावर्णियकर्म—चैतन्यके ज्ञान गुणको रोक रखा है ।
(२) दर्शनावर्णियकर्म—चैतन्यके दर्शन गुणको रोक रखा है ।
(३) वेदनियकर्म—चैतन्यके अव्याबाद गुणको रोक रखा है ।
(४) मोहनियकर्म—चैतन्यके क्षायिक गुणको रोक रखा है ।
(५) आयुष्यकर्म—चैतन्यके अटल अवगाहाना गुणको रोक रखा है
(६) नामकर्म—चैतन्यके अमूर्त गुणको रोक रखा है ।
(७) गौत्रकर्म—चैतन्यके अगुरु लघु गुणको रोक रखा है ।
(८) अंतरायकर्म—चैतन्यके वीर्य गुणको रोक रखा है ।
इन आठों कर्मोंकि उत्तर प्रकृति १५८ हैं उन्होंका विवरण—

(१) ज्ञानावर्णियकर्म जेसे घाणीका बहल याने घाणीके बहलके नेत्रोंपर पाट्टा बान्ध देनेसे कीसी वस्तुका ज्ञान नहीं होता है इसी माफीक जीवोंके ज्ञानावर्णिय कर्मपडल आजानेसे वस्तुतत्वका ज्ञान नहीं होता है । जीस ज्ञानावरणीय कर्मकि उत्तर प्रकृति पांच है यथा—(१) मतिज्ञानावर्णिय ३४० प्रकारके मतिज्ञान है (देखो शीघ्रबोध भाग ६ टा) उनपर आवरण करना अर्थात् मतिसे कीसी प्रकारका ज्ञान नहीं होने देना अच्छी बुद्धि

उत्पन्न नही होना तत्व वस्तुपर विचार नही करने देना प्रज्ञा नही फेठना-बदलेमें खराब मति-बुद्धि-प्रज्ञा-विचार पैदा होना यह सब मतिज्ञानावर्णियकर्मका ही प्रभाव है (२) श्रुतज्ञानावर्णिय-श्रुतज्ञानको रोके, पठन पाठन श्रवण करनेको रोके, सद्ज्ञान होने नही देवे योग्य मीलनेपर भी सूत्र सिद्धान्त वाचना सुननेमें अन्तराय होना-बदलेमें मिथ्याज्ञान पर श्रद्धा पठन पाठन श्रवण करनेकि रूची होना यह सब श्रुतिज्ञानावर्णियकर्मका प्रभाव है (३) अवधिज्ञानावर्णियकर्म-अनेक प्रकारके अवधिज्ञानकों रोके (४) मन पर्ययज्ञानावर्णियकर्म आते हुवे मन पर्ययज्ञानको रोके (५) केवलज्ञानावर्णियकर्म-सपूर्ण जो केवलज्ञान है उनको आते हुवेको रोके इति ॥

(२) दर्शनावर्णियकर्म—राजाके पोलीया जैसे कीसी मनुष्यको राजासे मीलना है परन्तु वह पोलीया मीलने नही देते है इसी माफिक जीवोंको धर्म राजा से मीलना है परन्तु दर्शनावर्णियकर्म मीलने नही देते है जीसकि उत्तर प्रकृति नौ है (१) चक्षु दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदय से जीवोंको नेत्र (ओंखों) हिन बना दे अर्थात् एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय जातिमें उत्पन्न होते है कि जहा नेत्रोंका बिलकुल अभाव है और चौरिन्द्रिय पाचेन्द्रिय जातिमें नेत्र होने पर भी रातीदा होना, काणा होना तथा बिलकुल नही दीखना इसे चक्षु दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति कहते है (२) अचक्षु दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदयसे त्वचा जीभ नाक कान और मनसे जो वस्तुका ज्ञान होता है उनोंको रोके जिस्का नाम अचक्षु दर्शनावर्णिय कहते है (३) अवधि दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदयसे अवधि दर्शन नही होने देवे अर्थात् अवधि दर्शनको रोके (४) केवल दर्शनावर्णिय कर्मोदय, केवल दर्शन होने नही देवे अर्थात् केवल दर्शनपर आवरण कर रोक रखे ॥ तथा निद्रा-निद्रा निद्रा दर्शनावर्णियकर्म प्रकृति उदय से

निंद्रा आति है परन्तु सुखे सोना सुखे जाग्रत होना उस निद्रा कहते हैं। और सुखे सोना दुःखपूर्वक जाग्रत होना उसे निद्रानिद्रा कहते है। खडे खडेको तथा बैठे बैठेको निंद्रा आवे उसे प्रचला नामाकि निंद्रा कहते है। चलते फीरतेको निंद्रा आवे उसे प्रचला प्रचला नामकि निंद्रा कहते है। दिनकों या रात्रीमें चितवन (विचाराहुवा) किया काय निंद्राके अन्दर कर लेते हो उसको स्यानर्द्धि निंद्रा कहते है एवं च्यार दर्शन और पाच निंद्रा मीलाने से नौ प्रकृति दर्शनावर्णियकर्मकि है।

(३) वेदनियकर्म—मधुलीप्त छुरी जैसे मधुका स्वाद मधुर है परन्तु छुरीकी धार तीक्षण भी होती है इसी माफीक जीवोंको शातावेदनि सुख देती है मधुवत् और असातावेदनि दुःख देती है छुरीवत् जीसकि उत्तर प्रकृति दोय है सातावेदनिय, असाता वेदनिय, जीवोंको शरीर-कुटुम्ब धन धान्य पुत्र कलत्रादि अनुकुल सामग्री तथा देवादि पौद्गलीक सुख प्राप्ति होना उसे सातावेदनियकर्म प्रकृतिका उदय कहते है और शरीरमें रोग निर्धनता पुत्र कलत्रादि प्रतिकुल तथा नरकादि के दुःखोका अनुभव करना उसे असातावेदनियकर्म प्रकति कहते है।

(४) मोहनियकर्म-मदिरापान कीया हुवा पुरुष बेभान हो जाते है फीर उनको हिताहितका ख्याल नहा रहते है इसी माफीक मोहनियकर्मोदयसे जीव अपना स्वरूप भूल जानेसे उसे हिताहितका ख्याल नही रहता है जिस्के दो भेद है दर्शनमोहनिय सम्यक्त्व गुणको रोके और चारित्रमोहनिय चारित्र गुणको रोके जीसकि उत्तर प्रकृति अठावीस है जिस्का मूल भेद दोय है (१) दर्शनमोहनिय (२) चारित्र मोहनिय जिस्मे दर्शनमोह निय कर्मकि तीन प्रकृति है (१) मिथ्यात्वमोहनीय (२) सम्यक्त्व मोहनिय (३) मिश्रमोहनिय जैसे एक कोद्रव नामका

अनाज होते है जिस्को खानेसे नशा आ जाता है उस नशाके मारे अपना स्वरूप भूल जाता है।

(क) जिस कोद्रव नामके धानकों छाली सहित खानेसे बिल्कुल ही बेभान हो जाते है इसी माफीक मिथ्यात्व मोहनिय कर्मोदयसे जाव अपने स्वरूपको भूलके परगुणमे रमणता करते है अर्थात् तत्व पदार्थकि विप्रीत श्रद्धाकों मिथ्यात्व मोहनिय कहते है जिस्से आत्म प्रदेशोंपर मिथ्यात्वदलक होनेसे धर्मपर श्रद्धा प्रतित न करे अधर्मकि प्ररूपना करे इत्यादि।

(ख) उस कोद्रव धानका अर्ध विशुद्ध अथात् कुछ छाली उतारके ठीक किया हो उनको खानेसे कभी सावचेती आति है इसी माफीक मिश्रमोहनीवाले जीवोंकों कुच्छ श्रद्धा कुच्छ अश्रद्धा मिश्रभाव रहते है उनोंको मिश्रमोहनि कहते है लेकीन वह है मिथ्यात्वमें परन्तु पहला गुणस्थान छुट जानेसे भव्य है।

(ग) उस कोद्रव धानकों छाशादि सामग्रीसे धोके विशुद्ध बनाते परन्तु उन कोद्रव धानका मूल जातिस्वभाव नही जानेसे गल्छाय बनी रहती है इसी माफीक क्षायक सम्यक्त्व आने नही देवे और सम्यक्त्वका विराधि होने नही देवे उसे सम्यक्त्व मोहनिय कहते है। दर्शनमोह सम्यक्त्व घाति है

दुसरा जो चारित्र मोहनिय कर्म है उसका दो भेद है (१) कषाय चारित्र मोहनिय (२) नोकषाय चारित्र मोहनिय और कषाय चारित्र मोहनिय कर्मके १६ है। जिस्मे एकेक कषायके च्यार च्यार भेद भी हो सक्ते है जेसे अनतानुबन्धी क्रोध अनतानुबन्धी जेसा, अप्रत्याख्यानि जेसा-प्रत्याख्यानि जेसा-और संज्वलन जेसा एवं १६ भेदोंका ६४ भेद भी होते है यहांपर १६ भेद ही लिखते है।

अनतानुबन्धी क्रोध-पत्थरकि रेखा सादृश, मान बज्रके

स्थंभ सादश, माया वासकी जड सादश लोभ करमजी रेसम रग सादश घात करे तो सम्यक्त्वगुणकि स्थिति यावत् जीवकि गति कर तो नरककि ॥ अप्रत्याख्यानि क्रोध तलावकि तड, मान दान्तस्थंभ माया मढाका श्रृंग, लोभ नगरका कीच घात करे तो श्रावकके व्रतोकि स्थिति एक वर्षकि गति तीर्यंच कि ॥ प्रत्याख्यानि क्रोध गाडाकी लीक, मान काष्टका स्थंभ माया चालता बैलकामूत्र लोभ नेत्रांके अञ्जन घात करे तो सर्व व्रतकि, स्थिति करे तो च्यार मासकि गति करे तो मनुष्यकी ॥ संज्वलनका क्रोध पाणीकी लीक, मान तृणका स्थंभ, मायाका मची छाल लोभ हलदिका रग घात करे तो वीतरागपणाकी, स्थिति क्रोधकी दो मास मानकी एक मास मायाकी पन्दरा दिन, लोभकी अन्तर मुहुर्त गति करे तो देवतार्योमें जावें इन सोलह प्रकारकी कषायको कषाय मोहनिय कहते है

नौ नोकषाय मोहनिय हास्य यत्नहठ मश्करी करना । भय-डरना विस्मय होना । शोक फीकर चिंता आर्तध्यान करना। जुगुप्सा-ग्लानी लाना नफरत करना। रति आरभादिकार्योमे खुशी लाना । अरति-संयमादि कार्योमे अरति करना । स्त्रीवेद-जिस प्रकृतिके उदय पुरुषोंकि अभिलाषा करना। पुरुषवेद जिस प्रकृतिके उदय स्त्रियोंकि अभिलाषा करना। नपुंसक वेद जिस प्रकृतिके उदय स्त्रि-पुरुष दोनोंकि अभिलाष करना ॥ एवं २८ प्रकृति मोहनियकर्मकी है।

(५) आयुष्य कर्मकि च्यार प्रकृति है यथा-नरकायुष्य तीर्यंचायुष्य, मनुष्यायुष्य, देवायुष्य । आयुष्यकर्म जैसे कारागृहकी मुदत हो इतने दिन रहना पडता है इसी माफीक जीस गतिका आयुष्य हो उसे भोगवना पडता है।

(६) नामकर्म चित्रकार शुभ और अशुभ दोनो प्रकारक

चित्राका अवलोकन करता है इसी माफीक नामकर्मोदय जीवोंको शुभाशुभ कार्यमे प्रेरणा करनेवाला नामकर्म है जीसकी एकसो तीन (१०३) प्रकृतियां है।

(क) गतिनामकर्मकि च्यार प्रकृतियां है नरकगति, तीर्यचगति मनुष्यगति देवगति। एक गतिसे दुसरी गतिमें गमनागमन करना उसे गतिनामकर्म कहते है।

(ख) जातिनाम कर्म कि पांच प्रकृति है एकेन्द्रिय जाति, बेइन्द्रिय० तेइन्द्रिय० चोरिन्द्रिय पचेन्द्रिय जाति नाम।

(ग) शरीर नामकर्मकि पांच प्रकृति है औदारिक शरीर वैक्रिय० आहारीक० तेजस० कारमण शरीर०। प्रतिदिन नाश-विनाश होनेवालोंको शरीर कहते है।

(घ) अंगोपांग नामकर्मकि तीन प्रकृति है औदारिक शरीर अंग उपांग, वैक्रिय शरीर अंगोपांग आहारीक शरीर अंगोपांग, शेष तेजस कारमण शरीरके अंगोपांग नही होते है।

(ङ) बन्धन नामकर्मकि पदरा प्रकृति है-शरीरपणे पौद्गल ग्रहन करते है फीर उनोंको शरीरपणे बन्धन करते है यथा-औदारीक औदारीकका बन्धन, १ औदारीक तेजसका बन्धन, २ औदारीक कारमणका बन्धन ३ औदारीक तेजस कारमणका बन्धन, ४ वैक्रिय वैक्रियका बन्धन ५ वैक्रिय तेजसका बन्धन, ६ वैक्रियकारमणका बन्धन ७ वैक्रिय तेजस कारमणका बन्धन ८ आहारीक आहारीकका बन्धन९ आहारीक तेजसका बन्धन १० आहारीक कारमणका बन्धन ११ आहारीक तेजस कारमणका बन्धन १२ तेजस तेजसका बन्धन १३ तेजस कारमणका बन्धन १४ कारमणकारमणका बन्धन १५ एवं १५।

(च) सघातन नाम कर्म कि पांच प्रकृति है जो पौद्गल शरीरपणे ग्रहन कीया है उनोंको यथायोग्य अवयवपणे मजबुत बनाना।

जेसे औदारिक सघातन, वेक्रियसघातन, आहारीक सघातन, तेजस संघातन कारमण संघातन।

(छ) संहनन नामकर्मके छे प्रकृति है शरीरके ताकत और हाडके मजबुतिको सहनन कहते है यथा वज्र ऋषभनाराच सहनन। वज्रका अर्थ है खीला ऋषभका अथ है पाट्टा, नाराचका अर्थ है दोनो तर्फ मर्कट याने कुटीयाके आकार दोनो तर्फ हडी जुडी हुइ अर्थात् दोनो तर्फ हड्डीका मीलना उसपे उपर एक हडीका पट्टा और इन तीनोमे एक खीली हो उसे वज्रऋषभ नाराच संहनन कहते है॥ नाराच संहनन-उपरवत् परन्तु बीचम खीली न हो नाराच सहनन-इसमें पट्टा नही है। अर्द्ध नाराच संहनन-एक तर्फ मर्कट बन्ध हो दुसरी तर्फ खीली हो। किलीका सहनन-दोनो तर्फ अकुडाके माफीक एक हडीमें दुसरी हडी फसी हुइ हो। छेवटु सहनन-आपस में हड्डीयों जुडी हुइ है॥

(ज) संस्थाननामकर्मके छे प्रकृतियां है—शरीरकी आकृतिको सस्थान कहते है समचतुरस्र सस्थान-पालटीमार के (पद्मासन) बैठनेमें चोतर्फ बराबर हो यान दोनो जानुके विषम अन्तर है इतना हो दोनो स्कन्धोके बिचमें। इतना ही एक तर्फसे जानु और स्कन्धके अन्तर हो उसे समचतुरस्र संस्थान कहते है। निग्रोध परिमडल सस्थान नाभीके उपरका भाग अच्छा सुन्दर हो और नाभीके निचेका भाग हिन हो। सादि सस्थान-नाभीके निचेका विभाग सुन्दर हो नाभीके उपरका भाग खराब हो। कुब्ज सस्थान-हाथ पैर शिर गदन अवयव अच्छा हो परन्तु छाती पेट पीठ खराब हो। वामन सस्थान-हाथ पैरादि छोटे छोटे अवयव खराब हो। हुडक सस्थान-सब शरीर अवयव खराब अप्रमाणीक हो।

(झ) वर्णनामकर्मके पाच प्रकृति है—शरीरके जो पुद्गल लागा है उन पुद्गलोंका वर्ण जैसे कृष्णवर्ण निलवर्ण, रक्तवर्ण

पेतवर्ण, श्वेतवर्ण ओवोंक जिस वर्ण नाम कर्मोदय होते है वेसा वर्ण मीलता है।

(ज) गन्ध नामकर्मकि दो प्रकृति है—सुभिगन्धनाम कर्मोदयसे सुभिगन्धके पुद्गल मीलते है दुर्भिगन्धनाम कर्मोदयसे दुर्भिगन्धके पुद्गल मीलते है।

(ट) रस नामकर्मकि पांच प्रकृति है—पूर्ववत् शरीरके पुद्गल तिक्तरस, कटुकरस, कषायरस, अम्लरस, मधुररस जैसे रस कर्मोदय होता है वेसे ही पुद्गल शरीरपणे ग्रहन करते है।

(ठ) स्पर्श नामकर्मकि आठ प्रकृति है जिस स्पर्श कर्मका उदय होता है वेसे स्पर्शके पुद्गलोंकों ग्रहन करते है जैसे ककश, मृदुल, गुरु, लघु, शित, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष।

(ड) अनुपूर्वि नामकर्मकि च्यार प्रकृतियां है एक गतिसे मरके जीव दुसरी गतिमें जाता हुवा विग्रह गति करते समयानुपूर्वि, प्रकृति उदय हो जीवको उत्पत्तिस्थान पर ले जाते है जेसे येचा हुवा बहलको धणी नाथ गालके लेजावे जीस्का च्यार भेद नरकानुपूर्वि तीर्यंचानुपूर्वि, मनुष्यानुपूर्वि, देवआनुपूर्वि।

(ढ) विहायगति नामकर्मकि दो प्रकृतियों है जिस कर्मोदयसे अच्छी गजगामिनी गति होती है उसे शुभ विहायगति कहते है और जिन कर्मोदयसे उंट खरवत् खराब गति होती है उसे अशुभ विहायगति कहते है। इन चौदा प्रकारकि प्रकृतियोंके पिंड प्रकृति कही जाती है अब प्रत्येक प्रकृति कहते है।

पराघातनाम-जिस प्रकृतिके उदयसे कमजोरको तो क्या परन्तु बडे बडे सत्ववाले योद्धोंको भी एक छीनकमें पराजय कर देते है।

उश्वासनाम—शरीरकि बाहीरकि हवाकों नासीकाद्वार।

शरीरके अन्दर खींचना उसे श्वास कहते है और शरीरके अन्दरकी हवाको बाहर छोडना उसे निश्वास कहते है ।

आतपनाम—इस प्रकृतिके उदयसे स्वय उष्ण न होनेपर भी दुसरोंको आतप मालुम होते है यह प्रकृति सूर्य के वैमानके जो बादर पृथ्वीकाय है उनोंके शरीरके पुद्गल है वह प्रकाश करता है, यद्यपि अग्निकायके शरीर भी उष्ण है परन्तु यह आतप नाम नही किन्तु उष्ण स्पर्श नामका उदय है ।

उद्योतनाम—इस प्रकृतिके उदयसे उष्णता रहीत-शीतल प्रकृति जेसे चन्द्र ग्रह नक्षत्र तारोंके वैमानके पृथ्वी शरीर है तथा देव और मुनि वैक्रिय करते है तब उनोंका शितल शरीर भी प्रकाश करता है । आगीया-मणि-औषधियों इत्यादिको भी उद्योत नामकर्मका उदय होता है ।

अगुरुलघुनाम—जीस जीवोंके शरीर न भारी हो कि अपनेसे सभाला न जाय न हलका हो कि हवामे उड जावे याने परिमाण सयुक्त हो शीघ्रता से लिखना हलना चलनादि हरेक कार्य कर सके उसे अगुरुलघु नाम कहते है ।

जिननाम—जिस प्रकृतिके उदय से जीव तीर्थंकर पद को प्राप्त कर केवलज्ञान केवलदर्शनादि ऐश्वर्य सयुक्त हो अनेक भव्यात्माओंका कल्याण करे ।

निर्माणनाम—जिस प्रकृतिके उदय जीवोंके शरीरके अगोपांग अपने अपने स्थानपर व्यवस्थित होते हो जेसे सुतार चित्रकार, पुतलोयोंके अंगोपाग यथास्थान लगाते है इसी माफीक यह कर्म प्रकृति भी जीवोंके अवयव यथास्थान पर व्यवस्थित बना देती है ।

उपघातनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे जीवों को अपने ही

अवयव से तकलीफों उठानी पडे जेसे मस मसूर दो जीभों अधिक दान्त होटों से बाहार निकल जाना अगुलीयों अधिक इत्यादि। इन आठ प्रकृतियोंको प्रत्येक प्रकृति कहते है अब त्रसादि दश प्रकृति बतलाते है।

त्रसनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे त्रसपणा याने बेइन्द्रिया-दिपणा मीले उसे त्रसनाम कहते है।

बादरनाम—जिस प्रकृतिके उदयसे बादरपणा याने जिसको छदमस्थ अपने चरमचक्षुसे देख सके यद्यपि बादर पृथ्वीकायादि पत्येक जीव व शरीर दृष्टिगोचर नहीं होते है तथपि उनोंके बादर नाम कर्मोदय होनेसे असख्याते जीवोंके शरीर एकत्र होनेसें दृष्टिगोचर हो सकते है परन्तु सूक्षम नामकर्मो दयवाले असख्यात शरीर एकत्र होनेपर भी चरमचक्षुवालों के दृष्टिगोचर नहीं होते है।

पर्याप्त नाम—जिस जातिमें जितनि पर्याप्ती पाती हो उनोंको पूरण करे उसे पर्याप्तनाम कहते है पुद्गल ग्रहन करनेकि शक्ति पुद्गलोंका परिणमानेकि शक्तिको पर्याप्ति कहते है।

प्रत्येक शरीर नाम—एक शरीरका एक ही स्वामी हो अर्थात् पत्येक शरीरमें एकेक जीव हो उसे प्रत्येक नाम कहते हैं। साधारण वनस्पति व सिवाय सब जीवोंको प्रत्येक शरीर है

स्थिर नाम—शरीर के दान्त हड्डी ग्रीवा आदि अवयव स्थिर मजबुत हो उसे स्थिरनामकर्म कहते है।

शुभनाम—नाभी के उपरका शरीरको शुभ कहते है जैसे हस्तादिका स्पर्श होनेसे अप्रीति नहीं है किन्तु पैरोंका स्पर्श होते ही नाराजी होति है।

सुभाग नाम—कीसीपर भी उपकार किया विगर ही लोगों के प्रीतीपात्र होना उसको सुभागनाम कर्म कहते है। अथवा सौभाग्यपणा सदेव बना रहना युगल मनुष्यवत्

सुस्वर नाम—मधुरस्वर लोगोंको प्रीय हो पचमस्वरवत्

आदेय नाम—जिनोंका वचन सर्वमान्य हो आदर सत्कारसे सर्व लोग मान्य करे।

यश कीर्ति नाम—एक देशमें प्रशसा हो उसे कीर्ति कहते है और बहुत देशोंमें तारीफ हो उसे यश कहते है अथवा दान तप शील पूजा प्रभावनादिसे जो तारीफ होती है उसे कीर्ति कहते है और शत्रुओंपर विजय करनेसे यश होता है। अब स्थावरकि दश प्रकृति कहते है।

स्थावर नाम—जिस प्रकृतिके उदयसे स्थिर रहे याने शरदी गरमीसे बच नही सके उसे स्थावर कहते है जेसे पृथ्व्यादि पाच स्थावरपणे में उत्पन्न होना।

सूक्ष्म नाम—जिस प्रकृति के उदयसे सूक्ष्म शरीर-जो कि छद्मस्थोंके दृष्टिगोचर होवे नहीं कीसीके रोकनेपर रूकावट होवे नही खुदके रोका हुवा पदार्थ रूक नही सके। वेसे सूक्ष्म पृथ्व्यादि पाँच स्थावरपणेमे उत्पन्न होना।

अपर्याप्ता नाम—जिस जातिमे जितनी पर्याय पावे उनोंमे कम पर्यायबान्धके मर जावे, अथवा पुद्‍गल ग्रहनमें असमर्थ हो।

साधारण नाम—अनत जाव एक शरीरके स्वामि हो अर्थात एक ही शरीरमें अनत जीव रहते हो कन्दमूलादि

अस्थिर नाम-दान्त हाड कान जीभ ग्रीवादि शरीरके अवयवों अस्थिर हो-चपल हो उसे अस्थिर नाम कर्म कहते है।

अशुभनाम—नाभीके नीचेका शरीर पैर विगरे जाकि दुस

रोंके स्पश करतेही नाराजी आवे तथा अच्छा कार्य करनेपरभी नाराजी करे इत्यादि।

दुर्भागनाम—कोसीपर उपकार करनेपरभी अप्रीय लग तथा इष्टवस्तुओंका वियोग होना।

दु स्वरनाम—जिस प्रकृतिके उदयमें ऊट गर्दभ जेसा खराब स्वर हो उसे दु स्वरनाम कर्म कहते है।

अनादेयनाम—जिसका वचन कोइभी न माने याने आदर करनेयोग्य वचन होनेपरभी कोइ आदर न करे।

अयश कीर्तिनाम—जिस कर्मोदयसे दुनियोंमे अपयश-अ कीर्ति फैले, याने अच्छे कार्य करनेपरभी दुनियां उनोंको भलाइ न देके बुराइयोंही करती रहै इति नामकर्मकी १०३ प्रकृति है।

(७) गोत्रकर्म—कुंभकार जेसे घट बनाते है उसमें उच्च पदार्थ घतादि और निच पदार्थ मदीरा भी भरे जाते है इसी माफीक जीव अष्ट मदादि करनेसे निच गोत्र तथा अमदसे उच्च गोत्रादि प्राप्त करते है जीसकि दो प्रकृति है उच्चगोत्र, निचगोत्र जिस्में इक्ष्वाकुवंस हरिवंस चन्द्रवंसादि जिस कुलके अन्दर धर्म और नीतिका रक्षण कर चीरकालसे प्रसिद्धि प्राप्ति करी हों उच्चकार्य कर्तव्य करनेवालोंको उच्च गोत्र कहते है और इन्होंसे विप्रीत हो उसे निचगोत्र कहते है।

(८) अन्तरायकर्म—जैसे राजाका खजानची-अगर राजा हुकमभी कर दीया हो तोंभी वह खजानची इनाम देनेमें विलम्ब करसक्ता है इसी माफीक अन्तराय कर्मोदय दानादि कर नहीं सक्ते है तथा वीर्य-पुरुषार्थ कर नहीं सके जीसकि पांच प्रकृति है (१) दानअंतराय—जेसे देनेकि वस्तुवों मोजुद हो दान लेनेवाला उत्तम गुणवान पात्र मोजुद हो दानके फलोंको जानता

हो, परन्तु दान देनेमे उत्साह न रहे यह दानातराय कर्मका उदय है

दातार उदार हो दानकी चीजों मौजुद हो आप याचना करनेमें कुशल हो परन्तु लाभ न हो तथा अनेक प्रकारके व्यापारादिमें प्रयत्न करनेपरभी लाभ न हो उसे लाभान्तराय कहते है।

भोगवने योग्य पदार्थ मौजुद है उन पदार्थोंसे वैराग्यभाव भी नही है न नफरत आति है परन्तु भोगान्तराय कर्मादयमे कीसी कारणमे भोगव नहीं सके उसे भोगान्तराय कहते है जो वस्त्र एक दफे भोगमें आति हो अमानादि।

उपभोगान्तराय-जो स्त्रि वस्त्र भूषणादि वारवार भोगनेमें आवे एसी सामग्री मोजुद हो तथा त्यागवृत्ति भी नही तथापि उपभोगमें नहीं ली जावे उसे उपाभोगान्तराय कहत है।

वीर्यान्तराय-रोग रहीत शरीर बलवान सामर्थ्य होनेपरभी कुच्छभी कार्य न कर सके अर्थात् वीर्य अन्तराय कर्मादयसे पुरुषार्थ करनेमें वीय फोरनेमें कायरोंकी माफीक उत्साह रहित हाते है उठना बेठना हलना चलना बोलना लिखना पढना आदि कार्य करनेमें असमथ हो यह पुरुषार्थ कर नही सकते है उसे वीर्य अन्तरायकर्म कहते है इन आठों कर्मोंकी १५८ प्रकृतिको कठस्य कर फीर आगेके थोकडेमें कर्मबन्धनेका कर्म तोडनेके हेतु लिखेंगे उसपर ध्यान दे कर्मबन्धके कारणोंको छोडनेका प्रयत्न कर पुराणे कर्मोंका क्षय कर मोक्षपद प्राप्त करना चाहिये इति।

सेवभते सेवभते तमेवसच्चम्

थोकडा नम्बर ४२

(कर्मोंके बन्धहेतु)

कर्मबन्धके मूलहेतु चार है यथा-मिथ्यात्व (५) अवृति (१२) कषाय (२५) योग (१५) एवं उत्तर हेतु ५६ जिसद्वारा कर्मोंके दल एकत्र हो आत्मप्रदेशोंपर बन्धन होते हैं यह विशेष पक्ष है परन्तु यहापर सामान्य कर्मबन्धहेतु लिखते है। जेसे ज्ञानावर्णिय कर्म बन्धके कारण इस माफीक है

ज्ञान या ज्ञानवान् व्यक्तियोंसे प्रतिकूळ आचरणा या उनोंसे वैर भाव रखना। जीसके पास ज्ञान पढा हो उनका नाम को गुप्त रख दुसरोंका नाम कहना या जो विषय आप जानता हो उनको गुप्त रख कहनाकि मैं इस बातको नहि जानता हूं। ज्ञानीयोंका तथा ज्ञान ओर ज्ञानके साधन पुस्तक विद्या-मन्दिर पाटी पोथी ठवणी कम्मादिका जलसे या अग्निसे नष्ट करना या उसे विक्रय कर अपने उपभोगमें लेना। ज्ञानीयोंपर तथा ज्ञानसाधन पुस्तकादिपर प्रेम स्नेह न करके अरुची रखना। विद्यार्थीयोंके विद्याभ्यासमें विघ्न पहुचाना जैसे कि विद्यार्थीयोंके भोजन वस्त्र स्थानादिका उनको लाभ होता हो तो उसे अंतराय करना या विद्याध्ययन करते हुवों को छोडा के अन्य कार्य करवाना। ज्ञानीयोंकि आशातना करना करवाना जैसे कि यह अध्यापक निच कूलके है या उनोंके मर्म की बात प्रकाश करना ज्ञानीयोंको मरणान्त कष्ट हो एसे जाल रचना निंदा करना इत्यादि। इसी माफीक निषेध द्रव्य क्षेत्र काल भावमें पढना पढानेवाले गुरुका विनय न करना जुटा हाथोंसे तथा अंगुलीके थुक लगाके पुस्तकांके पत्रोंको उल्टना ज्ञानके साधन पुस्तकादिके पैरोंसे हटाना

पुस्तकोंसे तकीयेका काम लेना। पुस्तकों को भंडारमें पडे पडे सडने देना किन्तु उनोंका सदुउपयाग न होने देना उदरपोषणके लोभसे रखकर पुस्तके वेचना इनोंके सिवाय भी ज्ञान द्रव्यकि आमंदनी ताडना ज्ञानद्रव्यका भक्षण करना इत्यादि कारणोंसे ज्ञानावर्णीय कर्मका बन्ध होता है अगर उत्कृष्ट बन्ध हो तो तीस कोडाकोड सागरोपम के कर्म बन्ध होनेसे इतनेकाल तक यीसी कीस्मका ज्ञान हो नहीं सक्ते है वास्ते मोक्षार्थी जोवोंको ज्ञान आशातना टालके ज्ञानकी भक्ति करना-पढनेवालोंको साहिता देना पढनेवालोंको साधन वस्त्र भाजन स्थान पुस्तकादि देना।

(२) दर्शना वरणीय कर्मबन्धका हेतु-दर्शनी साधु भगवान् तथा जिनमन्दिर जैनमूर्ति जैन सिद्धान्त यह सब दर्शनके कारण है इनोंकी अभक्ति आशातना अवज्ञा करना तथा साधन इन्द्रियों का अनिष्ट करना इत्यादि जसे ज्ञानविणिय कर्म बन्धके हेतु कहा है इसी माफीक स्वरूप ही दर्शनावर्णियकर्मका भी समझना। बन्ध और मोक्षमें मुख्य कारण आत्मा के परिणाम है वास्ते ज्ञान और ज्ञानसाधना तथा दर्शनी (साधु) और दर्शन साधनाके सन्मुख अप्रीती अभक्ति आशातना दीखलाना यह कर्मबन्धके हेतु है वास्ते यह बन्धहेतु छोडके आत्माके अन्दर अनंत ज्ञानदर्शन भरा हुवा है उनको प्रगट करनेका हेतु है उनोंसे प्रेमस्नेह और अन्तमें रागद्वेषका क्षयकर अपनि निज वस्तुवोंके प्राप्त कर लेना यहही विद्वानोंका काम है

(३) वेदनियकर्म दो प्रकारसे बन्धता है (१) सातावेदनिय (२) असातावेदनिय—जिस्मे सातावेदनियकर्मबन्धके हेतु जैसे गुरुओंकी सेवा भक्ति करना अपनेसे जो श्रेष्ट है वह गुरु जैसे माता पिता धर्माचार्य विद्याचार्य कलाचार्य जेष्ट भ्रातादि क्षमा करना याने अपनेमे बदला लेनेकी सामर्थ्य होनेपर भी

अपने साथ बुरा बरताव करनेवालेका सहन करना। दया—दीन दुखीयोंके दुःख दूर करनेकि कोसीस करना। अनुव्रतोंके तथा महा व्रतोंका पालन करना अच्छा सुयोगध्यान मौन ओर दश प्रकार साधु समाचारीका पालन करना कषायोंपर विजय प्राप्त करना—अर्थात् क्रोध मान माया लोभ राग द्वेष ईर्षा आदिके वेगोंसे अपनि आत्माको बचाना—दान करना-सुपात्रोंको आहार वस्त्रादिका दान करना—रोगीयोंके औषधि देना जो जीव भयसे व्याकुल हो रहे है उने भयसे छुडाना विद्यार्थीओंके पुस्तकें तथा विद्याका दान करना अन्य दानसे भी बढके विद्यादान है। कारण अन्नसे क्षणमात्र तृप्ती होती है। परन्तु विद्यादानसे चीरकाल तक सुखी होता है—धर्ममे अपनि आत्माको स्थिर रखना बाल वृद्ध तपस्वी और आचार्यादिकि वैयावच करना इत्यादि यह सब सातावेदनिय बन्धका हेतु है। इन कारणोंसे विप्रीत बरताव करनेसे असातावेदनिय कर्मको बन्धे है जैसेकि गुरुवोंका अनादर करे अपने उपर कीये हुवे उपकारोंका बदला न देवे उल्टा अपकार करे क्रूर प्रणाम निर्दय अविनय क्रोधी व्रत खंडित करना कृपण सामग्री पावें भी दान न करे धर्मके बारेमे बेपरवा रखे हस्ती अश्व बेहेलों पर अधिक बोजा डालने वाला अपने आपको तथा औरोंको शोक संतापमें डालनेवाला इत्यादि हेतुवोंसे असातावेदनिय कर्मका बन्ध होता है।

(४) मोहनियकर्मबन्धके हेतु—मोहनियकर्मका दो भेद है (१) दर्शनमोहनिय (२) चारित्रमोहनिय जिसमें दर्शन मोहनीयकर्म जैसे—उन्मार्गका उपदेश करना जिनकृत्योंसे संसारकि वृद्धि होती है उनकृत्योंके विषयोंमें इस प्रकारका उपदेश करना कि यह मोक्षके हेतु है जैसेकि देवी देवोंके सामने पशुवोंकी हिंसा करनेसे पुन्यकार्य मानना। एकान्त ज्ञान या

क्रियासे ही मोक्षमार्ग मानना मोक्षमार्गका अल्पा करना याने नास्ति है इस लोक परलोक पुन्य पाप आदिकी नास्ति करना खाना पीना येस आराम भोग विलास करनेका उपदेश करना इत्यादि उपदेश दे भद्रीक जीवोंको सन्मार्गसे पतितकर उन्मार्ग के सन्मुख करवा देना जिनेन्द्रभगवानकी या भगवानके मूर्तिकि तथा चतुर्विध संघकि निंदा करने समवसरण—छत्र चामरादिका उपभोग करनेवालेमे वीतरागता हो ही न सके इत्यादि कहना—जिनप्रतिमाकी निंदा करना पूजा प्रभावना भक्ति हानि पहुंचना सूत्र सिद्धान्त गुरु या पूर्वाचार्योंकी तथा महान ज्ञानसमुद्र जैसे ग्रन्थोंकी निंदा करना यह सर्व दर्शन मोहनियकर्म बन्धके हेतु है जिनोंसे अनंतकाल तक वीतरागका धर्म मोक्षभी असंभव हो जाता है।

चारित्र मोहनिय कर्म बन्धके हेतु—जैसे चारित्रपर अभाव लाना चारित्रवन्त कि निंदा करना मुनि के मल-मलीन गात्र वस्त्र देख दुगच्छा करना कषाय अध्यावसाय रखना व्रत करके खंडन करना विषय भोगो कि अभिलाषा करना यह सब चारित्र मोहनीयकर्म बन्धका हेतु है जिस चारित्र मोहनियका दो भेद है (१) कषाय चारित्र मोहनिय (२) नोकषाय चारित्र मोहनीय-जिस्मे कषाय चारित्र मोहनिय जैसे अनन्तानुबन्धी क्रोध मान माया लोभ करनेसे अनन्तानुबन्धी आदिका बन्ध एवं अप्रत्याख्यानी—प्रत्याख्यानी और संज्वलन इनोंके करनेसे कषाय चारित्र मोहनीय कर्मबन्धता हैं तथा भांड जैसी कुचेष्टा करना हाँसी करना कतूहल करना दुसरोंकी हाँसी विस्मय कराना इत्यादि इनोंसे हास्य मोहनिय कर्मबन्ध होता है। आरंभमें खुशी माननेवाला, मेला खेला देखनेवाला चक्षुलोलुपी देशदेशोंके नया नया नाटक देखना चित्रचित्रामादि खींचना प्रेमसे दुसरोंके

मन अपने के आधिन करना इत्यादिसे रति मोहनिय कर्म ब न्धता है। ईर्षालु-पापाचरणा-दुसरोंके सुखमें विघ्न करनेवाले बुरे धर्ममें दूसरेको उत्साही बनानेवाला भयमादि अच्छा का येमें उत्साह रहित इत्यादि हेतुओंमें अरति मोहनिय कर्मबन्ध होते है। खुद डरे औरोंको डरावे त्रास देनेवाला दया रहित मायावी पापाचारी इत्यादि भयमोहनिय कर्मबन्ध करता है। खुद शोक करे दुसराका शोक करावे चिंता देनेवाला विश्वास घात स्वामिद्रोही दुष्टता करनेवाला—शाकमोहनियकर्म बन्धता है। सदाचारकि निंदा करे चतुर्विध सघकि निंदा करे जिन प्रतिमाकि निंदा करनेवाला जीव जुगप्सा मोहनिय कर्म बन्धता है। विषयाभिलाषी परस्त्रि लपट दुचेष्टा करनेवाला हावभावसे दुसरोंसे ब्रह्मचर्यसे भृष्ट करनेवाला जीव स्त्रिवेद बन्धता है। सरल स्वभावी-स्वदारा संतोषी सदाचारवाला मद विषयवाला जीव पुरुषवेद बन्धता है। सतीयोंका शील खंडन करनेवाला तीव्र विषयाभिलापी कामक्रीडामें आसक्त स्त्रि-पुरुषोंके कामकि पुरण अभिलाषा करनेवाला नपुंसक वेद मोहनियकर्म बन्धता है इन सब कारणोंसे जीव मोहनीयकर्म उपार्जन करता है।

(५) आयुष्य कर्मबन्धके कारण—जैसे रौद्र प्रणामी महा रंभ महा परिग्रह पांचेन्द्रियका घाती मांसाहारी परदारागमन विश्वासघाती, स्वामिद्रोही इत्यादि कारणोंसे जीव नरकका आयुष्य बान्धता है। मायावृत्ति करना गुढ माया करना कुडा तोल माप जूटे लेख लिखना जूटी साख देना परजीवोंको तक लीफ पहुचाना दुसरेका धन छीन लेना इत्यादि कारणोंसे जीव तीर्यंचका आयुष्य बान्धता है। प्रकृतिका भद्रीक होना विनयवान् होना-स्वभावसेही जिनोंका क्रोध मान माया लोभ पतला हो दुसरोंकि संपत्ति देख इर्ष्या न करे भद्रीक दयावान् कोमलता

गाभीय मर्व अमसे मिति गुणानुरागा उदार परिणामि इत्यादि कारणोंसे जीव मनुष्यका आयुष्य बन्धता है। सराग संयम संयमासंयम अकाम निर्जरा बाल तपस्वी देवगुरु मातापिता दिका विनय भक्ति कर देव पूजन सत्यका पक्ष गुणोंका रागी निष्कपटी सतोषी ब्रह्मचर्य व्रत पालन अनुकम्पा सहित श्रमणोपासक शास्त्ररागी भोग त्यागी इत्यादि कारणोंसे जीव देवायुष्य बन्धता है।

(६) नामकर्मकि दो प्रकृति है (१) शुभनामकर्म (२) अशुभ नामकर्म जिस्मे सरल स्वभावी माया रहित मन वचन काया ये चार जिस्का एकसा हो वह जीव शुभनामकर्म बन्धता है गौवरहित याने ऋद्धिगौव रसगौव सातागौव इन तीनों गौवसे रहित होना पापसे डरनेवाला क्षमाशान्त मार्दवादि गुणोंसे युक्त परमेश्वरकि भक्ति गुरु वन्दन तत्त्वज्ञ राग द्वेष पतले गुणग्राही हो। एसे जीव शुभ नामकर्म उपार्जन कर सकते है। दुसरा अशुभ नामकर्म-जैसे मायावी जिनाके मन वचन कायाकि आचारणा में और बतलाने मे भेद है। दुसरों क ठगनेवाले जूटी गवाही देनेवाले। घृत में चरबी दुद्ध में पाणी या अच्छी वस्तु में बुरी वस्तु मीला क वेचने वाले। अपनि तारीफ और दुसरोंकी निंदा करनेवाले वैश्याओं क वस्त्रालंकार दे दुसरे को ब्रह्मव्रत स पतित बनानेवाले इत्यादि देवद्रव्य ज्ञानद्रव्य साधारणद्रव्य खानेवाल विश्वासघात करने वाले इत्यादि कारणों स जीव अशुभ नामकर्म उपार्जन कर संसार मे परिभ्रमन करते है

(७) गौत्रकर्म कि दो प्रकृति है (१) उच्चगौत्र २) निचगौत्र-जिस्मे किसी व्यक्ति म दोषों के रहते हुये भी उसको विषय में उदासीन सिर्फ गुणों को ही देखनेवाले है। आठ प्रकार के मदों स रहित अर्थात् जातिमद, कुलमद, बलमद, चोथो रुपमद, श्रुत-

मद ऐश्वर्यमद लाभमद तपमद इन मदों का त्याग करे अर्थात् यह आठों प्रकार के मद न करे। हमेशा पठन पाठन में जिनका अनुराग है देवगुरु की भक्ति करनेवाला हो दुःखी जीवों को देख अनुकम्पा करनेवाला हो इत्यादि गुणोंसे जीव उच्चगोत्र का बन्ध करता है और इन कृत्यों से विपरीत वरताव करने से जीव निच गौत्र बन्धता है अर्थात् जिनमे गुणदृष्टि न होकर दोषदृष्टि है जाति कुलादि आठ प्रकार के मद करे पठन पाठन में प्रमाद आलस्य-घृणा होती है आशातना का करनेवाला है एसे जीव निचगोत्र उपार्जन करते है

(८) अंतराय कर्म के बन्ध हेतु-जो जीव जिनेन्द्र भगवान् कि पूजा में विघ्न करते हो-जैसे जल पुष्प अग्नि फल आदि चढाने मे हिंस्या होती है वास्ते पूजा न करना ही अच्छा है तथा हिंस्या झूट चौरी मैथुन रात्रीभोजन करनेवाले ममत्वभाव रखनेवाले हो तथा सम्यक् ज्ञानदर्शन चारित्ररूप मोक्षमार्ग में दोष दिखलाकर भद्रीक जीवों को सद्मार्ग से भ्रष्ट बनानेवाले हो दुसरों को दान लाभ-भोग उपभोग में विघ्न करनेवाले हो। मंत्र यंत्र तंत्र द्वारा दुसरों कि शक्ति को हरन करनेवाले हो इत्यादि कारणों से जीव अंतराय कर्म उपार्जन करते हैं

उपर लिखे माफीक आठ कर्मों के बन्ध हेतु के सम्यक् प्रकारे समज के सदैव इन कारणों से बचते रहना और पूर्व उपार्जन कीये हुये कर्मों को तप जप संयम ज्ञान ध्यान सामायिक प्रभावना आदि कर हटा के मोक्ष की प्राप्ति करना चाहिये।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्

—*—

थोकडा नम्बर ४३

(कर्म प्रकृति विषय)

ज्ञानगुण दर्शनगुण चारित्रगुण और वीर्यगुण यह च्यार चैतन्य के मूल गुण है जिस्को कोनसी कर्म प्रकृति चैतन्य के सर्व गुणों कि घातक है और कोनसी कर्म प्रकृति देश गुणों कि घातक है वह इस थोकडा द्वारा बतलाते है।

कैवल्यज्ञानावर्णिय कैवल्य दर्शनावर्णिय मिथ्यात्व मोह निय निद्रा, निद्रा निद्रा, प्रचलानिद्रा, प्रचलाप्रचलानिद्रा, स्त्याnर्द्धि निद्रा अनंतानुबन्धी क्रोध मान-माया-लोभ अप्रत्याख्यानि क्रोध-मान-माया-लोभ प्रत्याख्यानि क्रोध-मान-माया-लोभ एव २० प्रकृति सर्व घाती है।

मतिज्ञानावर्णिय श्रुतिज्ञानावर्णिय अवधिज्ञानावर्णिय मन पर्यवज्ञानावर्णिय-चक्षुदर्शनावर्णिय अचक्षुदर्शनावर्णिय अवधि दर्शनावर्णिय सज्वलनका क्रोध-मान माया लोभ-हास्य भय शोक जुगप्सा रति अरति स्त्रिवेद पुरुषवेद नपुंसकवेद दानान्त राय लाभान्तराय भोगान्तराय उपभोगान्तराय वीर्यान्तराय एव २५ प्रकृति देशघाती है तथा मिश्रमोहनिय सम्यक्त्वमोहनिय यह दो प्रकृति भी देशघाती है।

शेष प्रत्येक प्रकृति आठ, शरीरपांच, अंगोपांगतीन, संहनन छे, संस्थान छे, गतिच्यार, जातिपांच, विहायोगति दो, अनुपूर्वी आयुष्यच्यार त्रसकिदश स्थावरकिदश, वर्णादिच्यार, गौत्रकि २ प्रकृति एव ७३ प्रकृति अघाती है।

थोकडा नम्बर ४१ मे आठ कर्मो कि १५८ प्रकृति है जिस्मे

१३२ प्रकृतियोंका उदय ममुशय होते है जिस्मे २० प्रकृति सर्व घाती है २७ प्रकृति देशघाती है ७३ प्रकृति अघाती है इस्कों ऽथर्मे लेखे उदय प्रकृतिओं समझना चाहिये।

उदय प्रकृति १२२का विपाक अलग २ कहते है।

(१) क्षेत्र विपाकी च्यार प्रकृति है जोकि जीव परभव गमन करते समय विग्रह गतिमें उदय होती है जिस्के नाम नर-कानुपूर्वि तीर्यचानुपूर्वी मनुष्यानुपूर्वी और देवानुपूर्वी।

(२) जीव विपाकी जिस प्रकृतियोंके उदयसे विपाकरस जीवकों अधिकाश भोगवते समय दु:ख सुख होते है। यथा—ज्ञाना वर्णिय पाच प्रकृति दर्शनावर्णिय नौप्रकृति मोहनिय अठा वीस प्रकृति अन्तरायकि पाच प्रकृति गौत्र कर्मकि दो प्रकृति वदनिय कर्मकि दो प्रकृति-सातावेदनिय—असातावेदनिय तीर्थंकर नामकम त्रसनाम बादरनाम पर्यातानाम स्थावरनाम सूक्ष्मनाम अपर्यातानाम सौभाग्यनाम दुर्भाग्यनाम सुस्वरनाम दुःस्वरनाम आदेयनाम अनादेयनाम यश कीर्तिनाम अयश की तिनाम उश्वासनाम एकन्द्रिय जातिनाम बेइन्द्रय जातिनाम तेइन्द्रिय० चौरिन्द्रय पाचेन्द्रिय० नरकगतिनाम तीर्यचगतिनाम मनुष्य गतिनाम देवगतिनाम सुविहागतिनाम असुविहागति नाम एवं ७८ प्रकृति जीवविपाकी है।

(३) भवविपाक जैसे नरकायुष्य तीर्यचायुष्य मनुष्यायुष्य और देवायुष्य एवं च्यार प्रकृति भवप्रत्यय उदय होती है।

(४) पुद्गलविपाकी प्रकृतियों। यथा-निर्माण नाम स्थिर नाम अस्थिर नाम शुभनाम अशुभ नाम वर्णनाम गन्धनाम रसनाम स्पर्शनाम अगारु लघु नाम औदारीक शरीर नाम वैक्रयशरीर नाम आहारीक शरीर नाम तेजस शरीर नाम कारमण

शरीर नाम तीन शरीरके आगोपाग नाम छ संहनन छे संस्थान उपघात नाम साधारण नाम प्रत्येक नाम उद्योत नाम आताप नाम पराघात नाम एव ३६ प्रकृतिया पुद्गल विपाकी है एवं ४-७८-४-३६ कुध १२२ प्र० उदय।

परावर्तन प्रकृतियों-एक दुसरे के बदलमे बन्ध सके-यथा शरीरतीन आगोपागतीन संहनन छे संस्थान छ जातिपाच गति च्यार विहायगतिदो अनुपूर्वीचार वेदनीन दोयुगलके च्यार कषाय यशोला उद्योत आताप उच्चगौत्र निचगौत्र वेदनिय-साता-असाता निद्रापाच त्रसकीदश स्थावरकीदश नरकायुष्य तीर्यचायुष्य मनुष्यायुष्य देवायुष्य एव ९१ प्रकृति परावर्तन है।

शेष ५७ प्रकृति अपरावर्तन याने जीसकी जगह वह ही प्रकृति बन्धती है उसे अपरावर्तन कहते है। शेष आगे चाथा कर्मग्रंथाधिकारे लिखा जायेगा

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

—⁂—

थोकडा नंबर ४४

(कर्म ग्रथ दूसरा)

मूल कर्म आठ है जिनकी उत्तर प्रकृति १४८× जिनके नाम थोकडा न० ४२ में लिख आये हैं वहा देख लेना उन १४८ प्रकृतियोंमें से बध, उदय, उदीरणा, और सत्ता किस ५ गुण स्थान में कितनी २ प्रकृतियाकी है सो लिखते है

(प्र) गुणस्थानक किसे कहते है ?

× श्री प्रज्ञापना सूत्रानुसार १४८ प्रकृति है और कर्मग्रन्थानुसार १ = परन्तु दोनु मतानुसार बन्ध प्रकृति १२० है वह ही अभिप्राय यह बतलावेंगे।

(उत्तर) जिस तरह शिव (मोक्ष) मंदिर पर चढने के लिये पावडिया (सीढी) है उसी तरह कर्म शत्रु को विदारने के लिये जीव के शुद्ध शुद्धतर शुद्धतम अध्यवसाय विशेष यद्यपि अध्यवसाय असंख्याते है परन्तु स्थूल याने व्यवहार नयसे १४ स्थान कहे है यथा मिथ्यात्व १ सास्वादन २ मिश्र ३ अविरति सम्यकदृष्टि ४ देशविरति ५ प्रमत्त संयत ६ अप्रमत्त संयत ७ निवृत्ति बादर ८ अनिवृत्ति बादर ९ सूक्ष्म संपराय १० उपशात मोह वीतराग ११ क्षीणमोह वीतराग छद्मस्थ १२ सयोगी केवली १३ और अयोगी केवली १४ यह चवदे गुणस्थानक है

पहिले बताई हुई १४८ प्रकृतियों में से वर्णादिक १६ पाच शरीरका बधन ५ सघातन ५ और मिश्र मोहनीय १ सम्यक्त्व मोहनीय १ एवम् २८ प्रकृति कम करनेसे शेष १२० प्रकृतिका समुचय बध है ।

(१) मिथ्यात्व गुणस्थानक में १२० प्रकृतियोंमे से तीर्थंकर नामकर्म १ आहारक शरीर २ आहारक अगोपाग ३ तीन प्रकृतियोंका बध विच्छेद होनेसे बाकी ११७ प्रकृतियोंका बध है

(२) सास्वादन गुणस्थानक मे नरक गति १ नरकायुष्य २ नरकानुपूर्वी ३ एकेन्द्रि ४ बेइन्द्री ५ तेइन्द्री ६ चौरिन्द्री ७ स्थावर ८ सूक्ष्म ९ साधारण १० अपर्याप्ता ११ हुडक सस्थान १२ आतप १३ छेवटु सघयण १४ नपुसक वेद १५ मिथ्यात्व मोहनीय १६ ये सोला प्रकृति का बंध विच्छेद होनेसे १०१ प्रकृति का बध है

(३) मिश्र गुणस्थानकमें पूर्वकी १०१ प्रकृति में से त्रियँचगति १ त्रियँचायुष्य २ त्रियँचानुपूर्वी ३ निद्रा निद्रा ४ प्रचला प्रचला ५ थीणद्धी ६ दुर्भाग्य ७ दुस्वर ८ अनादेय ९ अनतानुबन्धी क्रोध १० मान ११ माया १२ लोभ १३

ऋषभ नाराच संघयण १४ नाराचसंघयण १५ अर्द्ध नाराच स० १६ कीलिका स० १७ न्यग्रोध संस्थान १८ सादि संस्थान १९ वामन स० २० कुब्ज सं० २१ नीचगोत्र २२ उद्योत नाम २३ अशुभविहायोगति २४ स्त्री वेद २५ मनुष्यायु २६ देवायु २७ सत्ताईस प्रकृति छाडकर शेष ७४ का बंध होय

(४) अविरति सम्यग्दृष्टि गुणस्थानक में मनुष्यायुष्य १ देवायुष्य २ तीर्थंकर नाम कर्म ३ यह तीन प्रकृतियोंका बंध विशेष करे इस वास्ते ७७ प्रकृति का बंध होय

(५) देशविरति गुणस्थानक पूर्व ७७ प्रकृति कही उसमें से वज्रऋषभनाराचसंघयण १ मनुष्यायु २ मनुष्यजाति ३ मनुष्यानुपूर्वी ४ अप्रत्याख्यानी क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोभ ८ औदारिक शरीर ९ औदारिक अंगोपांग १० इन दश प्रकृतियों का अबंधक होने से शेष ६७ प्रकृति बांधे

(६) प्रमत्त संयत गुणस्थानक में प्रत्याख्यानी क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ का विच्छेद होनेसे शेष ६३ प्रकृति बांधे

(७) अप्रमत्त संयत गुणस्थानक में ५९ प्रकृतिका बंध है पूर्व ६३ प्रकृति कही जिसमेंसे शोक १ अरति २ अस्थिर ३ अशुभ ४ अयश ५ असाता वेदनीय ६ इन छे प्रकृतियोंका बंध विच्छेद करें और आहारक शरीर १ आहारक अंगोपांग २ विशेष बांधे एवम् ५९ प्रकृतिका बंध करे अगर देवायुष्य न बांधे तो ५८ प्रकृतिका बंध क्योंकि देवायुष्य छठ्ठे गुणस्थानकसे बांधता हुवा यहां आवे परन्तु सातवें गुणस्थानकसे आयुष्यका बंध शुरू न करे

(८) निवृत्ति बादर गुणस्थानक का सात भाग है जिसमें पहिले भागमें पूर्ववत् ५८ का बंध दूजे भागमें निद्रा १ प्रचला २ का बंध विच्छेद होनेसे ५६ का बंध हो एवम् तीज, चौथे, पांचवे और

छठे भाग में भी ५६ प्रकृतिका बंध है सातवें भागमें देवगति १ देवानुपूर्वी २ पचेन्द्री जाति ३ शुभविहायोगति ४ त्रसनाम ५ बादर ६ पर्याप्ता ७ प्रत्येक ८ स्थिर ९ शुभ १० सौभाग्य ११ सु स्वर १२ आदेय १३ वैक्रिय शरीर १४ आहारक शरीर १५ तेजस शरीर १६ कार्मण शरीर १७ वैक्रिय अंगोपांग १८ आहारक अंगोपांग १९ समचतु स्र संस्थान २० निर्माण नाम २१ जिन नाम २२ वरण २३ गंध २४ रस २५ स्पर्श २६ अगुरुलघु २७ उपघात २८ पराघात २९ और उश्वास ३० एवम् तीस प्रकृति का बंध विच्छेद होने से बाकी २६ प्रकृति बांधे

(९) अनिवृत्ति गुणस्थानक का पांच भाग है पहिले भाग में पूर्ववत् २६ प्रकृतिमेंसे हास्य १ रति २ भय ३ जुगुप्सा ४ ये चार प्रकृतिका बंध विच्छेद होकर बाकी २२ प्रकृति बांधे दूसरे भाग मे पुरुषवेद छोडकर शेष २१ बांधे तीजे भाग में सज्वलन का क्रोध १ चौथे भाग में सज्वलन का मान २ और पांचवे भाग मे सज्वलनकी माया ३ का बंध विच्छेद होने से १८ प्रकृति का बंध होता है

(१०) सूक्षम सम्पराय गुणस्थानक में सज्वलन के लोभका अबंधक है इसवास्ते १७ प्रकृतिका बंध होय

(११) उपशांत मोह गुणस्थानक में १ शाता वेदनीय का बंध है शेष ज्ञानावरणीय ५ दर्शनावरणीय ४ अंतराय ५ उच्चै गोत्र १ यश किर्ति १ इन १६ प्रकृतिका बंध विच्छेद हो

(१२) क्षीणमोह गुणस्थानक में १ शाता वेदनीय बांधे

(१३) सयोगी केवली गुणस्थानकमें १ शाता वेदनीय बांधे

(१४) अयोगी गुणस्थानक में (अबंधक) बंध नहीं

इति बंध समाप्त सेवंभते सेवंभते तमेव सच्चम्

थोकडा न ४५

(उदय)

समुचय १४८ प्रकृति में से १२२ प्रकृति का और उदय है बधकी १२० प्रकृति कही उसमें स समकित मोहनीय १ मिश्रमो हनीय २ ये दो प्रकृति उदयमें ज्यादा है क्योंकि इन दो प्रकृतियों का बध नहीं होता परन्तु उदय है।

(१) मिथ्यात्व गुणस्थानक में ११७ का उदय होय क्योंकि सम्यक्त्व मोहनीय १ मिश्रमोहनीय २ जिन नाम ३ आहारक शरीर ४ आहारक अगोपाग ५ ये पांच का उदय नहीं है

(२) सास्वादनगुण० ११२ प्र० का उदय है मिथ्यात्व में ११७ का उदय था उसमें से सूक्ष्म १ साधारण २ अपर्याप्ता ३ आताप ४ मिथ्यात्व मोहनीय ५ और नरकानुपूर्वी ६ इन छ प्रकृतियोंका उदय विच्छेद हुवा

(३) मिश्रगुण० में १०० प्रकृतिका उदय होय क्योंकि अनंतानुबन्धी चौक ४ एकेंद्री ५ विकलेन्द्री ८ स्थावर ९ तिर्यंचा नुपूर्वी १० मनुष्यानुपूर्वी ११ देवानुपूर्वी १२ इन बारे प्रकृतियोंका उदय विच्छेद होने से शेष ९९ प्रकृति रही परन्तु मिश्रमोहनीय का उदय होय इस वास्ते १०० प्रकृतिका उदय कहा।

(४) अविरती सम्यक्दृष्टी गुण० मे १०४ का उदय होय- क्योंकि मनुष्यानुपूर्वी १ तिर्यचानुपूर्वी २ देवानुपूर्वी ३ नरकानु पूर्वी ४ और सम्यक्त्व मोहनीय ५ इन पांच प्रकृतिका उदय विशेष होय और मिश्रमोहनीय का उदय विच्छेद होय इन वास्ते १०४ प्रकृतिका उदय कहा

(५) देशविरति गुण० मे ८७ प्रकृतिका उदय होय क्यों

कि प्रत्याख्यानी चौक ४ त्रियचानुपूर्वी ५ मनुष्यानुपूर्वी ६ नरक गति ७ नरकायुष्य ८ नरकानुपूर्वी ९ देवगति १० देवायुष्य ११ देवानुपूर्वी १२ वैक्रिय शरीर १३ वैक्रिय अगोपाग १४ दुर्भाग्य १५ अनादेय १६ अयश १७ इन सतरे प्रकतिया का उदय नहीं होता

(६) प्रमात्त सयतगुण० मे प्रत्याख्यानी चौक ४ त्रियचगति ५ त्रियचायुष्य ६ निचगोत्र ७ यह आठ का उदय विच्छेद होने से शेष ७९ प्रकृति रही आहारक शरीर १ आहारक अगोपाग २ इन दो प्रकृतिका उदय विशेष होय इस वास्ते ८१ प्रकृतिका उदय होय

(७) अप्रमत्त सयत गुण० मे थीणद्धी त्रिक ३ आहारक द्विक २ इन पाचका उदय न होय शेष ७६ प्रकृति का उदय होय

(८) नियृति बादर गुण० मे सम्यक्त्व मोहनीय १ अर्द्ध नाराच स० २ कीलिका स० ३ छेवट्टु स० ४ इन चार को छोडकर शेष ७२ प्रकृति का उदय होय

(९) अनियृति बादर गु० में हास्य १ रति २ अरति ३ शोक ४ जुगुप्सा ५ भय ६ इनका उदय विच्छेद होने से शेष ६६ प्रकृति का उदय होय

(१०) सूक्ष्म सपराय गुण० में पुरुषवेद १ स्त्रीवेद २ नपुसक वेद ३ संज्वलना क्रोध ४ मान ५ माया ६ इन छ का उदय वि च्छेद होने से बाकी ६० प्रकृति का उदय होय

(११) उपशात मोह गुण० में सज्वलन लोभ का उदय विच्छेद हो बाकी ५९ का दय हो

(१२) क्षीण मोह गुण० के दो भाग हैं पहिले भाग मे ऋषभ नाराच और नाराच सघयण तथा दूसरे भाग मे निद्रा

और निद्रा निद्रा एवम् ४ प्रकृति का उदय विच्छेद होने से शेष ८५ का उदय होय

(१३) सयोगी केवली गुण० म ज्ञानावरणीय ५ दर्शनावरणीय ४ अन्तराय ५ एवम् १४ प्रकृति का उदय विच्छेद होने से ४१ प्रकृति और तिर्थंकर नाम कर्म को मिलाकर ४२ प्रकृति का उदय होय

(१४) अयोगी गुण० मे १२ प्रकृति का उदय होय मनुष्य गति १ मनुष्यायु २ पंचेन्द्री ३ सौभाग्य नाम कर्म ४ त्रस ५ बादर ६ पर्याप्ता ७ उच्चैगौत्र ८ आदेय ९ यशकीर्ति १० तिर्थंकर नाम ११ वेदनी १२ ये बारे प्रकृतियों का उदय चरम समय विच्छेद होय ॥ इति उदयद्वार समाप्तम ॥

अथ उदीरणा अधिकार कहेते हैं पहिले गुण स्थानक से छट्ठे गुण स्थानक तक जैसे उदय कहा वैसे ही उदीरणा भी करनी और सात मे गुण स्थानक से तरमें गुण स्थानक तक जो ? उदय प्रकृति कही है उसमें से शाता वेदनीय १ अशाता वेदनीय २ और मनुष्यायु ३ ये तीन प्रकृति कम करये शेष प्रकृति रहे सो हरेक जगह कहना चौदमें गुण स्थानकमें उदीरणा नहीं

॥ इति उदीरणा समाप्तम् ॥

थोकडा न २६

(सत्ता अधिकार)

(१) मिथ्यात्व गुण० म १४८ प्रकृति की सत्ता

(२) सास्वादन गुण० मे जिन नाम कर्म छोडकर १४७ प्रकृतिकी सत्ता रहती है

(३) मिश्र गुण० में पूर्ववत् १४७ प्र० की सत्ता होय

चौथे अविरति सम्यक्दृष्टि गु० से ११ वे उपशांत मोह गु० तक सभय सत्ता १४८ प्रकृति की हैं परन्तु आठवें गु० से ११ वें गु० तक उपशम श्रेणी करनेवाला अनतानुबंधी ४ नरकायु ५ त्रियचायु ६ इन छै प्रकृतियों की विशयोजना करे इस वास्ते १४२ प्रकृति का सत्ता होय

क्षायक सम्यक्दृष्टिअचरम सरीरी चौथे से सातवें गु० तक अनतानुबधी ४ सम्यक्त्वमोहनीय ५ मिथ्यात्वमोहनीय ६ मिश्र मोहनीय ७ इन सात प्रकृतियों को खपावे शेष १४१ प्रकृति सत्ता में होय,

क्षायक सम्यक्दृष्टि चरम शरीरी क्षपक श्रेणी करनेवालों के चौथे से नवमें (अनिवृति) गु० के प्रथम भाग तक १३८ प्रकृति की सत्ता रहे क्योंकि पूर्व कही हुई सात प्रकृतियों के सिवाय नरकायु १ त्रियचाय २ देवायु ३ ये तीन भी सत्ता से विच्छेद करना से।

क्षयोपशम सम्यक्त्व में वर्तता हुआ चौथे से सातवे गुण० तक १४५ प्रकृति की सत्ता होय क्योंकि चरम शरीरी है इसलिये नरकायु १ त्रियचायु २ देवायु की सत्ता न रहे।

नवमें गुण० के दुसरे भागमें १२२ की सत्ता स्थावर १ सूक्ष्म २ त्रियच गति ३ त्रियचानुपूर्वी ४ नरकगति ५ नरकानुपूर्वी ६ आताप ७ उद्योत ८ थीणद्धी ९ निद्रा निद्रा १० प्रचला प्रचला ११ एकेन्द्री १२ बेइन्द्री १३ तेरिन्द्री १४ चौरिन्द्री १५ साधारण १६ इन सोले प्रकृतियों की सत्ता विच्छेद होय

नवमें गुण० के दुसरे भागमें ११४ प्रकृति की सत्ता प्रत्याख्यानी ४ और अप्रत्याख्यानी ४ इन ८ प्रकृति की सत्ता विच्छेद होय

नवमे गु० के चोथे भाग में ११३ प्रकृति की सत्ता नपुसकवेदका विच्छेद हो

नयमें गु० के पाचवें भाग मे ११२ प्र० की सत्ता स्त्रीवद का विच्छेद हो

नयमें गु० के छट्ठे भागमें १०६ प्र० की सत्ता हास्य १ रति २ अरति ३ शोक ४ भय ५ जुगुप्सा ६ इन प्रकृतियों का सत्ता विच्छेद होय

नयमें गु० के सातवे भाग में १०५ प्र० की सत्ता पुरुषवद निकला

नयमे गु० के आठवें भागमें १०४ प्र० की सत्ता संज्वलन का क्रोध निकला

नयमें गु० के नवमें भाग में १०३ प्र० की सत्ता संज्वलन का मान निकला

दशमें गु० १०२ की सत्ता हो यहा संज्वलन कि माया का विच्छेद हुआ

इग्यारमे गु० में १०१ की सत्ता हो यहा संज्वलन के लोभकी सत्ता विच्छेद हुइ

बारमें गुण० मे १०१ की सत्ता द्विचरम समयतक रहे हैं पीछे निद्रा १ प्रचला २ इन दो प्रकृतियों की क्षय करे चरम समय ९९ की सत्ता रहे।

तरमें गुणस्थानक में ८५ की सत्ता होय चक्षुदर्शनावर्णीय १ अचक्षुदर्शनावर्णीय २ अवधिदर्शनावर्णीय ३ केवलदर्शनावर्णीय ४ ज्ञानावर्णीय ५ अतराय ५ इन चौदे प्रकृति की विच्छेद हुइ

चौदमें गुण० में पहिले समय ८५ की सत्ता रहै पीछे देव गति १ देवानुपूर्वी २ शुभ विहायोगति ३ अशुभविहायोगति ४ गधद्विक ६ स्पर्श १४ वर्ण १९ रस २४ शरीर २९ बंधन ३४ संघातन ३९ निर्माण ४० संघयण ४६ अस्थिर ४७ अशुभ ४८ दु र्भाग्य

४९ दुस्वर ५० अनादेय ५१ अयश कीर्ति ५२ मस्थान ५८ अगुरू लघु ५९ उपघात ६० पराघात ६१ उश्वास ६२ अपर्याप्ता ६३ प्रत्येक ६४ प्रत्येक ६५ स्थिर ६६ शुभ ६७ औदारिक उपांग ६८ वैक्रिय उपांग ६९ आहारक उपांग ७० सुस्वर ७१ नीच्चैर्गोत्र ७२ इन बोहत्तर प्रकृतियों की सत्ता टलने से १३ की सत्ता रहै फिर मनुष्यानुपूर्वी के विच्छेद होने से १२ प्रकृति की सत्ता चरम समय होय इनको उसी समय क्षय करके सिद्ध गति को प्राप्त हो। बारह प्रकृतियों के नाम-मनुष्य गति १ मनुष्यायु २ त्रस ३ बादर ४ पर्याप्ती ५ यश कीर्ति ६ आदेय ७ सौभाग्य ८ तीर्थंकर ९ उच्चगोत्र १० पचेन्द्री ११ और वेदनी १२ इति सत्ता समाप्त

सेव भंते सेव भंते-तमेव सच्चम्.

—

थोकडा न ४७.

श्री पन्नवणाजी सूत्र पद २३

(अबाधाकाल)

कर्मकी मूल प्रकृति आठ है और उत्तर प्रकृति १४८ है × कौन जीव किस २ प्रकृतिया कितने २ स्थितिकी बाधता है, और बाधनेके बाद स्वभावसे उदयमें आवे तो कितने कालसे आवे यह सब इस थोकडेद्वारा कहेंगे

अबाधाकाल उसे कहते हैं जैसे हुडाकी मुद्दत पकजानेपर

× कर्म ग्रन्थ में पाच शरीर के बन्धन १५ कहा है वास्ते १५८ प्रकृति मानी गई हैं

रुपिया देना पडता है वैसेही कर्मका अबाधाकाल पूर्ण होनेपर कर्म उदयमें आते हैं उस वख्त भोगना पडता है हुंडीकी मुदत पकने के पहिलेही रुपिया दे दिया जाय तो लेनदार मांगनेको नहीं आता इसी तरह कर्मोंके अबाधाकालके पूर्व तप संयमादिसे कर्म क्षय कर दिये जाय तो कर्मविपाक भोगने नहीं पडते (अर्जुनमालीवत्)

अबाधाकाल चार प्रकारका है यथा

(१) जघन्य स्थिति और जघन्य अबाधाकाल जैसे दशमे गुणस्थानकमें अंतरमुहूर्त स्थितिका कर्मबंध होता है और उसका अबाधाकाल भी अंतरमुहूर्तका है

(२) उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अबाधाकाल जैसे मोहनीयकर्म उ० स्थिति ७० कोडाकोडी सागरोपमकी है और अबाधाकाल भी ७००० वर्षका है

(३) जघन्य स्थिति और उत्कृष्ट अबाधाकाल जैसे मनुष्य तिर्यंच क्रोड पूर्वका आयुष्यवाला क्रोड पूर्वके तीसरे भागमे मनुष्य या तिर्यंच गतिका अल्प आयुष्य बांधे तो क्रोड पूर्व के तीज भागका अबाधाकाल और अंतर महूर्तका आयुष्य

(४) उत्कृष्ट स्थिति और जघन्य अबाधाकाल जैसे अन (छेले) अंतरमुहूर्तमें ३३ सागरोपमका उ० नरकका आयुष्य बांधे

मूल कर्म आठ-ज्ञानावरणीय १ दर्शनावरणीय २ वेदनीय ३ मोहनीय ४ आयुष्य ५ नाम ६ गोत्र ७ अंतराय ८ मनुष्य जीव और २४ दंडक के जीवोंके आठों कर्म है

मूल आठों कर्मोंकी उत्तर प्रकृति १४८ यथा ज्ञानावरणीय ५ दर्शनावरणीय ९ वेदनीय २ मोहनीय २८ आयुष्य ४ नामकर्म ९३ गोत्रकर्म २ और अंतराय कर्मकी ५ एवम् १४८ जीस्म

मोहनीय कर्मकी २८ प्रकृतिमेंसे सम्यक्त्व मोहनीय और मिश्र मोहनीयका बंध नहो होता बाकी १४६ प्रकृति बंधती है

उत्तर प्रकृति १४६ की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति और अबाधा काल कितना २ तथा बधाधिकारी कौन २ है ?

मतिज्ञानावरणीय १ श्रुत ज्ञानावरणीय २ अवधिज्ञानावरणीय ३ मन पर्यव ज्ञानावरणीय ४ केवल ज्ञा० ५ चक्षु द० ६ अचक्षु द० ७ अवधि द० ८ केवल द० ९ दानातराय १० लाभा० ११ भोगा० १२ उपभोगा० १३ वीर्या० १४ इन चौदा प्रकृतियोंको समुच्चय जीव बाधे तो जघन्य अंतरमुहूर्त तथा निद्रा १ निद्रानिद्रा २ प्रचला ३ प्रचला प्रचला ४ थीणद्धी ५ और अशातावेदनीय ६ यह छ प्रकृति समुच्चय जीव बाधे तो जघन्य १ सागरोपमका सातिया तीन भाग पल्योपमके असख्यातमे भाग उणा (न्यून) और उत्कृष्ट स्थितीबंध इन बीसों प्रकृतियोंका ३० कोडाकोडी सागरोपम और अबाधाकाल ३००० वर्षका है यही बीस प्रकृति एकेन्द्री बाधे तो जघन्य १ सागरोपम पल्योपमके असख्यातमें भाग ऊणी बेइन्द्री जघन्य २५ सा० पल्यो० के अस० भाग ऊणी तेइन्द्री ५० सा० पल्यो० के अस० भाग ऊणी चौरिंद्री १०० साग० पल्यो० के अस० भाग ऊंणी और असज्ञी पंचेन्द्री १ हजार साग० पल्योपमके असख्यातमें भाग ऊणी बाधे तथा उत्कृष्ट स्थिति एकेन्द्री १ सागरोपम बेइन्द्री २५ साग० तेइन्द्री ५० साग० चौरिन्द्री १०० साग० असज्ञी पचेंद्री १ हजार साग० और सज्ञी पचेन्द्री जघन्य १४ प्रकृति अत रमुहूर्त और ६ प्रकति अत कोडाकोडी सागरोपमकी बाधे उत्कृष्ट बीसो प्रकृतिकी स्थिति और अबाधाकाल समुच्चय जीववत् ।

- एक कोडाकोडी सागरोपमकी स्थिति पीछे सामान्यसे १ सौ वर्षका अबाधाकाल है एसेही एकेन्द्रियादिक सबमें समझ लेना.

अनतानुबधी क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ, और सज्वलन क्रोध, मान,माया, लोभ, इन सोलह प्रकृतियोंमेसे प्रथमकी १२ प्रकृति समुच्चय जीव बाधे तो, जघन्य १ सागरोपमका सातिया ४ भाग पल्योपमके असख्यातमें भाग ऊणी और सज्वलनका क्रोध २ महीना मान १ महीना, माया १५ दिन और लोभ अंतर मुहूर्तका बाधे उत्कष्ट १६ प्रकृतिका स्थितिबध ४० कोडाकोडी सागरोपम और अबाधाकाल ४ हजार वर्षका है ॥ यही सोलह प्रकृति एकेन्द्री जघन्य १ साग० बेइन्द्री २५ सा० तेइन्द्री ५० साग० चौरिंद्री १०० साग० असज्ञी पंचेन्द्री १ हजार साग० पल्योपमके असख्यातमें भाग ऊणी सर्व स्थान और उत्कष्ट सर्व जीव पूरी २ बाधे सज्ञी पचेन्द्री १२ प्रकृति जघन्य अत कोडाकोडी सागरोपम तथा ४ प्रकृति पहिले लिखी उस मुजब बाधे और उत्कृष्ट सोलहो प्रकृतिका स्थितिबंध तथा अबाधाकाल समुच्चय जीववत् समझना ।

भय १ शोक २ जुगुप्सा ३ अरति ४ नपुसक वेद ५ नरकगति ६ तिर्यंचगति ७ एकेन्द्री ८ पचेन्द्री ९ औदारिक शरीर १० ' बधन ११ अगोपाग १२ और सघातन १३ वैक्रियशरीर १४ बन्धन १५ अगोपाग १६ तथा सघातन १७ तैजस शरीर १८ ' बधन १९ सघातन २० कारमण शरीर २१ कारमण शरीरका बधन २२ तस्य सघातना २३ छेवट्ठसहनन २४ हुडक सस्थान २५ कृष्ण वर्ण, २६ तिक्तरस २७ दुरभिगध २८ करकश स्पर्श २९ गुरु स्पर्श ३० सीत स्पर्श ३१ रुक्ष स्पर्श ३२ नरकानुपूर्वी ३३ तिर्यंचानुपूर्वी ३४ अशुभगति ३५ उश्वास ३६ उद्योत ३७ आतप ३८ पराघात, ३९ उपघात ४० अगुरु लघु ४१ निर्माण ४२ त्रस ४३ बादर ४४ पर्याप्ता ४५ प्रत्येक ४६ अस्थिर ४७ अशुभ ४८ दुर्भाग्य ४९ दुस्वर ५० अयश ५१ अनादेय ५२ स्थावर ५३ और नीच गोत्र

८४ प्रथम चौपन प्रकृति समुच्चय जीव बांधे तो, जघन्य १ सागरो पमका सातीया २ भाग पल्योपमके असंख्यातमें भाग उंणी और उत्कृष्ट २० कोडाकोडी सागरोपम अबाधाकाल २ हजार वर्षका हो यही प्रकृति एकेन्द्री जघन्य १ साग० बेइन्द्री २५ साग० तेइन्द्री ५० साग० चौरिन्द्री १०० साग० असज्ञी पचेन्द्री १००० साग० पल्योपमके असंख्यातमें भाग उणी सर्व स्थान और उत्कृष्ट पूरी बांधे सज्ञी पचेन्द्री जघन्य अंत कोडाकोडी साग० उत्कृष्ट समुच्चयवत्

हास्य १ रति २ पुरुषवेद ३ देवगति ४ वज्रऋषभ नाराच संघयण ५ समचतुरस्र संस्थान ६ लघु स्पर्श ७ मृदुस्पर्श ८ उष्ण स्पर्श ९ स्निग्ध स्पर्श १० श्वेतवर्ण ११ मधुरस १२ सुरभि गंध १३ देवानुपूर्वी १४ शुभगति १५ स्थिर १६ शुभ १७ सौभाग्य १८ सुस्वर १९ आदेय २० यश कीर्ति २१ उच्चैर्गोत्र २२ एवम् २२ प्रकृति जिसमें पुरुषवेद ८ वर्षका, यश कीर्ति और उच्चैर्गोत्र इन दोनों प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति ८ मुहूर्त शेष १९ प्रकृति योंकी ज० स्थिती एक सागरोपमका सातिया १ भाग पल्योपमके असंख्यातमें भाग ऊणी और २२ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति १० कोडाकोडी सागरोपमकी बांधे अबाधाकाल १ हजार वर्ष ॥ एकेन्द्रीसे यावत् असज्ञी पचेन्द्री पूर्ववत् १—२५—५० १००—१००० साग० प० अ० उणी सज्ञी पचेन्द्री ३ प्रकृति समु च्चयवत्, और १९ प्रकृति अंत कोडाकोडी सागरोपम तथा उत्कृष्ट स्थिति २२ प्रकृतिकी दश कोडाकोडी सागरोपम अबाधाकाल एक हजार वर्षका है।

स्त्रीवेद १ ×सातावेदनीय २ मनुष्यगति ३ रक्तवर्ण ४ कषाय रस ५ मनुष्यानुपूर्वी ६ इन छ प्रकृतियोंमेसे सातावेदनीयका जघ

× सातावेदनीय २ प्रकारका १ इर्यावही पहले समय बांधे दूसरे समय वेदे और तीजे समय निर्जरे सपरायका समुच्चयवत् ।

न्ययन्ध १२ मुहुर्त और शेष पांच प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिवन्ध १ सागरोपमका सातिया १ ॥ भाग प० अ० उणी उत्कृष्ट छ प्रकृतिका बन्ध १५ कोडाकोडी सागरोपम और अबाधाकाल १५ सा वर्षका है पचेन्द्री यावत् असंज्ञी पंचेन्द्री पूर्ववत् १-२५-५० १००-१००० सा० और संज्ञी पंचेन्द्री शातावदनीय जघन्य १२ मुहुर्त शेष पाच प्रकृति जघन्य अत कोडाकोडी साग० की बाधे उत्कृष्ट बध समुच्चयवत् ॥

बेइन्द्रिय १ तेइन्द्रिय २ चौरिन्द्रिय ३ सूक्ष्म ४ साधारण ५ अपर्याप्ता ६ कीलिकासहनन ७ और कुब्जसंस्थान ८ ये आठ प्रकृतिका समुच्चय जीव जघन्य १ सागरोपमका पैतीसीया ९ भाग पल्यापमके असंख्यातमे भाग उणी और उत्कृष्ट १८ कोडाकोडी सागरोपमकी बाधे अबाधाकाल १८०० वर्षका। पचन्द्री यावत असंज्ञी पचेन्द्री पूर्ववत् १-२५-५० १०० १००० सागरोप म० संज्ञी पचेन्द्री जघन्य अत कोडाकोडी सागरोपम उत्कृष्ट समुच्चयवत् न्ययन्ध १२ मुहुर्त और शेष पाच प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध १ सागरोपमका सातिया १॥ भाग प० अ उणी उत्कृष्ट छ

आहारक शरीर १ तस्य बधन २ अंगोपांग ३ संघातन ४ और जिननाम ५ ये पाच प्रकृति समुच्चय बाधे तो, जघन्य अंतर मुहुर्त उत्कृष्ट अंत कोडाकोडी सागरोपम, यथम संज्ञी पचेन्द्री ॥

मिथ्यात्व मोहनी समुच्चयजीव बाधे तो, जघन्यबध १ सागरोपम उत्कृष्ट ७० कोडाकोडी साग० अ० काल ७ हजार वर्ष पचेन्द्री यावत् पचेन्द्री पूर्ववत् और संज्ञी पचेन्द्री जघन्य अंत कोडाकोडी सागरोपम उत्कृष्ट समुच्चयवत्

ऋषभनाराच सहनन १ न्यग्रोध संस्थान २ ये दो प्रकृति समुच्चय जीव बाधे तो, जघन्य १ सागरोपमका पैतीसिया ६ भाग पल्योपमके असंख्यातमे भाग ऊणी उत्कृष्ट १२ कोडाकोडी सागरोपमकी बाधे अबाधाकाल १२०० वर्ष पचेन्द्री यावत् असंज्ञी

पचेन्द्री पूर्ववत् सज्ञी पचेन्द्री जघन्य अत कोडाकोडी सागरोपम. उत्कृष्ट समुच्चयवत्

नाराच महनन १ और सादि सस्थान २ ये दो प्रकृति जो समुच्चय जीव बाधे तो जघन्य १ सागरोपम के पेंतीसिया ७ भाग उत्कृष्ट १४ कोडाकोड सागरोपम अबाधाकाल १४०० वर्ष एकेन्द्री यावत् असज्ञी पचेन्द्री पूर्ववत् सज्ञी पचेन्द्री जघन्य अन्त कोडा कोड सागरोपम उत्कृष्ट पूर्ववत् ।

अर्द्ध नाराच सहनन और वामन सस्थान ए दो प्रकति समुच्चयजीव बाधे तो ज० १ सागरोपम के पेतीसीय ८ भाग० उ० १६ कोडाकोड सागरोपम-अबाधा काल १६०० वर्ष शेष पूर्ववत् ।

नील वर्ण और कटुक रस ए दो प्रकति समु० जीव बाधे तो जघन्य एक सागरोपम के अठावीसीया ७ भाग उ० १७॥ कोडा कोड सागरोपम अबाधा काल १७५० वर्ष शेष पूर्ववत् ।

पेत्त वर्ण और आबिल रस ए दो प्रकृति समु० जीव बाधे ता जघन्य एक सागरोपम के अठावीसीया ५ भाग उ० १२॥ कोडकोड सागरोपम अबाधाकाल १२५० वर्ष शेष पूर्ववत् ।

नरकायुष्य और देवायुष्य ए दो प्रकृति, पचेन्द्री बाधे तो जघन्य १००० वर्ष उ० ३३ सागरोपम अबाधाकाल ज० अन्तर महुर्त उ० कोड पूर्व के तीजे भाग ।

तीर्यचायुष्य और मनुष्यायुष्य ए दो प्रकृति बाधे तो जघन्य अन्तर मुहुर्त उ० ३ पल्योपम अबाधाकाल ज० अन्तर० उ कोड पूर्व के तीजे भाग इमी को कण्ठस्थ करो और विस्तार गुरुमुखसे सुनो।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा न ४८

श्री भगवतिसूत्र शतक ८ उ० १०

(कर्म विचार)

लोकके आकाशप्रदेश कितने है ?

असंख्यात है

एक जीवके आत्मप्रदेश कितने है ?

असंख्याते है (जितने लोकाकाशके प्रदेश है, उतनेही एक जीवके आत्मप्रदेश है)

कर्मोकी प्रकृति कितनी है ?

आठ—यथा ज्ञानावर्णीय, दर्शनावर्णीय, वेदनी मोहनी आयुष्य, नाम, गात्र, और अंतराय, नरकादि चोवीस दंडकके जीवोंके आठ कर्म है परंतु मनुष्योंमे आठ, सात, और चार भी पाये जाते है (वीतराग केवली कि अपेक्षा)

ज्ञानावर्णीय कर्मके अविभाग पलीछेद (विभाग) कितने है ?

अनंत है एवम् यावत अंतरायकर्मके नरकादि चोवीस दंडकमें कहना

एक जीवके एक आत्मप्रदेशपर ज्ञानावर्णीय कर्मकी कितनी अवेडा पवेडी (कर्मका आटा जैसे ताक्लेपर सूतका आटा) है ?

कितनेक जीवोंके है और कितनेक जीवोंके नहीं है (यथ लीके नहीं) जिन जीवोंके है उनके नियमा अनंती २ है एवम् दर्शनावर्णीय, मोहनी, और अंतरायकर्मभी यावत् आत्माके असंख्यात प्रदेशपर समझ लेना

एक जीवके एक आत्मप्रदेशपर वेदनी कर्मकी कितनी अवेदी पवेदा है ?

सर्व ससारी जीवोंके आत्मप्रदेशपर नियमा अनता २ हैं एवम् आयुष्य, नामकर्म, और गोत्रकर्मभी हैं यावत् असंख्यात आत्म प्रदेशपर हैं इसी माफीक २४ दडकोंमे समझ लेना कारण जीव और कर्मके बधनका सम्बध अनत कालसे लगा हुवा है और शुभाशुभ कार्य कारणसे न्यूनाधिक भी होता रहता है

जहा ज्ञानावर्णीय है वहा क्या दर्शनावरणीय है एवम् यावत् अंतराय कर्म ?

नीचेके यत्रद्वारा समझलेना जहा (नि) हो वहा नियमा और (भ) हो वहा भजना (हो या न भी हो) समझना इति

कर्ममार्गणा	ज्ञाना	दर्श	वदनी	मोह	आयु	नाम	गोत्र	अतराय
ज्ञानावरणीय	०	नि	नि	भ	नि	नि	नि	नि
दर्शनावरणीय	नि	०	नि	भ	नि	नि	नि	नि
वदनीय	भ	भ	०	भ	नि	नि	नि	भ
मोहनीय	नि	नि	नि	०	नि	नि	नि	नि
आयुष्य	भ	भ	नि	भ	०	नि	नि	भ
नामकर्म	भ	भ	नि	भ	नि	०	नि	भ
गोत्रकर्म	भ	भ	नि	भ	नि	नि	०	भ
अतराय	नि	नि	नि	भ	नि	नि	नि	०

सेव भते सेव भते तमेव सचम्

—॥ ० ॥—

समुचय एक जीव वेदनीय कर्म बाधता हुवा ७-८-६-१ कर्म बांधे इसी माफिक मनुष्य भी ७-८-६-१ कर्म बांधे शेष २३ दंडकके एक एक जीव ७-८ कर्म बांधे।

समुचय घणा जीव वेदनीय कर्म बांधता ७-८-६-१ बांधे जिसमें ७-८-१ कर्म बांधनेवाले सास्वता और ६ कर्म बांधनेवाले असास्वता जिसका भागा ३।

(१) ७-८-१ कर्म बांधनेवाला घणा (सास्वता)

(२) ७-८-१ का घणा और छ कर्म बांधनेवाला एक।

(३) ७-८-१ का घणा और छै कर्म बांधनेवाले घणा।

घणा नारकीका जीव वेदनीय कर्म बांधता ७-८ कर्म बांधे जिसमें ७ कर्म बांधनेवाले सास्वते और ८ कर्म बांधनेवाले असास्वते जिसका भागा ३। (१) सात कर्म बांधनेवाले घणा। (२) सात कर्म बांधनेवाले घणा और ८ कर्म बांधनेवाला एक। (३) सात कर्म बांधनेवाल घणा ८ कर्म बांधनेवाले घणा। एवं १० भुवनपति ३ विकलेंद्री, तिर्यंच पंचेंद्री व्यंतर ज्योतिषी, वैमानिक, नरकादि १८ दंडकमें तीन भागा गीणता ५४ भागा हुवा।

पृथ्व्यादि पांच स्थावरमें सात कर्म बांधनेवाले घणा और ८ कर्म बांधनेवाले भी घणा वास्ते भागा नहीं उठते हैं।

घणा मनुष्य वेदनीय कर्म बांधता ७-८-६-१ कर्म बांधे जिसमें ७-१ कर्म बांधनेवाले घणा जिसका भाग ९

७-१ का	८	६	७-१ का	८	६
३ (घणा)	०	०	३ ,,	१	१
३ ,,	१	०	३ ,,	१	३
३ ,,	३	०	३ ,,	३	१
३ ,,	०	१	३ ,,	३	३
३ ,,		३	एवं ९ भागा		

समुच्चय जीवका भागा ३ अठारे दंडकका ५४ मनुष्यका ९ सर्व ६६ भागा हुवा इति।

समुच्चय एक जीव मोहनीय कर्म बाधता ७-८ कर्म बाधे एव २४ दंडक।

समुच्चय घणा जीव मोहनीय कर्म बाधता ७-८ कर्म बाधे जिसमें ७ कर्म बाधनेवाले घणा और आठ कर्म बाधनेवाले भी घणा इसी माफिक ५ स्थावर भी समझ लेना।

घणा नारकीका जीव मोहनीय कर्म बाधता ७-८ कर्म बाधे जिसमें ७ कर्म बाधनेवाले सास्वता ८ का असास्वता जिसका भागा ३।

(१) सात कर्म बाधनेवाले घणा (सास्वता)
(२) ,, ,, ,, आठ बाधनेवाला एक
(३) ,, ,, ,, ,, घणा

एव पाच स्थावर वर्जके १९ दंडकमें समझ लेना ५७ भागा हुवा।

समुच्चय एक जीव आयुष्य कर्म बाधता नियमा ८ कर्म बाधे एव नरकादि २४ दंडक इसी माफिक घणा जीव आश्रयी समुच्चय जीव और २४ दंडकमें भी नियम ८ कर्म बाधे इति।

भागा ३३०-६६-५७ सर्व मीली ४५३ भागा हुवा।

सेव भंते सेव भंते तमेव सच्चम्

—✻◎◎◎✻—

थोकडा नम्बर ५०

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २५)

(बाधतो वेदे)

मूल कर्म प्रकृति आठ यावत् पद २४ के माफिक समझना।

समुच्चय एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बाधतो हुवो नियमा आठ कम वेदे कारण ज्ञानावरणीय कम दशमा गुणस्थान तक बाधे है वहा आठ ही कर्म मौजूद है सो वेद रहा है एवं नर कादि २४ दंडक समझना।

समुच्चय घणा जीव ज्ञानावर्णीय कर्म बाधते हुये नियमा आठ कर्म वेदे यावत् नरकादि २४ दंडकमें भी आठ कम वेदे।

एव वेदनीय कर्म वजके शेष दर्शनावर्णीय मोहनीय, आ युष्य नाम, गोत्र, अन्तराय कर्म भी ज्ञानावर्णीय माफिक समझना।

समुच्चय एक जीव वेदनीय कर्म बाधे तो ७-८-४ कमवदे कारण वेदनोय कर्म तेरहवागुणस्थान तक बाधते है। एव मनुष्य भी समझना शेष २३ दडक नियमा ८ कम वदे।

समुच्चय घणा जीव वेदनी कर्म बाधते हुवे ७ ८-४ कम वेदे एव मनुष्य। शेष २३ दडक के जीव नियमा आठ कर्म वेदे।

समुच्चय जीव ७ ८-४ कम वेदे जिसमें ८-४ कम वेदनेवाले सास्वता और ७ कर्म वदने वाले असास्वता जिसका भागा ३

(१) आठ कर्म और चार कम वेदनेवाले घणा

(२) ८-४ कम वेदनेवाले घणे सात कम वेदनेवाला एक

(३) आठ-चार कम वेदनेवाले घणा, और सात कम वेदनेवा ले घणा एव मनुष्यमें भी ३ भागा समझना सब भागा६हुआ इति।

सेवभंते सेवभंते तमेवसचम्

थोकडा नम्बर ५१

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद २६
(वेदता बाधे)

मूल कर्म प्रकृति आठ है यावत् पद २४ माफिक समजना

समुच्चय एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतों हुवों ७-८-६-१ कर्म बाधे (कारण ज्ञानावरणीय बारहवां गुण स्थानक तक वेदे है) एव मनुष्य शेष २३ दडक ७-८ कर्म बाधे।

समुच्चय घणाजीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतो ७-८-६-१ कर्म बाधे जिसमें ७-८ कर्म बाधनेवाला सास्वता और ६-१ कर्म बाधणेवाला असास्वता जिसका भागा ९

७-८	६	१	७-८	६	१
३ (घणा)	०		३	१	१
३	१	०	३	१	३
३	३	०	३	३	१
३	०	१	३	३	३
३	०	३	एव ९ भागा		

एकेंद्रीका पाच दडक और मनुष्य वर्जके शेष १८ दडक में ज्ञानावर्णिय कर्म वेद तो ७-८ कर्म बाधे जिसमें ७ का सास्वता ८ का असास्वता जिसका भागा ३

(१) सातका घणा (२) सातका घणा, आठको एक (३) सातका घणा और आठका भी घणा एव १८ दडक का भागा ५४

एकेन्द्री में ७ का भी घणा और आठ कर्मबाधनेवाला भी

घणा मनुष्य में ज्ञानावर्णीय कर्म वेदता ७-८-६-१ कर्म बाधे जिसमें ७ कर्म बाधने वाला सास्वता शेष ८-६-१ का असास्वता जिसका भागा २७

७ कर्म	८ कर्म	६ कर्म	१ कर्म	७ क	८	६	१
(१) ३	०	०	०	(१५)३	३	०	३
(२) ३	१	०	०	(१६)३	०	१	१
(३) ३	३	०	०	(१७)३	०	१	३
(४) ३	०	१	०	(१८)३	०	३	१
(५) ३	०	३	०	(१९)३	०	३	३
(६) ३	०	०	१	(२०)३	१	१	१
(७) ३	०	०	३	(२१)३	१	१	३
(८) ३	१	१	०	(२२)३	१	३	१
(९) ३	१	३	०	(२३)	१	३	३
(१०)३	३	१	०	(२४) ३	३	१	१
(११)३	३	३	०	(२५)३	३	१	३
(१२)३	१	०	१	(२६)३	३	३	१
(१३)३	१	०	३	(२७)३	३	३	३
(१४)३	३	०	१		एवं भागा		२७

एवं दर्शनावर्णीय और अन्तराय कर्म भी समझना।

समु० एक जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८-६-१-० (अबाध) कर्म बाधे एक मनुष्य। शेष २३ दंडक ७-८ कर्म बाधे।

समु० घणा जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८-६-१-० जिसमें ७-८-१ का सास्वता और छ कर्म तथा अबाधे का असास्वता जिसका भागा ९।

७-८-१	६	अबाध	७-८-१	६	अबाध
३ (घणा)	०	०	३ ,	१	१
,	१	०	३ ,,	१	२
,	३	०	३ ,,	३	१
३ ,,	०	१	,,	३	३
३ ,,	०	३	एव भागा ९		

नारकी का जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८ कर्म बाधे जिसमें ७ का सास्वते और ८ कर्म बाधने वाले असास्वते जिसका भागा ३।

(१) सात का घणा (२) सात का घणा आठको एक (३) सात का घणा और आठ कर्म बाधने वाले भी घणा।

एव पचेन्द्री का ५ दंडक और मनुष्य वर्ज के १८ दडक में समजना भागा ५४। एकेन्द्रियमें भागा नहीं है।

-घणा मनुष्य वेदनीय कर्म वेदता ७-८-६-१-० (अबाध) जिसमें ७-१ कर्म बाधने वाले सास्वते और ८-६- का असास्वते जिसका भागा २७।

७-१	८	६	०	(८) ३	१	१	०
(१) ३ (घणा)	०	०	०	(९) ३ ,	१	३	०
(२) ३ ,,	१	०	०	(१०) ३ ,	३	१	०
(३) ३ ,	३	०	०	(११) ३ ,	३	३	०
(४) ३	०	१	०	(१२) ३ ,	१	०	१
(५) ३ ,	०	३	०	(१३) ३ ,,	१	०	३
(६) ३ ,,	०	०	१	(१४) ३ ,,	३	०	१
(७) ३ ,,	०	०	३	(१५) ३ ,,	३	०	३

(१६)	३		०	१	१
(१७)	३	,	०	१	३
(१८)	३	,	०	३	१
(१९)	३	,,	०	३	३
(२०)	३		१	१	१
(२१)	३	,	१	१	३
(२२)	३	,	१	३	१
(२३)	३	,	१	३	३
(२४)	३	,	३	१	
(२५)	३	,	३	१	
(२६)	३	,	३	३	
(२७)	३	,,	३	३	

पव भागा २७+

समु० एक जीव मोहनीय कर्म वेदता ७-८-६ कम बाधे एव मनुष्य शेष २३ दडक ७-८ कम बाधे।

समु घणा जीव मोहनीय कम वेदता ७-८-६ कर्म बाधे जिस्मे ७-८ कर्म बाधने वाले सास्वते ६ कर्म बाधने वाले असास्वते जिसका भागा ३।

(१) ७-८ कर्म बाधने वाले घणा।

(२) ,, , ,, छ कर्म बाधने वाले एक

(३) ,, , , घणा

घणा नारकी मोहनी कम वेदता ७-८ कर्म बाधे जिसमे ७ कर्म बाधने वाले सास्वते और ८ कर्म बाधने वाले असास्वते जिसका भागा ३।

(१) सात का घणा (२) सात का घणा आठ को एक (३) सात का घणा आठ का भी घणा एव मनुष्य तथा एकेंद्री वर्ज १८ दडकोंका भागा ५४ समजना एकेंद्री मे सात कर्म बाधने वाला घणा और आठ कम बांधने वाला भी घणा।

घणा मनुष्य मे मोहनी कम वेदता ७-८-६ कम बाधे जिसमें

× जम वदनीय कर्म उम ही आयुष्य नाम, गोत्र, समजना।

७ कर्म बांधने वाले सास्वते और ८-६ कर्म बांधने वाले असास्वते जिसका भागा ९।

७ कर्म	८ कर्म।	६ कर्म	३	१	१
३ घणा	०	०	३ ,,	१	३
१ ,,	१	०	३ ,,	३	१
३ ,,	३	०	३ ,,	३	३
१ ,,	०	१	एव भागा ९		
१ ,,	०	३			

सर्व भागा ज्ञानावर्णीय कर्म का ९-५४-२७ सर्व ९०, इसी माफिक ७ कर्म का ६३० और मोहनीय कर्म का ३-५४-९ सर्व ६६ भागा हुये। वेदते हुये बांधे जिसका कुल भागा ६९ भागा हुवा इति।

सेवं भंते सेवं भंते—तमेव सच्चम्.

थोकडा नंबर ५२

(सूत्र श्रीपन्नवणाजी पद २७)

[वेद तो वेदे]

मूल कर्म प्रकृति आठ यावत् पद २४ से समझना।

समु० एक जीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदतो ७-८ कर्म वेदे एवं मनुष्य शेष २३ दंडक में नियमा ८ कर्म वेदे।

समु० घणा जीव ज्ञानावर्णीय कर्म वेदता ७-८ कर्म वेदे जिसमें ८ कर्म वेदने वाले सास्वते और ७ कर्म वेदने वाले असास्वता जिसका भागा ३

(१) आठ कर्म वेदने वाले घणा

(२) ,, ,, सात का एक

(३) , , घणा

मनुष्य वर्ज के शेष २३ दंडकमें नियमा ८ कर्म वेदे और मनुष्य में समुच्चय जीवकी माफिक भागा ३ समजना इसी माफिक दर्शनावर्णीय और अन्तराय कर्म भी समझना

समु० एक जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८-४ कर्म वेदे एवं मनुष्य शेष २३ दंडक का जीव नियमा ८ कर्म वेदे

समु० घणा जीव वेदनीय कर्म वेदता ७-८-४ कर्म वेदे जिसमें ८ ४ कर्म वेदने वाले सास्वता और ७ कर्म वदने वाले असास्वता भागा ३

(१) ८-४ का घणा (२) ८-४ का घणा ७ की एक (३) ८-४ का घणा ७ का भी घणा एवं मनुष्य में भी ३ भागा समझना शेष २३ दंडक में वेदनीय कर्म वेदता नियमा ८ कर्म वेदे

वेदनीय कर्म की माफिक आयुष्य, नाम गोत्र कर्म भी समझना

समु०एक जीव मोहनीय कर्म वेदतो नियमा ८ कर्म वेदे एवं २४ दंडक समझना इसी माफिक घणा जीव भी ८ कर्म वेदे

सर्व भागा ज्ञानावर्णीयादि सात कर्म मे समुच्चयजीवका तीन तीन और मनुष्य का तीन तीन एवं ४२ भागा हुवा इति

सेव भन्ते सेव भन्ते-तमेव सच्चम्.

च्यारो थोकडे के भागा

४५३ बांधता बांधे का भांगा	६९६ वेदता बांधे का भागा
?६ बांधतो वेदे का भागा,	४२ वेदता वेदे का भांगा

११९७

-:(०)(०)(०):-

थोकडा नम्बर ५३

(श्री भगवतीजी सूत्र श० ६ उ०-३)

५० बोल की बांधी-द्वार १५

वेद ४ (पुरुष १ स्त्री २ नपुंषक ३ अवेदी ४) सयति ४ (सयति १ असयति २ सयता संयति ३ नोसयति नो संयति नोसयता संयति ४) दृष्टि, ३ (सम्यक्त्व दृष्टि १ मिथ्या दृष्टि २ मिश्र दृष्टि ३) संज्ञी, ३ (संज्ञी १ असज्ञी २ नोसंज्ञानोअसंज्ञी ३) भव्य ३ (भव्य १ अभव्य २ नोभव्याभव्य ३) दर्शन, ४ (चक्षुदर्शन १ अचक्षु दर्शन २ अवधिदर्शन ३ केवलदर्शन ४) पर्याप्ता ३ (पर्याप्ता १ अपर्याप्ता २ नो पर्याप्तापर्याप्ता ३) भाषक, २ (भाषक १ अभाषक २ परत्त ३, (परत्त १ अपरत्त २ नो परत्तापरत्त ३) ज्ञान, ८ मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान मन पयवज्ञान केवलज्ञान मतिअज्ञान श्रुतिअज्ञान विभंगज्ञान योग, ४ (मनयोग वचनयोग काययोग अयोगी) उपयोग २ (साकार अनाकार) आहार २ (आहारी अनाहारी) सूक्षम ३ सूक्षमबादरनो सूक्षमनो बादर चरम २(चरम १ अचरम २) एवम ५०

(१४) स्त्रीवद १ पुरुषवेद २ नपुसक वेद ३ असयति ४ सयतासयति ५ मिथ्यादृष्टि ६ असज्ञी ७ अभव्य ८ अपर्याप्ता ९ अपरत्त १० मतिअज्ञान ११ श्रुतिअज्ञान १२ विभंगज्ञान १३ और सूक्ष्म १४ इन चौदाबोलोंमें ज्ञानावर्णियादि साता कर्मोको नियमा बाधे, आयुष्य कर्म बाधे ने की भजना (स्यात् बाधे स्यात् न बाधे)

(१३) संज्ञी १ चक्षुदर्शन २ अचक्षुदर्शन ३ अवधिदर्शन ४ भाषक ५ मतिज्ञान ६ श्रुतिज्ञान ७ अवधिज्ञान ८ मन पर्यव ज्ञान ९ मनयोग १० वचनयोग ११ काययोग १२ और आहारी १३ इन

तेरह बोलों में वेदनी कर्म बाधने की नियमा शेष साता कर्म बाधने की भजना

(११) सयति १ सम्यक्त्व दृष्टि २ भव्य ३ अभाषक ४ पर्याप्ता ५ परत्त ६ साकारोपयोग ७ अनाकारोपयोग ८ बादर ९ चरम १० और अचरम ११ इन ग्यारे बोलों में आठो कर्म बाधने की भजना

(६) नो सयतिनोअसयतिनोसयतासयति १ नो भव्या भव्य २ नोपर्याप्तानाअपर्याप्ता ३ नो परत्तापरत्त ४ अयोगी ५ और नो सुक्ष्म ना बादर ६ एवम् छे बोलोंमें किसी कर्मका बध नहीं है (अबंधक)

(३) केवलज्ञान १ केवल दर्शन २ नो सन्नी ना असन्नी ३ इन तीनों में वेदनीय कर्म बाधनेकी भजना बाकी सातों कर्मों का अबध

(२) अवेदी १ अणाहारी २ इन दोनों में सात कर्म बाधने की भजना आयुष्य कर्मका अबधक और (१) मिश्रदृष्टि में सातों कर्म बाधे आयुष्य न बाधे इति ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा नबर ५४.

(श्री भगवतीजी सूत्र श० ८ उ० ८)

कर्मोंका बध

१ कर्मोंका बध जाणने से ही उसका तोडनेका उपाय सरलतासे कर सकते है इसवास्ते शिष्य प्रश्न करता है कि—

हे भगवन्! कर्म कितने प्रकारसे बंधता है!

दो प्रकारसे-यथा १ इर्यावहि (केवल योगोंकि प्रेरणा से ११-१२-१३ गुणस्थानक मे बंधता है) २ संपराय (कषाय और योगों से पहिले गुणस्थानक में दसवे गुणस्थानक तक बंधता है।

इर्यावहि कर्म क्या नारकी के जीव बांधे तीर्यच, तीर्यचणी मनुष्य मनुष्यणी देवता देवी बांधते है!

नारकी, तीर्यच, तीर्यचणी देवता, देवी न बांधे शेष मनुष्य, और मनुष्यणी, बांधे भूतकाल में बहुत से मनुष्य और मनुष्य णीयों ने इर्यावहि कर्म बांधा था और वर्तमान काल का भागा ८ यथा १ मनुष्य एक २ मनुष्यणी एक ३ मनुष्य बहुत ४ मनुष्यणी बहुत ५ मनुष्य एक और मनुष्यणी एक ६ मनुष्य एक और मनु ष्यणी बहुत ७ मनुष्य बहुत और मनुष्यणी एक ८ मनुष्य बहुत और मनुष्यणीया बहुत।

- इर्यावहि कर्म क्या एक स्त्री बांधे या एक पुरुष बांधे या एक नपुंसक बांधे! एसेही क्या बहुत से स्त्री, पुरुष नपुंसक बांधे?। उक्त ६ हो बोलवाले जीव नहीं बांधे।

क्या इर्यावहि कर्मनोस्त्री, नोपुरुष नोनपुंसक बांधे (पहि लेवेदका उदयथा तब स्त्री पुरुषादि कहलाते थे फीर वेदके क्षय होने से नोस्त्री नोपुरुषादि कह जाते है। (उत्तरमें)

हां, बांधे भूतकाल मे बांधा वर्तमान मे बांधे और भविष्यमें बांधेगे जिसमें वर्तमान बंध के भागा २६ यथा असंयोगभागा ६ एक नोस्त्री बांधे बहुतसी नो स्त्रीया बांधे २ एक नो पुरुष बांधे ३ बहुत से नोपुरुष बांधे ४ एक नो नपुंसक बांधे ५ बहुत से नो नपुंसक बांधे।

द्वीसयोगी भागा १२

नोस्त्री	नोपुरुष	नोस्त्री	नो नपुसक	नो पुरुष	नो नपुस[illegible]
१		२		३	
१	१	१	१	१	१
१	३	१	३	१	३
३	१	३	१	३	१
	३	३	३	३	३

चिन्ह (१) एक वचन (३) बहुवचन समझना

त्रिक सयोगी भांगा ८ ।

नोस्त्री	नो पुरुष	नानपुसक	नोस्त्री	नापुरुष	नोनपुसक
१	१	१	३	१	१
१	३	३	३	१	३
१	०	१	३	३	१
१	३		३	३	३

इति २६ भागा घणा भव आश्री इर्यावही कर्म जो ८ भाग नीचे लिखे है उनका बध बहा २ होता है ? कोण सा जीव इण भागा का अधिकारी है ।

(१)	बाधाथा,	बाधता है,	बाधेगा,
(२)	बाधाथा,	बाधता है,	नबाधेगा,
(३)	बाधाथा,	नहीं बाधता है,	बाधेगा,
(४)	बाधाथा	नहीं बाधता है,	नबाधेगा,
(५)	नबाधाथा,	बाधता है,	बाधेगा,
(६)	नबाधाथा	बाधता है,	नबाधेगा,
(७)	नबाधाथा,	नबाधता है,	बाधेगा
(८)	नबाधाथा,	नबाधता है,	नबाधेगा,

(पहिला) भागा उपशम श्रेणी वाले जीव में मिले जैसे उपशम श्रेणी १ भवमें १ जीव जघन्य एक वार और उत्कृष्ट २ वार करता है कोइ जीव १ वार उपशम श्रेणी करके पीछा गीरा तो पहिले उपशम श्रेणी करीथी इसलिये इर्यावही कम बाधा था और वर्तमानकाल में दुबारा उपशमश्रेणी वरतता है इसलिये इर्यावही कर्म बाध रहा है और उपशम श्रेणीवाला अवश्य पीछा गिरेगा परन्तु फिरभी नियमा मोक्ष जानेवाला है इस वास्ते भविष्य में इर्यावही कर्म बाधेगा

(दूसरा) भागा पहिले उपशम श्रेणी की थी तब इर्यावही कर्म बाधा था वर्तमानमें क्षपक श्रेणी पर वरतता है इसलिये बाधता है आगे मोक्ष चला जायगा इस वास्ते न बाधेगा

(तीसरा) भागा पहिले उपशम श्रेणी करके बाधा था वर्तमानमें नीचे के गुणस्थानक पर वर्तता है इसलिये नहीं बाधता और मोक्षगामी है इसलिये भविष्य मे बाधेगा

(चोथा) भागा चौदमा गुणस्थानक या सिद्धों के जीवों में है।

(पाचमा) भागा भूतकालमें उपशम श्रेणि नहीं की इसलिये नहीं बाधा था वर्तमान में उपशम श्रेणी पर है इसलिये बाधता है भविष्यमें मोक्षगामी है इसलिये बाधेगा।

(छठा) भागा प्रथम ही क्षपक श्रेणी करने वाला भूतकाल में न बाधा था वर्तमानमें बाधे है भविष्यमे मोक्ष जावेगा वास्ते न बाधेगा।

(सातमा) भागा भूतकाल और वर्तमानमें उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी नहीं की इसलिये नहीं बाधा और नहीं बाधता है परन्तु भव्य है इसलिये नियमा मोक्ष जायगा तब बाधेगा।

(आठमा) भागा अभव्य प्रथमगुणस्थानकवर्ती में मिलता

है एव एक भवापक्षी ७ भागोका जीव मिले छटा भागों शून्य है समय मात्र बधभावापेक्षा है ।

इर्यावहि कम क्या इन चार भागो से बाधे ? १ सादिसात २ सादि अनंत अनादि सात ४ अनादि अनत १

सादि सात भाग से बाधे क्यों कि इर्यावहि कम ११-१२-१३ वे गुणस्थानक के अत समय तक बधता है इसलिये आदि है और चौदम गुणस्थानक के प्रथम समय बध विच्छेद होने से अंत भी है बाकी तीन भाग शून्य है

इर्यावहि कर्म क्या देश (जीवकायएकदेश) से देश (इर्यावहि केपकदेश) बाधे १ या देस से सव २ या सर्व से देश ३ या सर्व स सर्व बाधे ४ ?

हा सर्व से सर्वका बध हो सक्ता है बाकी-तीनों भाग शून्य है इति इर्यावहि कर्मबंध॥

सम्प्राय कर्म क्या नारकी तिर्यच, तिर्यचणी मनुष्य मनुष्यणी, देवता देवी, बाधे ४

हा बाधे क्योंकि सम्प्राय कर्म का बध पहिले गुणस्थानक से दशमे गुणस्थानक तक है

सम्प्राय कर्म क्या स्त्री, पुरुष नपुंसक या बहुत से स्त्री, पुरुष, नपुंसक बाधे

हा सब बाधे भूतकाल में बहुत जीवोंने बाधा था वर्तमान में बाधते है और भविष्य में कोइ बाधेगा कोइ न बाधेगा कारण मोक्षमे जानेवाले है

सम्प्राय कर्म क्या अवेदी (जिनकावेदक्षय होगयाहो) बाधे ?

हा, भूतकालमे बहुतसे जीवोंने बाधाथा और वर्तमान

में भाग २६ से इयायही कर्मयत् जाने क्योंकि अवेदी नवमें गुण स्थानक के २ समय बाकी रहने पर (वेदोंका क्षय होते है) होजाते हैं और सम्प्राय कर्मका बध दशवें गुणस्थानक तक है

सम्प्राय कर्म क्या इन चार भागों मे बांधे १ सादि सात, २ सादि अनत, ३ अनादिसात, ४ अनादि अनत,

तीन भागों मे बांधे, और १ भागा शून्य यथा १ सादिसात भागों से बाधे सम्प्रायकर्मबाधनेकी जीवों के आदि नहीं है परन्तु यहा अपेक्षायुक्त वचन है जैसे कि जीव उपशम श्रेणी करके ग्यारह गुणस्थानक वर्तता हुया इर्यावही कर्म बाधे परतु ग्यारमें गुणस्थानक से नियमा गिरकर सम्प्राय कर्म बाधे इस अपेक्षा से सम्प्राय कर्मकी आदि है और क्षपक श्रेणीकर के बारमें गुणस्थानक अवश्य जावेगा यहा सम्प्राय कर्म का बध नहीं है इसलिये अतभी है २ सादि अनत भागा शून्य है क्योंकि ऐसा कोई जीव नहीं है कि जिसके सम्प्राय कर्मकी आदि हो यदि उपशम श्रेणी की अपेक्षा से कहोगे तो यह नियमा मोक्षभी जायगा तो अन्त पणाकी बाधा आवेगी वास्ते यह भागा शास्त्र कारोंने शून्य कहा है

३ अनादि सात भागा भव्य जीवोंकी अपेक्षा से क्योंकि जीवके सम्प्राय कर्मकी आदि नहीं है परन्तु मोक्ष जायगा इसवास्ते अत है।

४ अनादि अनत अभव्य जीवकी अपेक्षासे जिसके सम्प्राय कर्मकी आदि नहीं है और न कभी अंत होगा

सम्प्राय कर्म क्या इन चार भागों मे बाधे १ देश (जीवका) से देश (सम्प्राय कर्मका) २ देशसे सर्व ३ सर्व से देश ४ सर्व से सर्व

सब से सर्व इस भाग से सम्प्राय कर्मबाधे यावो तीनों भागे शुन्य सम्प्रायकर्म जगतमे रुलाने वाला है और इर्यावहो मोक्ष नगर में पहुचाने वाला है दोनुं बंध छुटने से जीव मोक्ष में जाता है इति-समाप्तम्

सेव भंते सेव भंत तमेव सचम् ॥

थोकडा नं० ५५

(श्री भगवतीजी सूत्र० २६ उ० १)

(४७ बोल की वाधी)

इस शतक में कर्मों का अति दुर्गम्य सम्बन्ध हैं इस वास्ते गणधरों ने सूत्रदेवता को पहिले नमस्कार करके फिर शतक को प्रारंभ किया है

गाथा-जीवय १ लेश्या ६ पक्खिय २ दिट्ठी ३ नाण ६ अनाण ४ सन्नाओ ५ वेय ५ कसाये ६ जोग ५ उवओग २ एकारसवि ठाणे ॥ १ ॥

अर्थ—समुचय जीव १ ॥ कृष्णादि लेश्या ६ अलेशी ७ सलेशी ८ ॥ पक्ष० कृष्णपक्षी १ शुक्लपक्षी २॥ दृष्टी० सम्यक्त्वदृष्टि १ मिश्र दृष्टि २ मिथ्यादृष्टि ३ ॥ मत्यादि ज्ञान ५ सनाणी ६ ॥ अज्ञान ३ अनाणी ४॥ संज्ञा ४ नोसंज्ञा ५ ॥ वेद ३ ॥ सवेदी ४ अवेदी ५ ॥ कषाय० ४ सकषाय ५ अकषाय ६ ॥ योग० ३ सयोगी ४ अयोगी ५ ॥ उपयोग० साकार १ ॥ अनाकार २ ॥ एवम् ४७

चौवीसों दंडकों में से कौन २ से दंडक में कितने २ भेद पाये वह नीचे के यंत्र द्वारा समजलेना।

स	नाम दंडक	जी १	ले ६	प २	द ३	ज्ञा ६	[illegible] ४	स ९	[illegible] ९	क ६	यो ९	[illegible] २	सु ४७
१	नारकी	१	४	२	३	४	४	४	२	५	४	२	३५
१०	भुवन पति १० / वाण व्यंतर १	१	५	२	३	४	४	४	३	५	४	२	३७
१३	ज्योतिषी १	१	२	२	३	४	४	४	३	५	४	२	३४
१४	वैमानिक — देवलोक १–२	१	२	२	३	४	४	४	३	५	४	२	३४
	देवलोक ३ से १२	१	२	२	३	४	४	४	२	५	४	२	३३
	ग्रैवेक ९	१	२	२	२	४	४	४	२	५	४	२	३२
	अनुत्तर ५	१	२	१	१	४	०	४	२	५	४	२	२६
१७	पृ पाणी वन० ३	१	५	२	१	०	३	४	२	५	२	२	२७
१९	तेऊ वायु	१	४	२	१	०	३	४	२	५	२	२	२६
२२	विकलेन्द्री ३	१	४	२		३	३	४	२	५	३	२	३१
२३	तीर्यच, पचेन्द्री	१	७	२	३	४	४	४	४	५	४	२	४०
२४	मनुष्य	१	८	२	३	६	४	५	५	६	५	२	४७

तीजे, चौथे और पाचमे, देवलोकमें एक पद्मलेश्या और छट्ठे, से बारमें देवलोक तक एक शुक्ल लेश्या है इस लिये प्रत्येक देवलोकमें एक १ लेश्या है।

बधाका भागा ४ है इसपर विशेष ध्यान रखने की आवश्य कता है। (१) कर्म बाधा, बाधे, बाधसी, (२) कर्म बाधा, बाधे, न बाधसी, (३) कर्म बाधा न बाधे बाधसी, (४) कर्म बाधा, न बाधे, न बाधसी,

आठ कर्म है जिसमें ४ घाती कर्मो को एकात पाप कर्म माना है (ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय, मोहनीय और अत राय,) और इनमें मोहनीय कर्म सब से प्रबल माना गया है

शेष वेदनीय, आयुष्य नाम गोत्र, ये चार अघाती कर्म हैं (पाप पुण्य मिश्रित) इसलिये शास्त्रकारों ने प्रथम समुचय पापकर्म की पृच्छा अलग की है उपरोक्त ४७ बोलोंमेंसे कौन २ से बोलके जीव इन चार भांगों में से कौन २ से भांगों से पाप कर्म को बांधे इन में मोहनीय कर्मकी प्रबलता है इसलिये उसके बंध विच्छेद होने से शेष कर्मों के विद्यमान होते हुए भी उनके बंध की विवक्षा नहीं की क्योंकि उववाई पन्नवणा सूत्रमे भी मोहनीय कर्म परही शास्त्रकारों ने ज्यादा जोर दिया है कारण कि मोहनीय कर्म सर्व कर्मों का राजा है उस के क्षय होने से शेष तीन कर्मों का किंचित् भी जोर नहीं चलता, उपरोक्त सैतालीस बोलों में से समुच्चय जीव की पृच्छा करते हैं समुच्चयजीव १ शुक्ललेशी २ सलेशी ३ शुक्ल पक्षी ४ सज्ञानी ५ मतिज्ञानी ६ श्रुतज्ञानी ७ अवधिज्ञानी ८ मन पर्यवज्ञानी ९ सम्यक्दृष्टि १० नौ सज्ञा ११ अवेदी १२ सकषायी १३ लोभ कषायी १४ सयोगी १५ मनयोगी १६ वचनयोगी १७ काययोगी १८ साकार उपयोगी १९ अनाकार उपयोगी २० इन बीस बोलों के जीवा में चारों भांगों मिलते हैं यथा —

(१) बांधा, बांधे बांधसी, मिथ्या वादि, गुणठाणों अभव्य जीव भूतकालमें बांधा-बांधे-बांधसी

(२) बांधा, बांधे न बांधसी क्षपक श्रेणी चढता हुआ नवमें गु० तक बांधे फीर मोक्ष जायगा-न बांधसी

(३) बांधा, न बांधे, बांधसी, उपशम श्रेणी दशमे इग्यार में गु० तक वर्तमानमें नहीं बान्धते है

(४) बांधा, न बांधे, न बांधसी क्षपक श्रेणी दशमें गुण० तद्भव मोक्षगामी

(२१) मिश्रदृष्टि दो भांगा से मीलता है १-२ जो। यथा—

(१) बाधा बाधे बाधसी, यह सामान्यता से कहा है बहुत भवपेक्षा

(२) बाधा बाधे न बाधसी यह विशेष व्याख्या है क्योंकि भव्य जीव है व तद्भव मोक्ष जायगा तब (न बाधसी)
(२२) अकषायी में दो भागा यथा-३-४ था

(३) बाधा, न बाधे बाधसी, उपशम श्रेणी दशमें इग्या रमें गुण० वर्तता हुआ भूत कालमें बाधा वर्तमान् (न बाधे) परन्तु नियमा पीछा गिरेगा तब (बाधसी)

(४) बाधा न बाधे, न बाधसी क्षपक श्रेणी वाले अकषायी है (२५) अलेशी, कवली और अजोगी, मे भागा १ बाधा, न बाधे न बाधसी बन्ध अभाव।

(२७) लेश्या पाच, कृष्णपक्षी अज्ञाना चार, वेद चार, सज्ञा चार, कषाय तीन, और मिथ्यात्वदृष्टि इन बाइस बोलों के जीवों में भागा २ मिलते है यथा। १-२ जो।

(१) बाधा, बाधे बाधसी, अभव्य की अपेक्षा स

(२) बाधा, बाधे न बाधसी भव्य की अपेक्षा से

यह समुच्चय जीव की अपेक्षा से कहा जैसे ही मनुष्य के दडक में समझ लेना शेष तेवीस दंडक के जीव में दो भागा मिलते हैं यथा १-२ जो

(१) बाधा, बाधे न बाधसी, अभव्य की अपेक्षा विशेष व्याख्या न करके सामान्यता से

(२) बाधा, बाधे, न बाधसी, यह विशेष व्याख्या है क्योंकि भव्य जीव है यह भविष्य में निश्चय मोक्ष जायगा तब (न बाधसी)

यह समुच्चय पापकर्म की व्याख्या की है अब आठों कर्म

को भिन्न २ व्याख्या करते हैं जिसमें मोहनीय कर्म समुच्चय पाप कर्मवत् समझ लेना

ज्ञानावरणीय कर्म को पूर्व कहे हुए बीस बोलोंमे से सक षायी और लोभ कषायी यह दो बोलों को छोडकर शेष अठारा बोलोंके जीव पूर्वोक्त चारो भागोंसे बाधे (पूर्वमें जो कुछ कह आये है और आगे जो कुछ कहेंगे यह सब बातें गुणस्थानक से संबध रखती हैं इसलिये पाठकों को हरेक बोल पर गुणस्थानक का उपयोग रखना अति आवश्यक है, विना गुणस्थानक के उपयोगी बातें समझ में आना मुश्किल है)

अलेशी, केवली और अयोगी, मे भागा १ चौथा बाधा, न बाधे, न बाधसी

मिश्रदृष्टि में भागा २ पहिला और दूसरा पूर्ववत्

अकषायी में भागा २ तीसरा और चौथा पूर्ववत्

शेष चौवीस बोलों (बावीस पापकर्म की व्याख्या मे कहा वह और सकषायी, लोभ कषायी) में भागा २ पहिला और दूसरा पूर्ववत्

यह समुच्चय जीव की अपेक्षा से कहा इसी तरह मनुष्य दंडक में समझ लेना शेष तेवीस दंडक के जीवों में दो भागा (पहिला और दूसरा) जैसे ज्ञानावरणीय कर्म बाधे एवम् दर्शनावरणीय नाम कर्म, गोत्रकर्म और अंतराय कर्म का भी बंध आश्रयी भागा लगालेना—संबन्ध सादृश है ।

समुच्चय जीवों की अपेक्षा से वेदनीय कर्म को समुच्चय जीव, सलेशी, शुक्ललेशी, शुक्लपक्षी सम्यक्दृष्टि, सज्ञानी केवल ज्ञानी नोसंज्ञा, अवेदी, अकषायी, साकार उपयोगी, और अना कार उपयोगी, इन (१२) बारहा बोलों के जीवों मे तीन भागा

मिलता है पहिला दूसरा और चौथा भागा और बाधा न बाधे बाधसी, इस तीसरे भागों मे पूर्वोक्त बारहा बोलों के जीव नहीं मिलते क्योंकि यह भागा वर्तमानकाल में वेदनीय कर्म न बाधे और फीर बाधेगा यह नहीं होसक्ता कारण वेदनीय कर्म का बध तेरवा गुणस्थानक के अत समय तक होता है

अलेशी, अजोगी, मे भागो १ चौथो बाधा, न बाधे, न बाधसी, शेष तेतीस बोलों मे भागा २ पहिला और दूसरा

एवम् मनुष्य दडक में भी भागा ३ समुचयवत् समझ लेना शेष तेवीस दडक में भागा २ पहिला और दूसरा

समुचय जीवोंकी अपेक्षा से आयुष्य कर्ममे अलेशी, केवली और अयोगी, ये तीन बोलों के जीवोंमें केवल चौथा भागा पावें

कृष्णपक्ष में भागा २ पहिला और तीसरा

मिश्रदृष्टि, अवेदी और अकषायी मे २ भागा तिसरा और चौथा, मन पर्यव ज्ञानी, नोसज्ञा में ३ भागा पहिले तीसरा और चौथा शेष अडतीस बोलों के जीवों में चारों भागा से आयुष्य कम बाधे, अब चोवीस दडकों की अपेक्षा आयुष्य कर्म के बध के भागे कहते है नारकी के पूर्वोक्त ३५ बोलोंमेंसे कृष्ण पक्षी और कृष्ण लेशी मे भागा दो पाये पहिला और तीसरा मिश्रदृष्टि में भागा दो पाय तीसरा और चौथा शेष बत्तीस बोलों के जीव चारों भागो से आयुष्य कर्म बाधे

देवताओं में भुवनपति से यावत् बारहावें देवलोक तक के देवताओंमे पूर्वोक्त कहे हुए बोलोंमें से कृष्णपक्षी और कृष्णलेशी (जहा पाये वहातक) मे दो भागा पहिला और दूसरा मिश्रदृष्टिमें दो भागा तीसरा और चौथा, शेष बोलों के जीवों मे भागा चारो पाये। नव ग्रैवेक के देवताओंमें पूर्वोक्त ३२ बोलोंमें से कृष्णपक्षीमें

भागा दो पावे पहिला और तीसरा शेष ३१ बोलों में चारों भागा पावे ॥ चार अनुत्तर विमानों के देवताओं में पूर्वोक्त २६ बोलोंमें भागा चारों पावे ॥ सर्वार्थ सिद्ध विमानके देवताओं में पूर्वोक्त २६ बोलो मे भागा ३ पावे दूसरा, तीसरा, और चौथा

पृथ्वीकाय अप्पकाय, और वनस्पतिकाय के जीवों में पूर्वोक्त २७ बोलो मे से तजोलेशी, में भागा एक पावे तीसरा शेष २६ बोलों के जीव चारों भागो से आयुष्य कर्म बांधे ॥ तेजस काय और वायुकाय के जीवों म पूर्वोक्त २६ बोलो में भागा २ पावे पहिला और तीसरा ॥ तीनों विकलेन्द्री जीवों के पूर्वोक्त ३१ बोलों में से सज्ञानी मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, और सम्यक्दृष्टि इन चार बोलों के जीवों मे भागा तीसरा पावे शेष २७ बोलो में भागा २ पहिला और तीसरा

तीर्यच पचेन्द्री जीवों के पूर्वोक्त ३५ बोलों में से कृष्णपक्षी मे भागा २ पहिला और तीसरा मिश्रदृष्टि मे दो भागा तीसरा और चौथा और सज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी तथा अवधिज्ञानी और सम्यक्दृष्टि में भागा ३ पावे पहिला, तीसरा, और चौथा शेष २८ बोलों में भांगा चारों पावे

मनुष्य के दंडक में पूर्वोक्त ४७ बोलों में से कृष्णपक्षी में भागा दो पावे पहिला और तीसरा मिश्रदृष्टि अवेदी और अकषाइ मे भागा दो पावे तीसरा और चौथा अलेशी, केवली, और अजोगी मे एक भागा चौथा, नोसज्ञा चार ज्ञान, सज्ञानी और सम्यक्दृष्टि में तीन भागा पहिला तीसरा और चौथा शेष तेतीस बोलो में भागा चारो पावे

इस छव्वीसवे शतक के प्रथम उद्देशाका जितना विस्तार किया जाय उतना हो सक्ता है परन्तु ग्रन्थ वढजाने से कंठस्थ करणा में प्रमाद होने के कारण से यहा सक्षेप में वर्णन किया है इस को कंठस्थ कर विस्तार गुरुगम से धारों इति ॥

थोकडा न ५६

(श्री भगवती सूत्र शतक २६ उ ०२)

अणन्तर उववन्नगादि

अन्तरा रहित जो प्रथम समय उत्पन्न हुआ है उसकी अपेक्षासे यह उद्देशा कहेंगे इसी शतक के पहिले उद्देशे मे जो ४७ बोल प्रथम कह आये है उनमें से नीचे लिखे १० बोल प्रथम समय उत्पन्न हुआ है उसमें नहीं मिलते क्योंकि उत्पन्न होने के प्रथम समय में इन १० बोलों की प्राप्ति नहीं होसक्ती। यथा (१) अलेशी (२) मिश्रदृष्टि (३) मन पर्यव ज्ञानी (४) केवलज्ञानी (५) नो सज्ञा (६) अवेदी (७) अकषायी (८) अयोगी (९) मनयोगी (१०) वचनयोगी शेष ३७ बोल समुच्चय जीवों में मिले

नरकादि दडकों मे नारकी से लेकर बारह देवलोक तक पूर्वोक्त कहे हुए बोलो में से मिश्रदृष्टि, मनयोगी, और वचन योगी यह तीन बोल कम करके शेष बोलो में प्रथम समय का उत्पन्न हुआ जीव मिले

नव ग्रैवेयक तथा पाच अनुत्तर विमानों मे पूर्वोक्त कहे हुए ३२ और २६ बोलो में से मनयोगी और वचनयोगी कम करके शेष बोलों में प्रथम समय का उत्पन्न हुआ जीव मिले।

तिर्यच पचेन्द्री में पूर्वोक्त कहे हुये ४० बोलों मे से मिश्रदृष्टि मनयोगी, और वचनयोगी यह तीन बोल कम करके शेष ३७ बोलों मे प्रथम समय का उत्पन्न हुआ जीव मिले ॥ मनुष्य दडक में समुच्चयवत् ३७ बोलों में प्रथम समय का उत्पन्न हुआ जीव मिले।

चौवीस दन्डकों में प्रथम समय उत्पन्न हुए जीवों के जो जो बोल कह आए हैं उन बोलों में जीव समुचय पापकर्म और ज्ञानावरणीय आदि सात कर्मों (आयुष्य छोड कर) को पूर्वोक्त बाधा, बाधे बाधसी ' इत्यादिक चार भागा में से केवल दो भागो से बाधे (बाधा बाधे बाधसी, बाधा बाधे न बाधसी)

आयुष्य कमको मनुष्य छोडकर शेष तेवीस दन्डकों में पूर्वोक्त कहे हुये बोलों में ' बाधा न बाधे बाधसी ' । का १ भागा पावे क्योंकि प्रथम समय उत्पन्न हुवा जीव आयुष्य कम बाधे नहीं भूत कालमें बाधा था और भविष्यमें बांधेगा

मनुष्य दन्डक में पूर्वोक्त ३७ बोलों में से कृष्ण पक्षी में भागा १ तीसरा शेष छत्तीस बालों में भागा २ पावे तीसरा और चौथा इति द्वितीयोद्देशकम्

शतक २६ उद्देशा ३ जो परम्परोववन्नगा

उत्पत्ति के दूसरे समय से यावत् आयुष्य के शेष काल को "परम्पर उववन्नगा," कहते हैं इसी शतक के प्रथम उद्देसेमें ४७ बोलों में से जितने २ बोल प्रत्येक दन्डक के कह आये हैं उसी माफक परमपर उववन्नगा जावों के समुचय जीवादि दन्डको में भी कहना तथा बाधी का भागा चारो सर्व अधिकार प्रथम उद्देसे के माफक कहना बाधी के भागों के साथ " परमूपर उववन्ना " का सूत्र नरकादि सर्व दन्डक के साथ जोड लेना इति तृतीयोद्देशकम् श्री भगवती सूत्र श० २० उ ४ अणतर ओगाढा

जीव जीस गति में उत्पन्न हुवा है उसगति के आकास प्रदेश अवगह्या (आलवन किये) को एक ही समय हुवा है उसको अणंतर ओगाढा कहते हैं इसके थान और बाधी के भागों का सर्वाधिकार अणतर उववन्नगा द्वितीय उद्देसे के माफक कहना और अणतर उववन्नगा की जगह पर अणतर ओगाढा का सूत्र

नरकादि सब जगह विशेष कहना इति चतुर्थोद्देशकम्

श्री भगवती सूत्र श० २६ उ० ५ परम्पर ओगाडा

जीव जीस गति मे उत्पन्न हुवा हैं उस गति के आकास प्रदेश अवगाह्या को २ समय से यावत् भवातर काल हुआ हो उसको परमपर ओगाडा कहते हैं इसका सर्वाधिकार इसी शतक के प्रथम उद्देसे वत् कहना परन्तु ' परम्पर ओगाडा " का सूत्र सब जगह विशेष कहना इति पचमोद्देशकम्

श्री भगवती सूत्र श० २६० उ० ६ अणतर आहारगा

जिस गति में जीव उत्पन्न हुआ है उस गति मे जो प्रथम समय आहार लिया उसको अणतर आहारगा कहते हैं इसका सर्वाधिकार अणतर उववन्नगा जो दूसरे उद्देसे माफक समझना परन्तु अणतर उववन्नगा की जगह पर 'अणतर आहारगा का सूत्र कहना इति षष्टमोद्देशकम्

श्री भगवती सूत्र श० २० उ० ७ परम्पर आहारगा

जिस गति मे जीव उत्पन्न हुवा है उस गति का आहार द्वितीय समय से भवातर तक ग्रहण करे उसको परम्पर आहारगा कहते हैं इसका सर्वाधिकार प्रथम उद्देशा वत् समजना परन्तु " परम्पर आहारगा का सूत्र सब जगह विशेष कहना इति सप्तमोद्देशकम

श्री भगवती सूत्र श० २६० उ० ८ अणतर पज्जत्तगा

जिस गति म जीव उत्पन्न हुआ है उस गति की पर्याप्ति बाधने के प्रथम समय को अणतर पज्जत्तगा कहते हैं इसका सर्वाधिकार इसी शतक के दूसरे उद्देशा वत परन्तु अणंतर उववन्नगा की जगह पर " अणतर पज्जत्तगा " का सूत्र कहना इति अष्टमोद्देशकम्

श्री भगवती सूत्र श० २६ उ० ९ परम्पर पज्जत्तगा

पर्याप्ति के दूसरे समय से यावत् आयुष्य पर्यंत को परम्पर

पन्नत्तगा कहते हैं इसका सर्वाधिकार प्रथम उद्देशे वत् समझना परन्तु परपर पन्नत्तगा का सूत्र विशेष कहना इति नवमोद्देशकम्

श्री भगवती सूत्र श० २६ उ० १० चरमोद्देशा

जिस जीव का जिस गति मे चरम समय शेष रहा हो उसको चरमोद्देशो कहते है इसका सर्वाधिकार प्रथम उद्देशावत् परन्तु "चरमाद्देशो" का सूत्र विशेष कहना इति दशमोद्देशकम्

श्री भगवती सूत्र श० २६ उ० ११ अचरमाद्देशो

अचरमाद्देशो प्रथम उद्देशे के माफक है पर तु ४७ बाेलो में अलेशी, केवली अयोगी ये तीन बोल कम करना भागा ४ मे चौथो भागो और देवता में सर्वार्थसिद्ध को बोल कम करना शेष प्रथम उद्देशा के माफक कहना इति श्रीभगवती सूत्र श० २६ समाप्तम्

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

थोकडा न ५७.

॥ श्री भगवती सूत्र श० २७ ॥

शतक २६ उद्देशा १ में जो ४७ बोल कह आये है उसपर जो "बाधा, बाधे बाधसी इत्यादिक ४ भांगों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है उसी माफक यहा भी 'कम किरिया, करे करसी' इत्यादिक नीचे लिखे ४ भागा का अधिकार पूर्ववत् ११ उद्देशों सभी मादश ही समझ लेना

(१) कर्म किरिया, करे, करसी, (२) किरिया, करे, न करसी (३) किरिया, न करे, करसी (४) करिया न करे न करसी

(प्र) जब अधिकार सादृश है तो अलग २ शतक कहने का क्या कारण है ?

(उ) कर्म, करिया करे, करसी यह क्रिया काल अपेक्षा सामान्य व्याख्या है और कर्म बाधा बाधे बाधसी यह बध काल अपेक्षा विशेष व्याख्या है शेषाधिकार बन्धी शतक माफीक समजना इति शतक २७ उद्देशा ११ समाप्त

थोकडा न० ५८

श्री भगवती सूत्र श० २८

पूर्वोक्त ४७ बोलों के जीव पापादि कर्म कहा के बाधे हुए कहा भोगवे १ इसके भागे ८ है यथा (१) तीर्यचमे बाधा तीर्यच में ही भोगवे (२) तीर्यचमें बाधा नरकमें भोगवे (३) तीर्यचमे बाधा मनुष्य में भोगवे (४) तीर्यच में बाधा देवता में भोगवे (५) तीर्यचमें बाधा नारकी और मनुष्य में भोगवे (६) तीयच मे बाधा नारकी और देवता मे भोगवे (७) तीयच में बाधा मनुष्य और देवता मे भोगवे (८) तीयच में बाधा नारकी मनुष्य देवता तीनों में भोगवे एवम् भागा ८ । पहिले जो शतक २६ उद्देशा १ मे जो ४७ बोलों का प्रत्येक दडक पर बर्णन कर आये है उन सब बोलों में समुचय पाप कर्म और ज्ञानावरणीयादी ८ कर्मों में भागा आठ आठ पावे इति प्रथमोद्देश

पूर्वोक्त बाधी शतक के ११ उद्देशावत् इस शतक के भी ११ उद्देशे है और प्रत्येक उद्देशे के बोलों पर उपर लिखे मुजब आठ २ भागे लगा लेना इस शतकसे अव्यवहारराशी मानना भी सिद्ध होता है और प्रज्ञापना पद ३ बोल ९८ तथा जुम्माधिकारसे देखो इति शतक २८ उद्देशा ११ समाप्त

वादी आयुष्य मनुष्य का बाधे और नियमा भव्य होय शेष तीन समो० आयुष्य चारोंगति का बाधे और भव्याभव्य दोनों होय।

तेजो, पद्म, शुक्ल लेशी में समो० चार पाव जिसमे क्रिया वादी आयुष्य मनुष्य वैमानिकका बाधे और नियमा भव्य होय शेष तीन समो० नारकी वज र तीनगति का आयुष्य बाधे और भव्याभव्य दोनों होय

अलेशी, केवली, अयोगी, अवेदी अकषायी, इन पाच बालों में समोसरण १ क्रियावादी आयुष्य अवधक और नियमा भव्य होय

शेष २२ बोलों में समोसरण चारों जिसमे क्रियावादी आयु ष्य-मनुष्य और विमानिक का बधे और तीन समो० वाले जीव आयुष्य चारों गति का बाधे क्रियावादी नियमा भव्य होय बाकी तीना समोसरण में भव्य अभव्य दोनों होय

नारकी क पूर्वोक्त ३५ बोलों में कृष्णपक्षी १ अज्ञानी ४ और मिथ्यादृष्टि १ में समोसरण ३ पूर्ववत् आयुष्य मनुष्य तीर्यच का बाधे और भव्य अभव्य दोनों होय—ज्ञान ४ और सम्यक्दृष्टि में समोसरण १ क्रियावादी आयुष्य मनुष्य का बाधे और निश्चय भव्य होय, मिश्रदृष्टि समुच्चयवत् शेष तेवीस बोल मे समोसरण चार और आयुष्य मनुष्य तीर्थच दोनोंका बाधे। क्रियावादी नियमा भव्य-बाकी तीनो समोसरण क भव्य अभव्य दोनों होय इसी माफक देवताओं मे नवग्रैवक तक पूर्वोक्त जो जो बोल कह आये है उन सब बोलो में समोसरण नारकीवत् लगा लेना

पाच अनुत्तरविमान के बोल २६ में समोसरण १ क्रियावादी आयुष्य मनुष्य का बाधे और नियमा भव्य होय

पृथ्वीकाय, अप्पकाय, और वनास्पतिकाय, में पूर्वोक्त २७ बोलों के जीव में दो समोसरण पाचे अक्रियावादी, और अज्ञान

वादी तजोलेश्यामें आयुष्य न बाधे शेष बोलो में आयुष्य मनुष्य और तीर्यंच का बाधे भव्य अभव्य दोनों होय एवम् तेउ काय, वायुकाय के २६ बोलों मे समौसरण २ आयुष्य तीर्यंच का बाधे और भव्य अभव्य दोनों होय तीन विकलेन्द्री के ३१ बोलों में समौसरण २ अक्रियावादी और अज्ञानवादी तीन ज्ञान और सम्यक्‌दृष्टि आयुष्य न बाधे शेष बोलों में मनुष्य तीर्यंच दोनो का आयुष्य बाधे तीन ज्ञान और सम्यक्‌दृष्टिमें स० एक क्रिया-वादी आयुष्यका अवन्ध नियमा भव्य शेष बोलोंमें स० दो आयु० म० तीर्यंचका और भव्य अभव्य दोनों होय। तीर्यच पचेन्द्रींके ४० बोलोंमें से कृष्णपक्षी १ अज्ञानी ४ और मिथ्यादृष्टिमे समौसरण ३ अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी, आयुष्य चारों गति का बाधे भव्य अभव्य दोनां होय ज्ञान ४ और सम्यक्‌दृष्टिमे समौ-सरण १ क्रियावादी, आयुष्य वैमानिकका बाधे और नियमा भव्य होय मिश्रदृष्टिमे समौसरण २ विनयवादि और अज्ञानवादि आ-युष्यका अबधक और नियमा भव्य होय। कृष्णलेशी, नील लेशी, कापोत लेशीमें समौसरण चारो पाये जिसमें क्रियावादी आयुष्य का अबंधक और नियमा भव्य होय। शेष तीन समौसरणमें चा रोगतिका आयुष्य बाधे और भव्य अभव्य दोनों होय। तेजोलेशी पद्मलेशी शुक्ललेशीमें समौसरण चारो जिसमें क्रियावादी वैमा निक का आयुष्य बाधे और नियमा भव्य होय। शेष तीन समौ सरण नारकी छोड़कर तीन गतिका आयुष्य बाधे और भव्य अ भव्य दोनां होय शेष बाईस बोलोंमें समौसरण ४ जिसमें क्रियावादी वैमानिक का आयुष्य बाधे और नियमा भव्य होय बाकी तीन समौसरण चारो गतिका आयुष्य बाधे भव्य अभव्य दोनो होय

मनुष्य दडक में पूर्वोक्त जो ४७ बोल कह आये है जिसमे कृष्ण पक्षी चार अज्ञानी, और मिथ्यादृष्टि मे क्रियावादी

छोडकर शेष तीन समौसरण आयुष्य चारों गति का बाधे और भव्य अभव्य दोनो होय चार ज्ञान और सम्यग् दृष्टि में समौसरण क्रियावादी आयुष्य वैमानिक देवता का बाधे और नियमा भव्य होय। मिश्रदृष्टिमें समौसरण दो विनयवाद, और अज्ञानवादी आयुष्यका अबधक और नियमा भव्य होय। मन पर्यव ज्ञान और नो संज्ञा में समौसरण एक क्रियावादी आयुष्य वैमानिक देवता का बाधे और नियमा भव्य होय। कृष्णादि ३ लेश्या मे समोसरण ४ पावे जिसमे क्रियावादी आयुष्य का अवधक और नियमा भव्य होय। शेष तीनो समौसरण चारो गति का आयुष्य बाधे और भव्याभव्य दोनो होय तेजो आदि ३ लेश्या मे समौसरण चारो पावे जिसमें क्रियावादी आयुष्य वैमानिक का बाधे और नियमा भव्य होय। शेष तीनो समौसरण नरक गति छोडकर तीनो गतिका आयुष्य बाधे और भव्याभव्य दोनो होय अलेशी केवली, अजोगी, अवेदी और अकषाई में समौसरण क्रियावादी का आयुष्य अबंधक और नियमा भव्य होय शेष बाइस बोलो में समौसरण चारों पावे जिसमे क्रिया वादी आयुष्य वैमानिकका बाधे और नियमा भव्य होय। शेष तीनो समोसरण आयुष्य चारो गति का बाधे और भव्याभव्य दोनों होय

इति तीसवा शतकका प्रथम उद्देसा समाप्त।

बाधी शतक २६ वा उद्देसा दूसरा अणतर उववन्नगा का पूर्व एद आये है उसी माफक चौवीस दडको के ४७ बोल इस उद्देस में भी लगा लेना और समोसरण का भागा प्रथम उद्देसावत् कहना परतु सब बोलो मे आयुष्य का अबंधक है क्योंकि यह उद्देसा उत्पन्न होने के प्रथम समय की अपेक्षा से कहा गया है और प्रथम समय जीव आयुष्य का अबंधक होता है एवम चौथा

छट्ठा, आठवा, ये तीन उद्देसे इस दूसरे उद्देसे के सदृश है शेष ३-५-७-९-१०-११ ये छओ उद्देसा प्रथमोद्देशावत् समझ लेना—

इति श्री भगवती सूत्र शतक २० उद्देसा ११ समाप्त

सेव भंते सेव भंते सच्चेव सच्चम् ।

—※—

थोकडा नं० ६१

श्री उत्तराध्ययन सूत्र अ० ३४

(छ, लेश्या)

लेश्या उसे कहते है जो जीव के अच्छे या खराब अध्यवसाय से कर्मदलद्वारा जीव लेशावे यह इस थोकडेद्वारा ११ बोलो सहित विस्तारपूर्वक कहेंगे यथा—

१ नाम २ वर्ण ३ गध ४ रस ५ स्पर्श ६ परिणाम ७ लक्षण ८ स्थान ९ स्थिति १० गति ११ च्यवन इति ।

(१) नामद्वार-कृष्णलेश्या, नीललेश्या कापोतलेश्या तेजोलेश्या पद्मलेश्या, शुक्लेश्या,

(२) वर्णद्वार-कृष्णलेश्याका श्यामवर्ण, जैसे पानी से भरा हुआ बादल भैसा का सींग, अरीठा, गाडेका खजन, काजल आखों की टीकी, इत्यादि ऐसा वर्ण कृष्णलेश्या का समझना नीललेश्या-नीलावर्ण, जैसे अशोक पत्र शुक की पाखे, वैडूर्यरत्न इत्यादिवत् समझना कापोतलेश्या-सुर्खी लिये हुए कालारंग- जैसे अलसी का पुष्प, कोयल की पाख, पारेवाकी ग्रीवा इत्या

द्रियत् तजोलेश्या-रक्तवर्ण जैसे हींगलू, उगता सूर्य, तातकी चं
दीपककी शीखा इत्यादिवत् पद्मलेश्या-पीतवर्ण जैसे हरत
हल्द, हल्दका टुकडा सण वनास्पतिकावर्ण इत्यादिवत् पं
शुक्ललेश्या-श्वेत वर्ण जैसे सख अकरत्न मचकुंद वनस्पति, मं
का हार, चांदी का हार, इत्यादिवत्

(३) रसद्वार-कृष्ण लेश्या का कटुक रस जसे कडवा
का रस, नींब का रस राहिणी वनास्पति का रस, इनसे अ
गुण कटु। नीललेश्या का-तीखा रस-जैसे सोंठका रस, पीपर
रस, कालीमिरच, हस्ती पीपर, इन सबके स्वाद से अनत
तीखा रस। कापोतलेश्या का खट्टा रस-जस कचा आम्र
वनास्पति, कचा कवीठ की खटाइ से अनतगुणा खट्
तजोलेश्या का रस-जैसे पकाहुवा आम्र, पकाहुवा कवी
स्वाद से अनतगुणा। पद्मलेश्या का रस-जैसे उत्तम वारुणी
स्वाद और विविध प्रकार के आसव के अनंतगुणा। शुक्ल ले
का रस-जैसे खजूर का स्वाद, द्राक्षका स्वाद, खीर मक्कर,
स अनतगुणा

(४) गधद्वार—कृष्ण नील कापोत इन तीन लेश्याअ
गध जसे मृतक गाय कुत्ता, सर्प से अनतगुणी दुर्गंध और
पद्म शुक्ल, इन तीन लेश्याओं की गध जैसे केवडा प्रमुख
न्धी वस्तु को घिसने से सुगन्ध हो उस से अनतगुणी।

(५) स्पर्शद्वार—कृष्ण, नील कपोत, इन तीन लेश
का स्पर्श जैसे करात आरी) गाय बैल की जिह्वा साक वृ
पत्र से अनत गुणा और तेजो, पद्म शुक्ल, इन तीनों लेश
का स्पर्श जैसे वूर नामा वनास्पति, मक्खन सरसों के पु
अनतगुणा

(६) परिणामद्वार-छे लेश्या का परिणाम आयुष्य क

भाग नवमे भाग, सत्ताईसमेंभाग इक्यासीमें भाग, दोसौतया-लीसमेंभाग में अधन्य उत्कृष्ट समझना

(७) लक्षणद्वार—कृष्णलेश्या का लक्षण पाच आश्रव का सेवन करनेवाला, तीन गुप्तीसे अगुप्ती, छैकायका आरभक, आरभमें तीव्रपरिणामी सर्व जीवोंका अहित अकार्य करनमे साहसिक इसलोक परलोक की सका रहित निर्ध्वंस परिणामी जीव हणता सूग रहित, अजितेन्द्रिय, ऐसे पाप व्यापार युक्त हो तो कृष्णलेश्या के परिणाम वाला समझना

नीललेश्याका लक्षण-इर्षावत् कदाग्रही तपरहित भली विचारहित पर जीव को छलने में होसियार, अनाचारी, निर्लज्ज विषयलपट द्वेषभावसहित, शूत, आठों मदसहित, समोज्ञ स्वाद्का लपट, साताग्वेषी आरभ से न निवर्त्त सर्व जीवों का अहित कारी, विना सोचे कार्य करनेवाला ऐसे पाप व्यापार सहित होय उसको नीललेश्या वाला समझना

कापोतलेश्या—वाका बोले, वाका कार्य करे, निवुढ माया (कपटाइ) सरलपणारहित अपना दोष ढाके, मिथ्यादृष्टि अनार्य दूसरे को पीडाकारी वचन बोले, दुष्टवचन बोले, चोरी करे, दूसरे जीवोंकी सुख सम्पत्ति देख सके नहीं, ऐसे पापव्यापार युक्त को कापोत लेश्या के परिणामवाला समझना

तजोलेश्या—मान चपलता कौतूहल और कपटाइरहित विनयवान, गुरुकी भक्ति करनेवाला, पाचेन्द्री दमनेवाला, श्रद्धावान सिद्धात भणे तपस्या (योग वहन) करे, प्रियधर्मी, दृढ धर्मी, पापसे डरे मोक्षकी वाछाकरे, धर्मव्यापार युक्त ऐसे परिणाम वाले का तेजोलेश्या समझना

पद्मलेश्या का लक्षण-क्रोध मान माया, लोभ पतला (कमती) है आतमा को दमे, राग द्वेष से शात हो मन, वचन काया के

योग अपने वसमें हो सिद्धांत पढता हुआ तप करे थोडा बोले, जितेन्द्रिय हो ऐसे परिणाम वाले को पद्मलेशी समझना।

शुक्ललेश्या का लक्षण-आर्त रौद्र, ध्यान न ध्यावे धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान ध्यावे प्रशस्त चित्त रागद्वेष रहित पच समिति समिता त्रण गुप्ति गुप्ता सरागी हो या वीतरागी ऐसे गुणों सहितको शुक्ल लेशी समझना।

(८) स्थान द्वार-छ हो लेश्याकास्थान असंख्यात है वह अवसर्पिणी उत्सर्पिणी का जितना समय हो अथवा एक लोक जैसा संख्याता लोक का आकाश प्रदेश जितना हो उतने एक २ लेश्या के स्थान समझना।

(९) स्थितिद्वार-१ कृष्णलेश्या जघन्य अंतर मुहूर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम, अंतर मुहूर्त अधिक नारकी में जघन्य १ सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अंतर मुहूर्त्ताधिक तिर्यच (पृथ्व्यादि ९ दडक) और मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अंतर मुहूर्त देवताओं में जघन्य दसहजार वर्ष उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यात में भाग।

२ नीललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अंतर मुहूत उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक, नारकी में जघन्य तीन सागरोपम पल्योपमके असंख्यात में भाग अधिक उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक तिर्यच-मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अंतर मुहूत देवताओं में जघन्य पल्योपमके असंख्यात में भाग याने कृष्णलेश्या का उत्कृष्ट स्थितिसे १ समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यात में भाग

३ कापोतलेश्याकी समुच्चयस्थिति जघन्य अंतरमुहूर्त उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक, नारकी में जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के

असख्यात में भाग अधिक, मनुष्य, तिर्यंच, में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहुर्त, देवतामें जघन्य पल्योपम के असंख्यातमें भाग याने नील लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातमें भाग

४ तेजोलेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्त उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असंख्यातमें भाग अधिक मनुष्य, तिर्यंच मे जघन्य उत्कृष्ट अतरमुहुर्त, देवताओं में जघन्य दश हजार वर्ष उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक वैमानिक की अपेक्षा

५ पद्मलेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अतरमुहुर्त उत्कृष्ट दश सागरोपम अतरमुहुर्त अधिक मनुष्य, तिर्यंच में जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहुर्त देवतों में जघन्य दो सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक (तेजोलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक) उत्कृष्ट दश सागरोपम अन्तरमुहुर्त अधिक

६ शुक्ललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अन्तरमुहुर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तरमुहुर्त अधिक मनुष्य, तियचमें जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहुर्त और मनुष्योंमें केवलीकी जघन्य स्थिति अन्तरमुहुर्त उत्कृष्ट नव वर्ष ऊणा पूर्व क्रोड वर्ष देवताओंमें जघन्य दश सागरोपम अतरमुहुर्त अधिक (पद्मलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से १ समय अधिक) उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तर मुहूर्त्त अधिक

(१०) गतिद्वार कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या ये तीनों अधम लेश्या है दुर्गतिमें उत्पन्न होय। तेजो पद्म और शुक्ल लेश्या ये तीनों धर्मलेश्या कहलाती हैं सुगति में उत्पन्न हो।

(११) च्यवनद्वार सब संसारी जीवों को परभव जिस गति में जाना हो उसे मरते वक्त उस गति की लेश्या अन्तरमु

योग अपने वशमें हो सिद्धांत पढता हुआ तप करे थोडा बोले, जितेन्द्रिय हो ऐसे परिणाम वाले को पद्मलेशी समझना।

शुक्ललेश्या का लक्षण-आर्त रौद्र, ध्यान न ध्यावे धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान ध्यावे प्रशस्त चित्त रागद्वेष रहित पच समिति समिता त्रण गुप्तिए गुप्ता सरागी हो या वीतरागी ऐसे गुणों सहितको शुक्ल लेशी समझना।

(८) स्थान द्वार-छ हो लेश्याके स्थान असख्यात है वह अवसर्पिणी उत्सर्पिणी का जितना समय हो अथवा एक लोक जैसा संख्याता लोक का आकाश प्रदेश जितना हो उतने एक २ लेश्या के स्थान समझना।

(९) स्थितिद्वार-१ कृष्णलेश्या जघन्य अतर मुहूर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम, अतर मुहूर्त अधिक नारकी में जघन्य १० सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अतर मुहूर्ताधिक तिर्यच (पृथ्व्यादि ९ दडक) और मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहूत देवताओं मे जघन्य दसहजार वर्ष उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यात में भाग।

२ नीललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अतर मुहूत उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक, नारकी मे जघन्य तीन सागरोपम पल्योपमके असख्यात मे भाग अधिक, उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक तिर्यच-मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहूत देवताओं मे जघन्य पल्योपमके असख्यात में भाग याने कृष्णलेश्या का उत्कृष्ट स्थितिसे १ समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यात में भाग

३ कापोतलेश्याकी समुच्चयस्थिति जघन्य अतरमुहुर्त उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असख्यात म भाग अधिक, नारकी म जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के

असख्यात में भाग अधिक, मनुष्य, तिर्यच, में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहुर्त देवतामें जघन्य पल्योपम के असख्यातमें भाग याने नील लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपमके असख्यातमें भाग

४ तेजोलेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्त उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असख्यातमें भाग अधिक मनुष्य, तिर्यच मे जघन्य उत्कृष्ट अतरमुहुर्त, देवताओं में जघन्य दश हजार वर्ष उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक वैमानिक की अपेक्षा

५ पद्मलेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अतरमुहुर्त उत्कृष्ट दश सागरोपम अतरमुहुर्त अधिक मनुष्य, तिर्यच म जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहुर्त देवतों में जघन्य दो सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक (तेजोलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक) उत्कृष्ट दश सागरोपम अन्तरमुहुर्त अधिक

६ शुक्लेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अन्तरमुहुर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तरमुहुर्त अधिक मनुष्य, तियचमें जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहुर्त और मनुष्यमें केवलीकी जघन्य स्थिति अन्तरमुहुर्त उत्कृष्ट नव वर्ष ऊणा पूर्व क्रोड वर्ष देवताओंमें जघन्य दश सागरोपम अतरमुहुत अधिक (पद्मलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से १ समय अधिक) उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तर मुहुर्त्त अधिक

(१०) गतिद्वार कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या ये तीनों अधम लेश्या है दुर्गतिमें उत्पन्न होय। तेजो पद्म और शुक्ल लेश्या ये तीनों धर्मलेश्या कहलाती है सुगति में उत्पन्न हो

(११) च्यवनद्वार सब संसारी जीवों को परभव जिस गति में आना हो उसे मरते वरूत उस गति की लेश्या अन्तरमु

योग अपने वसमें हों सिद्धात पढता हुआ तप करे थोडा बोले, जितेन्द्रिय हो ऐसे परिणाम वाले को पद्मलेशी समझना।

शुक्ललेश्या का लक्षण-आर्त रौद्र, ध्यान न ध्याये धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान ध्याये प्रशस्त चित्त रागद्वेष रहित पच समिति समिता त्रण गुप्तिए गुप्ता सरागी हो या वीतरागी ऐसे गुणों-सहितको शुक्ल लेशी समझना।

(८) स्थान द्वार-छ हों लेश्याओंस्थान असख्यात है वह अवसर्पिणी उत्सर्पिणी का जितना समय हो अथवा एक लोक जैसा संख्याता लोक का आकाश प्रदेश जितना हो उतने एक २ लेश्या के स्थान समझना।

(९) स्थितिद्वार-१ कृष्णलेश्या जघन्य अंतर मुहूर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम, अतर मुहूर्त अधिक नारकी में जघन्य १० साग रोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अंतर मुहूर्ताधिक तिर्यच (पृथ्व्यादि ९ दडक) और मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहूर्त देवताओं में जघन्य दसहजार वर्ष उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यात मे भाग।

२ नीललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अतर मुहूर्त उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक, नारकी मे जघन्य तीन सागरोपम पल्योपमके असख्यात मे भाग अधिक उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक तिर्यच-मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहूर्त देवताओं में जघन्य पल्योपमके असख्यात में भाग याने कृष्णलेश्या का उत्कृष्ट स्थितिसे १ समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यात में भाग

३ कापोतलेश्याकी समुच्चयस्थिति जघन्य अतरमुहूर्त उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक, नारकी में जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के

असंख्यात में भाग अधिक, मनुष्य, तिर्यंच, में जघन्य उत्कृष्ट अंतर मुहुर्त, देवतामें जघन्य पल्योपम के असंख्यातमें भाग याने नील लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातमें भाग

४ तेजोलेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्त उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असंख्यातमें भाग अधिक मनुष्य, तिर्यंच मे जघन्य उत्कृष्ट अंतरमुहुर्त, देवताओं में जघन्य दश हजार वर्ष उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक वैमानिक की अपेक्षा

५ पद्मलेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्त उत्कृष्ट दश सागरोपम अंतरमुहुर्त अधिक मनुष्य, तिर्यंच में जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहुर्त देवतों में जघन्य दो सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक (तेजोलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक) उत्कृष्ट दश सागरोपम अन्तरमुहुर्त अधिक

६ शुक्ललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अन्तरमुहुर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तरमुहुर्त अधिक मनुष्य, तिर्यंचमें जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहुर्त और मनुष्योंमें केवलीकी जघन्य स्थिति अन्तरमुहुर्त उत्कृष्ट नव वर्ष ऊणा पूर्व क्रोड वर्ष देवताओंमें जघन्य दश सागरोपम अंतरमुहुर्त अधिक (पद्मलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से १ समय अधिक) उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तर मुहूर्त्त अधिक

(१०) गतिद्वार कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या ये तीनों अधर्म लेश्या है दुर्गतिमें उत्पन्न होय। तेजो पद्म और शुक्ल लेश्या ये तीनों धर्मलेश्या कहलाती है सुगति में उत्पन्न हों

(११) च्यवनद्वार सब संसारी जीवों को परभव जिस गति में जाना हो उसे मरते वक्त उस गति की लेश्या अन्तरमु

योग अपने वसमें हो सिद्धात पढता हुआ तप करे थोडा बोले, जितेन्द्रिय हो ऐसे परिणाम वाले को पद्मलेशी समझना ।

शुक्ललेश्या का लक्षण-आर्त रौद्र, ध्यान न ध्याय धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान ध्यावे प्रशस्त चित्त रागद्वेष रहित पंच समिति समिता त्रण गुप्तिए गुप्ता सरागी हो या वीतरागी ऐसे गुणों सहितको शुक्ल लेशी समझना ।

(८) स्थान द्वार-छ हों लेश्याकास्थान असख्यात हैं वह अवसर्पिणी उत्सर्पिणी का जितना समय हो अथवा एक लोक जैसा असंख्याता लोक का आकाश प्रदेश जितना हो उतने एक २ लेश्या के स्थान समझना ।

(९) स्थितिद्वार-१ कृष्णलेश्या जघन्य अंतर मुहूर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अंतर मुहूर्त अधिक नारकी में जघन्य १० सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अंतर मुहूर्ताधिक तिर्यच (पृथ्व्यादि ९ दंडक) और मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहूर्त देवताओं में जघन्य दसहजार वर्ष उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यात में भाग ।

२ नीललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अतर मुहूर्त उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक, नारकी मे जघन्य तीन सागरोपम पल्योपमके असख्यात मे भाग अधिक उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक तिर्यच-मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहूर्त देवताओं मे जघन्य पल्योपमके असख्यात में भाग याने कृष्णलेश्या की उत्कृष्ट स्थितिसे १ समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यात में भाग

३ कापातलेश्याकी समुच्चयस्थिति जघन्य अतरमुहूर्त उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक, नारकी में जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के

असख्यात में भाग अधिक, मनुष्य, तिर्यंच, में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहूर्त, देवतामें जघन्य पल्योपम के असंख्यातमें भाग याने नील लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातमें भाग

८ तेजोलेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अंतरमुहूर्त उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असख्यातमें भाग अधिक मनुष्य, तिर्यंच मे जघन्य उत्कृष्ट अतरमुहूर्त देवताओं में जघन्य दश हजार वर्ष उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक वैमानिक की अपेक्षा

- पद्मलेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अतरमुहूर्त उत्कृष्ट दश सागरोपम अन्तरमुहूर्त अधिक मनुष्य, तिर्यंच में जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहूर्त देवतों में जघन्य दो सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक (तेजोलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक) उत्कृष्ट दश सागरोपम अन्तरमुहूर्त अधिक

६ शुक्ललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अन्तरमुहूर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तरमुहूर्त अधिक मनुष्य, तिर्यंचमें जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहूर्त और मनुष्योंमें केवलीकी जघन्य स्थिति अन्तरमुहूर्त उत्कृष्ट नव वर्ष ऊणा पूर्व क्रोड वष देवताओंमें जघन्य दश सागरोपम अतरमुहूर्त अधिक (पद्मलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से १ समय अधिक) उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तर मुहूर्त्त अधिक

(१०) गतिद्वार कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या ये तीनों अधम लेश्या है दुर्गतिमें उत्पन्न होय। तेजो पद्म और शुक्ल लेश्या ये तीनों धर्मलेश्या कहलाती है सुगति में उत्पन्न हों

(११) च्यवनद्वार सब संसारी जीवों को परभव जिस गति में जाना हो उसे मरते वक्त उस गति की लेश्या अन्तरमु

योग अपने वसमें हों सिद्धात पढता हुआ तप करे थोडा बोले, जितेन्द्रिय हो ऐसे परिणाम वाले को पद्मलेशी समझना।

शुक्ललेश्या का लक्षण-आर्त रौद्र, ध्यान न ध्यावे धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान ध्यावे प्रशस्त चित्त रागद्वेष रहित पच समिति समिता त्रण गुप्तिए गुप्ता सरागी हो या वीतरागी ऐसे गुणों सहितको शुक्ल लेशी समझना।

(८) स्थान द्वार-छ हों लेश्याकास्थान असख्यात है यह अवसर्पिणी उत्सर्पिणी का जितना समय हो अथवा एक लोक जैसा संख्याता लोक का आकाश प्रदेश जितना हो उतने एक २ लेश्या के स्थान समझना।

(९) स्थितिद्वार-१ कृष्णलेश्या जघन्य अतर मुहूर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम, अतर मुहूत अधिक नारकी में जघन्य १० सागरोपम पल्योपम के असख्यात में भाग अधिक उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अंतर मुहूर्ताधिक तिर्यच (पृथ्व्यादि ९ दडक) और मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहूर्त देवताओं में जघन्य दसहजार वर्ष उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यात मे भाग।

२ नीललेश्या की समुच्चय स्थिति जघन्य अतर मुहूत उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम क असख्यात में भाग अधिक, नारकी मे जघन्य तीन सागरोपम पल्योपमके असख्यात मे भाग अधिक, उत्कृष्ट १० सागरोपम पल्योपम क असख्यात में भाग अधिक तिर्यच-मनुष्य में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहूर्त देवताओं मे जघन्य पल्योपमके असख्यात में भाग याने कृष्णलेश्या का उत्कृष्ट स्थितिसे १ समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपम के असख्यात में भाग

३ कापोतलेश्याकी समुच्चयस्थिति जघन्य अतरमुहूर्त उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम क असख्यात में भाग अधिक, नारकी में जघन्य दस हजार वर्ष उत्कृष्ट तीन सागरोपम पल्योपम के

असख्यात में भाग अधिक, मनुष्य, तिर्यंच, में जघन्य उत्कृष्ट अतर मुहुर्त देवतामें जघन्य पल्योपम के असंख्यातमें भाग याने नील लेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक उत्कृष्ट पल्योपमके असख्यातमें भाग

४ तेजोलेश्या की समुचय स्थिति जघन्य अंतरमुहुर्त उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम के असख्यातमें भाग अधिक मनुष्य, तिर्यंच मे जघन्य उत्कृष्ट अतरमुहुर्त, देवताओं में जघन्य दश हजार वर्ष उत्कृष्ट दो सागरोपम पल्योपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक वैमानिक की अपेक्षा

५ पद्मलेश्या की समुचय स्थिति जघन्य अतरमुहुर्त उत्कृष्ट दश सागरोपम अतरमुहुर्त अधिक मनुष्य, तिर्यंच में जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहुर्त देवतों में जघन्य दो सागरोपम पल्योपम के असंख्यात में भाग अधिक (तेजोलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से एक समय अधिक) उत्कृष्ट दश सागरोपम अन्तरमुहुर्त अधिक

६ शुक्ललेश्या की समुचय स्थिति जघन्य अन्तरमुहुर्त उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तरमुहुर्त अधिक मनुष्य, तिर्यंचमें जघन्य उत्कृष्ट अन्तरमुहुर्त और मनुष्योंमें केवलीकी जघन्य स्थिति अन्तरमुहुर्त उत्कृष्ट नव वर्ष ऊणा पूर्व क्रोड वर्ष देवताओंमें जघन्य दश सागरोपम अतरमुहुर्त अधिक (पद्मलेश्या की उत्कृष्ट स्थिति से १ समय अधिक) उत्कृष्ट ३३ सागरोपम अन्तर मुहुर्त्त अधिक

(१०) गतिद्वार कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या ये तीनों अधम लेश्या है दुर्गतिमें उत्पन्न होय। तेजो पद्म और शुक्ल लेश्या ये तीनों धर्मलेश्या कहलाती हैं सुगति में उत्पन्न हो

(११) च्यवनद्वार सब संसारी जीवों को परभव जिस गति में जाना हो उसे मरते वरत उस गति की लेश्या अन्तरमु

हुर्त पहिले आती है और उनकी स्थिति व पहिले समय और छेल्ले समय मे मरण नहीं होता और विचले समयों में मरण होता है जैसे पहिले आयुष्य बधा हुआ हो तो उसी गति की लेश्या आवे अगर आयुष्य न बाधा हो तो मरण पहिले अंतर मुहुर्त स्थिति में जो लेश्या वर्तती है उसी गतिका आयुष्य बाधे जिस गति में जाना हो उसी के अनुसार लेश्या आने के बाद अन्तरमुहुर्त वह लेश्या परिणम और अन्तरमुहुर्त बाकी रहे जब जीव काल करके परभव में जावे इति।

हे भव्य आत्माओ, इन लेश्याओं के स्वरूपको विचार कर अपनी २ लेश्या को हमेशा प्रशस्त रखने का उपाय करो इति

सेव भंते सेव भंते तमेव सचम्

थोकडा नंबर ६२

(श्री भगवतीजी सूत्र श० १ उ० २)

(सचिट्ठणा काल)

सचिट्ठण काल कितने प्रकार का है? च्यार प्रकार का यथा-नारकी सचिट्ठणकाल, तीर्यच स० मनुष्य स० देवता स०

नारकी सचिट्ठणकाल कितने प्रकार का है? तीन प्रकार का यथा-*सून्यकाल*, *असून्यकाल*, *मिश्रकाल*, *सून्यकाल* उसे कहते है कि नारकी का नेरिया नारकी से निकल कर अन्य गति में जा कर फिर नारकी में आवे और पहिले जो नारकी म जीव थे उसमें का १ भी जीव न मीले तो उसे *सून्यकाल*

और जिन जीवों को छोडकर गया था वे सब जीव वहीं मिले एक भी कम ज्यादा नहीं उसको अशून्यकाल कहते हैं और कई जीव पहिलेके और कई जीव नये उत्पन्न हुये मिलें तो उसको मिश्रकाल कहते हैं। तीर्यचमें सचिट्ठनकाल दो प्रकारका है अशून्यकाल और मिश्रकाल मनुष्य और देवताओं में तीनों प्रकारका नारकीवत् समझ लेना।

अल्पाबहुत्व नारकी मे सबसे थोडा अशून्यकाल उनसे मिश्रकाल अनंतगुणा और शून्यकाल उनसे अनंतगुण एवम् मनुष्य देवता तीर्यच में सबसे थोडा अशून्यकाल उनसे मिश्रकाल अनंतगुणा

चार प्रकार के सचिट्ठणकाल मे कौनसी गतिका भव ज्यादा कमती किया जिसका अल्पाबहुत्व सबसे थोडा मनुष्य सचिट्ठण काल उनसे नारकी सचिट्ठणकाल असंख्यातगुणा उनसे देवता सचिट्ठणकाल असंख्यातगुण और उनसे तीर्यच सचिट्ठणकाल अनंतगुणा।

तात्पर्य भूतकाल में जीवो ने चतुर्गति भ्रमण किया उसका हिसाब जीवों के हित के लिये परम दयालु परमात्मा ने कैसा समझाया है कि जो हमेशा ध्यान में रखने लायक है देखो, अनंत भव तीर्यचके असंख्याते भव देवताओं के और असंख्याते भव नारकी के करने पर एक भव मनुष्यका मिला ऐसे दुर्लभ और कठिनतासे मिले हुए मनुष्य भवकों हे ! भव्यात्माओं ! प्रमादवश वृथा मत खोओ जहा तक हो सके वहातक जागृत होकर ऐसे कार्योमें तत्पर हो कि जिससे चतुर्गति भ्रमण टले इत्यलम

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्

—※—

थोकडा नम्बर ६३

(स्थिति बन्धका अल्पाबहुत्व)

सबसे स्तोक सयतिका स्थिति बन्ध
बादर पर्याप्ता एकेन्द्रिका जघन्य स्थिति बन्ध असं० गु०
सुक्ष्म पर्याप्ता एकेन्द्रीका जघन्य स्थिति बन्ध वि०
बादर एकेन्द्री अप० का जघ० स्थिति वि०
सुक्ष्म एकेन्द्री अप० का जघ० स्थिति० वि०
सुक्ष्म एकेन्द्री अप० (७) बादर एकेन्द्री अप० वि०
सुक्ष्म एकेन्द्री पर्या० वि०
बादर एकेन्द्री पर्याप्ताका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध अनुक्रमे वि०
० बेरिन्द्री पर्याप्ता० जघन्य स्थिति स०
१ बेरिन्द्री अप० जघन्य स्थिति० वि०
२ बेरिन्द्री अप० उ० स्थि० वि०
३ बेरिन्द्री पर्या० उ० स्थिति० वि०
४ तेरिन्द्री पर्या० ज० स्थि० स० गु०
५ तेरिन्द्री अप० ज० स्थि० वि०
६ तेरिन्द्री अप० उ० स्थि० वि०
७ तेरिन्द्री पर्या० उ० स्थि० वि०
८ चौरिन्द्री पर्या० ज० स्थि० स०
९ चौरिन्द्री अप० ज० स्थि० वि०
चौरिन्द्री अप० उ० स्थि० वि०
११ चौरिन्द्री पर्या० उ० स्थि० वि०
१२ असज्ञी पचेन्द्रि पर्या० ज० स्थि० स० गु०
१३ असज्ञी पचेन्द्री अप० ज० स्थि० वि०

२४ असंज्ञी पचेन्द्री अप० उ० स्थि० वि०
२५ असंज्ञी पचेन्द्री पर्या० उ० स्थि० वि०
२६ सयती का उत्कृष्ट स्थि० सं० गु०
२७ देशव्रत्तीका ज० स्थि० म० गु०
२८ देशव्रत्तीकाका उ० स्थि० म० गु०
२९ सम्यक्त्वी पर्या० का जघन्यस्थि० स० गु०
३० सम्यक्त्वी अप० जघन्यस्थि० सं० गु०
३१ सम्यक्त्वी अप० का उत्कृष्टस्थि० सं० गु०
३२ सम्यक्त्वी पर्या० का उ० स्थि० स गु०
३३ संज्ञी पचेन्द्री पर्या० का ज० स्थि० म० गु०
३४ संज्ञी पचेन्द्री अप० का ज० स्थि० स० गु०
३५ संज्ञी पचेन्द्री अप० का उ० स्थि० स० गु०
३६ संज्ञी पचेन्द्री पर्या० का उ० स्थि० स० गु०

सेव भन्ते सेव भन्ते तमेव सच्चम्.

इति शीघ्रबोध भाग ५ वा समाप्तम्

लिजिये अपूर्व लाभ

(१) शीघ्रबोध भाग १-२-३-४-५ वां रु १॥)

(२) शीघ्रबोध भाग ६-७-८-६-१०-११-१२
१३-१४-१५-१६-२३-२४-२५ रु. ३॥)

(३) शीघ्रबोध भाग १७-१८-१६-२०-२१-२२
जिसमें बारहा सूत्रोंका हिन्दि भाषान्तर है रु. ४)

पुस्तकें मीलनेका पत्ता—

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला।
मु० फलोधी—(मारवाड)

श्री सुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा।
मु० लोहावट—(मारवाड)

☞ श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल.

मु. लोहावट–जाटावास (मारवाड)

पूज्य मुनि श्री हरिसागरजी तथा मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज साहिब के सदुपदेशसें स. १९७९ का चैत वद ६ शनिश्चरवार को इस मंडलकी शुभ स्थापना हुई है। मित्र मंडलका खास उदेश समाजसेवा और ज्ञानप्रचार करनेका है। पेस्तर यह मंडल नवयुवकोंसे ही स्थापित हुवा था परन्तु मंडलका कार्यक्रम अच्छा होनेसे अधिक उम्मरवाले सज्जन भी मंडलमें सामिल हो मंडलके उत्साहमें अभिवृद्धि करी है।

धार्मीक धन्दा		मुबारीक नामावली	पिताका नाम	निवासग्राम
११)	(१)	श्रीमान् प्रेसिडेन्ट छोगमलजी कोचर	चुतर्भुजजी	लोहावट
११)	( )	श्रीमान् वाइस प्रेसिडेन्ट इन्द्रचन्द्रजी पारख	रावलमलजी	"
८)	(३)	श्रीमान् नायब प्रेसिडेन्ट खेतमलजी कोचर	पीरदानजी	"
११)	(४)	श्रीमान् चीफ सेक्रेटरी रेखचन्दजी पारख	हजारीमलजी	"
७)	(५)	श्रीमान् जोइन्ट सेक्रेटरी पुनमचन्दजी लुणीया	रत्नालालजी	"
७)	(६)	श्रीमान् जोइन्ट सेक्रेटरी इन्द्रचन्दजी पारख	चोनणमलजी	"
५)	(७)	श्रीमान् सेक्रेटरी माणकलालजी पारख	हीरालालजी	"
५)	(८)	आसिस्टट सेक्रेटरी श्रीमान् रीषभमलजी सिंधी		कुचेराथाला

३)	(९)	श्रीयुक्त मेम्बर अगरचदजी पारख	आईदानजी	लोहावट
२)	(१०)	श्रीयुक्त मेम्बर पृथ्वीराजजी चोपडा	खुबचदजी	,
२)	(११)	श्रीयुक्त मेम्बर जीतमलजी भ'साली	तुलसीदासजी	,,
३)	(१२)	श्रीयुक्त मेम्बर हस्तीमलजी पारख	रावलमलजी	,,
२)	(१३)	श्रीयुक्त मेम्बर मेरूलालजी चोपडा	रेखचदजी	,
३)	(१४)	श्रीयुक्त मेम्बर जुगराजजी पारख	रावलमलजी	,,
३)	(१५)	श्रीयुक्त मेम्बर मनसुखदासजी पारख	हजारीमलजी	,,
३)	(१६)	श्रीयुक्त मेम्बर कुंनणमलजी पारख	हीरालालजी	,,
२)	(१७)	श्रीयुक्त मेम्बर कुनणमलजी कोचर	हीरालालजी	,
३)	(१८	श्रीयुक्त मेम्बर भमूतमलजी पारख	श्रीचदजी	,,
२)	(१९)	श्रीयुक्त मेम्बर हीरालालजी चोपडा	मोतीलालजी	,,
३)	(२०)	श्रीयुक्त मेम्बर जमनालालजी पारख	रावलमलजी	,,
४)	(२१)	श्रीयुक्त मेम्बर रेखचदजी पारख	मोतीलालजी	,
३)	(२२)	श्रीयुक्त मेम्बर भमूतमलजी पारख	करणीदानजी	,,
२)	(२३)	श्रीयुक्त मेम्बर सुखलालजी चोपडा	हीरालालजी	,
३)	(२४)	श्रीयुक्त मेम्बर फूलचदजी पारख	ौथलचन्दजी	,
२)	(२५)	श्रीयुक्त मेम्बर घेवरचदजी गढीया	जुहारमलजी	मथाणीया
२)	(२६)	श्रीयुक्त मेम्बर जेठमलजी डाकलीया	प्रतापचदजी	लोहावट
४)	(२७)	श्रीयुक्त मेम्बर कुंनणमलजी पारख	सहजरामजी	,,
३)	(२८)	श्रीयुक्त मेम्बर जमनालालजी बोथरा	अलसीदासजी	,

३) (२९) श्रीयुक्त मेम्बर नेमिचन्दजी चोपडा पुनमचदजी ,,
२) (३०) श्रीयुक्त मेम्बर फुलणमलजी चोपडा मालचंदजी ,,
२) (३१) श्रीयुक्त मेम्बर पुखराजजी चोपडा ताराचदजी ,,
३) (३२) श्रीयुक्त मेम्बर कुंवरलालजी पारख सेरचदजी ,,
२) (३३) श्रीयुक्त मेम्बर चुनिलालजी पारख सोभलालजी ,,
३) (३४) श्रीयुक्त मेम्बर सुखलालजी पारख मोतीलालजी ,,
१) (३५) श्रीयुक्त मेम्बर सीमरथमलजी चोपडा हीरालालजी ,,
३) (३६) श्रीयुक्त मेम्बर अलसीदासजी कोचर पुनमचंदजी ,,
३) (३७) श्रीयुक्त मेम्बर इन्द्रचंदजी वेद सोभलालजी आयु
२) (३८) श्रीयुक्त मेम्बर ठाकुरलालजी चोपडा रेखचदजी लोहावट
२) (३९) श्रीयुक्त मेम्बर घेवरचदजी घोथरा रायलमलजी ,,
२) (४०) श्रीयुक्त मेम्बर कन्यालालजी पारख जमनालालजी ,,
३) (४१) श्रीयुक्त मेम्बर सपतलालजी पारख इन्दरचदजी ,,
३) (४२) श्रीयुक्त मेम्बर नेमिचदजी पारख हीरालालजी ,,
२) (४३) श्रीयुक्त मेम्बर हेमराजजी पारख चानणमलजी ,,
२) (४४) श्रीयुक्त मेम्बर भमूतमलजी कोचर हस्तिमलजी ,,
२) (४५) श्रीयुक्त मेम्बर भीखमचदजी कोचर मेघराजजी ,,
३) (४६) श्रीयुक्त मेम्बर गोदुलालजी सेठीया छोगमलजी ,,
३) (४७) श्रीयुक्त मेम्बर जोरावरमलजी वैद चदनमलजी फलोधी
३) (४८) श्रीयुक्त मेम्बर खेतमलजी पारख हजारीमलजी लोहावट
१) (४९) श्रीयुक्त मेम्बर गणेशमलजी पारख मनसुखदासजी ,,

२) (५१) श्रीयुक्त मेम्बर सहसमलजी पारख छागमलजी ,,
२) (५२) श्रीयुक्त मेम्बर तनसुखदासजी कोचर जेठमलजी ,,
१) (५३) श्रीयुक्त मेम्बर भीखमचन्दजी पारख मुलचन्दजी ,,
२) (५४) श्रीयुक्त मेम्बर सुगनमलजी पारख चुनिलालजी ,,
२) (५५) श्रीयुक्त मेम्बर जुगराजजी पारख रतनलालजी ,,
३) (५६) श्रीयुक्त मेम्बर जमनालालजी पारख मुलचन्दजी ,,
२) (५७) श्रीयुक्त मेम्बर खेतमलजी कोचर प्रभुदानजी ,,
२) (५८) श्रीयुक्त मेम्बर माणकलालजी कोचर दलीचन्दजी
१) (५९) श्रीयुक्त मेम्बर मीसरीलालजी कोचर खेतमलजी ,,
२) (६०) श्रीयुक्त मेम्बर घेवरचंदजी कोचर ज्ञानमलजी ,,
१) (६१) श्रीयुक्त मेम्बर नथमलजी पारख हसराजजी ,,
२) (६२) श्रीयुक्त मेम्बर नेमिचन्दजी पारख मनसुखदासजी ,,
२) (६३) श्रीयुक्त विजयलालजी ,, छगनमलजी ,,

—✻—